प्रकाशक-
मास्टर मिश्रीमल
ऑ० मंत्री
श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति,
रतलाम



मुद्रक-
श्री जैनोदय प्रिंटिंग प्रेस,
रतलाम.

श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रतलाम.

के

जन्म दाता

श्रीमान् प्रसिद्ध वक्ता पंडित मुनि श्री चौथमलजी महाराज

सदस्य गण

स्तम्भ

श्रीमान् दानवीर राय बहादुर सेठ कुंदनमलजी लालचन्दजी सा० — ब्यावर
" सेठ नेमीचन्दजी सरदारमलजी सा० — नागपुर
" " सरूपचन्दजी भागचन्दजी सा० — कलमसरा
" " पुनमचन्दजी चुन्नीलालजी सा० — न्यायडोंगरी
" " बहादरमलजी सूरजमलजी सा० — यादगिरी
" " तखतमलजी सौभागमलजी सा० — जावरा

संरक्षक

" " श्रेमलजी लालचन्दजी सा० — गुलेदगढ़
" " लाला रतनलालजी सा० मित्तल — आगरा
" " उदेचन्दजी छोटमलजी सा० मूथा — उज्जैन
" " छोटेलालजी जेठमलजी सा० कनेरा — (मेवाड़)
" " मोतीलालजी सा० जैन वैद — माँगरोल
" " सूरजमलजी साहेब — भवानीगंज
" वकील रतनलालजी सा० सर्राफ — उदयपुर

श्रीमान् सेठ कालूरामजी सा० कोठारी ब्यावर
" " कुंदनमलजी सरूपचन्दजी सा० ब्यावर
" " देवराजजी सा० सुराना ब्यावर
" " नाथूलालजी छगनलालजी सा० दूगड़ मल्हारगढ़
" " ताराचन्दजी डाहजी पुनमिया सादड़ी
श्री महावीर जैन नवयुवक मंडल, चितौड़गढ़
श्री श्वे० स्था० श्रीसंघ, बड़ी सादड़ी (मेवाड़)
श्रीमती पिस्ताबाई, लोहामन्डी आगरा
" राजीबाई, वरोरा सी० पी०
" अनारबाई, लोहामंडी आगरा
" चन्द्रपतिबाई सब्जी मंडी, देहली
श्रीमान् मोहनलालजी सा० वकील उदयपुर
श्रीमान् सेठ मिश्रीलालजी नाथूलालजी सा० बाफणा कोटा
" " लखमीचन्दजी संतोकचन्दजी सा० मु० मुरार
श्रीमान् सेठ चम्पालालजी सा० अलीजार ब्यावर
" " नेमीचन्दजी शीकरचन्दजी सा० शिवपुरी

सहायक

श्रीमान् सेठ सागरमलजी गिरधारीलालजी सिकन्द्राबाद

मेम्बर

श्रीमान् सेठ मन्नालालजी चाँदमलजी ताल
" " सजनराजजी साहब ब्यावर
" " चंदनमलजी मिश्रीमलजी गुलेछा ब्यावर
" " मिश्रीमलजी बाबेल ब्यावर
" " रिखबदासजी खींवेसरा ब्यावर
" " हरदेवमलजी सुवालालजी ब्यावर
" " दौलतरामजी बोगावत भोपाल
" " छगनलालजी सोजतिया उदयपुर

श्रीमान् सेठ छगनमलजी वस्तीमलजी	ब्यावर
,, ,, रतनचन्दजी हीराचन्दजी	बांद्रा बम्बई
श्री श्वे० स्थानकवासी जैन श्री संघ	सिहोर
,, ,, ,, ,,	बोलिया
,, ,, ,, ,,	झालरापाटन कम्प
श्री जैन महावीर मंडल,	गरोठ (होल्कर स्टेट)
श्रीमान् ढोलाजी सोहनलालजी	भवानीगंज
,, हरकचंदजी नथमलजी	पंचपहाड़
,, भँवरलालजी जीतमलजी	सिरवोई
,, गुलावचंदजी पुनमचंदजी	रायपुर
,, रोडमलजी वावेल	ब्यावर
,, गुलावचंदजी इन्द्रमलजी मारू	मल्हारगढ़
,, किसनलालजी हजारीमलजी	पिपलगाँव
,, उगमचंदजी दानमलजी	वोदवड़
,, राजमलजी नंदलालजी	वरणगाँव
,, चंडूलालजी हरकचंदजी	नसीरावाद
,, जमनालालजी रामलालजी सा० कीमती	हैद्रावाद
,, धनराजजी हीराचन्दजी सा०	वेंगलोर
,, हजारीमलजी मुलतानमलजी	वेंगलोर
,, हीरालालजी सा० धोका	यादगिरी
,, कन्हैयालालजी मोतीलालजी सा०	शोलापुर
,, गणेशलालजी चत्तर	सिवनी मालवा
,, सुरजमलजी जैन वैद	माँगरोल
,, उम्मेदमलजी भँवरलालजी वैद	माँगरोल
,, घासीलालजी श्रीनारायनजी सा०	वेतेड़
,, सेठ रामचन्द्रजी सा० पल्लीवाल जैन	गंगापुर सीटी
,, ,, रिखबदासजी वालचंदजी	बम्बई

श्रीमान्	सेठ	चुन्नीलालजी भाईचंदजी	वम्वई
,,	,,	रसिकलालसजी हीरालालजी	वम्वई
,,	,,	सेंसमलजी जीवराजजी देवड़ा	औरंगावाद
,,	,,	पनजी दोलतरामजी भण्डारी	अहमदनगर
,,	,,	पुखराजजी नहार	वम्वई



दो शब्द

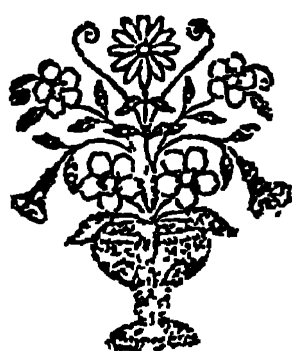
संसार में महापुरुष आते और चले जाते हैं। वे आते हैं, उनके साथ एक ज़माना आता है। वे जाते हैं; उनके साथ ज़माने का आख़िरी दर्वाज़ा भी बन्द हो जाता है। पर उन महापुरुषों की आत्माएँ शरीरों से साथ छुटने पर भी पुस्तकों में जीवनियों में सदा वर्तमान् रहती हैं। इसलिये महापुरुष अमर होते हैं; उनकी जीवनियाँ अजर होती हैं।

उनकी जीवनियों में हम शक्ति, शिक्षा प्रकाश—सभी कुछ पाते हैं। हमारे जीवन की अँधेरी रात में इन्हीं जीवनियों का प्रकाश जगमगाया करता है—जिससे हम अपना रास्ता आसानी से टटोल लेते हैं। आज संसार में महापुरुषों की जीवनियाँ न होतीं तो मनुष्य के लिये चारों ओर अंधेरा ही अँधेरा होता। सिवाय अँधेरे के, इस विस्तृत संसार में, उसका स्वागत करने वाला और कोई न होता! पर यह इन्हीं महापुरुषों की जीवनियों की महिमा है कि मनुष्य ज्ञान,' उपदेश और शिक्षा का सतत अभ्यासी बना हुआ है।

भगवान ऋषभ देव, नेमिनाथ, रामचन्द्र और कृष्णचन्द्र को गुजरे हज़ारों वर्ष होगए; पर उनके जीवन-चरित्रों की बदौलत वे आज भी हमारे सम्मुख वर्तमान हैं। भगवान रामचन्द्र मुनि सुव्रतस्वामी के शासन काल में हुए थे। उनकी जीवनी आदि कवि वाल्मीकि ने श्लोकों, में तुलसीदास ने दोहे-चौपाइयों में और जैनाचार्यों ने 'ढालों' में लिखी है। इन में शैली-भेद अवश्य है, पर उद्देश्य सभी का एक ही है।

जैनाचार्यों ने जो जीवनी लिखी वह महत्त्वपूर्ण है; पर आधुनिक जैन-जनता उससे उतना लाभ नहीं उठा सकती जितना उसे उठाना चाहिए। वह युग के अनुसार कुछ ऐसी चीज़ चाहती है जो उसे बहुत पुरानी या क्लिष्ट न लगे। इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर (पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज के सम्प्रदाय के पाटानुपाट पूज्य श्री मन्नालालजी महाराज के पट्टाधिकारी पूज्य श्री खूबचन्दजी महाराज के संप्रदाय के कविवर मुनि श्री हीरालालजी महाराज के सुशिष्य) जगद्वल्लभ जैन दिवाकर प्रसिद्धवक्ता पण्डित मुनि श्री चौथमलजी महाराज ने भगवान रामचन्द्र की जीवनी चौपइयों में तैयार की है। आगरा निवासी कविरत्न पं० मोहनलालजी ने संशोधनादि कार्य्य में सहायता पहुँचाई। इतने कम समय में हम इनका प्रकाशन कर रहे हैं। आशा है, लोग इससे आत्मिक लाभ उठायेंगे।

—प्रकाशक



णमोत्थुणं भगवओ मुनि सुव्वयस्स

आदर्श रामायण

पूर्वार्द्ध

मंगलाचरण

सोरठा

श्री मुनि सोव्रतनाथ * करम कटक को टालिये।
दीजे शुभ संग साथ * भव समुद्र से तट लगा ॥१॥
जनम मरण की लार * दास जान काटो प्रभु।
करम कटक का भार * कीजे मम सिर से प्रथक् ॥२॥

दोहा

शासन प्रकाशन प्रभू * भापण अमी समान।
दासन सिर आसन करो * देव धाम निर्वान ॥१॥
वाणी महारानी सुगर * विजय भगवती मात।
होय सदा तव दास की * विमल चौगुनी वात ॥२॥

सोरठा

वीणा पुस्तक धार * मात भगवती दर्श दे।
करो मेरा उद्धार * पूरण कृत करके सभी ॥३॥

कवित्त

चारों वेद अष्टादश पुराण और षट् दर्शन,
द्वादशांग वानी शिवदानी भनेश को।

गणादिश पत्त भत्त जग में न काहू को,
रत्त रत्तपाल प्रण पालन हमेश को ॥
अंगन विकाश तिहूं लोक में प्रकाश जासु,
भापत सुभापदास श्रीमन् जिनेश को ।
ऐसो गणनायक सुखदायक शुभ लायक अति,
पायक मुनि 'चौथमल' गणपति गणेश को ॥ १ ॥

दोहा

सुर तरु भक्त सु राम की * देत सदा सुख धाम ।
मम हृदये आसीन हो * सुखरानन श्री राम ॥ ३ ॥
'र' में ऋषभ 'म' में प्रगट * महावीर शुभ नाम ।
उभय अक्षरों को मिला * नित्य जपो श्री राम ॥ ४ ॥
सज्जन जन करके कृपा * मम कविता अपनाय ।
भूल चूक सब क्षमा कर * दीजे पार लगाय ॥ ५ ॥
वीर जिनन्द पधारिया * राजगृही के बहार ।
श्रेणिक नृप परिवार स * जाय नमे चरनार ॥ ६ ॥
गणपति गौतम प्रभु से * अर्ज करें सिर नाय ।
राम कथा फरमाइये * महर करी गुरुराय ॥ ७ ॥
चार ज्ञान संयुक्त शुभ * अजिन जीन समान ।
राम कथा कहने लगे * सुने भूप धर ध्यान ॥ ८ ॥

प्रारम्भ

दोहा

द्वितीय तीर्थंकर हुवे * अजितनाथ सुखकार ।
जिनके शासन में रहा * होता जै जै कार ॥ ६ ॥

सोरठा

जम्बू द्वीप मझार * भर्त क्षेत्र अति सुहावना ।
तहां रहे नर-नार * जप तप धर्मी संयमी ॥ ७ ॥

दोहा

घनवाहन हुये नृपत * बड़े प्रतापी भूप ।
भान छुपै लोचन लखत * मकरध्वज सम रूप ॥ १० ॥

चौपाई

घनवाहन सुन्दर सुख धामी * लंका राज करत निश कामी ।
महा राक्षस सुत तस प्रतापी * तासु राज तिलक दियो थापी ॥
घनवाहन तप हित वन जाई * मुक्त गये कीनी चतुराई ।
महा राक्षस कर न्याय संभारा * प्रजा वत्सल्य भूपत भारा ॥
सुर राक्षस हुओ सुत जाके * दियो राज तप कियो अघा के ।
आपन हर्ष महाव्रत धारे * अथिर जगत् से किये किनारे ॥
मुगत गये गति पंचम पाई * कारज सिद्ध किया मन लाई ।
सुर राक्षस नीति अनुसारा * करे काज मन हर्ष अपारा ॥

दोहा

असंख्यात भूपत हुये * बड़े बड़े बलवान् ।
तप संयम मन आदरो * कीनो मोक्ष पयान ॥ ११ ॥

चौपाई

शीतलनाथ हुये उपकारी * दशवें तिर्थंकर सुखकारी ।
तिन शासन वर्त्यौ सुख साजा * कीरत धवल नरेंद्र विराजा ॥
राय आडम्बर है अति भारी * लंकपुरी के नृप अधिकारी ।
यहाँ काल समय अति नीका * पर्वत रजत सुगर शुभ टीका ॥
नगर सुमिधनापुर अविशेषा * जहँ राज करे भूप खगेशा ।
तासु नारि श्रीमती अति प्यारी * श्री कंठ सुत अति हितकारी ॥
वियाधर भूपत अति भारी * गुणवन्ती तस सुता विचारी ।
नारी कृत मय चातुर नीकी * कुमति कुविद्या को नहीं सीकी ॥

दोहा

अति सुन्दर शुभ रतनपुर * पुष्पोतरन नरेन्द्र ।
पद्मोतर नृप के तनय * शीतल यों शुभ चन्द्र ॥ १२ ॥

चौपाई

तासु हितार्थ राय मन सोचा * पत्र लिखा नहिं करी संकोचा।
कन्या मम सुत को परिनावो * हृदय परस्पर प्रेम बढ़ावो ॥
यह पढ़ मन भूपत झुंझलायो * उत्तर कटुक तासु लिखवायो।
लंकपुरी देखी निज जाई * लंकापति कन्या परनाई ॥
खेचर पति मन में झुंझलायो * दल बल साज रतनपुर आयो।
कीरत धवल नरेन्द्र जुझारो * पाय सूचना आय मंझारो ॥
संधी दोउ नृप में करवाई * पद्मोतर रानो निज ब्याई।
लंकापति के अनन्द अपारा * मंगल रंग होय नृप द्वारा ॥

राजगीत छन्द

आनन्द मंगल अति किये, श्री कीर्ति धवल नरेन्द्र ने ।
देवी व देवी सदा सुखदा, सची संग सुरेन्द्र ने ॥
त्रिकूट में रक्खा नृपति, पति राखन के हेत है ।
तुम हो अभय यहां पर रहो, निश दिवस शिक्षा देत है ॥ १ ॥

दोहा

पुष्पोत्तर की कन्य का * पद्म कुमारी नाम ।
रतनपुरी श्री कंठ पति * ले गयो हर निज धाम ॥ १३ ॥

चौपाई

कीर्ति धवल भूप उठ धायो * दलबल सकल कटक सजवायो।
भूमि हिले रविरथ छुप जाई * सागर नीर उछल तट आई ॥
हय गय रथ पायक भट नाना * शूर वीर कर धनु सन्धाना।
मारग तय कर धुरे दबाये * पत्र नृपत के तट पहुंचाये ॥

श्री कंठ बोली निज सैना * मारो मरो कहे यह बैना ।
लंकापति देखा दल आता * किया कृत जो दल मन भाता ।
कटे मुन्ड भूखण्ड गिराई * बड़े बड़े भट गये पलाई ।
विजय जान कीरत धज राजा * लगे निरखने सकल समाजा ॥

दोहा

कीर्ति धवल की विजय सुन * हुआ लंक में चैन ।
आये शरण श्री कंठ भी * मान भूप के वैन ॥ १४ ॥

चौपाई

शरण लंक पति की नृप आये * कीरत धवल वहुत समझाये ।
वास करो भूपति यहि ठामा * कहां अन्य देखोगे ग्रामा ॥
वानर द्वीप वहुत सुखकारी * रहें आपके सब आभारी ।
वचन मान कपि द्वीप सिधारे * जाय किष्किन्धा आसन डारे ॥
वाग महल भंवन अति सुन्दर * रचना लखत सिहात पुरन्दर ।
वापी कूप तड़ाग उत्तुंगा * निर्मल नीर वहे जिम गंगा ॥
उत्तम अति आचार सुहावा * धर्म कर्म सब के मन भावा ।
सत्य सुमति सत संग निहारें * कुमति कुभाव चित्त नहीं धारें ॥

दोहा

सुगुरु सेव अरिहन्त की * करें सदा चित धार ।
ध्यान सिद्ध भगवान् का * होय सदा जयकार ॥ १५ ॥

चौपाई

वानर राय मिले हर्षाई * प्रेम परस्पर लीन वढ़ाई ।
चित्र विलेखी भूप अति भारे * वानर भेष छत्र सिर धारे ॥
वड़े वड़े नृप तह से हारे * वानर द्वीप नाम विस्तारे ।
तप जप संयम करें अपारा * धर्म कर्म से हित है भारा ॥
श्री कंठ नृप रहें सुखारे * वज्र सुकंठ तनय तसु प्यारे ।

नृप विचार मन में अस कीना * राजभार नन्दन को दीना ॥
अधिक विद्वता से समझाया * पुत्र सु गादी पर बैठाया ।
वज्र सुकंठ भूप अति भारे * राज करें आनन्द सुधारे ॥

दोहा

अष्टम द्वीप निहारने * श्रीकंठ नृप राय ।
गमन कियो मन समझ के * अति ही हर्ष बढ़ाय ॥ १६ ॥

चौपाई

गिरि ते गिरौ न मन घबरायो * साधु तपी को दर्शन पायो ।
संयम ले तप कियो अघाई * भूप पंचमी गति शुभ पाई ॥
वज्र सुकंठ अनेकों राजा * हुवे लंकपति नीति समाजा ।
समय वीस में जिनको आयो * घनो दधीवर नृप अति भायो॥
राक्षस वानर प्रेम बढ़ायो * बैठ परस्पर मन हुलसायो ।
एक दिवस लंकापति राजा * चले मन सुविनोद के काजा ॥
नंदन वन में जाय भमारे * त्रिय संग करे आनन्द भारे ।
रमणिन के संग रमे सुखारी * कपि कुच खेंच दियो दुख भारी

दोहा

नृपत निरख यह कृत को * कीनो क्रोध अपार ।
सर सन्धानो रोष वश * दीनो कपि को मार ॥ १७ ॥

चौपाई

परम पवित्र साधु एक आये * कपि को देख दया दिल लाये ।
परम मंत्र नवकार सुनाया * श्रद्धा कर कपि सुरपुर धाया॥
उदधि कुमार हुआ कपि जाके * लखे ज्ञान निज ठाम लगा के ।
लंकापति को लख रिपि पायो * वानर सुर तज लोक सिधायो॥
ऋषि की सेव करे अति धाई * बोले मुनि से प्रेम बढ़ाई ।
हनी प्रजा लंकापति केरी * तव नृप सैन आपनी फेरी ॥

वानर देव सेन लख आती * कपि संग माया सैन सुहाती।
क्रोधित कपितरु शिला उखारी * हने आन कर राक्षस भारी॥

दोहा

विद्याट मार लख भूप ने * कपि को लिया मनाय ।
मित्र बनै दोनों सुजन * साधु समीपे आय॥ १८॥

चौपाई

वानी सुनी हर्ष मन पाया * साधु युगल मित्रन समझाया।
पूर्व-कथा ऋषिराज सुनाई * छाया मनो नैन दिखलाई ॥
मुनिवर पासे दीक्षा धारी * साधु हुए तप कीनो भारी।
घनोदधी नृप अति तप कीनो * राज सुकौशिल सुत को दीनो॥
निर्मल संयम भूपत पाला * हुआ सुज्ञान आतम उजियाला।
केशराज ऋषि की प्रति पाई * तह आशय पर कविता ठाई॥
भूपत पाप छार कर सारे * पंचम गति शुचि मोक्ष पधारे।
उदधि कुमार गये निज ठामा * करें सुकौशिल लंक अरामा॥

राजगीत छन्द

रजित गिरि वैताड़ सुन्दर, रतनपुर शुभ राज ही ।
असनवेग सु भूर भूपत, न्याय युत अति साज ही ॥
तस पुत्र युग शोभित महा, विजयी विजयसिंह जानिये ।
मुख तेज विद्यति वेग के, दिनकर समान सु मानिये ॥ २॥

चौपाई

आदितपुर नहिं पर्वत ठामा * नृप माली तहि भूप सु नामा।
पुत्री एक सुगर अति ताकी * सुन्दर रूप अनूप प्रभा की॥
श्रीमाता शुभ नाम पियारा * तासु स्वयंवर करन विचारा।
मंडप मन्डित कर नृपाला * नाना भांति कुसुम की माला॥
रचना रची सुगर अधिकाई * लख सुन्दरता मन ही लजाई।

देश देश के भूपत आये ❋ जहँ मंडप शुभ रचन रचाये ॥
सोहत भूप अनोपम कैसे ❋ उडुगण में रजनी पति जैसे ।
रूप अनुप स्वरूप विशाला ❋ भूपति सुता जहाँ श्रीमाला ॥

दोहा

दिनकर सम लख तेज मुख ❋ लोचन कमल निहार ।
श्रीमाला मन हर्ष के ❋ दी गल माला डार ॥ १६ ॥

चौपाई

किष्किन्धा पति के गल माला ❋ डाल मुदित मन हुई श्रीमाला ।
विजयसिंह भूपत भयो भारो ❋ लख अपमान कोप मन धारो ॥
पूर्व कियो छल भूधर मांही ❋ तजो छल कपट अबहू नाहीं ।
तुम समान वरमाला नाहीं ❋ यह तो हमको देओ गहाई ॥
के संग्राम करो वन शूरा ❋ देओ दिखाय क्षात्रपन पूरा ।
विजयसिंह के सुन कर वैना ❋ बाणी सर सम लगे सहेना ॥
विजयसिंह को अति ही पीटो ❋ मृतक सम धरनी जब दीटो ।
किष्किन्धा पति भवन सिधारे ❋ विजयसिंह मन ही मन हारे ॥

दोहा

विजयसिंह पाकर समय ❋ किष्किन्धा पति भ्रात ।
अन्धक को दियो मारके ❋ करके विश्वसघात ॥ २० ॥
किष्किन्धा लंकापति ❋ दीने युगल निकार ।
मन हर्षा के विजयसिँह ❋ मानो मोद अपार ॥ २१ ॥

चौपाई

किष्किन्धा लंकापुर नायक ❋ कर में उठ चले शुग लायक ।
पहुंचे लंक पियाला जाई ❋ ठहरे अति मन में सुख पाई ॥
विजयसिंह चित्त नीच विचारा ❋ अशन वेग को चित में धारा ।
लंका नायक दिया बनाई ❋ नीति रीति शुभ चित्त समाई ॥

देश नगर नव रीति वसाये * पुर पाटन जो मन में भाये ।
सहस्त्रार को नृप पद दीनो * आपन हर्ष सुसंयम लीनो ॥
सुमति गुप्ति व्रतका प्रतिपालक * वना कर्म रिपु का नृप घालक ।
आतम काज सार नृप राया * शुभ्र गति को सहर्ष सिधाया॥

दोहा

राय सुकेशी भूप की * इन्द्राणी घर नार ।
सुखद शिरोमणि सुशीला * अति हा सुन्दरकार ॥ २२ ॥

चौपाई

तीन पुत्र सुन्दर वलवाना * मालि सुमालि सुवुद्ध सुजाना ।
माल्यवान तीजा सुत प्यारा * देख तिनै नृप रहे सुखारा ॥
किष्किन्धा पत्नीवर वनीता * वाम श्रीमाला सुख भनीता ।
युगल पुत्र तस के सुखमाला * युग पुत्रन की मात विशाला ॥
आदित्यरज रुक्षरज युग नामा * मित्रनुकूल करें सब कामा ।
मधु पर्वत नृपराय विराजै * सुन्दर रूप अनोपम साजै ॥
राय सुकेशी सुत चढ़ आयो * मालि भूप को मार भगायो ।
सहस्त्रार नृप की अर्द्धांगी * पतिव्रत धर्म पूर चिर संगी ॥

दोहा

सुन्दर रुप अनूप स्वच्छ * पतिव्रता गुणवान ।
जायो नन्दन इन्द्र सम * इन्द्रनाम सुखमान ॥ २३ ॥

चौपाई

माल्यराज अस मन मे चायो * लंका पे पुनि रपि चढ आयो ।
कर अधिकार लंक पे हर्षा * आनंद की मन वर्षा वर्षा ॥
वैश्रवण नृप मन हर्षा के * दीनो लंकपुरी तस आके ।
रहे सुमाली लंक पियाला * तस घरनी अति ही गुणमाला ॥
रत्नश्रवा सुत ताने जायो * सुन्दर रुप स्वरुप सुहायो ।

कानन कुसुम एक अति भारी * वृक्ष लता शुभ सुन्दरकारी ॥
रत्नश्रवा के मन में भायो * विद्या साधन विपिन सिधायो ।
अडिग ध्यान मन बीच लगायो * साधन कर अति मन सुख पायो॥

दोहा

मन हरनी खेचर सुता * आई विपिन मंझार ।
रत्नश्रवा के मन बसी * लखत सुन्दरी नार ॥ २४ ॥

चौपाई

शोभित विपन सु सुंदर नारी * विद्या साधन चित्त विचारी ।
रत्नश्रवा तन दृष्टि पसारी * देखी पास पद्मनी नारी ॥
कहि कारण सुंदर तू आई * मन की व्यथा देऊ समझाई ।
कौन पिता किन माता जाई * सत्य सत्य सब देऊ बताई ॥
हो प्रसन्न सुन्दर कहि बानी * बोलो बैन प्रेम रस सानी ।
व्योम बिन्द मम पिता कहाये * पुर वर नग्र तासु मन भाये ॥
मात केकशा है सुन बाता * रूप कला गुण जग विख्याता ।
वैश्रवण सुत है तस बंका * राज करे हो निर्भय लंका ॥

दोहा

गणितज्ञों ने अस कहा * सुनो लगाकर कान ।
रत्नश्रवा तुम को मिले * वर दानो वर दान ॥ २५ ॥

चौपाई

भूप सुता पुन मन्दिर धाई * माता के सनमुख जब आई ।
सत्य सत्य सब दियो सुनाई * सुन कर के जननी हर्षाई ॥
रानी भूपत को बुलवायो * ब्यौरा सविस्तार सुनायो ।
सुन कर वचन हर्ष मन दीनो * पाणिग्रहण सुता को कीनो ॥
पुर कुसुमान्तर नग्र बसायो * देख देख कर मन हर्षायो ।
धर्म सुकर्म सुमन माने है * जनम कृतारथ निज जाने है ॥

सैया सैन करे नृप रानी * अर्द्ध निशा बीतत जब जानी ।
तृतीय पहर हुआ प्रारंभा * स्वप्न एक देखा नृप रंभा ॥

दोहा

वन पति देखो स्वप्न में * गज को रह्यो विदार ।
कुंभस्थल को भेदता * रानी लियो निहार ॥ २६ ॥

चौपाई

स्वप्न विलोक भूप ढिग धाई, * विवरण सकल सुनायो आई ।
श्रवण करी नृप मन हर्षाये * प्रिय को मीठे वचन सुनाये ॥
प्रसन्न चित्त रानी पुनः आई * महलों में आकर हर्षाई ।
गर्भवती शुभ सुन्दर रानी * भापे वाणी अति असुहानी ॥
मोड़े अंग कटुक वच भाषे * मान अतुल अपने मन राखे ।
देखे मुख मन हर्ष कृपाना * दर्पण प्रथक करन मन ठाना ॥
अरि सिर पांव देऊ मन भावें * ऐसा गर्भ प्रभाव जमावें ।
प्रति पक्षी घर त्रास पडंता * प्रगट होय लक्ष्मण जयवंता ॥

दोहा

शुभ्र महूरत शुभ समय * शुभ लग्न धर ध्यान ।
सुत जायो नृप की प्रिया * आगे करूं वयान ॥ २७ ॥

चौपाई

चौदह वर्ष सहस्र अधिकाई * पूरण प्रमाण आयुप पाई ।
लालन पालन में दिन जाता * क्रीड़ा वाल करें मन भाता ॥
मात पिता को अति सुख दाता * भूपत देख देख हर्षाता ।
दिन दिन तेज वढ़े आनन पे * शस्त्र उठा धरे निज पानन पे ॥
हार सुवन माणिक का पायो * हर्ष सहित निज हाथ उठायो ।
लीना पहन कंठ हर्षाई * माता मोद हृदय अधिकाई ॥

माता देख अचम्भा पाया * मन में अधिक विचार वढ़ाया ।
रत्नश्रवा भूपत अविलोका * मन हर्ष मिट गयो सुशोका ॥

दोहा

सुरपति ने प्रसन्न हो * नव माणिक का हार ।
घनवाहन नृप को दियो * प्रेम मुदित मन धार ॥

चौपाई

अर्चन कियो भूप हर्षाई * कुल में यही रीति चली आई ।
रत्नश्रवा बोले असु बानी * श्रवण लगा कर सुनिये रानी ॥
फणपति सेवा करें हज़ारा * ग्रीवा हाथ वही सुत डारा ।
नव माणिक मानव मुख दीखे * दशमौ सहज आप मुख सीखे ॥
दश मुख नाम पिता तव दीनो * उत्सव बहुत हर्ष कर कीनो ।
देखो सुत अतुलित वल धारी * तेजवन्त पूरव तप भारी ॥
अरि दहलाय शरण में आये * वड़े वड़े नृप राय झुकाये ।
भान समान तेज वढ़ता है * निशवासर सु पुण्य चढ़ता है ॥

दोहा

पूछा ज्ञानी ऋषी से * मन्दिर गिरि पर जाय ।
नव माणिक के हार का * विवरण देऊ वताय ॥२६॥

चौपाई

वोले सुन कर ऋषिवर वानी * भेद बतायो पूरण ज्ञानी ।
तीन खंड का जो हो नायक * उसको हार अति सुखदायक ॥
वही ग्रीवा में यही धारे * ऐसे मुनिवर वचन उचारे ।
सुन कर के ऋषिवर की बानी * भूप चले मन में मुद मानी ॥
रत्नश्रवा के अति प्रिय रानी * स्वप्न लखा मन में हुलषानी ।
भान तेजमय गगन निहारा * शुभ सुपना अति चित्त में धारा
अवधी गर्भ की पूरण कीनी * खुशी बहुत अति मन में लीनी

भान समान तेज सुत जायो * भानकरण तस नाम धरायो ॥

दोहा

पूर्व पुण्य से पुत्र ने * पाये शुभ दो नाम ।
कुम्भकरण के नाम से * विकासित हुओ ललाम ॥३०॥

चौपाई

तीजे प्रगट हुई एक कन्या * रुप स्वरुप सुगड़ सम्पन्ना ।
सूर्पनखा दिया नाम सुता का * प्रेम अधिक प्रगटा माता का ॥
चोथे स्वप्न चन्द्र अविलोका * सुखकारी सुत मात विलोका ।
नाम विभिषण दे शुभकारी * मन आनन्द बढ़ा अति भारी ॥
चन्द्र समान चन्द्र मुख प्यारा * मात पिता जीवन आधारा ।
नीतिवान पुण्यवान अपारी * विश्व विषे सबको सुखकारी ॥
प्रेम रखे तीनों मन भ्राता * बलि पौरुष हुआ जग विख्याता
मात पिता लख कर सुख माने * त्रियागुण तीनों सुतको जाने ॥

दोहा

एक दिवस माता निकट * रावण मन हर्षाय ।
पूछे युग कर जोड़ के * जननी देओ बताय ॥३१॥

चौपाई

वायुयान कौन का साजा * बैठा जाय कौन यह राजा ।
उत्तर दियो पुत्र को माता * वायुयान में जो नृप जाता ॥
मम भगनी सुत है यह जाया * पुत्र तुम्हारा भ्रात कहाया ।
वैश्रवण शुभ नाम सुजाना * इन्द्र राव का तनय वखाना ॥
इन्द्र पितामह हना तुम्हारा * लंका छीन लई एक वारा ।
यह अपमान याद जब आवे * उठे हूक जी अति घबरावे ॥
राक्षस भीम कृपा कर भारी * लंका दीनी पुनः हमारी ।
ईश करी कृपा अधिकाई * गई वस्तु पुन. दई गहाई ॥

दोहा

दीनी है लंका पुनः * दया हृदय में धार ।
भूपत का है शीश पर * बहुत बड़ा उपकार ॥ ३२ ॥

चौपाई

भूमि छुटे जा नर के करसे * मान महातम जाय सुगर से ।
होय सधन से निरधन जो नर * तहके वचन लगे हैं ज्यों सर ॥
अन्य देश के हों रखवारें * नीति सलोगमती वह धारें ।
अनुचर देश निवासी होते * नीति अनीति सु नैनन जोते ॥
ऐसे दिवस नैन से देखे * कष्ट सहे तन पे अस पेखे ।
तेरी सेना वन्दी खाने * दीनी डार जगत् सब जाने ॥
राज तुरत हथि पाया सारा * देख दशा यह किया किनारा ।
हुवे पुत्र अब आप सरीखे * सुफल मनोरथ हों मम जी के ॥

दोहा

या समझूं मैं मनोरथ * गगन कुसुम सम जान ।
या मानूं यही सत्य मैं * जो तुम करो प्रमान ॥ ३३ ॥

चौपाई

सुन कर बचन विभीषण बोला * हृदय प्रेम तस घट में डोला ।
धीरज धरो मात मन मांही * यह कारज कुछ दुर्लभ नाहीं ॥
वचन आप के हम सिर धारे * सादर आज्ञा विनय सभारे ।
जो इच्छा तव मन में धारी * जो जननी चित बीच विचारी ॥
कर हैं काज आप मन चाहा * प्रण अपने का करो निवाहा ।
पितु का वैर जो सुत न लेही * वृथा कष्ट निज जननी देही ॥
ऐसे नर भू भार समाना * जो न करें मा पितु सनमाना ।
मात पिता जिनके दुख पावें * पुत्र जिन्हों के ध्यान न लावें ॥

दोहा

दशकन्धर राजा भये * चढ़ते तेज प्रताप ।

दिन-दिन तप बढ़ता रहा * काटा निज संताप ॥ ३४ ॥

चौपाई

दिन कर उदित होय जहि धारा * उडगणवृन्द लोप होय सारा ।
चन्द्र पलास पात सम होई * नाश तम जाने सब कोई ॥
रावन बैठ भुवन सुख पावे * कुंभ करण बलवन्त कहावें ।
अष्टापद सम हैं बलवन्ता * सिंह होय लख कर निबलन्ता ॥
दशकन्धर सविनय उचारे * माता श्रवण कर वचन हमारे ।
जोर युगल कर वचन सुनाऊँ * विद्या साधन के हित जाऊँ ॥
दीजे अनुशाशन अब माता * सिद्धकरे मम काज विधाता ।
माता पुत्र वचन चित्त दीना * हर्षबढ़ा मन आयुष दीना ॥

दोहा

सुखारा धन साधन के * विद्या एक हजार ।
मोद मान आया तुरत * दशकन्धर उसबार ॥ ३५॥

चौपाई

हर्ष चरन जननी के पर से * नमन किया अति मन में हर्षे ।
लाई मात प्रेम अति मन में * लख नन्दन फूली अति तन में ॥
करें सिंह सम रावण राजा * विनय सहित सब सारें काजा ।
लोचन ललित लाल ललचाये * हास विलास हर्ष हिये छाये ॥
मंगल युत निशवासर बीते * डीठ विलोक शत्रु भय भीते ।
आये कुम्भकरण कर काजा * गये दुख भये सुख समाजा ॥
रावण भ्रात विभीषण आये * विद्या साधन करी हुलसाये ।
और आगे का सुनो बयाना * दीजै अब आगे कुछ ध्याना ॥

दोहा

षट उपवास कर साधना * हो प्रसन्न मन मांहि ।
चन्द्रहास खांडो सुगर * मन में अति ही भांहि ॥३६॥

चौपाई

गिरि वैताड़ सु सुन्दर सोहे * दक्षिण दिश श्रेणी मन मोहे।
पुर वर नग्र सु सुन्दर नीका * सुर पुर सम शुभ सुगर अलीका
भय भूपति ताको अति ज्ञानी * केतुमती अति सुन्दर रानी ।
मन्दोदरि कन्या शुभ जाके * सुन्दर रूप स्वरूप प्रभा के ॥
शर्द चन्द्र सम सुन्दर आनन * जीते पंचानन के वानन ।
केशर सम कच सुन्दर प्यारे * शुभ सुढ़ार कारे कोरारे ॥
सिन्दुर विन्दु गात अति नीका * देख मुदित मन होय पति का।
भृकुटी कुटिल वंकलख हारे * काम धनुष लख हाथ निहारे॥

दोहा

सुन्दर सर वर सुधा के * और हलाहल पैन ।
मधुमाते राते जियत * झुकत मरत वह नैन ॥३७॥

चौपाई

नाश इक टक शुक ही निहारे * लज्जावश उड़ि गये विचारे।
श्रुत सुन्दर सुशोभनी प्यारे * सीपी लख कर गई किनारे॥
गोल कपोल लाल मतवारे * लख गुलाव सुन्दरता हारे।
सुधा सरोवर क युग प्याले * लटके व्याल मनो मतवाले॥
अधर अमी माधुर पन धारे * पिय परसत मन होत सुखारे।
ग्रीवा मयूर हंस सी प्यारी * कोकिल कण्ठ महासुखकारी॥
सु तन सुढ़ार शची से सुन्दर * शर्मावे लख तीय पुरन्दर ॥
और कहुं उपमा कहा वाकी * पटतर अखिल भूमि नहिं ताकी

दोहा

अमल अद्वितीयता समय * त्रियन की सिर मौर ।
विमल विकथ विमलाम्बरी * सी नहिं जग में और ॥३८॥

चौपाई

भय भूपत दशकण्ठ निहारा * पुण्य तेज लख मन असधारा।

कन्या सम लख रावण राजा * पाणि ग्रहण कर किया सुकाजा
इन्द्र सहित इन्द्राणी जैसे * सोहत युगल सुमंगल तैसे ।
घन दामिनी सम लख सुघराई * मात हृदय पुलकावलि छाई ॥
षट सहस्र खेचर की कन्या * रूपमगार सुगर शुभ धन्या ।
वरी एक संग मन हर्षा के * पूरव पुण्य उदय हैं ताके ॥
आनन्द मान रहे सुख कारी * देखे प्रेम दृष्टि सुख भारी
यह विधि लंकापति हर्षाई * सैर करन की मन में आई ॥

दोहा

पोम विघाती को नृपत * शुभ सुन्दर महाराज ।
अवर जनक को संग ले * चला कटक को साज॥३९॥

चौपाई

यह लख दशा सुबोली रानी * कहे पति से कोकिल वानी ।
शीघ्र विमान बढ़ाओ स्वामी * वेग चलो अति अम्बरगामी॥
आया दल भारी विकराला * टालो देकर कोई टाला ।
दशकन्धर बोले भामिन से * अभय रहो अस कह कामिन से
दल व्याजन के जो कहुं आवें * गरुड़ विलोक तुरत टल जावें।
जो रण होय विजय मैं पाऊं * भूर भयंकर समर दिखाऊं ॥
धनुष नाग सर कर जब साधू * नृप को एक पलक में बांधू ।
यह विधि प्रियको समझा दीनी * पूरण विजय कामना कीनी ॥

दोहा

भूप महोदर वीर अति * कुंभ पुराधिप मान ।
सुरुप नैन रानी सुगर * सुन्दर रूप निधान ॥४०॥

चौपाई

पुत्री तासु तडित शुभ माला * अति स्वरूप गुणशील विशाला
कुंभ करण को दी परणाई * बहु विधि मन में प्रीति चढ़ाई॥

वीर नरेन्द्र नृपत अति भारी * नंदवती रानी तसु प्यारी।
नगर ज्योतिपुर सुन्दर धामा * ताको राज करे अभिरामा॥
कंज श्री पुत्री सुकुमारी * पंकज मुखी सुखी अति भारी।
हो मन मुदित विभीषण ब्याई * पतिव्रता पति को सुखदाई॥
जग आनंद बढ़ावें मन में * वन पति सम विचरें कानन में।
परम प्रसन्न युगल मन मानै * दम्पति प्रेम परस्पर ठानै॥

दोहा

शुभ्र महूरत शुभ घड़ी * मन्दोदरी हर्षाय।
सुत जायो सुन्दर सुगर * आनन्द मन हर्षाय ॥४१॥

चौपाई

सुन्दर सुरपति सम सुखमारा * लख मन्दोदरि मन हर्ष अपारा
रावण पुत्र जन्म सुध पाई * अनुचर दीनी आन बधाई॥
द्रव्य बहुत देकर खुश कीना * आनन्द युत उत्सव मन दीना।
इन्द्रजीत रक्खा तस नामा * मोद भरो शुभ अति सुख धामा॥
घन वाहन दूजो सुत प्यारो * देख देख मन सुख हो भारो।
कुंभ करण कर जोरे ठाड़े * लंका धनद सुमाल उजाड़े॥
रावण कोप कियो अति भारी * अपनी सेना को श्रृंगारी।
डंका देकर करी चढ़ाई * जहां भई अति विकट लड़ाई॥

दोहा

विजय भई दश कण्ठ की * हर्षो सैन समाज।
धनद परा जय जानकर * रण से दीयो भाज ॥ ४२॥

चौपाई

धनद चतुर चारित्र सु लीना * चित्त शुभ तप संयम में दीना।
चर्म शरीरी मन हुलसावे * समता दृष्टि जीवों पर लावें॥
शत्रु मित्र सम एक निहारे * अथिर विश्व मन बीच विचारे।

रावण निकट धनद के आवे * मुनिवर को कर जोड़ खमावें ॥
लंका को रावण हतियाई * समर भूमि भूपति जै पाई ।
लीने पुष्पक सुगर विमाना * वायु युक्त उड़े असमाना ॥
मात मनोरथ पूरा कीना * जननी के चरनों सिर दीना ।
मुदित मात देती आशीषा * अमर रहो मम सुत दश शीशा

दोहा

पुष्पक वायुयान में * रावण मन हर्षाय ।
बैठ चले वैताड़ को * मन में मोद बढ़ाय ॥ ४३ ॥

चौपाई

भुवनालंकृत देख लुभाये * ले गज शाला बीच पठाये ।
रावण तट एक खेचर आया * अपना संकट कहे सुनाया ॥
किष्किंधा नृप सुत बलधारी * समर बीच करे युद्ध करारी ।
लंक पयाला से चढ़ आया * यम को रण के बीच हराया ॥
यम को कारागार पठाया * कष्ट वहुत उसको दिखलाया ।
आप छुड़ाओ भूपत जाके * विन्ती मेरी सुनो मन लाके ॥
सेवक वह तुमरो कहलावे * और नृपत गिन्ती नहीं लावे ।
एता काम करो नृप मेरा * होय अनुग्रह भूपत तेरा ॥

दोहा

मन विचार दश कंठ नृप * चढ़े कोप मन लाय ।
यम को दिया छुड़ाय के * रण में युद्ध मचाय ॥४४॥

चौपाई

सुर सुन्दर रणबीच हराया * राजनू मध्य सु आदर पाया ।
कोपो इन्द्र राव बलि धारी * चढ़ आया शुभ समय विचारी
यम ने सुर संगी तक कीना * मित्र भये आश्वासन दीना ।
ऋतु नगर लंका पति आये * मित्र भाव भरी मोद मनाये ॥

शुभ महूरत रावण राजा * लंका आय करे शुभ काजा ।
घर घर नार वधाई गावैं * मंगल मोद सभी सुख पावैं ॥
सैना पति सैना सुख पावैं * भूपति की जय विजय मनावैं ।
आनन्द मंगल मोद विशेषा * घर-घर मंगल चारु सुदेशा ॥

दोहा

अति प्रवीन अति साहसी * अति दाता वलवान ।
अति चातुर विद्वान अति * शुभ गुण सकल निधान ॥४५॥

चौपाई

सूरराज भूपति वलि कारी * इन्दुमालिनी अति प्रिय नारी ।
सुत वलवान वला निज जायो * सुन्दर नाम सुमाली पायो ॥
सव विधी पुर महा रण धीरा * सुयशी सूर वली अरु धीरा ।
समुद्रान्त प्रदक्षिण देई * भूमि प्रदक्षिण दे यश लेई ॥
अनुज एक जिसके वलवाना * नाम सुकंठ सुग्रीव महाना ।
सुगर स्वरूपा सुन्दर कन्या * रुप अनुपम है अति धन्या ॥
ऋक्ष राज ग्रह सुमुख सुनैनी * हरिकन्ता शुभ कोकिल वैनी ।
दो सुत शूर तासु ने जाये * नाम नील नल सुन्दर पाये ॥

दोहा

सुर राजने दीक्षा लई * वाली को दे राज ।
आप पधारे शिव नगर * सारा आतम काज ॥४६॥

चौपाई

एक दिवस लंकापति रावण * मन विचार करता शुभ हावण ।
सैर कान कौ भूप सिधारे * निर्जन चलो न कोई लारे ॥
मेरु गिरि लख मन हर्षाये * मुदित भाव निज मन में लाये ।
दशकन्धर भगनी सुकमारी * देख चपलता दामिन हारी ॥

सुर्पनखा तस नाम सुहाई * खेचर खर लेगयो उठाई ।
पहुँचो लंक पयाला जाई * मन में अति आनद मनाई ॥
चन्द्रोदरी मन में रिष खाके * सैन साज ले गयो चढ़ाके ।
खर को सुर्पनखा दी व्याई * हृदय वढ़ी युगल मित्राई ॥

दोहा

वनमा नंदन के हुआ * पुत्र एक बलवान ।
सकल कला प्रेमी हुआ * विराध नाम सुजान ॥४७॥

चौपाई

जव विराध यौवन में आया * पिता वैर लेना मन चाया ।
शीघ्र करी रण की तैयारी * कटि कृपाण आपने धारी ॥
वाली की सेवा मन लाया * प्रेम प्रीत लख मन हुलषाया ।
परामर्श वाली से कीना * दूत भेज अरि के तट दीना ॥
कीर्ति धवल से मुझ मित्राई * श्री कंठ तुझ से मन भाई ।
अव अभिमान न कीजो भाई * यह आज्ञा मम तुझे सुनाई ॥
वाली ने यों वचन उचारा * मन में सोच समझ ललकारा
जन अपवाद करें जग माहीं * यह विचार आवे मन मांहीं ॥

दोहा

जा तू मान कहा मेरा * अपने नृप के पास ।
कह दीजो सारी कथा * जिसका है तू दास ॥४८॥

चौपाई

पहुँचो दूत लंक पति पासा * समाचार कह दिये खुलासा ।
दूत वचन सुन रावण राजा * कुपति होय सव दल वल साजा
घेरा वाली नग्र को जाकर * कटक जमाया मन हर्षा कर ।
कपि पति देखे दृष्टि पसारी * सैना को नहीं वारा पारी ॥
लोक उपद्रव टालन चाहे * श्रीपन श्रावक धर्म निबाहे ।

द्वन्द्व युद्ध स्थापन कीना * और उपाय प्रथक् कर दीना
दोनों वीर करी स्वीकारी * दया धरम दोनों मन धारी।
अस्त्र शस्त्र कर के तज दीने * मल्ल युद्ध मन में शुभ कीने ॥

दोहा

मल्ला युद्ध करने लगे * दोनों वीर महान्।
वाली अरु दशकण्ठ यह * समर कुशल विद्वान॥४६॥

चौपाई

भिर गय आपस में भट मारे * करें युद्ध परस्पर जुझारे।
जूझें युग कुंजर मतवारे * होय चटा पट युद्ध मचारे ॥
गिरह लपटे पेच कर मारे * कोई अडंगा दकर मारें।
काज कोई झोली से सारे * कोई इक लंगा से भू डारे ॥
हफता तोड़ कोई ले आवे * कला जंग कइ के मन भावे।
घिस्से पर खींचे कोइ वीरा * कोई भूमि मल देय शरीरा ॥
कोई करें नाग चिंघारा * परीवन्द गोता कोइ मारा।
कोई मोती चूर संभारे * कर लो कान कोई दे मारे ॥

दोहा

वाल सांगड़ा डाल कइ * कइ पट देय उखाड़।
कोइ करै हल कून पर * पटके मनो पहाड़॥ ५० ॥

चौपाई

कोई रुई दस्त पर लाके * घुर फलांग कई करे अघा के।
वगली डुबकी सांड़ी कोई * चरखा कर रेले कई जोई ॥
आंटी असवारी कइ करता * कमरबन्द कोई मन में धरता।
घर लपेट कोई कर झूमे * रुम डाल कोई इत उत घूमे॥
धला श्री पर कोई उठावे * कोई झट झट सखी लगावे।
कई ढ़ाटी कई करे सुराना * एक एक से है वलवाना ॥

दशकन्धर लियो अधर उठाई * तब रावण की मत बौराई ।
दाबो कांख बाल दशकन्धर * देख रहे यह खेल पुरन्दर ॥

दोहा

सागर की प्रदक्षिणा * चारों ओर दिवाय ।
दियो छोड़ पुनः कांख से * अपने मन हर्षाय ॥ ५१ ॥

चोपाई

अपमानित हो मन खिसियाये * दस कन्धर मन में भुंझलाये ।
मन सन्ताप बढ़ा अति भारो * लज्जायुत गढ़ लंक सिधारो॥
वालि कियो सुग्रिव को राजा * अपना सिद्ध कीना सब काजा
संयम ले तप कर अधिकाई * पंचमी गति से प्रेम बढ़ाई ॥
माह माह तप करे सुजाना * प्रतिमा धार स्वमन सुख माना।
लब्धिवान भयो ऋषि वाली * समता हृदय बीच संभाली ॥
अष्टापद गिरि पर ऋषि आया * कायोत्सर्ग कर ध्यान लगाया।
योग ध्यान निश्चल मन धारे * तप से कर्म-रिपु संहारे ॥

दोहा

गिरि अष्टा पद पर गये * रावण मन हर्षाय ।
दशकन्धर की दृष्टि में * ऋषि वाली गये आय॥५२॥

चौपाई

रावण रोष कियो अति भारी * मन में वैर पुरातन धारी ।
गिरिवर शीश लगाय हलावे * नांचे ऋषि ही गिरावन चावे ॥
ऋषि ने पैर अंगुष्ट जमाया * दवन लगा मन में घबराया ।
ध्यान ऋषि चरनन में दीना * मन से रोष प्रथक सब कीना ॥
जीता राग द्वेष मुनि राजा * सारन हित निज आतम काजा ।
दशकन्धर मन में पछताये * ऋषि को करी वंदना आये ॥
भक्ति करी स्वमन चित्त लाई * यह चरित्र धरणेन्द्र लखाई ।

प्रेम दृष्टि रावण पर कीनी * विजय अमोघ शक्ति इक दीनी ॥

दोहा

विद्या साधन दी करा * सुरपति मन हर्षाय ।
रावण से कर मित्रता * इन्द्र चरण वढ़ाय ॥५३॥

चौपाई

दशकन्धर मन हर्ष अपारा * शत्रु विलोक शोक महि डारा ।
बैठ विमान लंकपति धाये * हर्ष विनोद लंक में आये ॥
वाली ऋषिश्वर तप कर भारी * तप संयम की लीक निहारी ।
आतम काज सार ऋषि राई * पहुँचे मुक्तिपुरी के माँही ॥
आप तरे औरों को तारा * जाना यह संसार असारा ।
चरण कमल अस ऋषि के पामें * श्रद्धा सहित शीश पद नामें ॥
मन वच क्रम से जो गुण गावें * कष्ट रहित हो शिवगति पावें ।
वार-वार सिर पद में नामे * वो नर अमर अचल गति पामे

दोहा

ज्योति पुर वर नग्र शुभ * गिरि वैताढ़ सुधाम ।
विद्याधर नृप ज्वलनसिंह * सब गुण शुभ अभिराम ॥५४॥

चौपाई

श्रीमती तस प्राण पियारी * शीलवती तस गुण अधिकारी
पुत्री सुतार नाम शुभ तारा * सुंदर शुभ गुण रूप अपारा ॥
कनकलता सा तन अति सुन्दर * लाजे तस लख नारी पुरन्दर ॥
नैन मैन फेसे युग प्यारे * कच कारारे अरु घूंघराले ॥
चोटी देख नाग त्रिय हारी * लट लटकी लटकी मतवारी ।
चित्रित चपल चित्राणी जैसे * चोखे चारु चक्षु शुभ तैसे ॥
साहस गति नृप ताहि निहारी * मोहित भयो भूप अति भारी ।
साहस गति साहसं तस छाया * ज्वलनसिंह नृपके तट आया ॥

दोहा

अधिक प्रेम दर्शाय के * करी याचना तास ।
उत्तर नरपति दियो * पूरण हुई न आस ॥५५॥

चौपाई

सो कन्या कपि पति परनाई * ता सम नृप न दियो दिखाई ।
स्वल्पायुष साहस गति जानी * तासे नहीं याचना मानी ॥
तारा पति संग रहे सुखारी * पति को अति प्राणों से प्यारि ।
दो सुत सुगर सु तारा जाये * नाम जयानन्द अंगद पाये ॥
साहस गति मन होय मलीना * प्रेम विवश मन में अति लीना ।
मन में वहुत उपाय विचारे * दांव घात वहुतिक मन धारे ॥
विन तारा नहिं मन में चैना * तड़फे विन जल भक दिन रैना ।
वदला विद्या से निज रूपा * हेमवन्त पर्वत गयो भूपा ॥

दोहा

दशकन्धर दिग् विजय हित * हुओ तुरत तैयार ।
कटक साज कर आपनो * वान्धे सव हथियार ॥५६॥

चौपाई

तेज प्रतापी लंकपति भारे * उदय भान सब तेज वढ़ारे ।
लंक पयाला पहुँचे जाई * आनन्द वहुत हुआ मन मांही ॥
खर दूषण शुग भ्रात जुम्हारा * हुये संग चलन को तयारा ।
चौदह सहस्र लिये सग खेचर * शस्त्र संभार होश मन में धर ॥
नृप सुग्रीव संग उठ धाये * प्रेम मग्न रावण संग आये ।
नदी नर्वदा के तट आके * हर्ष सहित दियो कटक टिका के
रावण कर दरवार विराजे * सुभट विकट जिन के संग साजे
परामर्श सुभटों से करता * प्रेम प्रीत हृदय में भरता ॥

दोहा

पूछे रावण अधिपति * सव से प्रेम वढ़ाय ।

नाम नगर पुन भूप का * दीजे हमें बताय ॥५७॥

चौपाई

उत्तर देने लगे हर्षाई * सुनिये भूपति श्रवण लगाई।
महिषमति नगरी को नामा * सहस्रांश भूपति अभिरामा॥
राय हजार करें तस सेवा * सादर अरचें जिम कुल देवा।
एक सहस्र छै सुन्दर नारी * निज पति के प्राणों से प्यारी॥
सैन कटक अति ताके भारे * युगल लक्ष अति वीर जुझारे।
यह विधि आनन्द रहे मनाई * सुख भोगे मन में हर्षाई॥
जल बहु बन्ध बान्ध कर रोका * नारि सहित कर केल अशोका।
रमैं गजेन्द्र समान नृपाला * निधड़क रहें सदा भूपाला॥

दोहा

जाकर दीनी सूचना * सहस्रांश को वीर।
रावण चढ़ आया नृपत * समर जुझारा धीर॥५८॥

चौपाई

सुन कर वचन भूप उठ धाया * शस्त्र बान्ध समर में आया।
विविध भांति शस्त्र नृप छोड़े * रावण रण से मुख नहिं मोड़े॥
दशकन्धर लिया बाँध नृपाला * विजय समझ निज मंदिर चाला।
चारण ऋषि आये तह वारी * नभ पथ से उतरे ब्रह्मचारी॥
सत बाहू तस दियो छुड़ाई * ऋषि मन मुदित हुये अधिकाई
चले ऋषि नभ पथ निश कामा * लीयो पवन सुगर शुभ धामा॥
दीनी रार मेट तहि वारी * पुनः ऋषि ने पग धरो अगारी।
देश-देश पर्यटन करते * रीति अनेकन चित्त में धरते॥

दोहा

अन्नरण्य अरु नरेन्द्र सु * दोनों मित्र सुजान।
एक ठाम चारीत्र ले * हुये मगन महान॥५९॥

चौपाई

अन्नरण्य ने राज तज दीना * निज नंदन को अधिपति कीना
दशरथ हुए अवध के राजा * करें पिता आयुष युत काजा॥
अन्नरण्य ले चारित्र सिधारे * कीये तप अति मन हुलषारे।
यहि कारण नृप त्यागा राजा * पूरण किया सु आतम काजा॥
नीति शुक्त दशरथ भूपाला * पुत्र समान प्रजा को पाला।
लंपट लंट दृष्टि नहीं आवे * सुन्दर सुखद अवधि दिखलावे॥
प्रजा परम भूप हितकारी * वृद्धि नृपत की चहै हरवारी।
अवधी भई सुख सम्पत्तिपूरी * मंगलमय घर दीसत रूरी॥

दोहा

तड़ित धाय नारद चले * करते धूम अपार।
दश कन्धर तट आय के * कहन लगे उच्चार॥ ६०॥

चौपाई

करत अनीत भूप अति भारी * सुनिये नृप पति विनय हमारी।
नगर राज पुर को अधिकारी * भूप मरुत जिन नीत विसारी॥
मिथ्यादृष्टि है तसु राजा * कुगुरा यश से करे अकाजा।
हिंसा करे यज्ञन में भारी * पशु वध में करे धर्म प्रचारी॥
हित हवन के जीव मँगाये * उनके शब्द श्रवण मम आये।
करुणा कर नृप के तट धाया * नाना भाँति नृपत समझाया॥
उत्तर दिया भूप सुन वानी * भूदेवों की सुना जवानी।
विप्रों ने जो कुछ उच्चारा * वही काज करूँ मैं सारा॥

दोहा

असुरन पति के लिये * जीव होमना धर्म।
अन्दर वेदी वलि करे * है यही उत्तम कर्म॥ ६१॥

चौपाई

इस कारण मम यज्ञ रचाया * होमूँ पशु होय मन भाया ।
यह सुन कर उत्तर मम दीना * उमड़ दया भर आया सीना ॥
यह शरीर है उत्तम वेदी * आतम सत यजमान सुभेदी ।
तप की अग्नि ज्ञान व्रत नीका * कर्म समिध है सुनो अलीका ॥
क्रोध कषायें पशुवत जानो * यज्ञ स्थम्भन सत्त को मानो ।
रक्षा प्राणी मात्र की करना * यही दक्षिणा हिरदय धरना ॥
रत्नतीन अनमोल भूवाला * दर्शन ज्ञान चारित्र नृपाला ।
वेद कथित यह यज्ञ सुजानो * मुक्ति पंथ यह शुभ नृप मानो ॥

दोहा

सुन कर यह मेरे वचन * विप्रवृन्द झुँझलाय ।
मार-मार अति ही करी * भूपति दियो गिराय ॥ ६२ ॥

चौपाई

प्राण बचाय वहां से धाया * पास तुम्हारे मैं चल आया ।
जीवों को चल कर अपनाओ * निरपराध पशु को बचाओ ॥
सुनकर लंक पति उठ धाये * शीघ्र सु नारद के संग आये ।
सादर मरुत सिंहासन दीना * शुभ सत्कार देव सम कीना ॥
देखी यज्ञ रावण ललकारा * हिंसक कर्म हृदय क्यों धारा ।
तीन लोक के जो हित कर्ता * दया भाव जीवों पर धरता ॥
श्री सर्वज्ञ सु शब्द सुनाया * धर्म अहिंसा में बतलाया ।
हिंसा बीच धर्म कहो कैसे * मानो पुष्प गगन के जैसे ॥

दोहा

प्रथक करो हिंसा हवन * मम अनुशासन मान ।
किन्तु कारागार में * रहना पड़े निदान ॥ ६३ ॥

चौपाई

नर्क वास परलोक मंझारी * सोच समझ मन देय विसारी
मरुत भूप मन मे पहिचाना * दशकन्धर का आयुष माना ॥
नारद से दशकन्धर बोला * सुन्दर शब्द सु आनन खोला।
यज्ञ हवन में पशु वध कैसे * हुआ आरंभ कहो यह कैसे ॥
सुनकर नारद वचन उचारे * सुनो भूप लंका पति भारे।
चंदी देश एक अति भारा * शुक्ति मति नगरी शुभकारा॥
चारों ओर बहैं शुभ सरिता * वन उपवन लख हृदय उमरता
कूप तड़ागन कीर्ति बड़ाई * बहु प्रकारे शोभा पाई ॥

दोहा

अभिचन्द्र राजा महा * शुभ गुण सकल निधान।
नीतिवान् धर्मवान् अति * बल बुद्धि तेज निधान ॥ ६४ ॥

चौपाई

सुत सुन्दर वसु ताको नामा * सत भाषी सुख रास सु रामा।
शिक्षा हेत गुरु तट आये * मैं पर्वत वसु मित्र कहाये ॥
पर्वत नाम गुरु सुत पाया * सम विद्या का भ्यास कराया।
गुरु के निकट रहे हम तीना * श्रम से थक सो रहे प्रवीना ॥
गगन पंथ मुनि चारण जाते * रहैं परस्पर युग बतराते ।
एक नर्क दो स्वर्ग सिधावें * यही रीति बतराते जायें ॥
गुरु ने सुनी ऋषियन की बानी * बड़ा सोच गुरु के मन आनी।
करन परीक्षा पास बुलाये * याचन हित मन मते उपाये ॥

दोहा

कुक्कुट आटे के बना * दीने हाथ गहाय।
जहां न देखत हो कोई * वहां मार के लाय ॥ ६५ ॥

चौपाई

आना गुरु की शीश चढ़ाई * तीनों मित्र चले हैं धाई।

चौपाई

इस कारण मम यज्ञ रचाया * होमूँ पशु होय मन भाया ।
यह सुन कर उत्तर मम दीना * उमड़ दया भर आया सीना ॥
यह शरीर है उत्तम वेदी * आत्म सत यजमान सुभेदी ।
तप की अग्नि ज्ञान व्रत नीका * कर्म समिध है सुनो अलीका ॥
क्रोध कषायें पशुवत जानो * यज्ञ स्थम्भन सत्त को मानो ।
रक्षा प्राणी मात्र की करना * यही दक्षिणा हिरदय धरना ॥
रत्नतीन अनमोल भूपाला * दर्शन ज्ञान चारित्र नृपाला ।
वेद कथित यह यज्ञ सुजानो * मुक्ति पंथ यह शुभ नृप मानो ॥

दोहा

सुन कर यह मेरे वचन * विप्रवृन्द झुँझलाय ।
मार-मार अति ही करी * भूपति दियो गिराय ॥ ६२ ॥

चौपाई

प्राण बचाय वहां से धाया * पास तुम्हारे मैं चल आया ।
जीवों को चल कर अपनाओ * निरपराध पशु को बचाओ ॥
सुनकर लंक पति उठ धाये * शीघ्र सु नारद के संग आये ।
सादर मरुत सिंहासन दीना * शुभ सत्कार देव सम कीना ॥
देखी यज्ञ रावण ललकारा * हिंसक कर्म हृदय क्यों धारा ।
तीन लोक के जो हित कर्ता * दया भाव जीवों पर धरता ॥
श्री सर्वज्ञ सु शब्द सुनाया * धर्म अहिंसा में बतलाया ।
हिंसा बीच धर्म कहो कैसे * मानो पुष्प गगन के जैसे ॥

दोहा

प्रथक करो हिंसा हवन * मम अनुशासन मान ।
किन्तु कारागार में * रहना पड़े निदान ॥ ६३ ॥

चौपाई

नर्क वास परलोक मंझारी * सोच समझ मन देय विसारी
मरुत भूप मन मे पहिचाना * दशकन्धर का आयुष माना ॥
नारद से दशकन्धर बोला * सुन्दर शब्द सु आनन खोला।
यज्ञ हवन में पशु वध कैसे * हुआ आरंभ कहो यह कैसे ॥
सुनकर नारद वचन उचारे * सुनो भूप लंका पति भारे।
चंदी देश एक अति भारा * शुक्ति मति नगरी शुभकारा॥
चारों ओर बहैं शुभ सरिता * वन उपवन लख हृदय उमरता
कूप तड़ागन कीर्ति बड़ाई * बहु प्रकारे शोभा पाई ॥

दोहा

अभिचन्द्र राजा महा * शुभ गुण सकल निधान।
नीतिवान् धर्मवान् अति * बल बुद्धि तेज निधान ॥ ६४ ॥

चौपाई

सुत सुन्दर वसु ताको नामा * सत भाषी सुख रास सु रामा।
शिक्षा हेत गुरु तट आये * मैं पर्वत वसु मित्र कहाये ॥
पर्वत नाम गुरु सुत पाया * सम विद्या का भ्यास कराया।
गुरु के निकट रहे हम तीना * श्रम से थक सो रहें प्रवीना ॥
गगन पंथ मुनि चारण जाते * रहें परस्पर युग वतराते ।
एक नर्क दो स्वर्ग सिधावें * यही रीति वतराते जायें ॥
गुरु ने सुनी ऋषियन की वानी * बढ़ा सोच गुरु के मन आनी।
करन परीक्षा पास बुलाये * याचन हित मन मते उपाये ॥

दोहा

कुक्कुट आटे के बना * दीने हाथ गहाय।
जहां न देखत हो कोई * वहां मार के लाय ॥ ६५ ॥

चौपाई

आज्ञा गुरु की शीश चढ़ाई * तीनों मित्र चले हैं धाई।

जाकर वहु स्थान निहारे * निर्जन बन में जाकर ठारे ॥
चहुँ दिश देखा द्रष्टि उठाई * पड़े जीव नहिं कोई दिखाई ।
पुन अपने मन बीच बिचारा * मैं देखूँ या देखन हारा ॥
ज्ञानी देख लोक अलोका * मन विचार पड़ गये सशोका।
गुरु सन्मुख पुन पहुँचे जाई * गुरु को सारी कथा सुनाई ॥
मुर्ग मार वसु पर्वत आये * गुरु को लाकर के दिखलाये ।
सोचे गुरु यह रौरव जायें * वचे किसी के यह न बचायें॥

दोहा

मन विचार दीक्षा धरी * गुरु कीना कल्यान ।
तप करके शुभ गति गये * सुनिये आगे ब्यान ॥ ६६ ॥

चौपाई

पर्वत गुरु की गद्दी पाई * पंडित हो अति खुशी मनाई।
अभिचन्द्र नृप दीक्षा धारी * वसु नृप हुये राज अधिकारी॥
प्रगट भये नृप वसु सतधारी * कीरत विश्व विषे विस्तारी ।
वे ले सांच सदा नृपाला * न्याय नीति से किया उजाला॥
करन अखेट एक नर धाया * गिरि विन्ध्याचल पर वह आया
चाप चढ़ा चित्त मृग पर दीना * बाण चढ़ाय लक्ष मन कीना॥
चूका लक्ष चतुर झुंझ लाया * देखन हेत अगाड़ी धाया ।
देखी शिला सुश्वेत अमल सी * क्षीर नीर या पद्म कमलसी ॥

दोहा

निर्मल स्फटिक शिला लखी * मन में किया बिचार ।
शशि की छाया से पड़ा * प्रति बिम शिला मझार ॥६७॥

चौपाई

वसु भूपति हैं यह लायक * ऐसा ध्यान किया मन पायक॥
शिला भूप को लाकर दीनी * प्रेम सहित नृप अर्पित कीनी

देख शिला को नृप मन माँहि * हो प्रसन्न बोले हुल षाई।
दिया द्रव्य मन मुदित भुवाला * लेकर द्रव्य शिकारी चाला ॥
सिंहासन ताको बनवाया * धर गद्दी पर मन हुलसाया।
बैठ न्याय करता सिंहासन * अधर दीखता है शुभ आसन॥
सुयश पाया जग में राजा * शुभ्र होय भूपत का काजा।
सुर प्रसन्न होय रहें पासा * बड़े-बड़े नृप ताके दासा ॥

दोहा

समय पाय मैं भी गया * देखा दृष्टि पसार।
पर्वत मुख ऋगवेद को * मिथ्या रहे उचार ॥ ६८ ॥

चौपाई

बकरा अज का अर्थ बताया * सुनकर अधिक उन्हें समझाया।
गुरू त्रिवर्ष धान बताया * शुद्ध अर्थ को नहीं समझाया॥
पक्ष पात वश वह नहीं माना * वंक भाव मेरा पहिचाना।
गुरु पत्नि ने भी समझाया * मात वचन को भी ठुकराया ॥
पै माता सम कौन दयाला * रखा गर्भ ले गोदी पाला।
वसु को जाकर विनय सुनाई * भूपति मन में गये लजाई ॥
माता की आज्ञा नहीं टाली * टाली भूपति राज प्रणाली ॥
लगी युगल प्राणों की बाजी * भूपति करी मात को राजी ॥

दोहा

दोनों जा दरबार में * हाल दिया समझाय।
वसु भूपति कहने लगे * अति मन में झुंझलाय ॥६९॥

चौपाई

नारद मिथ्यावचन तुम्हारा * बिन सोचे काहि भाँति उचारा।
बिन विचार जो कारज करते * ऐसे नर विपता सिर धरते ॥

कारज अपनो आप बिगारे * बिन विचार जो कृत मन धारे।
बोले बहु विद्वान सुजाना * करो न्याय नृप जो सत जाना।
भूप अर्थ बकरा बतलाया * मिथ्या वचन आन सुनाया।
कुपति हुये सुर, सत के रागी * भूपति की अनुशासन त्यागी॥
स्फटिक शिला खण्ड कर दीनी * भूपति की बहु निन्दा कीनी।
नृप मर कर गये नर्क द्वारा * यह कारण हुआ विस्तारा॥

दोहा

मरुत भूप पूछन लगे * लंका पति से आय।
इन ऋषि का वृत्तान्त कुछ * दीजै मुझे सुनाय॥ ७० ॥

चौपाई

यह ऋषि है मेरा उपकारी * जीव छुड़ाकर दया विचारी।
सुन कर दशकन्धर मुस्काये * मरुत भूप को वचन सुनाये॥
ब्रह्मरूची ब्राह्मण तप धारी * पास रखे था अपनी नारी।
स्त्री गर्भवती भई ताकी * अन्य तपस्विन ऐसे ही भाखी॥
विपिन में संग नार लगाई * तो घर छोड़ कहा प्रभु ताई।
मुनि के वचन बाण सम लागे * विषय भोग संग सब ही त्यागे॥
परम श्रेष्ट जिनमत स्वीकारा * मिथ्यामत सो किया किनारा।
संयम ले तप करने लागे * मिथ्या जगत् जाल सब भागे॥

दोहा

समय पाय कर ऋषि त्रिया * जन्मा पुत्र विशाल।
जनमत ही रोया नहीं * नारद का यह हाल॥ ७१ ॥

चौपाई

जृंभक सुर ने सुत हर लीना * सुत वियोग दारुण दुख दीना।
कुर्मी ने की दीक्षा धारण * आतम काज संभारन कारण॥
सती इन्दुमाला के तीरा * मेटी जनम मरण की पीरा।

जृंभक सुर ने इन्हें पढ़ाया * लालन पालन कर बहलाया ॥
शास्त्र विशारद नारद कीना * कर्त्तव्य पर अपने चित्त दीना ।
गगन गामिनी विद्या दीनी * मनसा पूरी सकल विधि कीनी॥
श्रावक व्रत अब रहो दिपाई * शिखा जटा रक्खी हर्षाई ।
कलह प्रिय मन ऋषि ने कीना * नृत्य गीत का अति शोकीना ।

दोहा

देव ऋषि के नाम से * हुये विश्व विख्यात ।
नारद की उत्पत्ति की * तुम्हें सुनाई बात ॥

चौपाई

नित ही रहे स्व इच्छा चारी * ब्रह्मचारी हैं गगन विहारी ।
नारद का वृतांत सुनाया * मरुत राव मन श्रद्धा लाया ॥
कनक प्रभा कन्या सुख दाई * रावण नृप को दी परनाई ।
दशकन्धर ने किया पयाना * मथुरा ओर विचारा जाना ॥
मथुरा नगरी जाय निहारी * मन में मुदित हुए अति भारी ।
हरि वाहन नृप जब सुन पाया * भेट करन रावण से आया ॥
प्यारा सुत मधु संग में लीना * पुत्र शूल ले संग चल दीना ।
लंका पति मिल आनंद पाया * पूछा शूल कहां से आया ॥

दोहा

चमरेन्द्र मम मित्र ने * किया शूल प्रदान ।
हो प्रसन्न मुझ से गया * पूरव प्रीत बखान ॥ ७३ ॥

चौपाई

कहा अन्य आगे सुन भाई * पूरव भव की कथा सुनाई ।
'धात्रीखण्ड द्वीप रमणीया * शत द्वारा पुर उत्तम ठीया ॥
भूप सुमित्र तहां का राजा * प्रभव सुनाम मित्र सुख साजा ।
सीखे कला एक सी दोनों * गुरु के निकट रहें सुखभोनों ॥

भये सुमित्र राय मुद बाढ़ा * हुआ मित्रन का रंग गाढ़ा ।
आप सम अपना मित्र बनाया * मन में अन्तर क्षणिक न लाया ॥
युगल मित्र कानन को धाये * पल्लिपति कन्या ब्याह लाये ।
प्रभव हुआ केवल लख रानी * बात रक्खी हृदय में छानी ॥

दोहा

भूप सुमित्र विलोक कर * कहा मित्र समझाय ।
अन्तरिक संकट सकल * दो हम को बतलाय ॥७४॥

चौपाई

चिन्ता मेरी अधिक लघु भाई * जो मुख नहीं बताई जाई ।
करें कलंकित प्रकट कामा * इस से मत बूझो तुम नामा ॥
सुन बोले भूपति हर्षा के * मनो भाव दीजे बतला के
आग्रह देख कहा सब हाला * तुमरी प्रिय जो है वनमाला ॥
उस पर मुग्ध मेरा मन भाई * यह चिन्ता रही मुझे सताई ।
रानी कौन वस्तु है प्यारे * प्राण राज अरु पाट तुम्हारे ॥
राव कहा रानी से जाकर * सुन्दर शुभ शृंगार सजा कर ।
मेरे मित्र के मन्दिर जाओ * मोद मित्र के हृदय बढ़ाओ ॥

दोहा

हर्ष सहित ग्रह मित्र के * प्रियको दीना भेज ।
नम्र भाव से जाय के * रानी मुद लबरेज़ ॥ ७५ ॥

चौपाई

भूपत ने भेजा तुम तीरा * आज्ञा तुम देओ गम्भीरा ।
आज्ञा पा पति की मैं आई * पालो निज कर्त्तव्य मन लाई ॥
करूं काज जो आज्ञा पाऊँ * तन मन से सब हुकुम उठाऊँ ।
प्रभव कहे लाज युत बानी * है धिक्कार मुझे सुन रानी ॥
मित्र सुमित्र महा सतवाना * कोमल जिसका हृदय महाना ।

जो मुझ पर इतना है स्नेहा * तत्पर देन सुधन मन देहा ॥
देते प्राण लखे बहु राजा * प्राण प्रिय का दुर्लभ काजा ।
सो मम मित्र किया मुझ हेतु * भेजी निज प्रिय मेरे निकेतु ॥

दोहा

कल्पतरु सम मित्र मम * मै नर नीच महान् ।
माता तुम घर आपने * करिये वेग पयान ॥७६॥

चौपाई

भूप गुप्त अविलोके काजा * मित्र वचन को सुनते राजा ।
मित्र वचन सुन हर्ष बढ़ाया * सत्य भाव लख मन हुलषाया ॥
बनमाला को शीश नमा के * भोजन प्रभव रहे करवा के ।
भेजी भूप महल बनमाला * खड्ग सु अपने हाथ संभाला ॥
आन सुमित्र हाथ को थामा * मित्र नीच क्यों करते कामा ।
अन्य घातकी पापी होई * ऐसा जग कहते सब कोई ॥
निज घातक मह पापी जानो * यह दुस्साहस मन मत ठानो ।
देख प्रभव अति मन में लाजा * चरण पड़ा सब तज के काजा ॥

दोहा

मोद बढ़ाकर मित्र युग * रहें करें आनन्द ।
हर्षोत्फुल्लित अति मगन * माने मन मकरन्द ॥७७॥

चौपाई

नर पति सुमित्र सुदीक्षा लीनी * लालच लाभ सकल तज दीनी ।
लड़ कर्मों से जै कुछ पाई * करके तप कुछ करी कमाई ॥
विमल सु संयम भूपति पाला * लोका लोक किया उजियाला ।
हाथ सदा समकित चित्त आई * मर कर सुर हुआ नृप जाई ॥
पुन हरिवाहन का सुत हुआ * कुछ दिन बाद प्रभव भी मूआ ।
विन्धावसु के जनमा जा के * श्री कुमार पुत्र हुआ ताके ॥

कर नियाणा तप किया अघा के * चमरेन्द्र हुआ पुनः आके ।
यों कह वचन शूल मम दीना * यह उपकार मेरे संग कीना ॥

दोहा

युगल सहस योजन तलक * करे शूल का काम ।
यह अमोल गुण शूल में * सुनो भूप सुख धाम ॥७८॥

चौपाई

भक्ति शक्ति लख रावण राजा * करे मोद युत उत्तम काजा ।
दी परनाय सुता अति प्यारी * मधु को दीनी राज कुमारी ॥
दशकन्धर लिया हितु चनाई * मनोरमा तस कन्या ब्याई ।
घूमत वर्ष अठारह बीते * देश साध कर मन के चीते ॥
इन्द्र भूप के दो दिग्पाला * नल कुवेर युग लखे भुवाला ।
निर्भय रहें सकल भय टाला * राज करें मन हर्ष विशाला ॥
आशाली विद्या तिन भारी * तहिने अग्नि कोट कियो जारी ।
कोट सु सौ योजन परमाना * अग्नि मंत्र तहि लागे नाना ॥

दोहा

अग्नि शिखः प्रज्वलित वहां * दुलंगपुर लख देश ।
देख देख वरनी प्रबल * कोई न करे प्रवेश ॥७६॥

चौपाई

देख सुदृढ़ गढ़ करें विचारा * इस पर वश नहिं चले हमारा ।
प्रज्वलित अग्निकुमार समाना * जहां नल कुँवर का स्थाना ॥
कुम्भकरण मन हिम्मत हारे * दशकन्धर तट गये बिचारे ।
समाचार लंकापति पाये * स्वयं विलोकन हित गढ़ आये ॥
चहुँ लंग दुर्ग के प्रज्वलित वरनी * तपत योजनों तक है धरनी ।
बहुत विचार किया मन माँही * चले ज़ोर कछु गढ़ पर नाहीं ॥
नल कुँवर नृप की पट रानी * लंकापति को लख हर्षानी ।

हुई आशङ्कि रूप लख प्यारा * मिलने का मन मता विचारा ॥

दोहा

दासी पास बुलाय के * मन के कहे हवाल ।
भेजी रावण के निकट * चतुर सखी ततकाल ॥८०॥

चौपाई

दासी कहे सुनो लंकेशा * नल कुँवर को चाहत देशा ।
जो मैं कहूँ बात सो मानो * निजहितकर मम शिख पहिचानो
उपरंभा रंभा अनुहारा * कमला सम अति सुन्दर कारा ।
नल कुँवर की वह पटरानी * तुम से प्रेम करे जिय ठानी ॥
मुग्ध तुम्हारे गुण पर प्यारी * तन मन सौंप करे अधिकारी ।
विद्या देउ अशाली आके * देय सुदर्शन सिद्ध करा के ॥
तुम पे वार चुकी निज मन को * चाहे समर्पण करना तनको ।
दे कराय नृप को आधीना * श्रवण लगाय सुनो प्रवीना ॥

दोहा

सुन सन्देश लंकेश मन * करने लगा विचार ।
तुरत विभीषण ओर को * देखा दृष्टि पसार ॥ ८१ ॥

चौपाई

बोले मधुर विभीषण वानी * कहा तुम्हारा सत हो जानी ।
आतुर अति जाओ तुम धाके * निज राना से कहो समझा के ॥
यह सुन वचन सुदासी धाई * रानी को सब कथा सुनाई ।
क्रुद्ध होय दशकन्धर बोले * तड़ित समान शब्द मुख खोले ॥
कुल विपरीत तुम वचन उचारा * पतित कर्म कीना स्वीकारा ।
रिपु को पीठ दीठ परनारी * मम कुल में नहिं दीन अनारी ॥
हृदय भाव तक अस नहिं कीने * न यह वचन किसी को दीने ।
बिन सोचे तव वचन उचारा * पातिक युत कारज मन धारा ॥

दुर्व्यसनी दुर्जन दुराचारी * दुर्दृष्टि दुर्नीति विचारी ।
इनसे करे मित्रता जोई * नाशे वेग न संशय कोई ॥

दोहा

सुन सकोप बान्धव वचन * कहे विभीषण वैन ।
निज प्रसन्न मन कीजिये * सुनिये मेरी कहैन ॥ ८२ ॥

चौपाई

जिनके शुद्ध हृदय सुन भाई * वचन दोष उनको कछु नाई ।
निष्कलंक मन होय सु जिनका * लगे वचन में नहीं कलंका ॥
यह मन सोच बचन में दीना * विजय कामना हित यह कीना ।
उपरंभा जब दल में आवे * विद्या तुम्हें आन सिखलावे ॥
विद्या सिद्ध करो हुलसाई * देंय पुनः उसको समझाई ।
नल कुँवर को वश में करके * विजय कामना मन में धर के ॥
पुनः स्वीकार वचन मत करना * कुल की नीति सुमन में धरना ।
नीति युक्त समझा रानी को * अमल रखो तुम निज बानी को

दोहा

श्रवण विभीषण के वचन * कर आया सन्तोष ।
मन विचार निश्चर धनी * पृथक् किया सब रोष ॥ ८३ ॥

चौपाई

आलिंगन उत्सुक उपरम्भा * आई निजपति से कर दंभा ।
लंपट कपट सोच मन चाली * विद्या आन सिखाई अशाली ॥
रक्षक मंत्र बताये विधाना * व्यंतर मंत्र दिये शुभ नाना ।
विद्या साधन करके रावण * लागा कृत करने मन भावन ॥
अग्नि कोट दशकन्ध विदारा * सैना सहित नगर पग धारा ।
समर करन नल कुँवर आये * अस्त्र शस्त्र सज्जित ले धाये ॥
तुरत विभीषण सम्मुख आकर * देखा रिपु को दृष्टि उठा कर ।

लिया बांध करी नहीं वारा * दश कन्धर की नज़र गुज़ारा।

दोहा

अजय हुवे दशकंठ नृप * मार इन्द्र का मान ।
चक्र उठा लंकेश ने * रक्खा अपने पान ॥ ८४ ॥

चौपाई

करी नम्रता शरण में आये * नल कुँवर ने शीश नवाये ।
देखी नम्रता मन हर्षा कर * दिया नगर पुनः लौटा कर ॥
विजय मोद दश कंठ मनावे * हृदय मुदित न हर्ष समावे ।
उपरंभा की ओर निहारा * नीति युक्त मुख वचन उचारा॥
भद्रे ! मानो वचन हमारा * निज पति प्रेम करो स्वीकारा ।
योग्य पति के तुम ही कामिन * मेरे योग्य नहीं मन भामिन ॥
गुरु सम तुम्हें निहारूं माता * दे विद्या कीनी सुख साता ।
गुरु पत्नी नृप तिय पर दारा * नीति समान मात उच्चारा ॥

दोहा

सम भगनी लघु सुता सम * ज्येष्ट सु मात समान ।
नीति वचन कैसे तजूँ * सुनो लगा कर कान ॥८५॥

चौपाई

दोनों है कुल शुद्ध तुम्हारे * हृदय रहो शुद्धता धारे ।
युग कुल में नहीं लगे कलंका * मम वचनों पर करो न शंका ॥
शिक्षा दे मन मुदित बनाया * नल कुँवर को पास बुलाया ।
उपरम्भा से आग्रह कीना * सौंप सु नल कुँवर को दीना ॥
नलकुँवर मन सुख अपारा * लंकापति हित से सत्कारा ।
सन्माना सत्कारा राजा * भूपति हित से कीनां काजा ॥
रावण करी गमन की त्यारी * आज्ञा दे सेना श्रृंगारी ।
सेना सहित पधारे आगे * मन में भाव विजय के जागे ॥

दोहा

सैना संग रजनी पति * चले शीघ्रता धार।
रथनूपुर लिया घेर के * रोके गढ़ के द्वार।

चौपाई

सुनकर सहस्त्रार नृप आये * निज नन्दन को पास बुलाये।
झूंठो युद्ध न कर सुत प्यारे * मन में सोचो वचन हमारे ॥
पुत्र आप को अति वल सागर * अपने कुल को किया उजागर।
वंशोन्नति उत्कृष्ट दिखाई * कुल की ध्वजा आकाश उड़ाई ॥
रिपु के उन्नति वंश गिराये * निज प्राक्रम से कर दिखलाये।
नीति वचन अपने सिर धारो * लालन मानो बचन हमारो।
प्राक्रम रहा निरन्तर किस का * बली नित पराक्रम से जिसका ॥
पौरुष का अभिमान न कीजे * वचन हमारे चित्त में दीजे ॥

दोहा

उतपत सुनकर लाइये * अपने मन में ज्ञान।
सुकेश राक्षस वंश में * रावण हुआ सुजान ॥८७॥

चौपाई

महा शक्ति शाली बलिकारी * शक्ति हरे रिपु गण की सारी।
जिन प्रताप सु भान समाना * जीता सहस्त्रांस बलवाना ॥
अष्टापद गिरी लिया उठाई * बल की तासु थाह नहिं पाई।
यज्ञ भंग करी नृप का दीना * मान मरुत नृप का हर लीना ॥
जम्बूद्वीप यक्ष बलवाना * तिसका भी नहिं मन भय माना।
ऋषि की करी स्तुति जाई * देखा सुरपति ने हर्षाई ॥
शक्ति अमोघ मुदित हो दीनी * शक्ति से गुनी जन करचीनी।
दो भुज जिस की हैं बलवाना * युगल भ्रात युग भुजा समाना ॥

दोहा

चक्र सुदर्शन ले लिया * लिया अग्नि का कोट।
नल कुँवर को पकड़ कर * कर लीना निज ओट ॥८८॥

चौपाई

बहु वलिया रावण चढ़ आया * तेज प्रताप विश्व में छाया।
प्रलय काल की अग्नि समाना * उद्धत रावण है मन माना ॥
मिष्ट वचन से जाये मनाये * अपना प्रेम स्नेह जनावे।
रूपवती कन्या के संगा * करो विवाह वढ़े प्रसंगा ॥
उत्तम है सम्बन्ध विचारो * होय कुशल सन्धि मन धारो।
सुन पितु वचन क्रोध मन छाया * अरुण वर्ण निज वदन बनाया ॥
लोचन लाल लाल रतनारे * फरकत अधर सु वचन उचारे।
अस कहे करो पिता अब काजा * वधन योग्य है रावण राजा ॥

दोहा

परम्परा गति वैर है * नहीं आधुनिक वैर।
आया सनमुख इन्द्र के * अब मत समझो खैर॥८६॥

चौपाई

स्मरण कुछ कीजे मन माँही * विजयसिंह तुमरे कुल माँही।
पुर्षा वह कुल माँहि तुम्हारे * उन संगी राजा ने मारे ॥
रिपु का मित्र है शत्रु समाना * यह हितकर अपना नहीं जाना।
पिता माह लंका पति केरे * माली ने बल किये घनेरे ॥
उस को जीत लिया समझाऊँ * इसकी वैसी कुगति बनाऊँ।
लंका पति क्या मेरे समाना * रवि सन्मुख खद्योत निदाना ॥
सैना साज सकल चढ़ जाऊँ * वह रण कौशल जाय दिखाऊँ।
धरती हिले कँपे असमाना * मेरु डिग मिग हिले सुजाना ॥

दोहा

चढ़ कर रण मैदान में * दूँ दिखाय कुशलात ।
लंकापति चरणों पड़े * अभय रहो तुम तात ॥९०॥

चौपाई

रोकूँ रोष कहो मैं कैसे * आज्ञाकारी हूँ पितु वैसे ।
वसुधा को चक्कर में लाऊँ * नभ को तोर मरोर दिखाऊँ ॥
मेरू को दिखलाऊँ रज कर * रावण बचे न रण से भज कर।
देखूँ कैसा वीर उदंडा * खण्ड-खण्ड कर दूँ भुज दण्डा ॥
मुदित होय दीजै अनुशासन * लूँ अपने कर उठा सराशन ।
प्रेम विवश मत हूजे ताता * शीघ्र विजय मैं कर के आता ॥
तुच्छ पदार्थ सामने मेरे * ऐसे नृप किये विजय घनेरे ।
पौरुष सब मेरा तुम जानो * फिर कैसे भय मन में मानो ॥

दोहा

इन्द्र निकट दशकण्ठ का * आया दूत सुजान ।
सूचित कर कहने लगा * सुनो लगा कर कान ॥९१॥

चौपाई

भुज बल का था जिन्हें गुमाना * विद्याबल जिन निकट महाना ।
उनका गर्भ खण्ड कर दीना * रण में उन्हें पराजय कीना ॥
हार मान सेवा स्वीकारी * रावण की आज्ञा सिर धारी ।
दया इन्हों की से अब राजा * करते रहे राज के काजा ॥
अब चल कर भक्ति दिखलाओ * देकर भेंट तुरत मिल जाओ ।
भक्ति विलोक लंकपति स्वामी * रीझे करे प्रेम अति गामी ॥
भक्ति नहीं तो शक्ति अपारा * करो प्रदर्शित लखे संसारा ।
जो मन माँही सो कीजे कामा * विश्व बीच होय जैसे नामा ॥

दोहा

कुल कलंक कायर अवल * दीन हीन भूपाल ।
दास बने होंगे वही * मैं हूँ बाहु विशाल ॥६२॥

चौपाई

दशकन्धर बहु दिन सुख पाये * उन के दिन दुख कर अब आये ।
आन पड़ा इन्द्र से पाला * सिंह गुहा में जो कर डाला ॥
अपने स्वामी से कह जाके * करी भेंट ले जान बचा के ।
दीन पने आये मम पासा * किन्तु होय क्षणिक में नाशा ॥
सुनकर वचन दूत चल दीना * स्वामी के तट का पथ लीना ।
समाचार दिये जाय सुनाई * क्रोध बदन रावण के छाई ॥
रण भेरी बजवा उस वारा * कटक विकट सज गया जुझारा।
जैसे श्याम घन चढ़े घुमड़ कर * निश्चर दल ज्यों चला उमड़कर॥

दोहा

युगल सैन सम्मुख भई * देखा दृष्टि पसार ।
दो सागर ज्यों परस्पर * तर्जे नीर की धार ॥ ६३ ॥

चौपाई

सामन्तों से भिड़ सामन्ता * सैनिक से सैनिक बलवन्ता ।
घन सम गर्जें वीर जुझारे * एक-एक पर शस्त्र झारे ॥
खंग अनी का हो चमकारा * ज्यों चपला का होय उजारा ।
सर सर सर वर्षे रण कैसे * पुष्करावर्त मेघ होय जैसे ॥
छोड़े बढ़-चढ़ के हथियारा * विकट युद्ध हो रहा अपारा ।
भुवनालंकार करी असवारी * बाँध शस्त्र रावण बलिधारी ॥
ऐरावत की कर असवारी * इन्द्र आन डट गये अगारी ।
दोनो गज भिड़ गये जुझारे * दो पर्वत ज्यों रहे टकरारे ॥

दोहा

सूड़ों में सूडें मिला * गज ने चरण अड़ाय ।

ज्यों भुजंग काले निपट * रहे युगल लिपटाय ॥ ६४ ॥

चौपाई

फणपति सर सम सूँड लपेटी * न कोई दीर्घ न कोई हेटी।
करें परस्पर युद्ध जुझारे * जैसे युग कुँजर मतवारे ॥
दोऊ बलवान शस्त्र झुकझारे * खण्ड करें भूमि पर डारें।
रावण उछल गये गज पे से * जैसे गिरी मन्द्र अम्बर से ॥
टूटे वाज लवा पर जैसे * फीलवान पर रावण तैसे।
दियो महावत मार गिराई * इन्द्र भूप की मुश्क चढ़ाई ॥
इन्द्र वँधा दृष्टि में आया * सैना जै-जै कार मचाया।
भागी सैन इन्द्र की सारी * दशकन्धर आनंदित भारी ॥

दोहा

इन्द्र पकड़ लीना तुरत * बचा न कोई शेष।
ऐरावत युत लंकपति * किया कटक प्रवेश ॥६५॥

चौपाई

विजय वाज दशकंठ बजाया * हर्ष सहित लंका में आया।
मोदित पुर के सब नर नारी * हर्ष मना रही प्रजा सारी ॥
नमस्कार लंकापति कीना * लाकर बन्द इन्द्र कर दीना।
लज्जायुक्त कर मस्तक नीचा * करते श्रम काराग्रह बीचा ॥
इन्द्र पिता सूचित जब कीने * समाचार सैना ने दीने।
सहस्रांस संग ले दिग्पाला * लंकापति के तट जब चाला ॥
पहुँचे जब लंका में जाई * हाथ जोड़ कर विनय सुनाई।
छोड़ इन्द्र को दो मम इच्छा * सहस्रांस माँगे सुत भिक्षा ॥

दोहा

इन्द्र बुहारे लंक को * कचरा फैंके द्वार।
दिव्य सुगंधित नीर से * सींचे हाट बजार ॥ ६६ ॥

चौपाई

सहस्रार आयुष स्वीकारा * तवायुष युत हो कृत सारा ।
तीन खंड पति मुदित अपारा * हित से सुरपति को सत्कारा ॥
कारागार से मुक्त कराया * रथनुपुर को निज संग लाया ।
राज लगा करने पुर आके * मन में चिन्ता रही जला के ॥
कहे इन्द्र से अस दिगपाला * सुनिये विनय ज्ञाणिक भूपाला ।
आरत कौन हेत तुम करते * निश वासर जल लोचन भरते ॥
सुन प्रिय मित्र सु शब्द हमारे * नृपति नीत ने जो उच्चारे ।
सौ मैं तुम्हें सुनाऊँ सादर * सुन कर करना नहीं निरादर ॥

दोहा

इन्द्र कहे मित्रों सुनो * मम ओरी कर ध्यान ।
विनशे जो चिन्ता नहीं * तो कैसा कल्यान ॥६७॥

चौपाई

त्रिया वियोग कुयश जग माँही * युद्ध पराजय शूर सिपाही ।
कुत्सित भूपति की सिवकाई * यह बिन अग्नि दग्ध करे भाई ॥
यह सब कष्ट मिटे गुरुवर से * ज्ञानी हरे शोक अन्तर से ।
आये इक अणगार कृपालु * जीव भाव के मन से दयालु ॥
सुन कर चले भूप हर्षा के * आनंद बढ़ा सुदर्शन पाके ।
विनय सहित वंदन नृप कीनी * शान्ति स्वभाव ऋषि छबिचीनी
देख श्री मुनि को निर्मानी * शान्ति स्वभाव तपस्वी ज्ञानी ।
विनय करी सुनो दीन दयाला * मेरा दुख टालो कृपाला ॥

दोहा

बोले ज्ञानी लख समय * सुनो भूप दे कान ।
अरजयपुर में ज्वलनसिंह * नृप था युद्ध निदान ॥६८॥

चौपाई

कन्या एक अहिल्या नामा * योवन वय में कह अस वामा।
सुन कर भूपति किया अडम्बर * पुत्री का रच दिया स्वयंबर॥
तड़ित प्रभा अरु आनंदमाली * मषथल की द्युति देखी भाली।
वरमाला ले कन्या चाली * आनंदमाली के गल डाली॥
तड़ित प्रभा समझा अपमाना * चाहा मन तीय का हथियाना।
समय पाय के आनंदमाली * संयम ले शुद्ध समकित पाली॥
तीव्र तपस्या करी मुनिराया * आतम का सत आनंद पाया।
रथवर्त पर्वत मुनि जाके * सिद्धों का लिया,ध्यान लगा के॥

दोहा

तड़ित प्रभा आया वहाँ * देखा दृष्टि पसार ।
कोप विवश मुनि को कसा * पुन दीनी है मार ॥ ६६ ॥

चौपाई

वही पाप उदय यहां आया * तड़ित प्रभा तू है वह राया।
होय प्रसन्न नर बान्धे कर्मा * सोचें नहीं न्याय अरु धर्मा॥
भोगे फल रो-रो नर-नारी * जीव मात्र नर जो संसारी।
हो अणगार तजो जिन गेहा * उनके रहे कर्म नहिं देहा॥
मुनि उपदेश भूप मन भाया * दीक्षा लेने को मन चाया ।
दत्तवीर नृप सुत प्रवीना * राज भार प्रिय सुत को दीना॥
भूपति ने सुन दीक्षा धारी * किया उग्र तप संशय टारी।
मोक्ष पधारे इन्द्र भुवाला * शुद्ध भाव कर संयम पाला ॥

दोहा

स्वर्ण तुङ्ग गिरि पर गये * एक दिवस लंकेश ।
अनंत वीर्य तहँ केवली * तजे राग अरु द्वेष ॥१००॥

चौपाई

मोद सहित लंङ्का पति धाये * हर्ष मगन हो सम्मुख आये।
नम्र भाव मुनि वन्दन कीना * ला मन चरण कमल चित्त दीना
लख वैठे नृप शुभ स्थाना * करे अमीयुत श्रवण वखाना।
विनय सहित लंका पति बोला * विनय करन हित आनन खोला॥
भगवन विनय मेरा श्रुत दीजे * इतनी दया दास पर कीजे।
ज्ञानी हो कुछ करो उच्चारन * लंका पति मृत्यु का कारन॥
मुनिवर कहे वचन गंभीरा * सुन सरि चली मनो महि चीरा।
पर तिय हेत सुभय सुन पाई * वासु देव ले तव प्रभुताई॥

दोहा

मारेगा तुम को वही * वासुदेव अवतार।
सुनकर मुनिवर के वचन * मन में किया विचार॥१०१॥

चौपाई

जो विन सुमन न मुझ को चाहे * उससे नृप नहिं प्रेम निबाहे।
लंकापति ने व्रत यह लीना * वन्दन कर चित्त पथ से दीना॥
पुष्पक यान हुए असवारा * और लंक को तुरत सिधारा।
पहुँच गये लंका के माँही * देखा भूपति दृष्टि उठाई॥
नीति युक्त कृत करे लंकेशा * उन्नतिवान होय जिम देशा।
वैभव देख मुदित अति मन में * बड़े-बड़े नृप रह चरनन में॥
जितने नृप के हैं कर्मचारी * नीति वान अरु परोपकारी।
प्रजा सदा आनंद मनावे * नीति भूप की हृदय सरावे॥

* दशकण्ठ दिग्विजय समाप्तम् *

श्री हनुमान जन्म



दोहा

आओ माई भगवती * हृदय करो निवास ।
अचल सुख दाता तुही * काटो जग की त्रास ॥१०२॥

बहर खड़ी

कर त्रास नाश माता जग की * सुख दाता त्राता दासों की ।
कर पूर्ण आश मेरी अब तो * पूर्ण कर्ता विश्वासों की ॥
आसन कर कण्ठ मेरे आ के * शुभ अक्षर वर्ण बता दीजे ।
किस भाँति लिखूँ हनुमत जीवन * सुपने में आन जता दीजे ॥
अरवलापुर सा आदित्य नगर * वहाँ तेजस्वी बलवान् हुये ।
उस ही सुन्दरपुर में आकर * बलवान महा हनुमान हुये ॥
प्रह्लाद भूप के सुगर तनय * पौरुष बल बुद्धि निधान हुये ।
उनकी अर्द्धाङ्गी महा सती * अंजनी के सुत हनुमान हुये ॥

दोहा

सुन्दर शोभा से सुगर * गिरि बैताड़ निदान ।
बसा जहाँ आदित्यपुर * आदितपुर उनमान ॥१०३॥

बहर खड़ी

परजन पुरजन को सुख दाता * दुख हरता करता राज सुगर ।
मोहित कर लिये चतुरता से * यश गाते थे जिनका घर-घर ॥
हट हुक्म तेज लवरेज़ नीति * सबको प्रतीत थी राजा की ।
झुकता जहांन बहु तेजवान् * गाते शुभ कीर्ति सुकाजा की ॥

लाखों थे वीर धीर उनके * पुर का भूपत प्रहलाद हुआ।
लख केतुमति सुन्दर सुखान * नृप के मन में अह्लाद हुआ॥
कर गये किनारा दुख सारे * अब सुखका समय निकट आया
विस्मित सब हुये राव राणा * नृप त्रिय ने ऐसा सुत जाया॥

दोहा

सुगर पवंजय नाम से * हुआ सुत विख्यात।
गगन पंथ में पवन सम * चल अकूत शुभ गात॥१०४॥

बहर खड़ी

गुण के समान शुभ नाम दिया * भूपति सुत देख हरषते थे।
तोतल बोली के मधुर वचन * बोले थे सुधा बरषते थे॥
वय बाल व्यतीत हुई जिस दम * पग युवा अवस्था में धारा।
विद्या में निपुण हुये भारी * सब पुरुष कला सीखा प्यारा॥
कर कौशल शीख मुदित मन में * आगे सीखन का ध्यान धरें।
छोड़ें प्रसंग यह इसी जगह * आगे का और बयान करें॥
अब सिन्ध किनारे पर चल कर * वहाँ का भी दृश्य दिखाते हैं।
गुण ग्राही गुण को ग्रहण करें * सत गुण जहँ तहँ वह पाते हैं॥

दोहा

उसी समय उस काल में * भरत क्षेत्र मझदार।
सिन्ध किनारे पर वसे * पुर महेन्द्र सर सार॥१०५॥

बहर खड़ी

इस पुर का नाम करण सुन्दर * सुन्दर नरेन्द्र के नाम पे था।
जैसा था नाम परम सुन्दर * वैसे सुन्दर शुभ काम पे था॥
महि इन्द्र महेन्द्र नाम जिनका * शुभ कामों में वह इन्द्र ही थे।
नभ में उडुगण के बीच शशि * नर इन्द्रों में वह चन्द्र ही थे॥
पटरानी वेगा थी जिनकी * शुचि भव्य स्वरूप सुरंभा सी।

थी कोमल कमल अमल शशि सी * वरदान देन वीरंभा सी ॥
सौ पुत्र एक से एक वीर * रण धीर पीर हरने वाले ।
हर एक रीति पूरण प्रतीत से * अरि को वश करने वाले ॥

दोहा

शुचि सुन्दर जनमी सुता * वेगावन्ती मात ।
सत गुण से जो होगई * घर-घर में विख्यात ॥१०६॥

बहर खड़ी

वह परम दुलारी इकलौती * सुकुमारी सती अंजना थी ।
थी कनक लता या विज्जूलीक * या मन मथ मान अंजना थी ॥
निष्कपट भाव में भोलापन * नैसर्गिक सत्य स्वभावी थी ।
थी मात-पिता की चक्षु अंजन * रंजन मन करन सुलाभी थी ॥
लख रूप रति मन लाजे थी * गुण में सरस्वती समान थी वह
शुभ शोभा सदन मधुर भाषित * माधुरी महा सज्ञान थी वह ॥
शशि कला समान बढ़ी निशदिन * सागर सम रूप कला बढ़ती ।
चातुरता चपलता चेतनता * लावण्यता सुन्दरता चढ़ती ॥

दोहा

बल वुद्धि विद्या रूप शुचि * गुण गौरव सुख सार ।
उच्चवंश उत्तम कुली * देखो वर अनुसार ॥१०७॥

बरह खड़ी

आज्ञा ली शीश चढ़ा नृप की * वर ढूँढ़न जिम्मेदार चले ।
व्यवहार कुशल विद्या विशाल * घट-घट के नर हुशियार चले ॥
सब देख दिशा विदिशाओं को * कह दिया हाल नृप से सारा ।
जितने थे गये सबों ने आ * वैयान किया न्यारा-न्यारा ॥
कोई मेघनाद विद्युति कुमार * कन्या के योग बताते थे ।
कोई और नाम नृप पुत्रों के * गुण को शुभ यश को गाते थे ॥

ज्योतिष विद्या के चतुर मनुष * यों वात काट कर कहन लगे।
जिस तरह सतो गुण के समुद्र * मर्याद त्याग कर वहन लगे॥

दोहा

सुन चरचा दरबार में * बोले चतुर सुजान।
जिसकी तुम कीरत करो * उसका सुनो बयान॥१०८॥

बहरखड़ी

जो मेघनाद सुन्दर स्वरूप * सब गुण सम्पन्न बताते हो।
संपत्तिवान पुनः बलशाली * कन्या के योग सुनाते हो॥
वह बरस अठारह का होकर * दीक्षा धारण कर जायेगा।
इस अल्प उम्र में योग साध * तप कर के पुण्य कमावेगा॥
छब्बीस वरस में ही समूल * कर्मों के दल को तोड़ेगा।
संसार से नाता दूर हटा * मुक्ति से नाता जोड़ेगा॥
ज्योतिष से भविष्य सुना दीना * विद्या में तो यही आता है।
मेरी नज़रों में राजकुँवर यह * आयु अल्प दिखाता है॥

दोहा

ऐसे राज कुमार से * कैसे होय सम्बन्ध।
रतनपुरी के नृपति का * सुन्दर है फरजन्द॥ १०९॥

बहरखड़ी

राजा हैं विद्याधारों के वह * उनका है सुगर कुँवर प्यारा।
है नाम पवनंजय विद्यमान * पहलाद की आंखों का तारा॥
विख्यात शुभ गुणों में वह है * अतिशय अनुकूल योग वर है।
रति के समान जो पुत्री है * तो कामदेव सुन्दर नर है॥
दर्वार बीच विद्वान् जो थे * विद्वान सबों की अनुमति से।
सम्मति स्वीकार करी नृप ने * देखा अविचल सुन्दर पति से॥
नृप ने बुलवाकर राज-दूत * सन्देश रतनपुर भेज दिया।

आज्ञा को शीश चढ़ा अपने * अति शीघ्र गमन हर्षाय किया॥

दोहा

दूतों ने दरबार में * दीना शुभ सन्देश।
ध्येय महेन्द्र नृपाल का * सुन प्रहलाद नरेश ॥११०॥

बहर खड़ी

सहर्ष प्रार्थना को सुन कर * अपनी स्वीकृति प्रदान करी।
सम्मान किया उन दूतों का * नृप की नृपेन्द्र ने आन करी॥
दूतों को हर्षा विदा किया * मन में अह्लाद समाया है।
थे कैसे चतुर सुगर नर यह * खुश हो प्रहलाद सुनाया है॥
निज पर विद्या के जानकार * शारीरिक संपत्ति बलशाली।
थे नीति निपुण स्वारथ त्यागी * पुन स्वामी भक्ति उत्तर हाली॥
स्वीहित चिंतवन निरंतर हो * हो समय देख चलनेवाला।
कर्मण्यरु प्रज्ञावान भी हो * निज धर्म से न टलने वाला॥

दोहा

पुत्र पवनंजय ने सुनी * भूपति की स्वीकृत।
मोद बढ़ा मन में अधिक * अह्लादित भये चित्त ॥१११॥

बहर खड़ी

अति मगन प्रेम उत्साहित हैं * सुन रुप अनुपम बाला का।
रति रंभा शचि रति सुन्दर * सुन्दरी शुभ रूप विशाला का॥
मंत्री को पास बुला कर के * उर-भाव सभी समझाये हैं।
कैसी वह शील रूप गुण हैं * कुछ तुमने भी सुन पाये हैं॥
मंत्री मन कर विचार बोले * गुण सुने अद्वितीय रानी में।
किस तरह आँख के अनुभव को * दें सुना शक्ति कहाँ वाणी में॥
वह एक अद्वितीय रूपवान * गुणवान भूप की बाला है।

अति शीलवान शशि के समान * नृप के घर का उजियाला है ॥

दोहा

सुन कर उत्सुकता बढ़ी * हुआ प्रेम संचार।
घड़ी दिवस दिन मास सम * जाने राज कुमार ॥११२॥

बहर खड़ी

अपने प्रेमी से मिलन हेत * आतुरता का आवेश हुआ।
उस परम सुन्दरी प्रेमणी का * नश-नश में प्रेम प्रवेश हुआ ॥
मंत्री से परामर्श करके * चलने के निमित्त हुशियार हुये।
सुन्दर विमान मंगवा सवार * मंत्री अरु राजकुमार हुये ॥
अति शीघ्र गमन कर गगन पंथ * महेन्द्र नगर प्रस्थान किया।
उत्साह हृदय मन भामिन का * मिलने का मन में ध्यान किया॥
जाते पवनंजय गगनपंथ * दिनकर ने इधर पयान किया।
नलिनी खिलगई शशिको विलोक*निषिनाथ का गुन गान किया ॥

दोहा

ललित लालमा लचर दो * निशि का हुआ प्रकाश।
धेनु विपिन को तज चली * वत्स मिलन की आश ॥११३॥

बहर खड़ी

पत्ती तरुओं के पत्तों में * छुप-छुप कर वसेरा करन लगे।
अपने कलरव से कानन की * सुन सान सन्नाटा हरन लगे ॥
पाकर के परम प्रसंग पात * मारुत से पुन लहलहाने लगे।
अतिथों को मनो इशारों से * मिलने के हेत बुलाने लगे ॥
अब निशानाथ उज्जल प्रकाश * इस वसुन्धरा पे करते हैं।
तम का हुलास सब दिया मेट * अब व्योग दुखों को हरते हैं ॥
प्रिय प्रेम-पाश में फँसे हुए * जाते हैं पवनंजय हर्षाते।
भूमण्डल पर जो दृष्टि पड़ी * देखा शशि अमृत बर्षाते ॥

दोहा

श्वेत सरवरी ने धरी * उज्ज्वल सेज बिछाय ।
शशि सित अम्बर श्वेत पर * मनो विराजे आय ॥११४॥

बहर खड़ी

या स्वयं प्रकृति देवी ने * स्वागत हित रचना कीनी है ।
या पवनकुमार को अतिथ जान * हर्षाय बधाई दीनी है ॥
यह रीति पन्थ को तय करके * आगया महेन्द्रपुर प्यारा ।
महलों की चहल-पहल देखी * अपसरा समान लखी दारा ॥
सत खंड पर सखियों के सहित * अंजना सुन्दरी हर्षाती थी ।
मन सखियों में बहलाती थी * या पंकज मुख बर्षाती थी ॥
थी अमल चान्दनी निशकर की * या मुक्ता पीस बखेर दिये ।
उसमें निर्मल अंजना रूप * जिम चन्द्रानन भी फेर दिये ॥

गायन

(तर्ज—अरे मन मान जाय कह्यो)

खंडन हो जिस का * रचना कालकी अखण्ड । टेक ।
सच्चों का अपमान सदा * झूँठे करते बखन्ड ।
अच्छों का सन्मान घटावे * होकर बुरे प्रचन्ड ॥रचना०॥
धर्मी होय अधर्मी के वश * पाते दुख अखंड ।
सीधों को दिन रात सताते * टेढ़े होंय उद्दंड ॥ रचना० ॥
कामी कायर क्रूर कुतर्की * फिरें बाँधकर दण्ड ।
दण्डी घोर घमण्डी करते * यशपति आय घमण्ड ॥ रचना०

दोहा

वायुयान से देखते * राज कुँवर धर ध्यान ।
चर्चा सखियों की तुरत * आन पड़ी कुछ कान ॥११५॥

बहर खड़ी

प्यारी हो भूर भाग बली जो * अनुपम वर तुमने पाया ।
है पूर्व जन्म का तप भारी * तप धारी पति जो मन भाया ॥
सुन तुरत मिश्रका बोल उठी * यह कारन कौन हुआ प्यारी ॥
विद्युतिकुमार को सुना मैंने * अति रुपवान विद्या धारी ॥
था राज कुमारी के समान * गुणवान रुप वय वाला था ।
विद्युतिकुमार था बल शाली * निजकुल में चन्द्र उजाला था॥
फिर कहो पवनंजय किस कारन* आली के लिये चुने गये ।
गुणियों की गणना में सब से * क्या उत्तम वही गुने गये ॥

दोहा

सुगर सहेली के वचन * सुन कर उत्तर दीन ।
वसन्ततिलका विनय से * बोली अस प्रवीन ॥ ११६ ॥

बहर खड़ी

बोली वसंततिलका सुन कर * प्रथम तो यही कहानी थी ।
विद्युति कुमार अल्पायु में * लें योग सुनी यह वानी थी ॥
विद्वान ज्योतिषियों ने उन के * जब गोचर ग्रह निहारे थे ।
उस समय अंजनाजी सु योग * नहीं मेघनाद उच्चारे थे ।
विद्युति कुमार दीक्षा लेकर * आतम का कारज सारेंगे ॥
इस कर्म-भूमि को त्याग सखी * पंचम गति में पग धारेंगे ॥
इस कारण वीर पवनंजय ही * सोचे हैं राज कुमारी को ।
बल रूप कला में हैं प्रवीन * जो मोहें सखी हमारी को ॥

दोहा

सुन उत्तर देने लगी * रोकी नहीं जुबान ।
कुछ विचार मन में करो * सुनो लगा कर कान ॥११७॥

बहरखड़ी

चन्दन नहिं वन वन पैदा हो * मणि शैल शैल नहिं पाते हैं ।

गजराज न सब मुक्ता वाले * हर स्थान न सन्त दिखाते हैं॥
चन्दन तो सूक्ष्म ही नीका * फीका है काष्ट भार सारा।
माणिक है एक अमोला ही * पाषाण फिरे मारा-मारा॥
गज मोती एक अमोल कहो * विन जल मोती किस काम का है
स्थान सु सुन्दर साधों से * विन साधु धाम छिदाम का है॥
उत्तम नर थोड़े होते हैं * मध्यम होते संसार बड़े।
अल्पायु उत्तम की होती * जीते मध्यम व्यौहार बड़े॥

दोहा

बोली हैं सुन अंजना * सुनती थी संवाद।
इस चर्चा में क्या तुम्हें * आता कहो सवाद॥११८॥

बहर खड़ी

है धन्यवाद नर-पुंगव को * जो जग तज दीक्षा धारेगा।
इस जनम-मरण का महा भार * अपने ऊपर से टारेगा॥
पावेगा मोक्ष अक्षय सुख को * दुख सारे धूल मिलावेगा।
है सत्य सफलता तो वोही * कर प्राप्त महा सुख पावेगा॥
यह शब्द श्रवण कर पवनकुँवर * के हृदय क्रोधावेष जगा।
कर चक्षु लाल लोचन विशाल * हो गये अग्नि मुख दिपन लगा॥
हो कर सकोप बोले मुख से * मेरा नहिं नाम सुहाता है।
पर पुरुष की प्रशंसा करना * चुन-चुन कर इसको भाता है॥

दोहा

परम प्रेम पति से नहीं * पर नर का गुण गान।
ऐसी तिरिया से करे * चातुर पुरुष पयान॥११९॥

बहर खड़ी

विष भरा कुम्भ मुख पर अमृत * या शहद लपेटी छुरी कहूँ।
या अमल नीर गङ्गाजल में * एक डली हलाहल घुली कहूँ॥

या घने अम्ब के उपवन में * उपजा है आन बम्बूल सुनो ।
छाया के हित से बोया था * निकले हैं जिसमें शूल सुनो ॥
कर खड्ग पवनंजय उठा लिया * अरु चले मारने तीनों को ।
उस तीव्र खड्ग की धारा से * अब पार उतारन तीनों को ॥
मंत्री ने झपट बीच ही में * भूपत के कर को पकड़ लिया ।
जिस तरह किसी ने धोखे से * आकर पीछे से जकड़ लिया ॥

दोहा

अवध्य है कुँवरी सुनो * नहीं है वधने योग ।
निर अपराधी को कभी * हन नहीं सत लोग ॥१२०॥

बहर खड़ी

बालक को गौ को दुखिया को * अबला को निर अपराधी को ।
शरणागति आये हुए को * अरु बन्दी खाने के बन्दी को ॥
इतनों पे शस्त्र नहीं छोड़ें * जो जग में वीर कहाते हैं ।
यह राजनीति की आज्ञा है * जो आपको हम समझाते हैं ।
दीनों पर दया सदा करना * दुष्टों का दंडित करना है ।
दंभी के चोर जुहारी के * हर समय दंभ को दरना है ॥
क्षत्री का परम धर्म है यही * रणभू में मारामार करे ।
शत्रु के सम्मुख डटा रहे * अरु बेधड़क होय कर वार करे

दोहा

क्षत्राणी पैदा करें * असल वीर बलवान ।
वीर पुत्र जानो वही * राखे कुल का मान ॥१२१॥

बहरखड़ी

अन्याय निवारक हो क्षत्री * और न्याय धर्म का पालक हो ।
प्रजा को पुत्र समान गिने * दुष्टों के कुल का घालक हो ॥
सत्त की रक्षा के लिये सदा * कर में कृपान उठाता हो ।

दुर्जन के दुष्ट शत्रुओं के * गढ़ के गुमान को ढाता हो॥
रहता हो आप स्वतंत्र सदा * अरु राग स्वतंत्रित गाता हो।
परबन्धन अरु परतंत्रता के * मारग में भी नहिं जाता हो॥
यह नीति धर्म जिन क्षत्रियों की * नस-नस में नहीं समाया है।
ऐसों की जननी ने वृथा * पैदा कर के कष्ट उठाया है॥

दोहा

सुन कर मंत्री के वचन * बोले राज कुमार।
धन्य-धन्य है आपको * खूब किया उपकार॥१२२॥

बहर खड़ी

ऐसे ही सु मंत्री नृपों को * पथ नीति दिखलाने वाले हैं।
अन्याय की सरिता से हर दम * भूपों को बचाने वाले हैं॥
उपयुक्त शब्द सब श्रवण किये * शिक्षा मंत्री की मानी है।
प्रतिष्ठा का कर के ख्याल * अपने हित की पहिचानी है॥
मैं लग्न न इसके संग करूँ * मन में विचार यह आता है।
सुन-सुन कर ऐसी बातों को * मन में अति क्रोध समाता है॥
जो मोती अपना ही पानी * रखने में हो सामर्थ नहीं।
रखने वाले का क्या पानी * राखे कुछ इसका अर्थ नहीं॥

दोहा

बोले हैं मंत्री चतुर * मन में बात बनाय।
अपने कुल के योग ही * कीजे सभी उपाय॥१२३॥

बहर खड़ी

जो देकर वचन फेरते हैं * दुनिया उनको धिक्कारती है।
जग में नहिं शाख उन्हों की कुछ * झूंठा लंपट पुकारती है॥
कुल की मर्याद रखने में * तन मन जो अर्पण करते हैं।

वह कीर्ति पताका ऊँची कर * संसार बीच यश भरते हैं ॥
जिस कुंवरी का वर चुना तुम्हें * क्या उसे छोड़ना नीका है ।
जो माँग त्याग देते अपनी * उनका यश जग में फीका है ॥
सागर में घोर हलाहल जब * निकला शंकर की नज़र किया ।
मर्याद की रक्षा करने को * विष अमी मान कर पान किया ॥

दोहा

छोटों को अपनाय कर * गले लगावें जोय ।
बड़ वही नर बाजते * सुयश उन्हीं का होय ॥१२४॥

बहर खड़ी

सुन करके वीर पवनंजय ने * मंत्री के शब्द प्रमान किये ।
एक-एक सु अक्षर शुभ समझे * उनके ऊपर शुभ ध्यान दिये ॥
पुन सोच लिया अपने मन में * मैं जी की सभी निकालूँगा ।
कर पाणिग्रहण इसके संग में * फिर अपने प्रण को पालूँगा ॥
इक महल निराला बनवा कर * जा उसके बीच उतारूँगा ।
कृत कर्मों के भोगे फल को * यह ठंडा दण्ड समारूँगा ॥
यह सोच समझकर गमन किया * आकाश में वायुयान चला ।
अति शीघ्र पवन उनमान चला * कर गवन गती प्रधान चला ॥

दोहा

समय निकट विवाह का * होय सुमंगल गान ।
शुभ महूरत देख कर * करी बरात पयान ॥१२५॥

बहर खड़ी

माता ने वलैयाँ ले-ले कर * नंदन को आशिर्वाद दिये ।
हुआ सार्थिक पुत्र वती होना * ऐसा कहती हो मुदित हिये ॥
पैदल गज वाज सु लाखों की * संख्या में आगे जाते हैं ।
आनंद पंथ में होते हैं * गान्धर्व सु गान सुनाते हैं ॥

इस तरह गवन करती बरात * पहुँची महेन्द्रपुर के तट है।
देखा है सघन कानन सुन्दर * निर्मल सरिता के निकट वट है॥
शुभ लख सु धाम विश्राम किया * शुद्ध सुधाकर शांति वर्षाते ।
मोती से बिखेर रहे बन में * लख-लख कर बराती हर्षाते॥

दोहा

सुन कर भूप महेन्द्र ने * लिये हितू बुलाय ।
आगत का स्वागत करो * सब को कहा सुनाय॥१२६॥

बहर खड़ी

निज सुत को अगवानी के हित * पुर बाहर भेजा प्रेम बढ़ा ।
आगत का स्वागत करना ही * उत्तम और कुशलो क्षेम बढ़ा॥
सादर बरात का नगर बीच * कोलाहल घोर समाया है ।
अति उत्तम शुभ स्थान देख * जनवासा उन्हें बताया है॥
नव नार सुधार शृंगार नवल * भूपति प्रसाद में आन लगी।
हँस-हँस कर सुघर सुमंगल * आनंद बधाएँ गान लगी॥
छाये हैं पुर के पुरुष सभी * वर के शुभ दर्शन पाने को ।
सुन्दरता वीरता को लख कर * मन में आनंद मनाने को॥

दोहा

नेगाचार होन लगे * वर को लिया बुलाय।
मंडप नीचे लाय के * दिये युगल बैठाय॥१२७॥

बहर खड़ी

उत्तम यह समय निरख कर के * नर नारी हर्ष मनाते थे ।
दर्शन करने उत्तम वर के * कई आते थे कई जाते थे॥
रतनों से जटित सुघर पटरा * वर कन्या जहां आसीन हुए।
जिस प्रकार ब्रह्मा शक्ति मिल के * भक्ति के वश आधीन हुए॥
हथलेवा हुआ मुदित मन से * जिस तरह हाथ में हाथ दिया।

रहि श्यास वैमनस्यता मन में * कर कोमल अग्नि सुभास किया।
अंजना की प्रेम भरी दृष्टि * प्यारे प्रीतम पर जाती थी।
प्रतिबिम्ब नेत्र द्वारा पति का * नैनों के बीच बिठाती थी॥

दोहा

दिये दान सुमोद से * दासी दास अनेक।
वसंततिलका आदि ले * चतुर एक से एक॥१२८॥

बहर खड़ी

कंचन मणि माणिक बहुत दिये * रतनों के भूषण आदि भले।
दिये हैं दासी दास पंच सत * जो रहते थे प्रासाद भले॥
अंजना सुन्दरी मात पितु से * मिल करके आशिर्वाद लिये॥
बढ़ गया विमान अगाड़ी को * पुनः रतन पुरी के पंथ लिये।
पहुँचे है रतनपुरी जिस दम * घर-घर उत्साह हुआ भारी।
राजा प्रजा सब मुदित हुये * करते लाने की तैयारी॥
सादर प्रणाम पवनंजय ने * किया है पिता को हर्ष के॥
प्रसन्न भूप हो गये कंठ से * लगा लिया सुत को आके॥

दोहा

पुत्र-वधू को हर्ष कर * दिये पांच सौ ग्राम।
रत्न जटित दिये आभरण * सुन्दर सुखद ललाम॥१२६॥

बहर खड़ी

जब तक जल गंगा यमुना में * तब तक सुहाग अटल बेटी।
आनंद रहो करती निश दिन * हो प्रीति सुरीति अटल बेटी॥
पश्चात् पवनंजय ने अपने * पहिले विचार को याद किया।
इक पृथक् महल दासियों सहित * अंजना को जा उतार दिया॥
बीता जब दिवस निशा आई * मन मथ को अति आनंद हुआ।
अंजना मोद से फूल गई * मुख खिल करके मकरन्द हुआ॥

कर दिये कंज के पुंज वहाँ * दासी मन में हर्षाय रही।
इठलाय रही मुस्काय रही * सब सुख रस में सरसाय रही॥

दोहा

चक्षु चंचल चित चाहते * चित्तपति चोखे चार।
चुन चुन चंपक लता सी * चारों ओर निहार॥१३०॥

बहर खड़ी

चुन-चुन चुनिन्द चोखे पंकज * सैया पर आप बिछाती है।
चंपारु चमेली चंप लता * चहुँ ओर सुकंज लगाती है॥
गेंदा गुलाब मोगरा जुही * बेला अरु रायबेल प्यारी।
केतकी और लजवंती की * कलियाँ सैया पर चुन धारी॥
सैया पर सारी श्वेत-श्वेत * तकिये सित झब्बी श्वेत महा।
सुन्दर सरोज की सिज्जा का * सुन्दरता से वैयान कहा॥
प्यारे प्रीतम के आने की * जो रही है बाट झरोखों में।
चारों ओर चक्षु फाड़-फाड़ * खो रही है ठाठ झरोखों में॥

दोहा

आये प्यारे पति नहीं * वैरिन होगई रैन।
कुकुट लागे बोलने * निश भर पड़ा न चैन॥१३१॥

बहर खड़ी

जब हुआ उजाला आसमान * आशा गई प्रिय के आने की।
मुरझाई सी हो गई रही * नहिं आश पति के आने की॥
हे देव! हुआ यह कारण क्या? * हृदयेश ने जो मुझ को त्यागा।
अपराध मेरा ही कुछ होगा * नहीं प्रेम हृदय उनके जागा॥
पति तो हैं गुण की खान महा * अवगुण मुझ में ही भारे हैं।
वह लाख त्याग दें दासी को * मुझ को प्राणों से प्यारे हैं॥
वह देव उपासक मैं उनकी * वह श्वाति घन मैं चातकि हूँ।

मैं हूँ चकोरी वह चन्द्र अमल * वह पुण्यवान मैं पातिकी हूं ॥

दोहा

दिन-दिन यही विचार में * देह दूबरी होय ।
विरहा नल प्रज्वालित हुवा * रहा धीर को खोय ॥१३२॥

बहर खड़ी

देखा है वाज सवार पति * जाते हैं वायु सेवन को ।
अंजना झरोखों से झाँके * देखे प्रेमी पति देवन को ॥
पड़ गई पवनंजय की दृष्टि * मन में अति क्रोध समाया है।
जाली व झरोखे वंद करो * यह मुख से वचन सुनाया है॥
आज्ञा पाते ही महलों के * जाली व झरोखे वन्द किये।
वाहर नहिं दृष्टि डाल सके * ऐसे-ऐसे प्रवन्ध किये ॥
देखा व्योहार पति का यह * विन अग्नि सुवपु को दहन लगी
लख वसंततिलका अंजनि को * पुनः हाथ जोड़ कर कहन लगी॥

दोहा

प्यारी मेटो वेदना * सुख से काटो रैन ।
जान अकेली आपको * देता संकट मैं न ॥ १३३ ॥

बहर खड़ी

जिस तरह चन्द्र विन निशा अहि* मणि के विन हो मणिधारी है।
गज फीका दन्त बिना जैसे * पति विन फीकी अस नारी है ॥
पति-पद्म कमल की भ्रमरी बन * उन्हीं से चित्त लगाती थी।
सत शास्त्र विलोकन करती थी * ज़िन देव कीतर्न गाती थी॥
शशपंज से काया कृष भई * पर सत का रूप चमक आया॥
पतिव्रत धर्म पतिव्रता के * आनन सौ गुना चमक छाया॥
कर्मों की गति अति बाँकी है * जिसका कुछ पता नहिं पाया।
प्यारी सखियों चुप हो जाओ * जो किया पूर्व यह मन भाया ॥

दोहा

पति परमेश्वर तुल्य हैं * गुणाधीश विद्वान ।
मुझ में दोप अनेक हैं * सुनो लगाकर कान ॥१३४॥

बहर खड़ी

सब दोष मेरे कर्मों का है * पति देव का किंचित् दोप नहीं।
जो किया उन्हों ने न्याय किया * उन पर करना कुछ रोष नहीं॥
मैं उन चरणों की दासी हूँ * वह देव मेरे अति दयालु हैं।
समदृष्टि हैं समभाव सदा * दासों पर अति कृपालु हैं॥
है पतिनाथ सदा त्रियों के * सर्वस्व पति ही माने है ।
पति के दुख में दुख सुख में सुख * जो सती होय वह जाने हैं॥
चाहे चोर ज्वारी लम्पट हो * नट खट हो खटपट करता हो।
चाहे कोढ़ी अरू कलंकी हो * चहे व्यभिचार चित धरता हो॥

दोहा

इस पर भी है नारि का * पति सर्वस्व महान ।
नारी का पति चरण से * होता है कल्यान ॥१३५॥

बहर खड़ी

कर-कर संतोष महल में ही * सखियों से मन वहलाती है।
रखती है ध्यान सदा पति का * जिन देव के गुण को गाती है॥
तप व्रत नियम में मगन सदा * सामायिक संवर करती है ।
निश दिवस सुगुण शुभ रीति से * आन्तरीक वेदना हरती है॥
कटते यह रीति अंजना के दिन * इधर और ही रचना है ।
रावण को नहिं माने है वरुण * संग्राम परस्पर मचाना है॥
दशकंठ का भेजा दूत तुरत * प्रह्लाद भूप पर आया है।
अति नम्र भाव से लंकपति का * सब सन्देश सुनाया है ॥

दोहा

हुक्म पढ़ा लंकेश का * रण को हुए तैयार ।
सेना चतुरंगी सजी * बांध-बांध हाथियार ॥१३६॥

बहर खड़ी

सज गये वीर उत्साह भरे * कर में निज शस्त्र सम्भारे हैं ।
भाले बल्लम कृपाण किसी ने * धनुष बाण कर धारे हैं ॥
हाथी सज गये हज़ारों ही * जो जाकर रण जय पाते हैं ।
बजते बाजे जुझाऊ सुन * करिवर चिक्कार मचाते हैं ॥
आगये पवनंजय उसी समय * भर मोद प्राथना करते हैं ।
तुम पूज्य पिताजी यहीं रहो * ऐसा कह मन को हरते हैं ॥
मेरे होते चढ़ जायँ आप * प्रजा जो यह सुन पायेगी ।
तो कायर क्रूर कुपूत कलंकी * मुझको पिता बतलायेगी ॥

दोहा

मेरे बैठे आप जो * रण पर जावें तात ।
मुझे जग डरपोक कहे * बड़ी शर्म की बात ॥१३७॥

बहर खड़ी

रण स्थल में जाने की आज्ञा * कृपा कर मुझे प्रदान करो ।
स्वीकृत इस मेरी विनती को * हर्षा करके श्रीमान् करो ॥
सुत की सुन-सुन कर यह बातें * राजा का हिया उमड़ आया ।
अंगज को कंठ लगा लीना * छाती से सुत को लिपटाया ॥
आज्ञा दे दीनी हर्षा के * रण-भू में जाओ सुत प्यारे ।
मारो वह मार शत्रु दल में * खलबली मचे हा हा कारे ॥
ऐसा कह सिर पर हाथ धरा * कर विजय पुत्र जल्दी आना ।
बरसाना बाण समर भू में * निज कर कौशल को दिखलाना

दोहा

आज्ञा पाकर चल दिये * देखा शस्त्रागार ।
बख्तर कवच सुधार तन * बाँध लिये हथियार ॥१३८॥

बहर खड़ी

कर बीच कृपाण बाँध लीनी * कंधे पर टाँग धनुष प्यारा।
तरकस में राखे तीव्र तीर * सज गया युद्ध थल को भारा ॥
रण तूर बजा दिया खुश हो * सैना सुनकर तैयार हुई ।
मच गया नगर में कोलाहल * खरतालों की झनकार हुई ॥
हो कर सवार जिस समय चले * दल उमड़ बादलों सा छाया।
सुर वृन्द बीच जैसे सुरेन्द्र * वही दृश्य देखने में आया ॥
घर-घर में चर्चा होने लगी * युवराज युद्ध को जाते हैं।
सुन-सुन कर नर नारी सारे * दर्शन के हेत उमाहते हैं ॥

दोहा

सुन कर सोच सती ने * समय मिला अति नीक ।
दर्शन पाऊँ पति के * सुगन हो गया ठीक ॥१३९॥

बहर खड़ी

इस अवसर पर जाना मुझ को * है पंथ एक शुभ कारज दो।
पति के दर्शन हैं ईश तुल्य * शुभ सुगन मिलेंगे बारज दो।
सौभाग्यवती के नाते से * कारज उनका सध जायेगा।
दर्शन मुझ को मिल जायेगा * और हृदय कमल खिलजायेगा॥
ले दासी संग वसंततिलका * सिर ऊपर दधि का कलश धरा।
सामने पंथ में खड़ी हुई * पति के आने का मार्ग खरा॥
मन सुगर कामना प्रकट हुई * स्वामी का दर्शन पाऊँगी ।
सब बड़ी बूढ़ियों के आगे * पति से मैं आदर चाहूँगी ॥

दोहा

गमन किया रण क्षेत्र को * सब को कर प्रणाम ।
गजारूढ़ हो चल दिये * ले जिनेन्द्र का नाम ॥१४०॥

बहर खड़ी

पढ़ लिया मंत्र वह मंगलीक * रण भू में मंगल के कारण ।
आशिर्वाद सब से पाये * संकट को निवारन उद्धारन ॥
दृष्टि आ पड़ी अंजना पे * लख कर मंत्री से कहन लगे ।
जिस तरह प्रेम निध हृदय से * मर्याद त्याग कर वहन लगे ॥
किस चतुर चितेरे ने चित से * चित्रकारी दिखलाई है ।
या देवलोक से कोई देवी यह * उतर मही पर आई है ॥
मंत्री ने कहा सुनो स्वामी * स्वामिनी अंजना महा सती ।
आई है पति दर्शन के हित * दर्शन से बढ़ती पुण्य रती ॥

दोहा

वाणी बाणों से अधिक * लगी श्रवण में आन ।
आंखें रतनारी हुई * भृकुटी लीनी तान ॥१४१॥

बहर खड़ी

यह अधम इस समय क्यों आई * शुभ कृत में विघन डालने को ।
अशकुन यह मेरा करने को * या सुन्दर घड़ी टालने को ॥
कर क्रोध चन्द्र मुख फेर लिया * गज की ठोकर से ठुकरा कर ।
गज बढ़ा ले चले आगे को *मारग अति सफा स्वच्छंद पाकर
पति का व्यवहार धृष्टता का * लख अपना मन धिक्कारती है ।
पति से अनादर पाकर के * पाषाण से सिरको मारती है ॥
दासी ने देखा दृश्य विकट * इक बार रोम सब खड़े हुए ।
घट गये भाव मन के सारे * जो सुदृढ़ मनोरथ बढ़े हुए ॥

दोहा

देवीजी सुन लीजिए * विनय मेरी चित्त लाय ।

मूर्ख पति पाले पड़े * उनसें क्या वस पाय ॥१४२॥

बहर खड़ी

यह शब्द कटुक मेरे सनमुख * पति देव के हित उच्चार नहीं।
ऐसे वचनों के कहने का * तुझ को कोई अधिकार नहीं ॥
यह तो मेरे ही पापों का * फल मुझे भुगतना पड़ता है।
उनका इस में कुछ दोष नहीं * जो समझे तो यह जड़ता है ॥
होते हैं वैरी मात तात * वान्धव सुहृदय फिर जाते हैं।
सुर तरु वंबूल हो जाते हैं * सारे द्वारे धिर जाते है ॥
चहे जतन अनेक करे कोई * सत पुरुषों की परपाटी है।
इस पूर्व कर्म के ही फल से * होता सुमेरु भी माटी है ॥

दोहा

इन करमों का ही सखी * सारा है यह दोष।
कहते-कहते यों वचन * होन लगी वे हौंश ॥१४३॥

बहर खड़ी

होकर वे हौंश गिरी धरनी * मानो विवेक पर लूट पड़ी।
जिस तरह दामिनी अंवर से * होकर के पृथक् टूट पड़ी ॥
स्वामिनी के गिरने की अवाज़ * दासियों ने जब सुन पाई है।
दौड़ी आई इकवार सभी * आकर के तुरत उठाई है ॥
उपचार लगी करने मिलकर * कुछ-कुछ बेहोंशी दूर भई।
लोचन खोले धीरे-धीरे * मन की दुविधा हो अलग गई ॥
कर-कर विलाप लगी रोने * जो रहे मनोरथ खो डाले।
जिस तरह ओस ने झड़-झड़कर * सुन्दर पंकज सब धो डाले ॥

दोहा

कटक सहित करके गमन * जाते राज़ कुमार।

कुछ दूरी पर जाय कर * करने लगे विचार ॥ १४४ ॥

बहर खड़ी

सेना को रोक पड़ाव करो * पच्छिम में भान सिधारते हैं।
यह अधिक सघन बन है मंत्री * इस में पक्षी गुंजारते हैं॥
सरिता का सुन्दर अमल नीर * पीने से पीर हरे श्रम की।
मारग की थकावट दूर करे * अरु हर लेता दुविधा भ्रम की॥
चें-चें करते थे चक्रवाक * अरु विरह अलापें भरते थे।
निश के वियोग के हित वियोगी* सिन्धु के वीच यह तरते थे॥
चकवा-चकवी का विरहनाद * युवराज के श्रवण में आया।
सुनते-सुनते मति पलट गई * करुणा का वेग उमड़ छाया॥

दोहा

वोले हैं मंत्री सुनो * इधर लगाओ कान।
पति-पत्नि का वियोग भी * होता दुख की खान ॥१४५॥

बहर खड़ी

यह चक्रवाक नहीं सह सकते * निश के वियोग दुख दाई को।
फिरते पुकारते इधर-उधर * देते हर सिम्त दुहाई को॥
फिर इस हिसाव से मैंने तो * अन्याय सती के साथ किया।
हो गये वरस वारह मुझ को * नहिं मन्दिर तक में चरण दिया
उस समर कूँच के समय आन * शुभ शकुन मेरे हित किया था।
जिसका वदला तिरस्कार रूपमें* मैंने उसको दिया था॥
है धन्य अंजना सती तुम्हें * तू वसुन्धरा की ज्योति है।
शुभ लाज सरोवर की प्यारी * अनमोल अद्वितीय मोती है॥

दोहा

सुन्दर सुगर सुशीलता * सुन्दर गुण की खान।

उस प्यारी से मिलन को * तरस रहे हैं प्रान ॥ १४६ ॥

बहर खड़ी

ऐसा कोई मित्र उपाय करो * जो मिलूँ शीघ्रता से जा के।
मन को सन्तोष मेरे होगा * प्यारी का शुभ दर्शन पा के ॥
मंत्री ने वचन सुने नृप के * कुँवर से हँस करके बोला।
इस सूर्य-मुखी ने बिन रवि के * किस रीति से आनन खोला ॥
सैना नायक को सेना का * देकर के भार सिधार चले।
संग मंत्री को अपने लीना * हो वायुयान सवार चले ॥
महलों के ऊपर द्वारे को * संकेत किया खुलवाने का।
पतिव्रता के चन्द्रानन से * शुभ शब्द कोई बुलवाने का ॥

दोहा

दासी ने होकर कुपित * बोले कडुवे बैन।
कौन पुरुष आये यहाँ * देख वियोगिन रैन ॥१४७॥

बहर खड़ी

ओ दुष्ट यहां से जाओ चले * अब फेर यहाँ जो आओगे।
फल इसका बुरा उठाओगे * नाहक में प्राण गमाओगे ॥
मंत्री ने उत्तर दिया तुरंत * तुम सोच समझ मुख से बोलो
किस से अपमानित शब्द कहे * बाहर जाओ आँखे खोलो ॥
यहाँ स्वयं पवनंजय स्थित हैं * परिचय तुम इनका कर लीजे।
विद्याधर वंशावतंश यहाँ * द्वारे को तुरत खोल दीजे ॥
चातुर दासी ने चिन लिया * आकर के ड्योढ़ी खोली है।
किस कारण शुभागमन हुआ * नृप सुत से ऐसे बोली है ॥

दोहा

प्राण प्रिय से मिलन का * मन में बढ़ा हुलास।

त्याग कटक को चल दिया * आया प्रिय के पास ॥१४८॥

बहर खड़ी

स्वामी स्वामिनी हमारी तो * इस समय सामायिक करतीं हैं।
नित नैमेत्तिक व्रत में सुलीन * जिन ध्यान हृदय में धरती हैं॥
कुछ समय आप विश्राम करो * उठने का समय सु आने दो।
कुछ रहा समय किंचित् वाकी * उसको पूरा हो जाने दो॥
मन्दिर के अन्दर उसी समय * हर्षा कर तुरत पधारे हैं।
जहाँ विदुष सती वाट हेरे * वह प्यारे चरण निहारे हैं॥
पूछे हैं क्षेम कुशल प्रिय को * अपनी उनको वतलाते हैं।
कहते हैं भूल भई भारी * निज करनी पर पछताते हैं॥

दोहा

चारु हुए सन्मुख चक्षु * बढ़ा प्रेम परवाह ।
चित्र लिखित से रह गये * कढ़ी न मुख से आह ॥१४९॥

बहर खड़ी

बोले हैं पवनंजय मधुर वचन * हृदय युग कंज सरसने लगे।
जिस तरह शुष्क कृषि में आ * अमृत जल विन्दु वरसने लगे॥
नैनों से नीर वरसता था * वह के चलते थे परनाले।
कच श्याम गगन सुन्दरता के * घुँघराले थे काले-काले॥
अंजना चातकी इक टक हो * आशा की डाल दरखती थी।
सीपी समान पीना चाहे * पति स्वाँति बूँद वरषती थी॥
घन पवन जहाँ पर डटे हुये * दामिन अंजना चमकती थी।
उस समय सयोगिन के मन में * पावस की रात दमकती थी॥

दोहा

सविनय परसे पद कमल * सती अंजना आय ।

नैनन नीर पखारती * हर्ष न हिये समाय ॥१५०॥

वहर खड़ी

मेरा तो नाथ पदाम्बुज में * मन भ्रमरी वना भ्रमरता था।
कुछ पुण्योदय से खिला कमल * प्रथम आशा सु समरता था॥
है धन्य आपका शुभागमन * आँगन पावन आकर कीना।
वेकल थी चकोरी दर्शन को * शुभ चन्द्र आन दर्शन दीना॥
यह शब्द सती के मधुर-मधुर * हीरा हृदय पिघलाते थे।
जिस तरह तेज हो ताप भान * हिम का कर नीर वहाते थे॥
कुछ नहीं कह सके रुका कंठ * उमड़ा है प्रेम सिन्ध आके।
कोमल कर कंठ वीच डाला * पिया प्रेम प्याले को धा के॥

दोहा

वीते वासर तीन तह * रहते इस प्रकार।
आनन्द में जिनका पता * लगा नहीं जिन हार॥१५१॥

वहर खड़ी

जाता हूँ समर करने को मैं * तुम वियोग के संकट मत सहना
प्राणाधिके नित रहो सुख में * यह मानो प्रिय मेरा कहना॥
हृदयेश आप हो स्वयं वीर * रणधीर विजय कर्ता हो तुम।
वलवान हो विद्वान हो तुम * सज्जन संकट हर्ता हो तुम॥
हो कार्य आप का सिद्ध सभी * हर समय सिद्धि सम्मुख रहती
शुभ विजय लक्ष्मी खुश होकर * नर नाथ तुम्हारा कर गहती॥
जो जीवित चाहो मुझ को * तो शीघ्र सुदर्शन दिखलाना।
पावन चरणों की दासी की * विनती स्वामी मन में लाना॥

दोहा

पुण्योदय से शुभ समय * प्रगटे शायद आन।

गर्भ स्थिती के कहीं * दीखन लगे निशान ॥१५२॥

बहर खड़ी

जो होय बात ऐसी स्वामी * तो कैसे धीर धरूँगी मैं।
हो असहाय अबला नारी * कैसे वह सिंध तरूँगी मैं॥
सब में प्रसिद्ध बात है यह * महाराज नहिं यहाँ आते हैं।
आने की बात विशेष हुई * मुख से भी नहीं बतराते हैं॥
निन्दित हो जाऊँगी जग में * नहि मुँह दिखलाने योग रहे।
हो घोर कष्ट इस दासी को * जब तक स्वामी का वियोग रहे
इस हाल को सुनकर मातु जब * आप की यहां पधारेंगी।
देखेंगी गर्भाधान मेरे * वह व्यंग शब्द उच्चारेंगी॥

दोहा

किस रीति से मैं उन्हें * दूँ विश्वास दिलाय।
कहा न माने सत्त वह * लाख बार समझाय ॥१५३॥

बहर खड़ी

वह समय सामने जब आवे * तो आपत्ति बहु भारी होगी।
ऊकेंगे नर नारी सारे * संसार में अति ख्वारी होगी॥
इस हेत कृपा करके स्वामी * माताजी को बुलवा लीजे।
अति नम्र भाव मीठे वचनों से * तुम उनको समझा दीजे॥
यह सुनकर उत्तर देन लगे * लज्जा की प्यारी बात है यह।
मैं कटक से आया हूँ फिर कर * मंत्री भी देख साथ है यह॥
देखेगी मुझ को माताजी * क्या मुख से शब्द सुनायेगी।
घृणित यह कार्य समझ करके * कायर वह मुझे बतायेगी॥

दोहा

दुर्जन जन निन्दा करें * स्वामी करो विचार।

कहना था सो कह चुकी * अब तुमको अख्त्यार ॥१५४॥

बहर खड़ी

संकट से पाँच हाथ बचकर * दस हाथ बाज से सदा रहे।
गज से रह हाथ हज़ार प्रथक् * दुर्जन से मार्ग अवश्य गहे ॥
दुर्जन से फणपति है अच्छा * जो समय पाय कर डसता है।
दुर्जन दुख देता समय-समय * मुख खोटा वचन निकसता है।
यह सुन कर नामांकृत मुदरी * निज हाथ पवनंजय लीनी है।
निज कोष की कुँजी भी हर्षा * प्यारी के कर में दीनी है ॥
दोनों चीजें यह दे कर के * हर रीति से पुनः सुझा दीना।
फिर दासी वसंततिलका को * कुँवर ने पास बुला लीना ॥

दोहा

बोले हैं परसन्न हो * अति मन में हर्षाय।
तुम अपनी स्वामिनी का * रखना मन बहलाय ॥१५५॥

बहर खड़ी

पूरण रक्षा करना इन की * यह चिन्तामणि सम प्यारी है।
नहिं कष्ट उपस्थित हो कोई * इस में तेरी हुशियारी है ॥
समझाई बार-बार दासी * फिर पुरस्कार कुछ दीना है।
संतुष्ट कर दिया दासी को * युवराज गमन फिर कीना है ॥
पति से पतिव्रता कहन लगी * स्वामी मन विनय हृदय धरना।
जाकर रण भू में शत्रु से * अति युद्ध समर करके करना ॥
बस इसी दिवस के हेत सुनो * क्षत्राणी पुत्र प्रसव करती।
लालन पालन करके सुत का * कृपाण दुधारी कर धरती ॥

दोहा

प्राणों की बाजी लगा * खेले क्षत्री पूत।
रण भूमि में जाय कर * करते समर अकूत ॥१५६॥

बहर खड़ी

वह समर मही से पग पीछे * अपना नहिं कभी उठाते हैं।
शत्रु के सन्मुख डटे रहे * मारें चाहे मर जाते हैं॥
करते हैं मौत से आलिंगन * कर में हथियार उठाते हैं।
शत्रु को विजय हर्ष करते * नहिं कायर पन दिखलाते हैं॥
है कीर्तध्वजा दोनों कर में * जो असल वीर कहलाते हैं।
क्षत्राणी का पय पीकर के * कुछ करनी कर के जाते हैं॥
जो विजय पाय कर आते हैं * तो विश्व में यश फैलाते हैं।
जो रण में मारे जाते हैं * यश-ध्वजा गगन फहराते हैं॥

दोहा

इसको रखकर हृदय में * करो पियू परयान।
विजय पाय दर्शन प्रभु * शीघ्र दिखाना आन॥१५७॥

बहर खड़ी

ऐसा कह कर विरांगन ने * पतिदेव विदा किये हरषा।
पर समय क्षोभ का देख नैन * जल धार लगे करने बर्षा॥
अब चले पवनंजय शीघ्र गति * लंका के धुरे दबाये हैं।
रावण को सूचना है दीनी * प्रहलाद पुत्र यहाँ आये हैं॥
अंजना सती पति को पहुँचा * अपने महलों में आई है।
पति को करती है याद सदा * हृदय रही इष्ट मनाई है॥
दुखिया अरु दीन गरीबों की * हर्षा सहायता करती है।
देती है दान सुपात्र साधु * सतियों की सेव सु धरती है॥

दोहा

हुये मास व्यतीत कुछ * इस रीति दो चार।
सूरत शुभ पति देव की * हृदय बीच निहार॥१५८॥

बहर खड़ी

वह सती प्रेमणी प्रेमी का * हर समय ध्यान मन धरती है।
मेरे स्वामी की होय विजय * यह आश रात दिन करती है॥
इक दिवस पवनंजय की माता * अंजना के महलों आई है।
आते सासू को देख सती * अंग फूली नहीं समाई है॥
कंचन चौकी दीनी बिछाय * चरनों में शीश नवाया है।
सासू के चरण कमल छू कर * पुनः चौकी पर बैठाया है॥
किया है भक्ति भाव हर्षा * अरु हाथ जोड़ कर खड़ी हुई।
मन हर्ष विनय करती है सती * अपने है सत पर अड़ी हुई॥

दोहा

बोली सासू सती से * मन में कुछ झुँझलाय।
गर्भ चिन्ह कुछ देख कर * क्रोधानल वहराय॥१५६॥

बहर खड़ी

जो थे गुलाब रंग के कपोल * वह हो गये पांडु रंग वाले।
लोचन उज्ज्वल होगये विशाल * कुच अग्र भाग काले-काले॥
गति मन्द हो गई पहिले से * कुछ उदर ऊँचाई पर आया।
यह हाल देख कर सासू के * अति मन में क्रोध उमड़ छाया॥
अंजना सती से यों बोली * तू उत्तम कुल में जाई है।
है धन्य भाग्य तेरा जो तू * शुभ वीर-वधू कहलाई है॥
उत्तम चारित्र तेरे ही से * युग कुल की लाज रह सकती है
जो सुने सुयश गावें तेरा * कोई अपयश नहीं कह सकती है

दोहा

उदर तेरे की आकृति * गई बदल क्यों बोल।
क्या कोई तुझ को रोग है * अपने मुख को खोल॥१६०॥

बहर खड़ी

या पाप मूल अमि सन्धि का * आधार बढ़ा से दीखे है ।
पापिनी कलंकी तू कुल की * सर सार बढ़ा सा दीखे है ॥
इन शब्दों को सुन कर के सती * अपने मन में घबराने लगी ।
गये फूल हाथ अरु पग उसके * अपने मन को समझाने लगी ॥
पति से समोद जो वस्तु मिली * वह लाई हाथ उठा कर के ।
मुद्रिका आभरण अरु कुँजी * सासू को रही दिखा कर के ॥
फिर नम्र भाव से मन विचार * सासू के सन्मुख कहन लगी ।
जिस तरह शांति रसकी सरिता * मर्याद त्याग कर बहन लगी ॥

दोहा

आय लौट कर कटक से * मेरे जीवन धार ।
तीन दिवस महलों रहे * मन में सोच विचार ॥१६१॥

बहर खड़ी

जिस समय पतिने गमन किया * उस समय बात यह चीन्ही थी
कुछ सोच निशानी के स्वरूप * पति देव वस्तु यह दीनी थी ॥
सुन कर के क्रोध और भवका * गुस्से की सीमा नहीं रही ।
कर-कर लाल लोचन विशाल * कँप रहा गात यह बात कही ॥
दुष्टा है कुल कलंकिनी तू * जो मिथ्या बात उचारती है ।
दिया त्याग एक जुग से सुत ने * उसके सिर तोहमत धरती है॥
संग्राम में जाते समय तलक * अपमानित तुझ को कीना था ।
उस वीर पुत्र ने आकर के * पग तेरे महल कब दीना था ॥

दोहा

कपट साधना से तू ने * भूषण लियो मँगवाय ।
सत्त दिखाने के लिए * मुझ को रही दिखाय ॥१६२॥

बहर खड़ी

काँजी के पड़ने से पय की * क्या दशा समझ हो जाती है।

अब वही दशा होजाने की * तेरी भी वारी आती है ॥
है इसी में अब तुझ को अच्छा * एक पल भी तू यहाँ ठहर मती।
मुख दिखाकर मत हृदय फूँक * नाहक में वढ़ाय वैर मती ॥
अपने पीहर का पंथ पकड़ * वस भला इसी में तेरा है।
वातों को वनाना पृथक् कर * वस हुक्म मान ले मेरा है ॥
स्वच्छन्द चारिणी मैं तुझको * इक घड़ी न अव रहने दूँगी।
चहे लक्ष विनय मेरी करियो * नहीं पल्ला तक गहने दूँगी ॥

दोहा

सती अंजना ने सुने * सासू के यह वैन ।
वज्रपात हृदय हुवा * जल भर आया नैन ॥१६३॥

वहर खड़ी

ऐसे ही कठिन कठोर वचन * विन शस्त्र घाव करते हृदय।
मानी नहीं मान त्यागते हैं * जो स्व अभिमान भरते हृदय॥
होगये कंठ गती से प्राण * खाकर चक्कर गिर पड़ी धरन।
जव होश हुआ आँखे खोली * सासूजी के गह लिये चरन ॥
सासू हो मात धरम की तुम * करुणा मेरे ऊपर कीजै।
मुझ को पवित्र और सती जान * पति आने तक रहने दीजै ॥
मैं आपके कहन पर कुलटा * अरु कुलाँगार ही वनती हूँ।
प्रार्थना मेरी स्वीकार करो * जो और कहो सव सुनती हूँ ॥

दोहा

सिन्दुर मेरे सुहाग के * आजीवन आधार।
कुल में तिलक समान वह * तव सुत राजकुमार ॥१६४॥

वहर खड़ी

तारे वह आप की आँखों के * रखवारे इस जीवन भर के।
पथवार अनुचरी की नैया * स्थंम्भ वही भूपति घर के ॥

वह समर भूमि से आजायें * उनसे भी निश्चय कर लीजे ।
जो मिथ्या भाषण हो मेरा * स्वानों के सन्मुख धर दीजे ॥
जब तक मैं झूँठन खाकर के * यह दिन अपने बहलाऊँगी ।
लेकर कलंक टीका सासू * पीहर को कैसे जाऊँगी ॥
उस सती के कोमल वचनों को * सुन कर भी दया नहीं आई ।
पिघला वह पत्थर हृदय नहीं * आखों में हया नहीं आई ॥

दोहा

बोली है झुँझलाय के * किंकर लिये बुलाय ।
काला रथ लीना मँगा * दी उस में बैठाय ॥१६५॥

बाहर खड़ी

काले कपड़े पहना करके * अंजना यान में बैठाई ।
की वसन्ततिलका को संग में * अरु महेन्द्र पुर को भिजवाई॥
मार्ग के संकट सहती है * रोती विलाप करती जाती ।
बिना किये का पातिक लगा * हृदय आरत भरती जाती ॥
जब महेन्द्र पुर के तट पहुँची * सारथी प्रार्थना करता है ।
दीनी उतार रथ के नीचे * अरु शीश चरण में धरता है ॥
स्वामिनी मेरा अपराध क्षमा * करना मैं आज्ञा कारी हूँ ।
तुम सती शिरोमणि हो माता * मैं आप का एक भिखारी हूँ ।

दोहा

ऐसी बातें सारथी * करता दी ऊतार ।
तरुवर तर दोनोन ने * दीनी रात गुज़ार ॥ १६६ ॥

बहर खड़ी

होते ही भोर पयान किया * महलों के निकट पधारी हैं ।
पहुँची है ड्योढ़ी के ऊपर * जहाँ टहल रहे रखवारी है ॥
लख करके सती अंजना को * महलों में जवान प्रवेश किया ।

जोड़े हैं हाथ नवा मस्तक * भूपत को जा सन्देश दिया॥
एक सेवक पुनः आ कर के * दूजा सन्देश सुनाया है।
हैं काले वस्त्र भेष काले * पहुँचाने कोई न आया है॥
सुनते ही नृप वेहोश हुवे * भूपति को मूर्छा आई है।
गिर पड़े खड़े से धरनी पर * ऐसी वेहोशी छाई है॥

दोहा

कर कर कर उपचार वह * नृप को किया सचेत।
उठ कर नृप क्रोधित हुवे * सुन आने का हेत॥१६७॥

बहर खड़ी

आँखें हो गई मसाल तुल्य * और उष्ण श्वाँस नृप छोड़े हैं।
मलते कर अधर फड़फड़ाते * पीसे हैं दन्त तृन तोड़े हैं॥
होकर सकोप आज्ञा दीनी * नहिं हुक्म हमारा जरा टरै।
उस कुल कलंकन को यहाँ से * धक्के देकर कोई दूर करे॥
जिस अँगुली को विषधर डसले * उसे तो काटना ही चाहिये।
जो अंग का हिस्सा गलता हो तो * उसे छाँटना ही चहिये॥
जो कुल को दाग लगाता हो * तो उसे मिटाना अच्छा है।
जो घर भर को शर्माता हो * उस को मरवाना अच्छा है॥

दोहा

सुन कर आज्ञा भूप की * बोले मंत्री बैन।
हाथ जोड़ कर कहन लगे * नीचे करके नैन॥१६८॥

बहर खड़ी

कन्याओं के बल दो ही हैं * सुसराल दूसरा पीहर का।
सुसराल में संकट होता है तो * तकै सहारा पितु घर का॥
संभव है ऐसा हो जाना * कि मिथ्या दोष लगाया हो।
सासू ने नृप को समझा कर * महलों में से कढ़वाया हो॥

इसलिये न जब तक निश्चय हो * कुछ गुप्त सहारा मिल जावे ।
अन्नादिक से रक्षा इनकी * हो जाय बान सत्त खिल जाये॥
कहता है नीति धर्म ऐसा * प्रथम अपराध समझ लीजे ।
जैसा अपराधी दृष्टि पड़े * वैसा उसको दंडित कीजे ॥

दोहा

कहने मंत्री से लगे * मन में धीरज धार ।
सासू सभी स्थान पे * क्या हो एक ही सार ॥१६६॥

बहर खड़ी

मिल चुकी सूचना पहले ही * नहीं प्रेम पवनंजय करते हैं ।
उनको है स्नेह नहीं किंचित् * मन द्वेष भाव भी धरते हैं ॥
फिर गर्भ पवनंजय का कैसे * क्यों कर विश्वास कहो आवे ।
नहिं मुझ भरोसा कुछ इस का * मन देख-देख कर घबरावे ॥
यह सुन कर पहरेदारों ने * धक्के दे कर दीना बाहर ।
झूँठा अपराध सती का था * वह हुआ सत्त का ही जाहर ॥
मन सोच समझ माताजी के * महलों का ही मार्ग लिया ।
रोती जाती बेकल होती * माँ की ड्योढ़ी पर चरन दिया ॥

दोहा

कनक गुही डोरी सुगर * मणि गण जड़े विचित्र ।
पावन परम हिंडोलना * पूरण प्रिय पवित्र ॥१७०॥

बहर खड़ी

बैठी थी प्रेम प्रमोद भरी * सुन्दर अनुचरी झुलाती थी
मन मोद सुदायक प्रेम भरे * मीठे स्वर गायन गातीं थी ॥
पड़ गई अंजना पर दृष्टि * तन क्षीन मलिन दशा आई ।
काले लिबास में आकर के * सूरत कलंकिनी दिखलाई ॥
ऐसा कह कर गिर पड़ी धरन * युग करन शीश पर दे मारे ।

किस हेत कलंकित करने को * आकर द्वारे पर पग धारे ॥
मर गई क्यों नहीं होते ही * यह कुल कलकिनी बेटी है।
दीपक में काजल के समान * हो गई कर्मों की हेटो है ॥

दोहा

दासियों लाओ तुरत * मेरी तीव्र कटार ।
मुँह दिखलाने की नहीं * मरूँ कोंख में मार ॥१७१॥

बहर खड़ी

जब रहा मान नहिं दुनियां में * तो वृथा ही फिर जीना है।
जिस के नैनों में नीर नहीं * वह होते नैन नवीना है ॥
जिस मोती पर नहिं रहा नीर * वह दुनिया में किस काम का है
जिस की इस जग में आब नहीं * उसका जीना बदनाम का है ॥
रानी की बातें सुन-सुन कर * दासियाँ अगाड़ी दौड़ पड़ीं।
पहुँची हैं तुरत उसी जगह * जिस जगह सती अंजना खड़ी ॥
बिन आदर बिना बुलाये तू * किस हेतु यहाँ पर आई है।
काले लिबास को धारण कर * क्यों सूरत आन दिखाई है ॥

दोहा

माताजी नहीं चाहतीं * मुख देखना तुम्हार ।
दोनों कुल तू ने दिये * डोब लाज की धार ॥१७२॥

बहर खड़ी

ओ वंश नाव डोबन हारी * महलों से अलग चली जा तू।
मत त्रास दिखावे माता को * मुख दुबका ओर चली जा तू॥
यह वाणी बाणों के समान * बौछार सती पर आती थी।
नीचा सिर कर अंजना खड़ी * मन में अपने घबराती थी ॥
जो आज्ञाकारी थीं दासी * अपमानित शब्द सुनाती है।
जो माँग-माँग कर खाती थीं * वह पीठ फेर कर जाती है ॥

खाता है बाज लवा को झट * अब लवा बाज को खाता है।
राजों को कारागार होय * चोरों का राज कहाता है॥

दोहा

वन पति हुए सियार अब * सियार हुए बनराय।
नकुल मारता व्याल को * व्याल नकुल को खाय॥१७३॥

बहर खड़ी

जब समय पलटता है आकर * उससे संसार पलट जाता।
कर्मों की गति अति बाँकी है * नहिं कोई सहायक बन आता
यह सर्व गति कर्मों की है * धक्के दासों से दिलवाये।
पीती थी गंगाजल अन्न खा * आंसू नैंनों के पिलवाये॥
प्यासी पानी से तड़फ रही * पर नीर न कोई पिलाता है।
बिन नीर ओष्ट हो गये शुष्क * जी घबरा कंठ घिर आता है॥
यह दशा देख कर इक द्विज के * हृदय में तनिक दया आई।
बोला तुम यहीं बैठ जाओ * पानी पीकर जाना बाई॥

दोहा

भाई आज्ञा पिता की * लोपूँ नहिं जिन हार।
तीव्र मनाई नीर की * पिऊँ न जल की धार॥१७४॥

गायन

(तर्ज—एक तीर फेंकता जा)

जिनवर जिनेश जिनपति * पत मेरी बचा लेना।
अपने चरण में स्वामी * मन मेरा रचा लेना॥
बिन पति पतित कहाई * पातिक हरन निहारो।
पावन परम प्रभु मन * सत पथ में खिंचा लैना॥
मोटा महान् मैं ने * अघ पूर्व मैं कमाया।
इन कर्म के कटक को * करुणा से कचा लैना॥

नस-नस में प्रेम स्वामी * तव नाम का प्रगट हो।
लाकर दया दयानिधि * रिपु मेरे लचा लेना॥
लग जाय मन चरन में * पावन पतित तुम्हारे।
जिनराज जय की जग में * अब धूम मचा लेना॥

दोहा

दुखित हृदय जाती सती * आरत वंत अपार।
ग्राम-ग्राम में घूमती * पहुंची विपन मुझार॥१७५॥

बहर खड़ी

पर्वत की चोटी पर पहुँची * ठुकराती ठोकर खाती है।
कहिं बैठ-बैठ कर उठ-उठ कर * एक वृक्ष के नीचे आती है।
करती है विलाप सिलापर * रोती और पछताती है।
अपने ही पूर्व कर्त्तव्यों पर * कर मलती अश्रु बहाती है॥
मैं कैसी मंद भागिनी हूँ * क्या हाय कर्म ऐसा कीना।
गुरु जनों ने भी बिन जाँच किये * देफर के दंड निकाल दीना॥
दुर्दिन की सताई अपमानित * होकर निर्वासित करी गई।
बिन सोचे समझे ही आज्ञा * वन में जाने की दई गई॥

दोहा

प्राणाधार विना रहे * प्राण देह में हाय।
उसका ही फल भोगना * तुम्हें पड़ा है आय॥१७६॥

बहर खड़ी

पति बिन पत्नी का जगत बीच * पति का रखवैया कौन कहो।
पति पास नहीं जिस पत्नी के * फिर पार करैया कौन कहो॥
जब नाथ नहीं प्राणों का है * तो प्रण रखवाला कौन कहो।
हृदय मन्दिर बिन प्रियतम के * मन का उजियाला कौन कहो॥

कुछ दोष किसी का नहीं सखी * जो किया वही फल पाया है।
जैसा दुख औरों को दीना * वैसा दुख आड़े आया है॥
बिन पति के पतित होय जग में * बिन पति पातिक लग जाता है।
बिन पति के आय किसी की है * पति बिन दुख ऊपर आता है॥

दोहा

किया होगा पूर्व में * मिथ्या भाषण आदि ।
इस भव में वहि आन कर * मिली मुझे प्रसादि ॥१७७॥

बहर खड़ी

दोषारोपण किया, मैंने * या अवश्य कलंकित कीना है॥
या बिन छाना पानी पीना * पर निंदा में चित्त दीना है॥
या व्रत किये खंडन मैं ने * या किसी को अवश्य सताया है।
या जलाशय की पालों को * हँस-हँस मैंने तुड़वाया है॥
या पाप अठारह का मैंने * खुल्लम-खुल्ला व्यवहार किया।
या अधम पंथ में खुश होकर * सब से आगे चरण दिया॥
या साधु श्रावक के व्रतों को * लेकर के मैंने तोड़ा है।
या अग्नि लगाई वनों बीच * या मन्द्र किसी का फोड़ा है॥

दोहा

ईंटें चूने आदि का * किया पूर्व में काम।
कर-कर के अपकार बहु * वान्धे अंटी दाम ॥१७८॥

बहर खड़ी

या बैंगुन आदि फलों को ले * भरता कर उन को खाया है।
या नींबू आम मसाला भर * उनका अचार डलवाया है॥
या बिन कारण तरु की शाखों * को तोड़-तोड़ कर डाली है।
या नव विकसित कलियों को * कर अपने से तोड़ निकाली है॥
या घुना अनाज पिसाया है * या दीपक खुला जलाया है।

इस ही कारण दुख असहनीय * इस भव में मैंने पाया है ॥
या मदिरा आदिक सेवन कर * मन को मद मत्त वनाया हो।
या निश भोजन कर-कर के * अति अपने मन को हुलसाया हो

दोहा

तंत्र मंत्र के योग से * पर वल तोड़ा होय।
जादू टोना आदि से * मन नहिं मोड़ा होय॥१७६॥

वहर खड़ी

मारण मोहन अरु वशीकरण * उच्चाटन स्थम्भन आदि।
इन प्रयोगों के कारण से * करनी चाही हो वरवादि ॥
सतियों के सत व्रत पै मैंने * जो मिथ्या दोष लगाया हो।
कुत्सित भावों के कारन से * हृदय में मेरे आया हो ॥
आपस में फूट डलाने का * मैंने उपचार किया होगा।
भगवन की वाणी के विरुद्ध * मिथ्या उपदेश दिया होगा ॥
इन्हीं सव पिछले पापों से * दुख मुझे भुगतना पड़ता है।
नहिं दोष किसी का है दासी * अपना ही कहना पड़ता है ॥

दोहा

गिरिवर पर देखी गुफा * सुन्दर उत्तम धाम।
अनगाति ऋषि तप कर रहे * जाकर किया प्रणाम ॥१८०॥

बहर खड़ी

दर्शन मुनि के कर वैठ गई * तल्लीन सु आत्म ध्यान में थे।
निर्जन वन साँय-साँय करता * वह इस से भी सुन सान में थे॥
हिंसक जीवों से भरा हुआ * वह विपिन शान्ति दर्शता था।
वहाँ जमा शांति का साम्राज्य * जो सुधा शान्ति सरसाता था॥
समझे है जगत् बीच सव ही * चन्दन की शीतलताई को।
चंदन से भी शीतल शशि है * जग मोहित शशि उजलाई को॥

दोनों से शीतल वह मुनि हैं * जिनके मन बीच विकार न हो।
अंजना के पूर्व पुण्य से ही * दर्शन से मोद का पार न हो॥

दोहा

मुनिवर हम असहाय हैं * शरण न वन में कोय।
अबला अशरण को शरण * आप चरण की होय॥१८१॥

बहर खड़ी

ज्ञानी हो भगवान आप पूर्ण * अबलाओं पर करुणा कीजे।
मन में मुनि दया दृष्टि करके * मम पूर्व हाल बतला दीजै॥
किस पाप के कारण स्वामी से * हुआ वियोग मेरा भगवन्।
सासू सुसरों ने ठुकरा दी * किन कर्मों का फेरा भगवन॥
की तात मात ने अपमानित * भाई भोजाई ने छोड़ा।
इक घड़ी ठहरने दिया नहीं * सबने आखिर मुख को मोड़ा॥
इन करुणा सन शब्दों को सुन * मुनिराज ध्यान निज पारा है।
दोनों को करुणा पूर्ण देख * दी वहा शान्ति की धारा है॥

दोहा

बोले हैं मुनि सत वचन * शांति सु रस के वैन।
सम्बोधन कर सती को * मुनिवर लागे कहैन॥१८२॥

बरह खड़ी

प्राची कालान्तर में नगरी * थी कनक पुरी इक अति आला।
कनक रतन था भूप वहाँ का * शुभ सुन्दर और गुणवाला॥
चम्पक वरणी थीं दो रानी * इक कनकोदरी सुगर भारी॥
लक्ष्मीवती दूजी नारी थी * भूपति के प्राणों से प्यारी॥
लक्ष्मीवती से एक पुत्र * उत्पन्न हुवा शुभ वपु वाला।
था रत्न पुत्र बाहु विशाल * सिंहरथ सु नाम योधा आला॥
लक्ष्मीवती के एक मात्र * आराध्यदेव वीतराग ही थे।

निर्ग्रन्थों के शुभ दर्शन से * हृदय में अति अनुराग ही थे॥

दोहा

धारी जो महाव्रत्त के * षट् काया रक्ष पाल।
रजोहरण रखते सदा * सब पर रहें दयाल॥१८३॥

बहर खड़ी

बाँधे हैं मुखवस्त्रिका सुगर * कुछ काष्ट पात्र रखते कर में।
होते हैं त्यागमूर्ति वह * अद्वित अपूर्व दुनिया भर में॥
जिनके आचार विचार शुद्ध * उन मुनियों को गुरू मानती थीं
इन ही मुनियों के चरणों से * जग सिन्ध से तरना जानती थीं
बिन दर्श किये मुनिराजों के * भोजन स्वीकार न करती थीं।
हृदय में दया धर्म अपने * गुरुओं की शिक्षा धरती थीं।
कनकोदरी ने उसके सुत को * लेकर पड़ोस में छुपा दिया।
सुत को नहीं लखा लक्ष्मी ने * तड़फी विलाप अति ही किया॥

दोहा

देखा रोता सोत को * माना मन आनंद।
दुख लक्ष्मी को हुआ * सुन प्यारे मकरन्द॥१८४॥

बहर खड़ी

यों तेरह घड़ी छुपा राखा * ऐसा षड्यंत्र रचाया था।
रोती विलाप करती थी सती * हृदय में बहु दुख पाया था॥
वह बँधा निकाचित कर्म आन * सो बिन भुगते नहिं जायेगा।
वही तू कनकोदरी भई * उस फल को यहाँ चुकायेगा॥
लक्ष्मीवती का जीव यहाँ से * हुआ है पवनंजय आकर के।
वह बदला यहाँ हुआ पूरा * सुत रक्खा पूर्व छुपा करके॥
सिंहरथ कुमार भी संयम ले * पालन कर कठिन तपस्या की।
नियमानुसार कर के पालन * सुर पुर की जटिल समस्या की॥

दोहा

पैदा हुए जाय कर * छठे स्वर्ग मझदार।
तेरी कोंख से होयगा * वही राज कुमार ॥१८५॥

बहर खड़ी

उत्तम असूल्य हो रत्न पुत्र * हो चरम शरीरी गुणवाला।
अति पुण्यवान् सुन्दर महान * हो भाग्यवान जग उजियाला॥
रिपु वृन्द मान का संहारक * सज्जन का सदा सहायक हो।
मित्रों का अति मन भायक हो * पुनः राजनीति में नायक हो॥
यह वसंततिलका सखि तेरी * जो हुई पड़ौसिन आकर के।
बिन भोगे कर्मन छुटकारा * दीना सब हाल सुना कर के॥
अब कुछ दिन और धार बाँधो * पूर्व का फल टल जायेगा॥
जो समय तीव्र होकर आया * जल सा बहाव ढ़ल जायगा।

दोहा

अस कह कर मुनि ने किया * वन से तुरत पयान।
राज कुमारी अंजना * देखे कर के ध्यान ॥१८६॥

बहर खड़ी

चौतर्फ देखती फिरती है * पर मुनि का पता नहीं पाया।
थक कर गई बैठ वृक्ष नीचे * अरु अपने मन को समझाया॥
मुनिवरकी भविष्यवाणी सुनकर * आशा के हिंडोले झूलती थी।
आनंद मनाती थी कुछ-कुछ * अपने हृदय में फूलती थी॥
कानों में सिंह दहाड़ पड़ी * देखा है नज़र उठा कर के।
गर्जना सुनी कम्प गया वदन * दासी बोली घबरा-कर के॥
वन में आधार उन्हीं का है * वे ही सब दुख को टालेंगे।
इतने दिन टाल दिये जिसने * वह यह भी समय निकालेंगे॥

दोहा

ललित लालसा लोप सी * होनं लगी तहि वार।

चतुर दशा आई मनो * असित सुपट तन धार॥१८७॥

बहर खड़ी

सन-सन चलती शीतल समीर * सो धीर सती को देती है।
कहती है दुखित अवस्था में * तू हाथ कौन के गहती है॥
लो नज़र उठा देखो हमको * हम कौन कहाँ की वासिन हैं।
सम्राट् शक्तिशाली दिनमणि की * प्राण प्रिय प्रकाशिन हैं॥
उनके नहिं होने के कारण * हर सिम्त आपदा छाई है।
निश में पड़ती है दृष्टी जहाँ * देती कालमा दिखाई है॥
करते झिल्ली झनकार कहीं * खद्योत कभी धोखा देते।
घूँ-घूँ कटि वाक्य उचरते हैं * कहिं जम्बुक आ खींचे लेते॥

दोहा

चीतों की चिक्कार से * दहलाता है मन।
काल कुटिलता से सुनो * रहा कँपा है तन॥१८८॥

बहर खड़ी

पति परम नाथ का मारग यह * नीला आकाश शिरोमणि है।
करने का गमन सुगम पथ यह * उनका जो कि दिनकर मणि है॥
समरथ मारग मे जगह-जगह * उडुगण रोड़े फैलाये हैं।
आने में होय विलम्ब इसलिये * यह तूफान मचाये हैं॥
यह कुटिल काल की ही दुर्नीति * अपनी दुष्टता दिखाता है।
दिगांगनाओं क स्वामी के * पथ में बाधा फैलाता है॥
इस कुटिल कालकी तुम शिकार * इस समय सती जो बन रही हो
इस का कहो कौन अचम्भा है * जो इस विपता में सन रही हो॥

दोहा

देखा आपत्ति का समय * कीना सती विचार।
सागारी अनशन किया * मन में दृढ़ता धार॥१८९॥

बहर खड़ी

आराधा देव और गुरु को * हृदय जिन धर्म जमाया है।
तीनों तत्वों के गुण स्मरण कर * मन में प्रेम बढ़ाया है॥
पुनः परम पंच परमेष्ठी का * अपने हृदय में जाप किया।
उस महामंत्र का स्मरण कर * तन मन का पृथक् ताप किया॥
जो क्षेत्र पालक था वन रक्षक * केसरी का रूप बनाया है।
रख पूँछ गुच्छ करता दहाड़ * उस सिंह के सन्मुख धाया है॥
दिया निकाल उस वन से बाहर * फिर स्वयं रूप रख कर आया।
आकर रक्षा में खड़ा हुआ * हर तरह सती को समझाया।

दोहा

अब मन में चिन्ता मती * करो सती लो मान।
शीघ्र तुम्हारा दुख अब * दूर करें भगवान ॥१९०॥

बहर खड़ी

सुन्दर फल फूल तोड़ कर के * ला सती के आगे आन धरे।
हर तरह सहायक हुआ आन * अंजना के संकट दूर हरे॥
जब गर्भ स्थिति हुई पूर्ण * शुभ दिन नक्षत्र शुभ आया है।
नौ महीने सात रात बीते * अंजनी ने शुभ सुत जाया है॥
थी चैत्र मास और कृष्ण पक्ष * अष्टमी वार शशि था प्यारा।
नक्षत्र पुष्य शुभ योग महा * रजनी पिछली हुआ मुद भारा॥
लख कर सुपुत्र का अंग अंग * छाई उमङ्ग उर माता के।
था मन में त्रास हुआ उसका * नाश अब है प्रकाश सुख साता के

दोहा

देखा माता ने कुँवर * मन में किया विचार।
नगर पति के जन्मता * होते जै-जै कार ॥ १९१ ॥

बहर खड़ी

ऐसा कारण मन में विचार * हृदय का वेग उमड़ आया।

रुक सका नहीं जब मन समुद्र * नैनों में आ कर जल छाया ॥
पर पूर्व कृत कर्मों का फल * मन समझ सती संतोष किया।
लख वसततिलाका ने आकर * चिर संगनी को अति तोष दिया
लालन पालन में बाईस दिन * जब बीत गये हैं जंगल में।
सुत को विलोक कर दोनों ही * रहतीं आनंद सु मंगल में ॥
शशि का पूर्ण प्रकाश हुआ * जब पूर्णिमा का दिन आया।
खिल रही जुन्हैया विमल-विमल * पूरण प्रकाश थल पर छाया ॥

दोहा

मोदित माँ की गोद में * खेल रहे हनुमान ।
हर्ष चलाते कर कमल * सुन्दरता के खान ॥१६२॥

बहर खड़ी

नव विमल स्थली शुभ भूमि * जो शिला स्वच्छ पर्यंक वहीं।
लावण्य खान अम्बर वितान * तन रहा जहाँ पर शंक नहीं ॥
लग रहा चन्द्र शुभ फूल जैसे * खिल रहा प्रकाशित जंगल है।
कर वरी स्फटिक मणि के समान * खिल मना रहीं अति मंगल है ॥
विमलाम्बरी में चरण कमल * चन्द्रमा को देख उछाल रहे।
लोटन कपोत की तरह लोट * कर अपना हृदय बहाल रहे ॥
हाथों--पावों को देख-देख * माताजी मन हर्षाती हैं ।
मन में पति की कर याद कभी * नैनों से अश्रु बहाती हैं ॥

दोहा

उस रजनी में ही वहाँ * आया एक विमान ।
चलते-चलते रुक गया * अग्र बढ़े नहीं यान ॥१६३॥

बहर खड़ी

देखा है शूर सैन नीचे * अबला दो बैठी नज़र पड़ी ।
लाये उतार थल वायुयान * जब हनुमान से नज़र लड़ी ॥

अंजना सती ने विस्मित हो * देखा विमान नीचे आते ।
अपने मामा अरु मामी को * बैठे विमान में बतराते ॥
जब सुरसेन अंजना सती को * अपनी भांनजी जान गये ।
हर एक तर्रीके से अपने * हृदय में उसे पहिचान गये ॥
आनंदोत्सुकता से आकर * मामा ने कंठ लगा लीना ॥
गद्-गद् हृदय हो गये युगल * सब हाल तुरत समझा दीना ॥

दोहा

सुन कर शब्द अंजना के * बार-बार बलिहार ।
मन प्रसन्नता धार के * ली विमान बैठार ॥१६४॥

बहर खड़ी

बैठी है बीच विमान हर्ष * अति तीव्र गति से जाता है ।
राशि की सुन्दरता का प्रभाव * मुक्ता गुच्छे पर आता है ॥
उस झूमर को अविलोक वीर * हनुमान कुलाँच भरी भारी ।
आगे विमान बढ़ गया * गिरे भू वायुयान से अवतारी ॥
सुत को गिरि पर गिरते देखा * माता को मूर्च्छा आई है ।
यह हाल देख कर भूपति की * अति ही तबियत घबराई है ॥
लाये विमान को चट उतार * देखा बालक को खेल रहा ।
हो गया शिला का चूर-चूर * अंगुष्ट सु मुख में मेल रहा ॥

दोहा

गोदी में लीना उठा * उछल पड़े इक साथ ।
अति हर्षा कर के तुरत * दिया मात के हाथ ॥१६५॥

बहर खड़ी

माता अरु पितु के वीरज की * हरबार प्रसंशा करते हैं ।
वज्जर शरीर अनुभव कर के * बजरंगी नाम सु धरते हैं ॥
आनंद मनाते मारग में * हनुपाटन पहुँच विमान गया ।

उस ही रजनी में सूरसैन का * जन्मोत्सव पर ध्यान गया ॥
सजवाया शहर चतुरता से * दुखिया दीनों को दान दिया ।
आये हैं मित्र हितु सारे * सप को नृप ने सन्मान दिया ॥
उस ही निश में बुलवा लीना * पूरे पंडित विद्वानों को ।
महलों में नाम संस्करण * करने को कहा सुजानों को ॥

दोहा

आये जो विद्वान थे * करने लगे विचार ।
वड़ा भाग्यशाली वली * विद्या वुध गुण सार ॥१६६॥

वहर खड़ी

दिनकर अति उत्तम उच्च का है * जो मेप राशि पर आया है ।
चन्द्रमा मकर का शुभ लायक * जो वीच भवन में छाया है ॥
मङ्गल मध्यम हो कर आया * जो वृष राशि पर ठहरा है ।
और वुद्ध वीच मीन राशि * गुरु उच्च कर्क का गहरा है ॥
शशि मीन राशि में स्थित है * और उदय मीन राशि का है ।
है ब्रह्म योग यही अति उत्तम * सव वुद्धि यह प्रकाश का है ॥
हनुमान नाम रक्खा हर्षा * सब के मन हर्ष समाया है ।
आनंद खुशी का है यह दिन * सब को आनंद समाया है ॥

दोहा

इधर पवनंजय ने विजय * किया वरुण को जाय ।
खर दूषण दोनोन को * लिया तुरत छुड़ाय ॥१६७॥

वहर खड़ी

पहुँचे हैं लङ्का में जा कर * रावण प्रसन्न हुए भारी ।
अति विजय लाभ करके आये * अद्भुत है वीर पुरुष धारी ॥
प्रत्येक वीर की प्रतिष्ठा * सादर दशकण्ठ कराई है ।
सत्कार समोचित उनका कर * दीनी सहर्ष विदाई है ॥

निज कटक संग में ले अपने * पुर को पयान किया हर्षा।
मारग तय करके आ पहुँचे * हृदय अति आनंद रंग वर्षा ॥
किया प्रणाम पिता को जा * रण का सब हाल सुनाया है।
माता के पुनः दर्शन पाकर * अपने महलों में आया है ॥

दोहा

सूने देखे महल जब * मन में किया विचार।
दास दासियों से सुना * सारा हाल कुमार ॥१९८॥

बहर खड़ी

सुन कर यह हाल अंजना का * कल पड़ती नहीं पवनंजय को
केवल अलाप विलाप करें * मन सोचे विजय पराजय को॥
मंत्री बोले बेकलता तज * प्यारे पुरुषार्थ हाथ धरो।
बेकलता से क्या होता है ? * अब खोजने को प्रस्थान करो॥
सुनत ही पवनंजय चल दीने * उठ घर से चरन बढ़ाते हैं।
माता ने मारग घेर लिया पुन * बाँह छुड़ा कर जाते हैं॥
बनों में वृक्षों में झाड़ों में * देखे है गुहा पहाड़ों में।
नहिं नज़र पड़ी अंजना सती * देखा वन खंड उजाड़ों में ॥

दोहा

आया पास महेन्द्रपुर * करते कुँवर विचार।
किस जरियां से अब कहो * जाऊं मैं सुसरार ॥१९९॥

बहर खड़ी

भेजा था दूत पवनंजय ने * जाकर सब हाल सुनाया है।
महेन्द्र भूपत तैयारी से * पुर बाहर लेने आया है॥
भेटे हैं कुशल पूर्वक युग * पूछा प्रसन्न हो हाल सभी।
कह दिया पवनंजय ने सारा * खुश होकर के अहवाल सभी
मर्दन कर मंजन कर बाये * चन्दन आदिक पुनः चर्चाया।

चन्दन की चौकी पर सादर * फिर पवन कुमार को बैठाया ॥
षट् रस भोजन का बना थाल * युवराज के जब सन्मुख आया
नहिं ग्रास उठाया हाथों से * प्रियवरी का प्रेम उमड़ आया॥

दोहा

आती देखी कुँवर ने * कन्या महल मंझार ।
पास बुला पूछन लगे * हाथ फेर पुचकार ॥२००॥

बहर खड़ी

भोली सी कन्या ने रो कर * सारा हाल सुना दीना ।
सुनते ही उसके वचन कुँवर ने * वज्जर का सीना कीना ॥
ठुकरा के थाल खड़े हुये * उड़ गई सब इच्छा खाने की।
सब बात हिये से विसर गई * सुध रह गई प्रिय के पाने की ॥
देखा महेन्द्र भूपत ने जब * तो संग चलने को तैयार हुआ ।
सेना चतुरंगिन सजवा लीनी * सब कामों को हुशियार हुआ ॥
प्रहलाद भूप भी दल-बल से * हो गये उपस्थित आ कर के ।
आज्ञा दे दोनों वीरों को * लाओ तुम खोज लगाकर के ॥

दोहा

आज्ञा पाकर चल दिये * बड़े-बड़े सरदार ।
इधर पवनंजय ने सुनो * ली प्रतिज्ञा धार ॥२०१॥

बहर खड़ी

जो खबर सती की ना आई * तो प्राण पवनंजय खो देगा ।
प्रण कर लीना सब के सन्मुख * दिल दाग़ को अपने धो देगा॥
उस कड़ी प्रतिज्ञा को सुनकर * सब के सन्नाटा सा हुआ ।
उत्साह हो गये लोप सभी * भावों में घाटा सा हुआ ॥
थल चारी दूतों में से आ * इक दूत सूचना दीनी है ।
हनुपाटन सुरसैन के यहाँ * अंजना सती लख लीनी है ॥

पाते ही सूचना चल दीने * सारे दल को पीछे छोड़ा।
पहुँचे हैं हनुमान पाटन * मार्ग से नहिं मुख को मोड़ा॥

दोहा

आता देखा पति को * छाया प्रेम अपार।
पति की गोदी में दिये * हनुमत राजकुँवार॥२०२॥

बहर खड़ी

पति को पर्श सती हर्षी * अपना धन भाग समझती है।
जिस तरह सीप में आकर के * स्वाँती की बूँद बरसती है॥
पूछा पुनः हाल विपिन का सब * भर गया हृदय करुणा रस में।
प्रिय का करुणा का वेग सभी * आकर के समाया नस-नस में॥
संक्षेप रूप में हाल सभी * जो कुछ बीता समझा दीना।
फिर मुनि के दर्शन का सारा * कह के अहवाल सुना दीना॥
आ गये पिता माता भी सब * अरु सासू सुसर सभी आये।
सादर सब से अंजना मिली * सब लोग देख कर शरमाये॥

दोहा

कुछ दिन रह ननिहार में * आये निज-निज ठाम।
राज्ज पवनंजय को दिया * मोदित हुये तमाम॥२०३॥

बहर खड़ी

सुख सुन्दर नगर समाय रहा * सरसाय रहा पुर सुर पुर सा।
आनन्द मनावे नर नारी * जै-जै कारी कर मन हुर सा॥
सीमा नहीं रही खुशी की नृप * आनंद हुलास मनाते हैं।
चाहते हैं अटल सुखों को अब * अनित भाव मन लाते हैं॥
प्रिय जिनक सुत सब योग हुए * उनको निज कार्य समारना है।
संसार के सुख अब तक भोगे * अब दीक्षा हम को धारना है॥
सुकृत कृती नर है वो ही * जो चौथे पन को साधता है।

तज कर के माया मोह सभी * सिद्धों को चित्त आराधता है ॥

दोहा

सब इच्छा पूरी हुई * और न कुछ दर कार ।
यह इच्छा बाकी रही * लूँ अब संयम भार ॥२०४॥

बरह खड़ी

अब पुत्र वधु सुत के सुत का * आनंद देख हर्षाना तुम ।
है विनयवान् नंदन तेरा * जिनराज के गुण को गाना तुम
मैं साधन करूँ आतम कारज * मेरे मन यही समाया है ।
सब देख लिये जग के धन्धे * अब मन संयम को चाया है ॥
सुन करके पति के सुगर वचन * हर्षा करके रानी बोली ।
मम नाथ भाव अति उत्तम है * नहिं हो विलम्ब कहि मन खोली
हृदेश यही इच्छा में मन * मान मोद आज्ञा दीजे ।
सब कारज सिद्ध होंय स्वामी * अति प्रेम सहित दीक्षा लीजे ॥

दोहा

दम्पति दीक्षा धार के * कीना निज कल्याण ।
दिनकर सम वढ़ने लगे * इधर वीर हनुमान ॥२०५।

बहर खड़ी

दिन-दिन तपतेज सो उन्नतिकर * चढ़ता है भान कला जैसे ।
बल पौरुष वपु बुद्धि वृद्धि * करती है चन्द्रकला जैसे ॥
इसी ही प्रकार चौदह विद्या * अध्ययन कर भरपूर हुए ।
सूक्ष्म आयु में ही प्रसन्न * विद्या अपना कर शूर हुए ॥
नाना प्रकार विद्याओं के * भूषण हुए गुणवान हुए ।
कमनीय कलाओं के ज्ञाता * विद्याधर श्री हनुमान हुए ॥
जासुसी विद्या में प्रवीण अपूर्व * कौशल हाँसिल कर लीनी थी ।
सम्पूर्ण शक्तियों के निधान * संगीत कला चित्त दीनी थी ॥

दोहा

वरुण भूप कर के मता * जथा आपना जान ।
रावण पै पुनः चढ़ गया * समय बड़ा बलवान॥२०६॥

बहर खड़ी

कोई भी किसी की धन धरती * बलात्कार ले लेता है ।
बस उस के खटक जाय मन से * तन से वह विपता सहता है॥
जिस तरह रुई के पहलों में * बरनी को कोई छुपाता है ।
दब नहीं सकती है अग्नि कभी * यह न्याय नज़र में आता है ॥
इस ही प्रकार वह वरुण भूप * बदला देने को चढ़ धाया ।
उसने तो समय शुभ समझा * और विजय लक्ष्मी को चाया ॥
दशं कंठ ने जब ऐसा जाना * तो चतुर दूत बुलवाया है ।
समझा कर कहा पवनंजय पे * जाओ यह हुक्म सुनाया है ॥

दोहा

सुन कर वचन सू दूत के * मन में किया विचार ।
युद्ध निमंत्रण पाय कर * सैन करी तैयार ॥२०७॥

बहर खड़ी

जिस समय पवनंजय ने अपना * रण का शृँगार बनाया है ।
उस समय देख रस वीर आन * सारी सैन पर छाया है ॥
उत्साहित हुए वीर सारे * रण का शृँगार सजाते हैं ।
जिस तरह वीर रस के समुद्र में * तीव्र उछाले आते हैं ॥
यह देख केशरी कुँवर वीर * हनुमान पिता के पग परसे ।
अति विनय सहित कर चित्त प्रसन्न * प्रार्थना के हित हृदय सरसे॥
इक अर्ज़ करो स्वीकार मेरी * मन में विश्वास तुम्हारा है ।
इस युद्ध क्षेत्र में जाने को * तत्पर यह दास तुम्हारा है ॥

दोहा

वचन श्रवण कर पुत्र के * मन में बढ़ा हुलास ।
मुदित पवनंजय हो गये * बैठाया निज पास ॥२०८॥

बहर खड़ी

फेरा है शीश हाथ सुत के * अरु बोले भूपत हर्षा कर।
तुम बैठ मन्द्र आनन्द करो * मैं करूँ विजय उसको जाकर॥
हनुमान विनय के वचनों में * इस तरह पिता से कहन लगे।
ले-ले तरंग जिम जय समुद्र * मर्याद त्याग कर बहन लगे॥
इस युद्ध में जाने की मुझ को * अभी तात आज्ञा दे दीजे।
हृदय समुद्र रस वीर भरा * उमगा यह विनय मान लीजे॥
रण भूमि में जाकर रिपु को * कर-कौशल पिता दिखाऊँगा।
विद्या की ग्रहण परीश्रम से * रण में जाकर अज़माऊँगा॥

दोहा

अनुभव मेरे इल्म का * जो मुझ को हो जाय।
रण स्थल में जाय कर * इस को लूँ अजमाय ॥२०९॥

बहर खड़ी

दे दें अब आज्ञा आप मुझे * यदि रणस्थल में जाने की।
शत्रु के सन्मुख जा कर के * विद्या अपनी अज़माने की॥
मुझ को यकीन है विद्या का * अनुशासन जो गर पाऊँगा।
तो खुशी-खुशी चढ़ जाऊँगा * रिपु दल को मार भगाऊँगा॥
हट देखी हनुमान की जब * आज्ञा दे दी पवनंजय ने।
आज्ञा पा हृदय कमल खिला * उत्साह किया जब नव वय ने॥
सेना ने कूँच किया पुर से * रण बाज बजाते जाते हैं।
लघुवय में साहस अद्वित है * शस्त्र चमकाते जाते हैं॥

दोहा

गमन शीघ्रता से किया * चले रात दिन जाय।

कुछ ही दिवस में लंक के * लीने धुरे दबाय ॥२१०॥

बहर खड़ी

दशकंठ सुना हनुमत आये * सादर कीनी अगवानी है।
सत्कार सहित संग में लाये * प्रमुदित करते महमानी है॥
मिल भेंट प्रसन्नता प्रगट करी * पुनःउचित समय जब आया है।
सेना नायक हनुमन्त किये * अद्वित प्रभुत्व जमाया है॥
शत्रु के जब सम्मुख पहुँचे * दल को दशकंठ निहारा है।
आज्ञा पाते ही राजों ने * पौरुष दिखलाया भारा है॥
सौ पुत्र वरुण के संगा में * अति वीरोत्साह दिखाते हैं।
प्राणों को हथेली पर रख के * रण-भू में धूम मचाते हैं॥

दोहा

लखि प्रचण्ड प्रकोप को * भूप गये घबराय।
हलचल रण में मच गई * धीर धरी नहीं जाय ॥२११॥

बहर खड़ी

लख समर भूमि का हाल वीर * बलिशाली नज़र उठाते हैं।
प्रचण्ड क्रोध कर पवन कुँवर * रण स्थल में झट आते हैं॥
कर घोर गर्जना केहरि सम * केशरी कुँवर, ललकारे हैं।
सगर संगम में वीरोचित * कृत करन हेत पग धारे हैं॥
वानरी सुविद्या से कपीश * अति कीश बनाये भारे हैं।
तरु तोड़-तोड़ कर शत्रु की * सेना के ऊपर डारे हैं॥
लख कर रण-कौशल वरुण भूप * की सेना का चकचूर हुआ।
जिस अभिमान से आय थे * अभिमान वह सारा धूल हुआ॥

दोहा

वरुण नृपत के सुत सकल * हनुमत बाँधे जाय।
पुन भारी किलकार कर * मन में खुशी मनाय ॥२१२॥

अति ही कृतज्ञता प्रगट करी * गुण गौरव अधिक सराया है॥
देख गुण विद्या बलशाली * हनुमत अद्वितीय वल वंका है।
रण कुशल कुशल है हर फन में * बांकुरा वीर बलवंका है॥
ऐसा विचार कर लंकपति * स्नेह हृदय में भरन लगे।
अनुकुशमा का कर पाणिग्रहण * यह ख्याल जिगर में करन लगे॥
थी सूर्पनखा की वह कन्या * भानजी भूप दशकंधर की।
सत साहस अद्भुत उत्साह देख * उपमा दी पुरुष पुरन्दर की॥
कर पाणि ग्रहण उस कन्या से * मन में उत्साह किया भारी।
बल वंका से हित जोड़ लिया * कर दिया काम नृप अधिकारी॥
हनुमत के संग वरुण ने भी * पुनःसत्यवंती को परनाया।
सुग्रिव राव नल अपनी-अपनी * कन्या दी हर्ष सुमन छाया॥
एक हज़ार कन्या राजों ने * हनुमत के आकर नज़र करी।
इस तरह पाय धन सम्पत्ति को * चलने की निज मन हर्ष धरी॥

दोहा

अति अटूट धन संग ले * कीना वीर पयान।
निज पुर हर्ष आनंद से * पहुँचे श्री हनुमान ॥२१७॥

बहर खड़ी

दीनी है दूत बधाई आ * हनुमान विजय कर आते हैं।
धन संपत्ति अटल अखंड संग * सब के मन आनंद पाते हैं॥
दिया पुरस्कार धन माल अधिक * कर निहाल दूत को बैठारा।
दरबार सजाया स्वागत हित * पुर सारा हित से शृंगारा॥
आनंद बधाये मात पिता * सुत के हित सुगर मनाते हैं।
जै-जै कारें हों गली-गली * गुण-वीर कुँवर के गाते हैं॥
मन सुफल कामना हुई पुरी * हनुमत मन में हर्षाते हैं।
कहे "चौथमल" आनंद मगन * अब राम चरण शिर नाते हैं॥

* हनुमान जन्म समाप्तम् *

श्री राम जन्म



छन्द

मुनि सोव्रत स्वामी कृपा करिये * हरिये सब पीर मेरे तन की।
मम संकट नाश करो प्रभुजी * विनती सुनिये अपने जन की॥
जग जाल कराल बयाल समान * महान् सु बूँटी है नाम तेरो।
अव ता कर पार आधार तुम्हीं * जग से तन पोत उबार मेरो॥
मुझ पे नहिं वार रिपु के चलें * न हले मन नेम सि नेक प्रभू।
इतनी अब आप दया करिये * राखिये अब मेरी सु टेक प्रभू॥
निज दास निहार विकार हनो * तुम ही अवलम्ब हो एक प्रभू।
अव जैसे बने मम तारिये जू * करके प्रदान विवेक प्रभू॥

दोहा

आओ माई भगवती * दीजे बुध बल ज्ञान।
भानु वंश कुल मणि तिलक * का कुछ करूँ बयान॥२१८॥

बहर खड़ी

अब करिये मात दया इतनी * स्थान कंठ मेरे कीजे।
हृदय प्रसन्न हो कर विराजो * वरदान विजय का दे दीजे॥
मोड़ो मत मुख को अब किंचित् * अवलंब आपका जन को है।
हरिये आलस्य अटक मन से * यह प्रण पूरण कर जन को है॥
नगरी मिथिला अति वर्णनीय * हरिवंश के भूप पति जिसके।
लाजे लख ललित-ललित ताको * वसु केतु भूप शुच सत जिसके॥
लख लाजवती विपुला को * लाज का मान खंड कुछ होता था
करते थे न्याय नीति सम नृप * वह नेम अनित को खोता था॥

दोहा

विस्मित होते थे सभी * देख देख नर नार ।
लोकालोक संभारंत * करते थे सव कार ॥२१९॥

गायन

(तर्ज—सत्य वात के कहे विना)

हाज़िर थे जिन के हुक्म में * वलवाँ वड़े-वड़े ।
मन रखते थे वीर रस के * जो अरमां वड़े-वड़े ॥
दीठ शुद्ध जिनकी सदा * रहती थीं वनी ।
आते थे उनको सुन कर * महरवां वड़े-वड़े ॥
गर धर्म के सवाल पड़े * उनकी जो नज़र ।
राजों की तरह किये हैं * वयाँ वड़े-वड़े ॥
अति एक योग पुत्र हुआ * उनके महावली ।
रक्खा था जनक नाम * थे गुण वाँ वड़े-वड़े ॥

दोहा

उसी समय उस काल का * सुनिये और वयान ।
पुरी अयोध्या अति सुगर * पुन उत्तम स्थान ॥२२०॥

चौपाई

अवध पुरी उत्तम स्थाना * सरयू के तट वसे निदाना ।
आदेश्वर स्वामी महाराजा * चित्त प्रसन्न करते शुभ काजा ॥
सुमंगला सुनन्दा रानी * युगल प्रेम युत है जिन वानी ।
सुमंगला सुत आनंद कन्दा * शुभ नंदा के सत सुत चन्दा ॥
सौ में वड़े भरत महाराजा * जो सम्राट् भये शुभ राजा ।
नाम सूर्य जश इनके पाया * जिसने सूरज वंश चलाया ॥
ऐसे भूपत अनेकों भये * कर-कर न्याय उच्च गति गये ।
नैयायक विद्वान अपारा * शुद्ध हृदय से राज संभारा ॥

दोहा

मुनि सोव्रत के समय तक * हुये भूप अनेक।
सूर्य वंश विख्यात में * राखी अपनी टेक ॥ २२१ ॥

चौपाई

विजय राय हुआ वलवाना * हिम चूला तसु नाम सुजाना॥
सुत युग भये सुगर वलवाना * वज्र वाहु पुर इन्दर जाना ॥
नगर अहिपुर× अति शुभ धामा * हिम वाहन तहि नृप को नामा
नीति युक्त अति ही वलकारी * चूड़ामणि तासु प्रिय प्यारी ॥
सुन्दर सुता तास नृप केरी * मनोरमा सुन्दरी घनेरी ।
वज्र वाहू को दी परनाई * वर कन्या मोदित गृह आई ॥
सुन्दर संग गमन जव कीना * प्रेम सहित पुर मारग लीना।
उदय सुगर भूपत का साला * प्रेम विवश पुनः संग में चाला

दोहा

पथ चलते मुनिराज पे * पड़ी दृष्टि जो आय।
वज्र वाहु नृप भाव से * चरणों लागे जाय ॥२२२॥

चौपाई

वारो वार प्रंशसा कीनी * धर्म दृष्टि मुनिवर ने दीनी।
दर्शन मुनिवर के पथ पाये * धन्य-धन्य अहो भाग्य सराये॥
कर हाँसी सारा यों बोला * क्या प्रशंसा का मुख खोला।
मैं समझ लियो संयम भारा * कुँवर कहे मन यही विचारा ॥
सारो कहे विलम्ब क्या करना * किस कारण आलस्यमन धरना
जो करले सो होगा साथा * गया समय नहीं आवे हाथा ॥
मेरे मन भी यही समाई * करले जो नर वह कुशलाई।

× नागपुर

ऐसा कहे सादर कर विनय * मम विनती प्रभुजी अब सुनय ॥

दोहा

विनय श्रवण कीजे प्रभु * करता विनय अपार ।
जग झंझट से काढ़िये * कीजे बेड़ा पार ॥ २२३ ॥

चौपाई

मोद मुदित को थी वह बातें * क्या समझें उनको अपघातें ।
जो लेना था संयम भारा * विवाह करन किम हित मन धारा
पहुँचा से कंकन नहिं टूटा * नहिं महावर का रंग छूटा ।
यह विचार सब वृथा तुम्हारा * बेड़ा कैसे होगा पारा ॥
तू निज भगनी को समझा ले * इतना भार निज शीश उठाले ।
तव भगनी है कुलवंती भारी * तो ले दीक्षा चले अगारी ॥
वरना जग जीवन भी नीका * रहें न संकट किंचित् जी का ।
मैं तो भोग रोग सम जाने * जग के सुख दुख भी पहिचाने ॥

दोहा

इस प्रकार धीरज बँधा * लीना सयम भार ।
उदय सुन्दर देख मन * प्रगटे विविध विचार ॥२२४॥

चौपाई

उदय सुन्दर मनोरमा दोनों * संयम धार लगे खुश होनो ।
पच्चीस नृप अरु संयम धारा * भव सागर से किया किनारा ॥
यह सुन कर श्री विजय नरेशा * मन छायो वैराग्य विशेषा ।
कीनो तुरत पुरन्दर राजा * आप संभारो आतम काजा ॥
मन विचार के भूप पुरन्दर * सौंपा राजा जो सुत अति सुंदर।
कीरत धर को देकर राजा * संयम ले किया आतम काजा॥
कीरत धर घर रहे उदासा * लागी मन संयम अभिलाषा ।
करें न राज काज संभाला * मंत्री कहे बात सु विशाला ॥

दोहा

जव तक गादी धर न हो * तव तक योग अयोग।
भूप सोच मन रह गये * मुदित नगर के लोग ॥२२५॥

चौपाई

जहि ग्रह में नहिं हो सन्ताना * सो ग्रह है जैसे शमसाना।
किस पर सौंपोगे पुर राजा * पीछे कौन संभाले काजा॥
यह सुन भूपत हृदय विचारी * लगे करन सव कृत संसारी।
सहदेवी नामे प्रिय प्यारी * भाग्यवती अति सुन्दर नारी॥
पुत्र सुकौशल सुन्दर जायो * गुप्त रखो नहिं भेद वतायो।
सूचित भये नृपत तहि वारी * जानो छल कीनो यह नारी॥
मन विचार नृप संयम लीना * राज काज निज सुत को दीना।
समता रस में आतम लागी * कीर्त धज नृप भये वैरागी॥

दोहा

अधिक दिवस गये वीत कर * करते मुनि विहार।
अवध पुरी की ओर को * आ निकले अनगार॥२२६॥

चौपाई

भीतर पुर के मुनि पधारे * लेन अहार तुरत पग धारे।
रानी देख कुपित भई भारी * सैनिक लिये वुला उस वारी॥
सोचे कटुक कु लक्षण कामा * यह वैरी किम आयो धामा।
मुखपत्ती कर पात्र जो धारे * ओघा काँख वंचि हर वारे॥
एसे साधु जो नग्र संभालो * तो पुर वाहर तुरत निकालो।
सुन आज्ञा हलकारे धाये * गली-गली डोले भेराये॥
कीरत धज स्वामी मुनिराया * हलकारों की नजरों आया।
दिया नग्र से वहार निकारी * धक्के दिये मार और मारी॥

दोहा

आई दासी रोवती * कीने वदन मलीन।

भूपति से आकर कही * जो मुनि संग में कीन ॥२२७॥

चौपाई

कारण कहो सुसत्य समझाई * कौन हेत दियो द्वन्द मचाई ।
तात आपके नग्र पधारे * तप से दुर्बलता तन धारे ॥
भीक्षा हेत चरन मुनि दीने * बड़े पुण्य दृष्टि प्रवीने ।
इतनी सुनी सुकोशल राया * पितु दर्शन करने को धाया ॥
मुनिवर तट पहुँचा तत्काला * देखा पितु को जा भूपाला ।
वन्दन कर धन जीवन जाना * छू कर चरन मुदित मन माना ॥
मन उत्साह बड़ा पुनि जागा * संयम नृप निज पितु से मांगा ।
जग स्वार्थी सु मैंने जाना * कोई किसी का नहिं पहिचाना ॥

दोहा

बोली रानी जोड़ कर * सुनिये कृपा निधान ।
राजा विन सूना नगर * कौन करे उत्थान ॥२२८॥

चौपाई

गर्भ माँहि जो जीव विराजा * कीना नग्र का वोही राजा ।
अंतराय मत करो अकारन * करने को दीक्षा मम धारन ॥
तात निकट जा दीक्षा धारूँ * और वचन नहिं वदन उचारूँ
दीक्षा ली सुकौशल राजा * सारन अपना आतम काजा ॥
सहदेवी कर क्रोध अपारा * गिरि मन्द्र से विनय विचारा।
मर कर हुई सिंहनी जाई * वन में पैदा हुई हर्षाई ॥
पुत्र पिता यों करत विहारा * ग्राम शहर शुभ ठाम निहारा ।
चारित्र चतुर पाल हर्षावे * निज आतम को ध्यान लगावे ॥

दोहा

चित्र कोट पहुँचे युगल * पिता पुत्र मुनिराज ।
देख गुफा सुन्दर सुखद * मन करके अंदाज ॥२२९॥

चौपाई

तप उपवास करें अति भारी * ज्ञान ध्यान मन करे विहारी।
कार्तिक पूरण मासी आई * नगर और विचरें मुनि राई ॥
सिहनी देख मुनिन पै धाई * मुनि के तुरत दृष्टि पड़ जाई।
तात कहे सुत उपद्रव आया * निश्चय दृढ़ मन रख दृढ़ाया ॥
हृदय मेरे वचन जमाओ * मैं आगे तुम पीछे जाओ।
मैं बालक क्षत्री तप धारी * तात चरन नहिं धरे पिछारी ॥
ममता त्याग देह की दीनी * हृदय शांति क्षमा भर लीनी।
कीनो मुनि मन आतम ध्याना * अपना चाया करन कल्याना ॥

दोहा

तड़ित तर्जना कर गिरी * वाघणी हो विकाल।
महि पटक दिया ऋषी को * किया वाल वेहाल ॥२३०॥

चौपाई

तन विदार खंडन कर डारो * खंड-खंड से खंड विदारो।
मास खाय मुनि को वध कीना * नार समान रुधिर को पीना ॥
चढ़ते रहे भाव मुनिराया * केवल निर्मल ज्ञान उपाया।
गये सुकौशल परम स्थाना * साध्यो पद सुन्दर निर्वाना ॥
कीरत धर करनी शुभ कीनी * शिव नगरी जा कर वर लीनी
चित्र कुमाला सुगर विशाला * हिरण गर्भ सुत जायो आला ॥
हिरण गर्भ भये वली अपारी * मृगावती तासु प्रिय प्यारी।
नधुक नाम सुत जिसका प्यारा * मात तात का मन उजियारा ॥

दोहा

देखा भूप नधूक ने * शीश श्वेत एक वाल।
बुरा समझ मन में चतुर * सोचे मन तत्काल ॥२३१॥

चौपाई

कीना वीर पुत्र को राजा * आप संभारा आतम काजा।

राजा अह रानी गुण खानी * सिद्दी का तस नाम सुजानी॥
तिय विद्या में चतुर सुजाना * सुर पने में भी सु विधाना।
उत्तर पथ नृप चढ़ के धाया * द्वितीय दिश से आन दबाया॥
दूजी ओर चढ़ी जा रानी * विजय कीनी शत्रु अभिमानी।
भूप सुनी रानी जय पाई * मन में पाप विराजो आई॥
मेरे काम की नहिं है रानी * करें कृत यह तो मन मानी।
व्यभिचारण मम देय दिखाई * इसका कौन भरोसा भाई॥

दोहा

प्रगट हुआ तव भूप के * भारी कोई रोग।
अच्छा हुआ न वैद्य से * किये वहुत उद्योग॥२३२॥

चौपाई

लीना हाथ परम स्वच्छ वारी * लेकर नृप के निकट पधारी।
युग कर जोड़ अर्ज करे रानी * कोकिल कंठ मधुर कह वानी॥
शाशन देव सहाई कीजे * लाज आज सत की रख दीजे।
जो मैंने सत नहीं विसारा * अन्य पुरुष मन से न निहारा॥
तो जल अमृत का करे कामा * पति मेरे को हो आरामा।
अस कह नीर भूप पर डाला * स्वस्थ राव भये दुःख सब टाला
नभ से फूल वर्षने लागे * पातिक सकल सती के भागे।
धन्य सती धन सत दिखलाया * आदर सहित भूप अपनाया॥

दोहा

कुछ दिन पीछे सुत हुआ * सु हृदय सो दास।
लख प्रसन्नता छा गई * प्रगटा सुमन हुलास॥२३३॥

चौपाई

दिया राज कुँवर को राजा * आप संभारन आतम काजा।
भूप हुआ पुर का सो दासा * पूर्ण हर्ष रहे सुख वासा॥

रहा मन उत्सव सु अठाई * जिनवर गुण गावै हर्षाई ।
आज्ञा सुन्दर भूप निकारी * जीव दया कीनी नृप जारी ॥
मंत्री कहे नाथ सुन लीजे * एक विनय मेरी चित्त दीजै ।
तस पूर्वज नहिं माँस अहारी * हुये आप ही भूप शिकारी ॥
त्यागें तुरत माँस का खाना * निज कुल का नृप धर्म निभाना
बात तुरत मंत्री की मानी * पर मन में यह नहीं सुहानी ॥

दोहा

व्यसन माँस का पड़ गया * भूपति के मन माँहि ।
कहा बुलाकर विप्र से * सुनिये कान लगाहिं ॥२३४॥

चौपाई

भोजन रोज करो तैयारी * माँस लुकाय लाओ नित लारी ।
ढूँढे मिले नहीं कहिं माँसा * ठण्डी द्विज भर रहा उसाँसा ॥
बालक मरा उठा कर लाया * तिसका भोजन लाय बनाया ।
भूपत के भोजन में आया * भूपत ने स्वादिष्ट बताया ॥
मांस कौन जीवों का लाया * अति स्वादिष्ट नाम बताया ।
हाथ जोड़ कर कह द्विज राया * था नर मांस सुनो मन लाया ॥
बोले खुश होकर भूपाला * प्रति दिन यही माँस ला वाला ।
मेरे मन में योंही भाई * सुन्दर आज रसोई बनाई ॥

दोहा

प्रति दिन बालक मार कर * लावे नृप के हेत ।
घबराई प्रजा अधिक * पहुँची भूप निकेत ॥२३५॥

चौपाई

करें पुकार सुने नहिं राया * क्रोध उमड़ प्रजा उर आया ।
मंत्री कहे सुनो भूपाला * दीजै त्याग यह पाप कराला ॥
भूपत माने बात न एका * चले चाल अपनी ही टेका ।

सब मिल के मन किया विचारा * भूपत किया राज से न्यारा ॥
सिंहरथ स्थिर कर सुखदाई * सब मिल कर दियो भूप बनाई ॥
बन में भ्रमत फिरे सौदासा * आयो दक्षिण दिश के पासा ॥
तहा मुनिश्वर लख तपधारी * हाथ जोड़ कर गिरा उचारी ।
नाथ कौन कारण दुख भारा * राज छूटा किस रीति हमारा ॥

दोहा

जो त्यागे मधु माँस को * तो सुख होय अपार ।
बिन त्यागे इस वस्तु के * होय न बेड़ा पार ॥२२६॥

चौपाई

त्यागा मदिरा माँस कराला * श्रावक धर्म लिया भूपाला ।
वहाँ से चल महापुर आया * शुभ कर्मों का उदय सुहाया ॥
भूप तहाँ का बिन संतानी * समय पाय हुआ अन्तर ध्यानी ।
मिलकर मंत्रीन ने मता उपाया * सौ दासा को भूप बनाया ॥
बन नृपत मन ऐसा छाया * पुरी अयोध्या दूत पठाया ॥
सेवा नहिं सुत ने स्वीकारी * दूत लौट कर आयो पिछारी ॥
करी चढ़ाई सुत पर जाई * पुत्र पिता में भई लड़ाई ।
नाना भाँति चले हथियारा * बहुत लड़ा, धरनंदन हारा ॥

दोहा

बाँधा है सुत धाय कर * तनिक करी नहिं वार ।
छोड़ा निज सुत जानकर * दीना सब अधिकार ॥२२७॥

चौपाई

दीना है नृप सब अधिकारा * आप सु संयम भार संभारा ।
भूप सिंहरथ के सुत चारी * सुन्दर सुगर चतुर बलकारी ॥
ब्रह्म रथ चतुर सुमुख सुखकारी * हिमरथ सतरथ उदय पृथु भारी
इन्दुरथ बाद सुरथ अधिकारी * आदित्यरथ मान धाता कारी ॥

वीर सेन प्रति मन्यू जानो * पदा बंधु रवि मन्यू बखानो।
वसंततिलक कुवेर सुदत्ता * कुंथु सरभ द्विरद मन,मत्था ॥
सिंह दसान हिरण्य कशिपु नीका*पुंजास्थल का कुस्थल ठीका।
रघु आदि हुए भूप घनेरे * शुभ्र कर्म किये सुर पुर डेरे ॥

दोहा

ककूत्स्थ भूपति भये * बड़े वीर बलवान ।
नृप दलीप उपनाम से * जाने जिन्हें जहान ॥२३८॥

बहर खड़ी

वह नृपत वीर वर ऐसा था * जिसका प्रताप भूमण्डल में।
फैला मानिंद दिवाकर के * इस भूमि चक्र अखण्डल में ॥
था धर्म वीर वह दानवीर * अरु दयावीर भी आला था।
क्षित क्षमावीर सत वीर धीर * अरु शूर वीर भूपाला था ॥
प्रजा सब पुत्र समान भूप से * सादर प्रेम सु करती थी।
चिरंजीवी होय भक्त वत्सल * ऐसा मुख सदा उचरती थी ॥
पर पुत्र न था कोई नृप के * हृदय में यही खटकता था।
पुन कभी कभी नृपत मन में * हर ओरि जाय भटकता था ॥

दोहा

समय पाय दरबार में * बड़े-बड़े विद्वान ।
आय उपस्थित हो गये * देखा धर कर ध्यान ॥२३९॥

बहर खड़ी

कर मथन जतन कर के देखा * विद्वानों ने उचारा है।
ज्योतिप में देख-देख सब ने * ऐसे मुख वचन उच्चारा है ॥
सुरभी की सेवा करने से * होगी सन्तान अवश्य राजा।
ज्योतिप ग्रन्थ जो लिखते हैं * उस से हम विवश हुये राजा ॥
हो धर्म वीर अरु गुणग्राही * यह कहा हमारा मानो तुम।

यह कारज शुभ स्वीकार करो * हृदय में इसको जानो तुम ॥
ऐसा कह द्विज तो चले गये * मंत्री ने नृप से अर्ज करी।
अपनी कुछ हानि नहीं भूपति * इसको अब लीजे श्रवण धरी॥

दोहा

कर विचार नृप ने तुरत * अति मन हर्ष बढाय।
दान किया सब को शुरू * देना मन जो चाय ॥ २४० ॥

बहर खड़ी

गौओं को भूप मगन मन हो * हर रीति सुख पहुँचाने लगे।
चारा दाना अन्नादि सर्वप्रकार * उन्हें डलवाने लगे ॥
जो आता था भूखा निर्धन * भोजन वह इच्छित पाता था।
जिसको इच्छा हो वस्त्रों की * वह भी नहीं फिरकर जाता था॥
नहिं दान से नृप मुख को फेरा * ऐसा दानी नृपाल हुआ ।
कीर्ति छाई नभ मंडल में * वह दानवीर भूपाल हुआ ॥
आया शुभ समय आनंद घडी * राजा की पूरण आश हुई।
सुत प्रगट हुआ अति तेजवान * बलवान सर्व प्रकार हुई ॥

दोहा

दिये दान हर्षा नृपत * बाँटा द्रव्य अपार।
छोड़े बन्दीजन बहुत * होते मंगलचार ॥ २४१ ॥

बहर खड़ी

कर दिये अयाचक सब याचक * याचना की न दरकार रही।
मँगता नजर न कोई पड़े * चर्चा घर-घर द्वार छई ॥
नर नारी मुदित होते मन में * फूले नहीं अंग समाते हैं।
आनंद छा रहा नगर बीच * सब ही मन में हर्षाते हैं ॥
बुलवाय पंडितों को लीना * सादर उनको बैठाया है।

नागर पल्लव इत्यादि प्रथम * लाकर के मान वढ़ाया है ॥
पंडित गण मिल कर देख रहे * हैं लग्न कौनसा पाते हैं ।
शुभ ग्रह नक्षत्र सोच कर के * सुत का रघु नाम वताते हैं ॥

दोहा

दिन-दिन सुत वढ़ने लगे * घटन लगे संताप ।
रघु ने राज अनरण्य को * दिया साधु भये आप ॥२४२॥

चौपाई

अनरण्य भूपति अति न्याई * राज काज से सुमन लगाई ।
पृथ्वी देवी है अति प्यारी * भूपत की अर्द्धांगी नारी ॥
पुत्र हुए दो अति वल वाना * अनन्त रथ दशरथ गुणवाना ।
अनरण्य सहस्र किरण युगप्रेमी * मन प्रसन्न अति कुशलो क्षेमी ॥
युद्ध किया रावण से जाकर * रण वैराग प्रगट हुआ आकर ।
दोनों मित्र सु दीक्षा लीनी * अति उत्तम करणी युग कीनी ॥
अनन्तरथ लिया संयम भारा * जग समुद्र से किया किनारा ।
किया निरन्तर तप अति भारा * कर-कर करणी मुक्ति पधारा ॥

दोहा

अवध पुरी के राज का * दशरथ को अधिकार ।
दिया भूप ने हर्ष युत * किया प्रसन्न हो कार ॥२४३॥

चौपाई

एक मास के दशरथ राया * करके तिलक नृप वन सिधाया ।
चन्द्र समान वढ़े नृप जोई * दिन-दिन उन्नति वपु में होई ॥
पाँच वर्ष के हुए भूआला * शक्ति भक्ति का हुआ उजाला ।
शस्त्र शास्त्र अति हित कर चीने * वड़े कृत कर में कर लीने ॥
विनय विवेक ज्ञान अति पाया * भूपत देख वहुत हुलसाया ।
यौवन वय में चरन चढाया * देख वाण मन अधिक लजाया ॥

वीर वृन्द में कीरत पाई * तारों में पड़े चन्द्र दिखाई।
दानवीर अति हुये भुवाला * गुण ग्राहक चाहक दिग्पाला॥

दोहा

पाया है जग अधिक यश * बढ़ा तेज प्रताप।
बड़े-बड़े क्षत्री सुवन * करें सुमन प्रलाप ॥२४४॥

चौपाई

दर्भस्थल पुर है शुभ ग्रामा * तहँ का भूप सुकोशल नामा।
अमृत प्रभा तासु ग्रह रानी * सुन्दर रूप सु कोकिल वानी॥
सुन्दर सुगर सु कन्या ताके * मंजुलता में रतिय हरा के।
अपराजिता नाम तस पाया * इन्द्राणी का मान घटाया॥
सो दशरथ नृप को परनाई * दान दहेज दिये हर्षाई।
मित्र सु भू भूपाल प्रवीना * त्रिय सुशीला कुमुद कुलीना॥
पुत्री सुगर सुमित्रा प्यारी * दशरथ नृप को दी उसवारी।
सु प्रभा तीजी नृप प्यारी * रानी तीन परम सुकुमारी॥

दोहा

इस प्रकार आनंद युत * अवध पुरी भूपाल।
पंचेन्द्रिय सुख भोगते * करें प्रजा प्रतिपाल ॥२४५॥

चौपाई

एक दिवस लंकेश सुजाना * वैठ परपदा में हर्षाना।
लखे चहुँ लग निगाह उठाई * सबल न कोई देय दिखाई॥
लिया निमित्तया पास बुला के * प्रश्न किया निज कर दिखलाके।
किस विधि आयुप पूरण होई * स्वयं मरूँ या मारे कोई॥
इन्द्रादिक सुरनर या व्याला * खग खगेश या कोई दिग्पाला।
सुन कर अस पंचाङ्ग संभारा * ग्रह गोचर लख खूब निहारा॥
जनक राय की कन्या कारण * दशरथ तनय आयँगे मारन।

ज्योतिष ग्रन्थ यही उच्चारे * अवध पुरी पति को सुत मारे॥

दोहा

वचन सुनत गणितज्ञ के * सब के मन इक बार।
सन्नाटा सा छा गया * तुरत बीच दरबार ॥२४६॥

चौपाई

वचन विभीषण ऐसे बोला * सुन गर्जन सब का मन डोला।
वचन न इसका वृथा होई * पर अबके दूँगा मैं खोई॥
दशरथ जनक युगल नृप मारूँ * दोनों के सिर जाय उतारूँ।
मैंने मन में यह ही ठाना * जिस से हो नृप का कल्याना॥
बिना मूल के फूल न आवे * फूल बिना फल कैसे आवे।
वचन विभीषण हर्ष सुनाये * सब के मन ढाढस बँधवाये॥
बोले दशकन्धर सुन बैना * हुए भूप के ऊँचे नैना।
नृप दरबार विसर्जन कीना * महलों लंकापति पग दीना॥

दोहा

सुन निमित्तिये के वचन * नारद चतुर महान्।
दशरथ के दरबार में * देखा धर कर ध्यान ॥२४७॥

चौपाई

दशरथ देख तुरत उठ धाया * नारद ऋषि के सन्मुख आया।
पूजा कर गुरु सम सनमाना * हाथ जोड़ कर कहा सुजाना॥
कहाँ से कर भ्रमण नृप आये * कौन-कौन से दृश्य लख आये।
दशकंधर दरबार सुजाना * निमित्तिया ने निमित्त बखाना॥
जनक भूप की कन्या हेतु * दशरथ नृप के सुत खल से तू।
युग के निमित्त मरे लंकेशा * यह सुन कर भये सर्व कुवेशा॥
दशरथ जनक को जाय संहारूँ * कहा विभिषण जाकर मारूँ।
जाय जनक को यही सुनाया * नारद खुश हो तुरत सिधाया।

दोहा

जनक राय दशरथ युगल * चले राज को त्याग ।
दोनों की प्रतिबिम्ब को * दी गादी पर पाग ॥ २४८॥ ॥

चौपाई

कानन चले भूप युग संगा * देखे विपिन विलक्षण भंगा ।
असित निशा में चले विभीषण * अवधपुरी आय सोचे मन ॥
मारो बाण भूप के तानी * सिर पर लागो नृप को मानी।
हा-हा कार हुआ इकवारी * पकड़ो-पकड़ो गिरा उचारी ॥
रोवे रानी दुख सन भारी * त्राहि-त्राहि मच गई इकवारी।
मृतकारज जाकर के कीना * नैन विभीषण ने लख लीना ॥
मंत्री मतो सुफल मन जानो * सफल मनोरथ निज कर माना।
जनक अवस्था यही पहिचानो * आगे जो कुछ होय सु जानो ॥

दोहा

दोनों के मन मित्रता * बड़ा प्रेम अति गाढ़ ।
लगे विचरने विपिन में * प्रेम रहा मन बाढ़ ॥ २४६॥

चौपाई

उत्तर दिशा चले युग मित्रा * भ्रमण करें जहाँ जाय इकत्रा।
कौतुक मंगल अरु जो देखा * शुभ मति राज सुखद अविलेखा
शुभ मति भूप राज अधिकारी * श्री पृथ्वी तस रानी प्यारी ।
कन्या कैकई अति गुणवन्ती * कमला सम सुन्दर सुखसंती॥
द्रोण मेघ नृप का सुत प्यारा * वीर पराक्रमी अति भारा ।
रचना स्वयम्वर नृप पुत्री का * चहल पहल हो रही सुत्रीका॥
बड़े-बड़े नृप जिस में आये * दशरथ जनक सुनत युग धाये।
भूपों में युग भूप विराजें * कमल बीच ज्यों हंस सु साजें॥
रूप अनोपम दोनों राजा * सभा बीच जिम रवि शशि साजा

दोहा

कर वरमाला केकई * आई ले दरवार ।
प्रतिहारी के संग में * देखे राज कुँवार ॥२५०॥

चौपाई

राजा सकल निहारे रानी * भूप जहाँ वहु दानी मानी ।
दशरथ ओर केकई चाली * मन प्रसन्न वरमाला डाली ॥
देख हाल राजा झुझलाये * मिल जुल आपस में वतराये।
राजों को समझा अनुवाली * रंक कंठ में माला डाली ॥
लेय छीन यह रत्न अमोला * हरि वाहन रिपु करके वोला ॥
सेना चल कर के शृंगारो * चारों ओर घेर कर मारो ॥
निज-निज डेरे को चल दीने * तुरत काज संगर के कीने ।
शुभ मति दशरथ के संग आये * हर प्रकार मन धीरज लाये ॥

दोहा

सेना देखी भूप जव * वोले ऐसे वैन ।
वने सारथी प्रिय तू * तो जीतूँ तत्छेन ॥ २५१ ॥

चौपाई

केकई वनी सारथी आई * दशरथ नृप ने करी चढ़ाई ।
शुभमति के संग सेना धाई * मार-मार रिपुदल पै छाई ॥
मेघ धार सम वाण चलाये * सेना में रथ खन न जाये ।
दशरथ नृप रण में ललकारे * रिपु दल पर तीखे सर डारें ॥
रिपुदल के दिल दहल समाया * आगे पुन नहिं चरन वढ़ाया ।
दावा रिपु दल नृप ने धाई * मार देख सैना भर्राई ॥
भागा कटक डटे नहीं डाटे * शूर वीर क्षत्री सव नाटे ।
विजय लक्ष्मी दशरथ पाई * जै-जै हुई चहुँ दिशी वढ़ाई ॥

दोहा

मैं तेरी इस कला से हूँ प्रसन्न अति त्रीय ।
जो चाहे सो माँग ले नहीं अदेय कुछ प्रिय ॥२५१॥

चौपाई

बोली चतुर केकई रानी कोकिल कंठ मधुर स्वर बानी।
स्वामी यह मेरा वरदान रखो हृदय का खोल खजाना॥
लूँगी समय जान कर नाथा हर्ष रखो इसको निज साथा।
राजग्रही नगरी नृप आये सैन बहुत अपने संग लाये॥
मगध पति से भी जय पाई ※ राज ग्रही गादी निज ठाई।
लंकापति का भय अति भारा ※ इस कारण नहिं अवध पधारा
दशरथ नृप रनवास बुलाया ※ राजग्रही मन में अति भाया।
सिंह जहाँ पर करें निवासा ※ कहाँ सियार का उस वन वासा

दोहा

आओ माता प्रसन्न हो ※ हृदय करो किलोल ।
कंठ बीच वासा करो ※ बोल-बोल अनमोल ॥२५२॥

बहर खड़ी

आनन्द सहित दशरथ नरेन्द्र ※ राजग्रही करते वास जहाँ।
वह सुगर भूमि रही नभको चूम ※ होता सब को हुल्लास जहाँ
वह मन्द्र महल थे चंद्रनाय ※ जहाँ कौशल्या महरानी थी।
था अपराजिता नाम दूजा ※ तन पर सब मोद निशानी थी॥
मौसम बसन्त ऋतु का सा था ※ नहिं शीत और नहिं ताप महा।
हर्ष उत्साह छाया घर-घर ※ कोई चिन्ह नहि सन्ताप सहा॥
नख शिख शृंगार सुगर कर के ※ अति प्रेम मगन दिन बीत गया।
लालमा भान की छुपी जाय ※ अब शशि का आ प्रकाश छया॥

दोहा

लख लालमा शुभ सरवरी * अति ही मन हर्षाय।
कर प्रसन्न चित सेज पर * मुद मन लेटी जाय ॥२५४॥

बहर खड़ी

विकसित सित सेज चान्दनीसी * शुभ चारु चान्दनी बिछी हुई।
हैं बिस्तर विमल-विमल पंकज * जिन पर सुगन्धता सिंची हुई॥
निद्रा ने आन दवा लीना * शीतल समीर चलती सन-सन
थी आत्म रक्षिका देवी आ * पंखी कर ले झलती सन-सन॥
आधी से ज्यादा रात गई * कुछ प्रातःकाल सा हो आया।
कुछ रहा अँधेरा सा बाकी * कुछ-कुछ उजियाला सा छाया॥
उस समय अनोपम स्वप्न चार * देखे सु कौशल्या रानी ने।
अति विमल अमल से शुचि * सुशोभ मुदित प्रमोद महरानी ने

दोहा

स्वप्न शुभ समय पाय के * दीखे इक दम आन।
प्रथम गजेन्द्र मृगेन्द्र पुनः * रजनी पति अरु भान ॥२५५॥

बहर खड़ी

अति विमल सुगर चारों सुवस्तु * पिछले पहर में दर्श दिया।
करते किलोल चारों देखे * रानी के मुख प्रवेश किया ॥
यह स्वप्न देख खुल गये नैन * रानी मन में हर्षाई है।
करके जिनेंद्र को याद सुमन * दशरथ नृप के तट आई है ॥
अति विनय सहित राजाजी को * सुन्दर शुभ स्वप्न सुनाया है।
दशरथ भूपाल प्रसन्न हुए * मन मोद उमड़ कर आया है॥
जिस तरह चन्द्र को सिंधु * इक संग उमड़ कर आता है।
बस उसी तरह हृदय नृप का * अब फूला नहीं समाता है ॥

दोहा

सुन कर नृप देने लगे * दोनों कर से दान ।

रत्न जवाहिर आदि वहु * मुक्ता करें प्रदान ॥२५६॥

वहर खड़ी

हुआ है दान जिस वक्त शुरू * सव के कानों में भनक पड़ी।
जनता उस समय उत्साह भरे * सब के मन में अति खुशी वड़ी॥
जव शुभ्र समय शुभ दिन आया * कौशल्या ने सुत जाया है ।
गर्भ में हुए जै कार महा * शुभ गान सुरों ने गाया है ॥
हर्षोत वधाये होन लगे * मङ्गलमय कृत हुए जारी ।
मिल कर के नग्र जनता सारी * दरबार की करती तैयारी ॥
कोई दूव पुष्प कर मे लेकर * दशरथ के सन्मुख जाते हैं॥
कोई मंगल मय वस्तु कर में * नृप को शुभ शब्द सुनाते हैं ॥

दोहा

नगर दिया छिड़काय कर * पुष्प दिये वरसाय ।
शुभ सुगन्ध से पंथ सव * हुआ सुगंधित आय ॥२५७॥

वहर खड़ी

मुक्तान से चौक पुरा कर के * चोखे चावल डरवाये हैं ।
कञ्चन के कलश किये अर्चन * द्वारे नृप के धरवाये हैं॥
वन्दर वारें हैं द्वार-द्वार * माङ्गलिक वस्तु चमकार करें।
उड़ते निशान आकाश सुगर * विश्वास भूप के मोद भरे ॥
वज रहे ढ़ोल मृदङ्ग चङ्ग * दिल रुवा कहिं एक तारा है॥
कहिं वीन सितार तमूरा है * सारङ्गी कहिं मन वारा है ॥
कहिं झाँझ शङ्ख खरताल वजै * कहिं वजै पखावज प्यारी है।
कहिं नाना भाँति बजै वाजे * आनंद मन रहा भारी है ॥

दोहा

रमण रहीं रमणी जहाँ * गावें भर-भर तान ।
कुंकुम हाथ उछारती * कर रहि हरि गुण गान॥२५८॥

बहर खड़ी

मोदित हों रास रचाती हैं ❋ गाती हैं भर-भर तान सखी।
हर्षा कर नाच रहीं मिल जुल ❋ गा रहीं हैं मंगल गान सखी॥
नर-नारि अनंदित घर-घर पर ❋ तोरण को बांध सिहाते हैं।
लाते हैं मांगलिक वस्तु ❋ रचना विचित्र दिखलाते हैं॥
लख मंगल दिवस बने सुर तरु ❋ दशरथ नृप मन हुलसाते हैं।
करते हैं आशा पूर्ण सब की ❋ जो चाहते हैं सो पाते हैं॥
बिन याचक वृन्द सभी सारे ❋ कर दिये अयाचक भूपत ने।
दारिद्र्य दूर भये नगरी के ❋ खुश कीने शाशक भूपत ने॥

दोहा

अन्य भूप कर भेंट ले ❋ आये नृप के द्वार।
दशरथ मन हर्षाय के ❋ करते हैं सत्कार॥२५६॥

बहर खड़ी

उस पुत्र भाग्य से राजों के ❋ हृदय में प्रेम समाया है।
जिस तरह सार को चुम्बक संग ❋ निज ओर खींच कर लाया है॥
रक्खा है पद्म नाम सुत का ❋ पर राम नाम विख्यात हुआ।
दिन-दिन तप तेज उन्नति पर ❋ होता है शुभ नर सात हुआ॥
शुभ दन्त सुपंक्ति कुन्दकली ❋ अरु अधर अरुण शुभ लाल के हैं
चपला चमके घन में जैसे ❋ चमकारे मुक्ता माल के हैं॥
घुँघराली लटकें लट मुख पर ❋ कानों में कुण्डल डोलन की।
छवि छुपी छुपा की लख कर ❋ आनंद भई शुभ बोलन की॥

दोहा

सुगर सुमित्रा ने लखे ❋ सुपने उत्तम सात।
वासु देव के चिन्ह हैं ❋ जो जग में विख्यात्॥२६०॥

बहर खड़ी

दिनकर गजेन्द्र के हरि शुभ शशि * अगनी जल कमल महारानी
सागर देखा सातवाँ स्वप्न * यह चिन्ह निरख मन खुश रानी
यह स्वप्न देख कर रानी ने * दशरथ तट चरण बढ़ाये हैं।
अति विनय सहित कर जोड़ प्रिय * सुपने यथार्थ समझाये हैं॥
सुरलोक से चवके कोई जीव * रानी के गर्भ में आया है।
है पुण्यवान बलवान महा * सुख हर प्रकार दिखाया है॥
सुनकर के स्वप्न प्रसन्न हुए * दशरथ हृदय हुलसाये हैं।
नहिं रही मोद की कुछ सीमा * आनंद अश्रु चपु छाये हैं॥

दोहा

लखण शुभ शुभ दिवस में * शुभ्र समय धर ध्यान।
जायो सुत सुमित्रा निकट * केहरि सिंह निदान॥२६१॥

बहर खड़ी

सुन्दर सुश्याम अभिराम वरण * घन नील जिस तरह प्यारा है।
जल जात सुगर जैसे जल पर * देता शोभा अति भारा है॥
महलों में आनन्द छया भारी * नर नारी मंगल गाते हैं।
नहीं फूले अंग समाते हैं * इक आते हैं इक जाते हैं॥
दस दिवस महोत्सवं मना रहा * वन्दी बहु तेरे मुक्त किये।
याचक कर दिये अयाचक सब * ऐसे भूपति ने दान दिये॥
नारायण नाम करण पाया * लक्ष्मण भर मोद पुकारा है।
प्रसन्न मात पितू देख-देख * शुभ गौर श्याम अति प्यारा है॥

दोहा

दिन दिन बढ़ते युग सुत * रूप राशि गुण खान।
बल प्रताप चौगुन बढ़े * देखें धर कर ध्यान॥२६२॥

बहर खड़ी

छवि छित पर फैल रही प्यारी * जहाँ श्याम गौर क्रीड़ा करते।

कर-कर के वाल विनोद युगल * पितु माता के मन को भरते ॥
कभी शशि देख मचल जाते * कभी प्रति बिम्ब देख डरपते हैं
कभी करताल वजाते हैं * कभी हौआ सुनकर कँपते हैं ॥
कभी ठुमक-ठुमक पग धर अँगना * मात की गोदी आते हैं।
कभी हट करते हैं हर्षा कर * कभी गोद मचल युग जाते हैं॥
यह रीति वढ़ाते प्रीति हर्ष * माताजी वलि-वलि जाती हैं।
चुटकी को वजा खिलाती है * मन देख-देख हर्षाती हैं॥

दोहा

दोनों भ्राता प्रेम युत * नील पीत पट धार।
चलें जमा कर जब चरन * धरन कँपे उस वार ॥२६३॥

वहर खड़ी

थोड़े ही अर्से में दोनों * सारी विद्या सम्पन्न भये।
वलवान हुये वह अद्वितीय * और कर कौशल प्रतिसन्न भये
मुष्टक प्रहार कर गिरिवर का * हर्षा के चूरा करते थे।
जिसमें डाले थे हाथ तुरत * उस काम को पूरा करते थे॥
जब व्यायाम करने के हेत * शाला में प्रमुदित जाते थे।
तो वड़े मल्लों को वह * सहजे नीचा दिखलाते थे॥
जब धनुष बाण को चिल्ले पर * मिल कर युग भ्रात चढ़ाते थे।
उस समय अशंका से इक दम * सूरज मन में कँप जाते थे॥

दोहा

भुज बल अपने से सदा * रिपु को तृन सम जान।
धनु विद्या में अद्वितीय * पूरण चतुर सुजान ॥२६४॥

वहर खड़ी

पुन पुरी अयोध्या में नृप ने * आकर अधिकार जमाया है।
दोनों सुत अपनी बाहु समझ * दशरथ बल अतुल दिखाया है

केकई ने जाया भरत पुत्र * शत्रुघन सु प्रवाह जाया।
अद्वित भई खुशो अयोध्या में * दशरथ मन में अति हर्षाया ॥
जिस तरह मेरु के दिग्गज हैं * बस इसी तरह चारों भाई।
दशरथ सुमेरु सम दीखे हैं * शोभा मुख नहि वरनी जाई ॥
मिल जुल कर अवध की कुँजों में * जब जाते थे भाई चारों।
दर्शन के हित नरनार सभी * रहते थे खड़े छाई चारों ॥

दोहा

भरत क्षेत्र में दासपुर * था इक छोटा ग्राम।
जहाँ बसे एक ब्राह्मण * वसुभूति है नाम ॥ २६५॥

वहर खड़ी

उस द्विज का सुत अनुभूति था * सरसा थी उसकी प्राण प्रिया।
कमला एक विप्र हुआ मोहित * उसने जा उसको हरण किया
अनुभूति विरह वेदना में फँस * उसे ढूँढता फिरता था।
उसके माँ बाप मोह वश हो * हर ओर विचरता फिरता था
पथ में मिल गये अनगार एक * उसको उपदेश सुनाया है।
सुनकर के अमरत वाणी को * वैराग्य चित्त में छाया है॥
लेकर के संयम भार युगल * अति हँसी खुशी युत साधु भये
करके आयुप अपनी पूरी * सुधर्म सुर पुर में प्रगट भये ॥

दोहा

सुर पुर से चव कर चला * गिरि वैताड़ सुजान।
रथनुपुर का अधि पति * चन्द्र गति बलवान ॥२६६॥

वहर खड़ी

अनुकोपा पुष्पवती हुआ * नृप की अर्द्धांगनी आकर के।
ईशान स्वर्ग में जा कर के * सरस सुदेव हुआ धा कर के॥
अनूभूति विप्र भ्रमता-भ्रमता * इक हंसनि के प्रगटा आके।

उसको पा समय तुरत झपटा ❊ एक बाज ने पकड़ा है धाक ॥
पंजों से गिरा छूट कर के ❊ ऋषि की शरणागति आया है।
मुनिवर ने दया हृदय धारी ❊ उसको नवकार सुनाया है ॥
नवकार मंत्र के कारण से वह ❊ हुआ देवता आकर के।
किन्नर की जाति में प्रगट हुआ ❊ दस सहस्र सु आयुष पाकरके॥

दोहा

विदग्ध नगर के नृपत के ❊ हुआ पुत्र ललाम ।
सुन्दर तेज प्रताप अति ❊ कुंडल मंडित नाम ॥२६७॥

बहर खड़ी

भव-भव भ्रमता-भ्रमता पयानकर ❊ चक्र पुरी में आया है।
चक्रजध्वज भूपत का प्रोहित ❊ द्विज धूमसेन कहलाया है ॥
उसका सुत पिंगल हुआ आन ❊ मन मे स्वमान को वढ़ता था ।
भूपत की पुत्री सुन्दरी के संग ❊ विद्या को निश दिन पढ़ता था
पिंगल द्विज पुत्र समय पाकर ❊ नृप की कन्या का हरण किया
जाकर विदग्ध पुर में ठहरा ❊ अब आजीविका में चित्त दिया॥
कुंडल मंडित ने देख उसे ❊ परस्पर प्रेम दर्शाया है ।
उसको हर लेगया पिता डरसे ❊ दुर्गम प्रदेश वसाया है ॥

दोहा

नारी के लख वियोग को ❊ लीना संयम भार ।
मोह न छूटा नारि का ❊ मन में नही करार ॥२६८॥

बहर खड़ी

कुण्डल मण्डित पामर हो कर ❊ दशरथ का देश नशाता है ।
छल से जनता को ठगता है ❊ पुनः लूटरु मार मचाता है ॥
नृप की आज्ञा से वालचन्द्र ❊ सामन्त सैन ले चढ़ आया ।
कुण्डल मण्डित को पकड़ लिया ❊ दशरथ के सन्मुख ले आया ॥

दशरथ नृपत ने समझा कर ॐ कुंडल मंडित को छोड़ दिया।
लख दीन अवस्था में उस को ॐ रिपुता से निज मुख मोड़ लिया
मुनि चन्द्र मुनिश्वर से सुन कर ॐ शुभ धर्म श्रावक का लाना।
मन राज वांछा भरी रही ॐ आ जनक भूप ने जन्म लीना॥

दोहा

सुर पुर से सरसा चली ॐ वेगवती भई आन
दीक्षा ले पुन तप किया ॐ पहुँची देव विमान॥२६९॥

बहर खड़ी

पुनः ब्रह्मलोक से चव कर के ॐ रानी विदेहा के जन्म लिया।
कुण्डल मण्डित संग हुई कन्या ॐ युग पल मात को हर्ष दिया॥
पुनःउसी समय पिंगल मुनि भी ॐ मर कर सुर-पुर में देव भये।
लखा है लगा कर अवध ज्ञान ॐ पूर्व भव लख मन क्रोध छये॥
कुण्डल मण्डित निज वैरी को ॐ राजा ने पुत्र बना देखा।
जग उठा वैर बदला लूँगा ॐ ऐसा मन में कीना लेखा॥
सुर पुर में उसी समय धाया ॐ हर लिया जनक के नंदन को।
ले चला उठा कर निज कर में ॐ मेटा अपने मन क्रंदन को॥

दोहा

सोचा है निज मन विषे ॐ दूँ पाषाण पछाड़।
लगे बाल-हत्या तुरत ॐ कैसे होय निवाड़॥२७०॥

बहर खड़ी

मन कर विचार शृंगार कीना ॐ कुण्डल आदिक पहराये हैं।
रथनुपुर के उद्यान बीच ॐ जाकर नृप पुत्र सुलाये हैं॥
देखा विद्याधर चन्द्र गति ॐ बालक को गोद उठाया है।
ले जाकर महल बीच नृप ने ॐ रानी की गोद गहाया है॥
लेकर पुत्र पुष्पवती हर्षी ॐ बालक को कण्ठ लगाया है।

बालक के पैदा होने का * अति ही आनंद मनाया है ॥
दरबार में आके भूपति ने * आज्ञा ऐसी करवाई है ।
होती हैं ठाम-ठाम खुशियाँ * सब के मन खुशी समाई है ॥

दोहा

चन्द्रगति पुष्पावती * हर्षंत सुमन अपार ।
देख-देख वपु पुत्र को * वरते जै-जै कार ॥२७१॥

बहर खड़ी

राजा रानी सुत को विलोक * आनंद अतीव मानते हैं ।
महलों मे मंगल आदि होंय * इक आते हैं इक जाते हैं ॥
क्या अटल काल की लीला है * कही शोक हर्ष है कहीं कहीं ।
कोई किसी के लिये रोता है * होता उत्कर्ष है कहीं कहीं ॥
जब जनक पुत्र का हरण सुना * एक समय शोक हृदय छाया ।
पुनः सोच काल की वंक गति * कुछ ध्यान न फिर यद्यपि आया
दौड़ाये जवान चौ तरफ को * गिरी गुहा लखे नदी नाले ।
जब पता कहीं पे नही लागा * लौटी आगये ढूँढ़न वाले ॥

दोहा

कर सन्तोष विदेह मन * समझाई निज वाम ।
पुत्री को अविलोक के * सीता राखा नाम ॥२७२॥

बहर खड़ी

होती थी शीतलता प्रगट * उस शांति मूर्ति निहारे से ।
शान्तिता समा जाती हृदय * ले करके गोदी पुचकारे से ॥
बढ़ती है चन्द्र कला जैसे * बढ़ती बुद्धि विवेक मई ।
करती है लीला नव प्रगट * माता के सन्मुख टेक मई ॥
जब यौवन वय में धरा चरन * उस समय प्रण ऐसा किया ।
बैठाय समीप कुमारिन को * पतिव्रत धर्म उपदेश दिया ॥

लेकर के वीणा हाथ कभी * जब मोद मुदित हो गाती थी।
सुर मधुर-मधुर की सुन तानें * वायु भी कुछ रुक जाती थी॥

दोहा

क्रमशः वह कमलाक्षी * रूपकला प्रवीन ।
यौवन वय को प्राप्त कर * करती छवि को क्षीन॥२७३॥

बहर खड़ी

उत्तम लावण्य सुसागर की * लहरों में अब लहरान लगीं।
शुभ सुन्दरता से रती शची * रंभा को भी शरमान लगीं॥
यह रूप अद्वितीय को विलोक * मन जनक राय यूँ धारते थे।
सम रूप बुद्धि गुण बल वाला * कोई नृप कुँवर निहारते थे॥
मंत्रियों से करते परामर्श * चौतरफ दृष्टि डाले राजा ।
किस भूप कुँवर को अविलोकूँ * निज प्रण कैसे पाले राजा॥
सब समय करा लेता कर्त्तव्य * बस यही बानिक बनता है।
जिस तरह भविष्य होय जिसका * बस उसी तरह से ठनता है॥

दोहा

बरबर नरपति दैत्य सम * म्लेच्छ जाति का राव ।
जनक राय की सीम में * राज लगावे दाव ॥ २७४ ॥

बहर खड़ी

वो जनक राय के राज्य बीच * हो निर्भय चढ़ कर आता है।
बेखटके लूट मचाता है * जनता को खूब सताता है॥
उस प्रलय काल जल के समान * नहिं वेग रोकने पाते हैं ।
भूपाल जनक उस दुर्जन के * सन्मुख नहिं जाना चाहते हैं॥
जब दीनी सूचना दशरथ को * निज मित्र मान के गाढ़ा।
लिख कर के पत्र भेज दीने * हृदय प्रतीत का रंग गाढ़ा॥
जाकर नरेन्द्र दशरथ के तट * यह पत्र शीघ्र पहुँचा देना।

कीना है याद जनक नृप ने ※ यों व्योरेवार सुना देना ॥

दोहा

दशरथ के दरबार में ※ पहुँचा दूत सुजान ।
पत्र हाथ में दे, दीना ※ सुना दिया सब ब्यान॥२७५॥

बहर खड़ी

निज मित्र का संकट सुन कर के ※ दशरथ का हृदय उवल आया ।
सेना को आज्ञा दे दीनी ※ फौरन ललाट पर बल आया ॥
लोचन मसाल के सम हुए ※ भृकुटी तन गई कमाने सी ।
भुजदंड फड़कने लगे तुरत ※ रिपु की भई भय में जाने सी ॥
रण बाज अवध में लगे बजन ※ सज गये शूर सामन्त सभी ।
सेना चतुरंगी हुई तैयार ※ माने हैं प्रजा भ्रान्त सभी ॥
कोई कहे कहाँ को सजे भूप ※ सैना कैसे तैयार हुई ।
रणभेरी बजती है पुर में ※ सब के उमंग सर सार हुई ॥

दोहा

बोले राम सुजान यों ※ सुनो पिता धर ध्यान ।
रण में जायें आप तो ※ हम को छोड़ मकान ॥२७६॥

बहर खड़ी

जाते हो आप युद्ध करने ※ हमको क्या काम बताया है ।
मैं और अनुज मेरा दोनों ※ किस हेत यहाँ छिटकाया है ॥
अब आप अवध का राज करो ※ रण की आज्ञा हम को दीजे ।
मैं करूँ निपात म्लेच्छों का ※ अपने श्रवण से सुन लीजे ॥
इतना कह आज्ञा प्राप्त करी ※ संग लिया लक्ष्मण भाई है ।
पुनः कूँच का डंका बजवाया ※ आज्ञा मुख हर्ष सुनाई है ॥
पहुँचे हैं मिथिला नगरी में ※ राजा को सूचना पहुँचाई ।
सुन जनक राय प्रसन्न हुए ※ जब सुना कुमुद नृप की आई ॥

दोहा

देखा है श्रीराम ने * जनकपुरी दरम्यान।
म्लेच्छ उपद्रव कर रहे * लेकर हाथ कृपान ॥ २७७ ॥

बहर खड़ी

अब लखा राम की सेना को * हल्ला म्लेच्छ कर दीना है।
करते हैं मार-मार मिलकर * ऐसा ही उपद्रव कीना है ॥
हलचल सेना में होन लगी * देखा है राम ध्यान कर के।
प्रत्यंचा पर लिया बाण चढ़ा * खैंचा है वीर भान कर के ॥
टङ्कार करी जब रण भू में * सुनकर रिपु वृन्द गिरे भैरा।
सब छिन्न-भिन्न हुआ शत्रु दल * जब बाण पड़ा हरि का गैरा ॥
डाले हैं बींध हजारों को * लाखों को रण से भगा दिया।
रिपुदल में हा-हा कार मचा * श्रीराम ने ऐसा कृत्य किया ॥

दोहा

अगाद म्लेच्छ नृप * मन में करें विचार।
बाण व्याल से कौन के * आते हैं सरसार ॥ २७८ ॥

बहर खड़ी

जिस समय राम पर नज़र पड़ी * टूटे हथियार उठा कर में।
भागे हैं इधर उधर भय से * हो छिन्न-भिन्न गये पल भर में ॥
जैसे अष्टापद सिंहों को * वन में से तुरत भगाता है।
बस राम के सन्मुख इसी तरह * नहिं रण भू में कोई आता है ॥
रण कौशल राम का लख जनक * मन में प्रसन्न हुए भारी।
सब सराहते रघुवर को धन-धन * कहते सब ही नर नारी ॥
पुरवासी हर्ष रहे मन में * कहते हैं धन-धन राम तुम्हें।
दीना मिटा दुख जनता का * आशिर्वाद सुख धाम तुम्हें ॥

दोहा

जनक राव प्राक्रम लखा * रघुवर का जिस बार।

सीता हित निश्चय किया ※ मन में खूब विचार ॥ २७६ ॥

बहर खड़ी

लोगों के मुख से नारद ने ※ जानकी की जो तारीफ सुनी।
तो जनक सुता के देखन की ※ अभिलाषा मन में करी गुनी ॥
आये हैं मिथिला नगरी में ※ कन्याग्रह में प्रवेश किया।
नहिं इधर उधर देखा मुनि ने ※ महलों में जाना रोप किया ॥
थे पीत नैन अरु पीत केश ※ लम्बोदर दंड हाथ में था।
कोपीन लगी कर बीन लिये ※ पुन त्रान्त्रिक मंडल साथ में था
यह भेष देख सिय भयमानी ※ माता के निकट सिधारी हैं।
देखो वह कौन मनुष जिसके ※ उड़ शिखा शीश रहि भारी है

दोहा

सीता की आवाज सुन ※ दौड़े पहरेदार।
महलों में आये तुरत ※ बाँध-बाँध हथियार ॥२८०॥

बहर खड़ी

देखा है देव ऋषि को जब ※ तो लौटे पहरे दार तुरत।
सीताजी को समझा दीना ※ दीना है कर हुशियार तुरत ॥
नारद ने तुरत पयान किया ※ वैताड़ गिरि पर आया है।
अपमान किया सिय ने मेरा ※ ऐसा विचार मन लाया है ॥
मन में विचार कर प्रतिबिम्ब ※ निज कर से बनाया सीता का
आकर भामंडल के कर में ※ प्रतिबिम्ब गहाया सीता का ॥
देखा भामण्डल ने जिस दम ※ हो प्रेम विवश नृप नाथ हुआ।
सब खान पान वह भूल गया ※ इक गम ही उसके साथ हुआ ॥

दोहा

चन्द्र गती ने पुत्र का ※ जब देखा यह हाल।
लगा पूछने पुत्र से ※ मन का सब अहवाल ॥ २८१ ॥

बहर खड़ी

क्या कोई मानसिक पीड़ा है * या तन में पैदा कष्ट हुवा ।
या आज्ञा लोप हुई तेरी * जिस से दुख उत्कृष्ट हुवा ॥
उत्तर नहीं मिला पुत्र से जब * संगी सुत के बुलवाये हैं ।
भूपत ने पास बिठा कर के * सब समाचार समझाये हैं ॥
सुत के मित्रों ने कहा चित्र * नारद ने एक दिखाया था ।
उस पर आशक्त हुये हैं वह * बस मन में वही समाया था ॥
आगये देव ऋषि भी तुरत * ब्यौरा सब कह समझाया था ।
सीता का वर्णन किया सभी * राजों को भी बतलाया था ॥

दोहा

चपल गती को पास निज * लीना तुरत बुलाय ।
जनक राय का अपहरण * तुरत जाय कर लाय ॥२८२॥

बहर खड़ी

राजों की आज्ञा पा कर के * विद्या धर ने प्रस्थान किया ।
मिथिला पुर बीच तुरत पहुँचा * राजा के ऊपर ध्यान किया ॥
सोते में उठा जनक नृप को * लाकर विमान में धारा है ।
नृप चन्द्रगती के सनमुख ला * राजा को तुरत उतारा है ॥
पुनःजनकभूप से मिला प्रेम युत * सारा हाल सुनाया है ।
सीता का भामंडल के हित * सब कौल वचन भरवाया है ॥
सुन कर के जनक भूप बोले * सीता को राम विचारा है ।
किस तरह वचन को मैं पलटूँ * भूपत यह वचन हमारा है ।

दोहा

धनुष धरें हैं दो मेरे * सुनो लगा कर कान ।
रचो स्वयम्वर सिय का * यह कहना लो मान ॥२८३॥

बहर खड़ी

है धनुष वज्रावर्त एक ∴ अर्णवर्त दूजा बान सुनो।
एक हजार सुर सेवक हैं ∴ उन दोनों के धर ध्यान सुनो॥
उन दोनों की पूजा मेरे ∴ होती आई घरयाने में।
नहिं चढ़े किसी से वह अब तक ∴ नहिं आयें कभी चढ़ाने में॥
भावी बलदेव वासुदेवा ∴ दोनों को दोनों तानेंगे।
नहिं और किसी से उठ सकते ∴ इस कारण को सब मानेंगे॥
धीमान् वचन लेकर नृप को ∴ मिथिलापुर जाय उतार दिया।
धर दिये धनुष दोनों जाकर ∴ निज नृप ने डेरा डाल दिया॥

दोहा

जनक राय ने कह दिया ∴ रानी से सब ब्यान।
जयरत सीता माँगता ∴ धनुष धरे हैं आन॥२८४॥

बहर खड़ी

पर फिकर नहीं इस बात की है ∴ वह राम धनुष को तानेगा।
है असल केशरी दशरथ का ∴ बिन ताने कभी ना मानेगा॥
हे देवी! तुम कुछ शंय न करो ∴ इच्छा सारी पूरी होगी।
यह धनुष उन्हें है तृण समान ∴ आशा तुमरी पूरी होगी॥
मैंने म्लेच्छ रण में उनका ∴ बल पौरुष सभी निहारा है।
बलवान महा दशरथ सुत है ∴ कौशल्या नैन का तारा है॥
वह दैत्यारि रिपु गंजन है ∴ भंजन शत्रु का मान महा।
है बल अतुल भुज दंडों में ∴ रण का रखते अरमान महा॥

दोहा

भूमि शोध संभार कर ∴ मंडप की रचना कीन।
मंडप मंडित कर तुरत ∴ भूपत आज्ञा दीन॥२८५॥

बहर खड़ी

कन्चन करदा के धनुषों को ∴ लाकर के मंडप बीच धरे।

बनवाये उत्तम मंच बहुत * होशियार सु पहरे दार करे ॥
सूचना नृपों को भिजवाई * एकत्र हूजिये आकर के ॥
जो भूपत धनुप उठाले वह * सिया ले जाय व्याह कर के।
भूचर खेचर सब राजों में * चरचा घर-घर में छाई है।
सुन-सुन कर भूप प्रतिज्ञा को * इक भीड़ उमड़ कर आई है॥
आये हैं राम लखन दोनों * पितु की आज्ञा को पा करके।
मंडप में आन विराज गये * अपने सब वदन दिखा कर के॥

दोहा

लक्ष्मण अस कहने लगे * सुनो भ्रात धर ध्यान।
जनकपुरी दिखलाइये * विनय करो प्रमान ॥२८६॥

बहर खड़ी

भाई के विनय वचन सुन कर * रघुवर मन में मुस्काने लगे।
इनकी कामना करें पूरन * यह भाव हृदय में लाने लगे।
होकर तुरंग असवार देखने * जनकपुरी उसपार चले।
चालाक चपल चंचल तुरंग को * चमकाते असवार चले॥
देखा बाजार बना सुन्दर * लग रही दुकान दुकूलों की॥
बैठे सराफ़ ले जवाहरात * डालियाँ बनी कहीं फूलों की॥
सुन्दर दुकान ऊँचे मकान * मन्दिर महान् सुन्दर प्यारे।
कहिं अटा अटान उड़ निशान * देखे सुजान मन हर्षा रे॥

दोहा

पुर नर नारी राम को * हित से रहे निहार।
देख-देख प्रसन्न मन * करते जै-जै कार ॥ २८७ ॥

बहर खड़ी

दोनों सानंद रहे भाई * नहिं इनका होय बाल बंका।
यह विजय स्वयम्वर में पावें * भूमंडल बजे विजय डंका॥

हां हितु हमारे राजा के जो :: दर्शन पुनः मिले इन के।
टट जाय धनुष हरु आ होकर :: जो हृदय कमल खिले इनके॥
है गौर श्याम अछिन जोड़ी :: सुन्दर स्वरूप बलवान हैं यह।
भुज बल अतुल मज़बूत देह :: सुन्दरता की तो खान हैं यह॥
सम्राट् नृप दशरथ के सुत :: प्रजा के शुभ रखवारे हैं।
निज मात नैन के तारे हैं :: मन्दिर के अमल उजारे हैं॥

दोहा

लछमण को दिखला रहे :: रघुवर हाट बज़ार।
बाग सुगर दृष्टि पड़ा :: रक्खे चरन अगार॥२८८॥

बहर खड़ी

देखें हैं बाग भ्रात दोनों :: मन में खुशी बरुती छाई है।
शीतल समीर सन-सन चलती :: उत्तमता रही दिखाई है॥
तखते तखते में फूल खिले :: भौंरें करते गुंजार महा।
छवि छित पर छाय रही सुन्दर :: होता आनंद बहार महा॥
बहती है नहर वाटिका में :: शीतल शुचि सलित सुहाता है।
सुन्दर सुघाट संगमरमर के :: जिन पर कटाव अति भाता है॥
तट पर कलु हंस किलोल करें :: झिल्ली झनकार पुकार रहे।
दादुर धदकार करें तट पर :: सुन्दरता युगल निहार रहे॥

दोहा

अलिन सहित श्री जानकी :: गई बाग मझ धार।
सैर करें मन मोद हो :: नित प्रति के अनुसार॥२८९॥

बहर खड़ी

एक चपल सखी सीताजी की :: हँस हँस कर बात बनाती है।
रखती है जीव प्रसन्न सदा :: हँसती है आप हँसाती है॥
तखते तखने में घूम रही :: महि चूम चरन रही सीता के।

होकर प्रसन्न बलि-बलि जाती * मन परम ध्यूम रहि सीता के ॥
इक सखी मुदित होती आई * सीता से ऐसे कहन लगी।
ज्यों परम प्रेम की अमल नदी * बल खाती जाती वहन लगी ॥
प्यारी देखो प्रकृति ने आज * कुछ अद्भुत कमल खिलाये हैं।
सब महक उठा है बाग सती * या दशरथ के सुत आये हैं ॥

दोहा

सुनकर सुन्दर वचन को * जनक सुता हर्षाय ।
प्रेम पुरातन पूर्व का * हृदय गया समाय ॥२६०॥

वहर खड़ी

मन बढ़ा प्रेम सीताजी के * हुलसाया दर्शन हेत जिया।
सखियों के संग चली आगे * मन को मन सिंधु बना लिया ॥
देखा है आड़ में चम्प की * इक दूजा भान निकसता है।
या तेजवान भानु कुल मणि का * उज्ज्वल भानु विकसता है ॥
देखो देखो दर्शन आओ * कहिं वाहर नहीं निकल जायें।
दोनों दशरथ के सुत प्यारे * प्यारी मन को नहीं छल जायें॥
हो कर गुलाब की आड़ खड़ी * रघुवर को सिया निरखती है।
पुतली में बिम्ब खींच हरी का * पलकों में उसको रखती है ॥

दोहा

देखो भ्रात गुलाब में * खिले पुष्प छविदार।
गूँजत भ्रमर सुहावने * देखो दृष्टि पसार ॥२६१॥

वहर खड़ी

यह पुष्प गुलाबों के नहीं है * यहाँ पर कुछ और सु छवि सा है
सखियाँ हैं सुन्दर संग इन के * सुगर अति अनूप जनक सा है॥
जिसके हित रचा स्वयंवर यह * वोही देवी सुखकारी है।
घर-घर में कान-कान जिसकी * चर्चा हर जगहे भारी है॥

यह सुन कर राम दृष्टि डारी :: सीता की ओर निहारे हैं।
हो गये प्रेम मग्न रघुवर :: जब मुख से वचन उचारे हैं॥
भाई इसका कारण क्या है? :: जो मेरा हृदय खिचा जाता।
इस शुद्ध सलिल प्रेमाजल से :: हृदय का बाग सिंचा जाता॥

दोहा

ऐसे हुए न अब तलक :: मेरे हृदये भाव।
जैसा आज प्रगट हुवा :: मन में यह अनुराव॥२६२॥

बहर खड़ी

यह हुई किस तरह बात प्रगट :: जो प्रेम प्रगट होता मन में।
अब तलक सुना नहिं देखा है :: जो भाव बदलता क्षण क्षण में
जब तक सत्य प्रेम न हो तिय का :: तब तक हृदय में प्रेम नहीं।
जो न्याय नीति से अपनी हो :: उसके समान है क्षेम नहीं॥
यह सुन कर लखन लगे कहने :: अब समय स्वयंवर आता है।
जल्दी पधारिये डेरे पर :: ऐसा मन मेरे भाता है॥
यह सुन कर गमन किया रघुवर :: डेरे पर दोनों आये हैं।
मंजन स्नान किये हर्षा :: वस्तर तन कवच सजाये हैं॥

दोहा

जनक सुता गई पहुँच के :: महलों के दरम्यान।
निर्मल गंगा नीर से :: करवाये हैं स्नान॥२६३॥

बहर खड़ी

मिल कर के सुघर सहेली सब :: सिय का शृंगार बनाती है।
कर-कर शृंगार संभार सार :: हृदय में खुशी मनाती है॥
शुभ अमिट आभरण सीता के :: तन पर अति सुभग सुहाते हैं।
शृंगार करा कर मात पिता :: अपने मन में हुलसाते हैं॥
करके शृंगार सखी सारी :: हँसती है और हँसाती है।

सीता को देख-देख सखियाँ * अंग फूली नहीं समाती है॥
कहती है रची शर्चा, रंभा * सब देख-देख शरमाती है।
क्या रूप दिखावें जा कर के * सन्मुख सिय के नहीं आती हैं॥

दोहा

छवि सरिता सुख सार में * सरसा उठा सरोज ।
सुखमा सुन्दर सुखद शुभ * अमल अद्वितीय ओज॥२६४॥

बहर खड़ी

अति अमोल आरसी गोल की * आभा अजय आराम की है।
ग उदय हुआ अवनी पे शशि * शोभा सुन्दर सुख धाम की है॥
कोई कहे कला निधि अम्बर से * अवनी को अमल करन आया।
कोई कहे पुज है सुखमा का * शुभ सारी धरन करन छाया॥
पर चन्द्र कलंको तेरा मुख * निष्कलंक सदा दरसाता है॥
जिस तरह सुधा के सरवर में * शुचि मुख सरोज सरसाता है॥
शशि मे सब कला कहें सोलह * घटती बढ़ती जो रहती हैं।
बत्तीस कला तव चन्द्र वदन की * रदनों शुभ शोभा गहती हैं॥

दोहा

बैठी है श्री जानकी * कर सोलह शृँगार ।
शरमाई मन देख कर * पंच बाण की नार ॥२६५॥

बहर खड़ी

करि दन्त सु धावन उबट अंग * मंजन कर तन अंगु छाई है।
करि तिलक मैन पटियाँ पारी * वदन की बिंदु बनाई है ॥
अंजन दे नैन देख दरपन * चिन्ह चिबुक मधुर सुखदाई है
अरुणाई अधर की अरुण दिपै * है सुगर सुगर अरुणाई की ॥
महँदी कर पेड़ी महावर की * सोलह शृँगार बनाई है।
यह रीति नीति सीता ने कर * कर-कर दीनी सुगराई है ॥

वारह आभरण वनाय मुदित * हर्ष कर सखियों के संग में।
करती रंगरेली अलबेली * प्यारी प्रियतम के शुभ रंग में॥

दोहा

दिव्य आभूषण धार के * कर सोलह शृँगार।
सखियों के संग जानको * आई है दरबार॥ २१६॥

बहर खड़ी

जब सिया स्वयंवर में आई * राजों की उस पर नज़र पड़ी।
जैसे इन्द्राणी आकर के * सहर्ष सभा में आन खड़ी॥
अर्चन कर के श्री जनक सुता * हृदय में राम मनाया है।
मन सा वाचा और कर्मण से * चित्त चरणों वीच लगाया है॥
फिर आय जनक के सेवक ने * नृप का कहा वचन उचारा है।
जो धनुष तान देगा आकर * वह होगा हितु हमारा है।
जेते राजे खेचर भूचर * सब एक यहाँ पर आये हैं।
अपना-अपना पौरुष दिखलाकर * मन में सब हुलसाये हैं॥

दोहा

सुन कर नृपत के वचन * भूपत मन हर्षाय।
एक-एक करके चले * रहे पिनाक उठाय॥२१७॥

बहर खड़ी

जो आता पास धनुष के है * वह अपनी आब गँवाता है॥
जो धनु से हाथ लगाता है * तो धरनी पर गिर जाता है॥
मानी जो मूँछ चढ़ाते थे * बल पौरुष सब अज़माते थे।
वह तेज़ धनुष का देख-देख * अपने दिल में घबराते थे॥
बहुतेरे राजा सोच रहे * क्यों नाहक मान घटायें हम।
यह धनुष नहीं उठ सकता है * किस लिए पास भी जायें हम॥
ऐसा विचार कर बैठ रहे * नहिं आगे चरन बढ़ाया है।

धरती कुरेदते हैं बैठे * मुख ऊँचा नहीं उठाया है ॥

दोहा

जनक राय ने फिर कहा * करके कोप कराल ।
कैसे बैठे रह गये * बड़े-बड़े भूपाल ॥२६८॥

बहर खड़ी

आये थे धनुष उठाने को * वह उठे नहीं स्थानों से ।
किस लिए परिश्रम किया कहो * आये जो निज मकानों से ॥
क्या क्षत्री हीन भई पृथ्वी * क्षत्री नहिं कोई दिखाता है ।
बैठे हैं मूंछें चढ़ा-चढ़ा * नाह कोई धनुष चढ़ाता है ॥
क्या कन्या क्वारी रही मेरी * क्षत्री नहिं नज़र पड़ा कोई ।
जेते बैठे बल हीन सभी * नहिं आकर समर अड़ा कोई ॥
सिंहनि व्याहत अब लोप हुई * जो सिंह नहीं आया कोई ।
इस नरेन्द्र-मंडल में देखा * बलवान नहीं पाया कोई ॥

दोहा

सुन कर बोले लखनजी * छाया क्रोध कराल ।
उष्ण श्वाँस चलने लगी * जैसे क्रोधित व्याल ॥२६९॥

बहर खड़ी

बोले हैं हाथ जोड़ लक्ष्मण * जिस तरह सिंह सोता जागा ।
क्या कहा जनक भूपत ने यह * वाणी का बाण हृदय लागा ॥
जो आज्ञा भ्रात आप की हो * वह कौतुक करके दिखलाऊं ।
पर्वत मुक्के से चूर करूँ * धरती को चक्कर में लाऊँ ॥
सिंहासन सहित उठा नृप को * चकरी सी तुरन्त घुमाऊँ मैं ।
मंडप उखाड़ कर दूँ उछाल * ऐसा पौरुष दिखलाऊँ मैं ॥
क्या है पिनाक यह तुच्छ वस्तु * कृपा कर आज्ञा दे दीजै ।
अब रोष रुके नहिं रोके से * यह अर्ज़ दास की सुन लीजै ॥

दोहा

लखन सुभट रहो शान्ती * क्रोध करो मत भ्रात।
चाप तनेगा वीर यह * सुनो हमारे हात ॥ ३०० ॥

बहर खड़ी

त्यागा है मंच राम जिस दम * सबरे राजों की नज़र पड़ी।
उपहास सहित लखे चन्द्रगती * प्रजा देखें हैं खड़ी-खड़ी ॥
कर गमन चले गज के समान * मन मुदित धनुष के तट आये।
गज कमलनाल जैसे तोड़े * इस रीति धनुप पर कर लाये॥
जिसतरह व्यालको पकड़ गरूड़* छोड़े पकड़े हैं बार-बार।
रघुबर यों खेल दिखाते हैं * कर वज्रावर्त को धार-धार ॥
जिस तरह इन्द्र अपने कर में * खुश होकर वज्र उठाता है।
होकर निशङ्क दशरथ नंदन * ऐसे हि धनुष कर लाता है।

दोहा

धनुष धारियों में परम * उत्तम राम सुजान।
धनुष उठा कर हाथ में * लीना उसको तान ॥ ३०१ ॥

बहर खड़ी

लोहे की पिष्ठका ऊपर कर * रघुवर ने तुरत झुका लीना।
चिल्ल को अपने हाथों से * रघुवर ने तुरत चढ़ा दीना ॥
फिर कान तलक खींचा उसको * अरु वार-वार अज़माया है।
खाली दीना है छोड़ तुरत * घनघोर शब्द सुन पाया है॥
इस घोर शब्द के होने से * आकाश में बहु गुँजार हुई।
सब सभा बीच रह गये मौन * ऐसी आवाज संर सार हुई ॥
हो गये मुदित लख जनक नृपत* मन छाई अति खुश हाली है।
सीता ने राम की गर्दन में * हर्षी वर-माला डाली है ॥

दोहा

लक्ष्मण ने पा आज्ञा * दूजा धनुष उठाय।
तनिक देर कीनी नहीं * लीना तुरत चढ़ाय ॥३०२॥

बहर खड़ी

विस्मय से सब नृप देख रहे * लक्ष्मण ने धनुष चढ़ाया है।
डोरी को कान तलक खींचा * दी छोड़ स्वमन हर्षाया है॥
सुन दशों दिशाएँ गूँज उठीं * हुई घोर धनुष की भारी है।
उस नाद को सुन कर के इक दम * आये थिर नर अरु नारी है॥
सब चकित हो गये विद्याधर * भामंडल रिप में आया है।
सीता को नहिं व्याह सकते * मुख ऐसा वचन सुनाया है॥
लेकर हथियार खड़ा हुआ * धनु वार-वार चमकाता है।
लोचन रतनारे कर लीने * मुख कड़वे वचन सुनाता है॥

दोहा

बोले राम सुजान जब * सुनो लगा कर कान।
किस कारण कोपित हुए * उस का कहो बयान ॥ ३०३॥

बहर खड़ी

इस धनुष उठाने से तुम को * किस कारण क्रोध समाया है।
इस ही के उठाने के कारण * हर इक भूप यहाँ आया है॥
यह रखे स्वयंवर में लाकर * राजों का बल अज़माने को।
या अपना मान बढ़ाने को * या सब पर रौब जमाने को॥
क्यों आप क्रोध करते हम पर * बेज़ा हमने नहिं काम किया।
राजों की बात बिगड़ती थी * इसलिए धनुष को तान दिया॥
जो तुम्हें उठाना नहीं भाता * तो पहिले नाहीं कर देते।
पाछे प्रलाप किये क्या है * राजों को पहले डर देते॥

दोहा

कुपित हुए मन में अधिक * खेचर नृप बलवान।

जनक राय से क्रोध कर * कहन लगे यों ब्यान ॥३०४॥

बहर खड़ी

जो चाहते शांति बनी यहाँ रहे * तो इक काम यह कर दीजै।
नरेन्द्र सभा से दोनों को * पृथक् कर मन को भर दीजै॥
जो यहाँ रहेंगे यह दोनों * तो डट कर हो संग्राम महा।
मषथल का रण थल हो जाये * कैसे रहेगा सुख धाम यहाँ॥
मैं चूर करूँ इन दोनों को * बल इनका सभी झाड़ दूँगा।
जिस तरह धनुष को ताना है * वह नूर सभी बिगाड़ दूँगा॥
इक धनुष उठा कर के इन को * इतना भारी मग़रूर हुआ।
सब को यह तुच्छ समझते हैं * दिल में गुमान भरपूर हुआ॥

दोहा

चमक दिखाकर खड्ग की * किस को रहे डराय।
किस कारण को समझ कर * ऐसे रहे झुँझलाय॥ ३०५॥

बहर खड़ी

हम भी क्षत्री के बालक हैं * इस क्रोध से नहिं डर जायेंगे।
गदिड़ भबकी दिखलाते हो * इससे कुछ नहिं घबरायेंगे॥
जो हमें हटाना चाहते हो * तो नत्रे बन्द अपने कर लो।
जो होय झुमझुमी लड़ने की * कर में हथियार तुरत धर लो॥
हम रघुवंशी हैं सुनो भूप * लड़ने से नहिं घबराते हैं।
आकर ललकारे जो हम को * उससे लड़ने को जाते हैं॥
रण मे संग्राम करें डटकर * पीछे नहिं चरन हटाते हैं।
अभिमानी का कर मान चूर * उसको यम लोक पठाते हैं॥

दोहा

विस्मिम से सब देखते * जितने वहाँ नरेन्द्र।
लखन गरजते सभा में * जैसे विपिन मृगेन्द्र॥३०६॥

अपने कुलकी कान न त्यागो * सासू के नित चरने लागो ॥
पति सेवा से मन न चुराना * आज्ञा समय समय चित्त लान.।
लौटे नृप समझा कर राया * आगे चरन वरात वढ़ाया ॥
पहुँचे धाम अयोध्या जाई * लखत मोद प्रजा मन लाई ।
उत्सव दशरथ भूप रचाया * मांगलिक शुभ काम कराया ॥
नीर सुगन्धिक कलश भराया * खोजा के कर से भिजवाया ।
दासी नीर उठा कर धाई * निज रानी के तट जब आई ॥

दोहा

वृद्ध अवस्था से नहीं * शीघ्र आ सका तीर ।
और और रानी निकट * आया सुन्दर नीर ॥२११॥

चौपाई

पटरानी के तट नहीं आया * कौशल्या मन क्रोध समाया ।
मैं हूँ वड़ी सवों से रानी * मेरे हेत न भेजा पानी ॥
यह अपमान सहा नहीं जाये * मान विना क्या मुख दिखलाये
मरना भला सु इस जीने से * वरनी प्रकट होय सीने से ॥
यह विचार गल फन्दा डाला * मरने का यह ढंग निकाला ।
दशरथ तुरत महल में आये * देख हाल अति मन घवराये ॥
हाथ पकड़ रानी समझाई * ऊँच नीच वातें वतलाई ।
यह क्या कृत मन माँहि धारा * किससे हुवा अपमान तुम्हारा॥

दोहा

अश्रु वहावे कामनी * कहे वाँध मन धीर ।
मेरे हित भेजा नहीं * कहि कारण से नीर ॥२१२॥

चौपाई

खोजा नीर लिये चल आया * सन्मुख रानी के घट लाया ।
रानी के मस्तक जल डारा * सुख माना मन अधिक अपारा

पूछा खोजा से नृप राया * पेता कहाँ विलम्ब लगाया।
वृद्ध अवस्था के वश स्वामी * शीघ्र न आ सका हित कामी ॥
वसुधा पाँव शीघ्र नहिं पड़ता * सर्व शरीर हुवो है जड़ता।
स्वाँस खाँस अति दुख दीना * जरा आय जर-जर वपु कीना ॥
दाँत बिना सब फीके स्वादा * चरन चले नहिं होय विषादा।
जोर घटं निबलाई आवे * कर कंपे अति जी घबरावे ॥

दोहा

देखा है वृद्धा समय * आया मन वैराग।
हटा सुमन सब काम से * लगी जोग से लाग ॥२१३॥

चौपाई

सत्यमूर्ति मुनिवर के पासा * जनक राय करके विश्वासा।
पूछे पूर्व भवान्तर वाता * सुख दुख का कब हाल विधाता
भावन शाहा सुगर शुभ हस्ति * पत्नी दीपका सुता उपस्ति।
साधु की निंदा कर भारी * भव-भव में भ्रमे जा अनारी ॥
वहाँ से चन्द्रपुरी के राजा * भये किया सब उत्तम काजा।
धन गिरि सुन्दर नार सुहाई * वरुण पुत्र सुन्दर वपु पाई ॥
साधु सेव कर भये दयालु * श्रद्धालु सब पर कृपालु।
वहाँ से धात्री खण्ड मुझारा * उत्तर कुरुवर क्षेत्र अपारा ॥

दोहा

युगलपने हुये प्रगट * शुभ कर्म फल जान।
तीन पल्योपम आयुषा * भोगे सुख निदान ॥२१४॥

चौपाई

वहाँ से सुर पुर को तुम धाये * सुख भोग के पुनः भू आये।
नंदी घोष वड़ा भूपाला * जिस का जग छाया उजियाला
पृथ्वी रानी अति सुखमारा * तिस के पुत्र हुआ तू प्यारा।

नन्दी वर्द्धन नाम सुपाया * सुख भोगे मन योग समाया॥
यशोधर आये अणगारा * श्रावक व्रत किया अंगीकारा।
पंचम देवलोक पग धारा * हुवा वहाँ बहु जै जं कारा॥
पूर्व विदेह वेताड़ सुवेशा * उत्तर श्रेणी शशिपुर देशा।
रत्नमाल विद्याधर शारी * विद्युलता तहि की शुभ नारी॥

दोहा

प्रगट हुवे उसके तनय * सूर्य विजयता नाम।
महा प्राक्रमी हुवा * देखा शुभ सुख ठाम ॥२१५॥

चौपाई

रत्नमाली ने करी चढ़ाई * वज्र नयन को जीता जाई।
सिंहपुरी को वारन लागा * वृद्ध बाल पशु कोई न त्यागा॥
दीनी लगा नगर में ज्वाला * ऐसा कर्म किया विकराला।
उपमन्यु नामा द्विज एका * पूर्व भव का प्रोहित टेका॥
देवलोक में पैदा हुआ * आकर तुरत सहाई हुआ।
उग्र पाप मत कर तू राजा * सोचा तैने कौन अकाजा॥
पूर्व भव में तू भूपाला * भूरी नंदन था नृपाला।
मन तेरे आये शुभ भागा * माँस का भोजन तैने त्यागा॥

दोहा

कहन मान पुरोहित की * दीना तोड़ी त्याग।
उसकी प्रतिज्ञा रखी * अपना किया अभाग ॥२१६॥

चौपाई

उपमन्यु दीना सहारा * समय पाय कर उसको मारा।
हाथी हुआ विपिन में जाके * भूरिनिन्द ने लिया मँगा के॥
युद्ध वह हाथी गया मारा * गन्धारी का सुत हुआ प्यारा।
जाति स्मरण हुआ ज्ञाना * दीक्षा ले भये साधु महाना॥

सुर पुर में सुर हुआ जाके * तुम को अब समझाया आके।
भूरिनन्द अजगर हुआ मर के * मरा वहाँ अग्नि में जर के ॥
नर्क गया अति ही दुख पाया * मैंने वहाँ जाकर समझाया ॥
वहां से निकल हुवे प्रतिमाली * अब भी शिक्षा मान भुवाली ॥

दोहा

इस प्रकार सुन पूर्व भव * रण से मुख को मोड़ ।
सूर्य विजय के पुत्र पे * दिया राज सब छोड़ ॥ ३१७॥

चौपाई

पुत्र पिता युग दीक्षा लीनी * तप संयम शुभ करणी कीनी ।
महाशुक्र सुर लोक मुभारा * जाकर लिया देव अवतारा ॥
वहाँ से चव कर के तू आया * दशरथ नृप यां हुवा सुहाया ॥
रत्नमाली जनक हुआ आ के * उपमन्यु हुवा कनक सुधा के ॥
नन्दीघोष सु चव कर आया * सत्यमूर्ति मैं मुनि मन भाया ।
सुनकर भूप विचारा मन में * पुलकावलि छाई अति तन में ॥
पूर्व कथा सुनकर मन माँही * गया मनो वैराग्य समाई ।
मुनि को कर वन्दन उठ धाये * दशरथ नृपत महल में आये ॥

दोहा

दशरथ नृप आ महल में * रानी ली बुलवाय ।
दीक्षा लेने का सकल * हाल सुनाया आय ॥ ३१८॥

चौपाई

मंत्री पुत्र निकट बुलवाये * मिष्ट शब्द शुभ वचन सुनाये ।
हर्षा कर अब दीजे आज्ञा * पूरी करूँ जाय प्रतिज्ञा ॥
बोले भरत मधुर अस वानी * मेरे मन भी दीक्षा आनी ।
संग आपके लूँ वैरागा * करूँ सकल चीजों का त्यागा ॥

जग में प्रबल दुख दो भारे * तात विरह जग ताप पजारे।
मुझ से यह दुख सहे न जाई * यह संकट है अति दुखदाई।
सुन कर वचन कैकई माता * क्या दीनी यह बुद्धि विधाता।
पुत्र पुत्री दोनों वन जायें * किस विध घर में होय निभायें॥

दोहा

समय पाय के मंथरा * कैकई ओर निहार।
हाथ जोड़ कहने लगी * सुन मेरी सरदार ॥३१६॥

चौपाई

नृप कर प्रेम तुम्हें वस कीनी * नीति रीती सब दिखला दीनी।
तुम फूली नृप प्रेम अपारा * भूपत ने मन और विचारा॥
दीक्षा ले नृप तजै समाजा * होंगे राम अवध के राजा।
राज मात कोशिल्या होई * मान करे उनका सब कोई॥
भरत जाय भूपत के संगा * कौशल्या मन भरे उछंगा।
संकट होय तुम्हें अति भारा * वन में जाय नैन का तारा॥
तुम भूपति के प्रेम दिवानी * सोचो समझो मन में रानी।
राम अवध के होंगे राजा * कौशल्या के हों मन काजा॥

दोहा

आया क्रोध कैकेई को * भृकुटी भई कराल।
पकड़ मंथरा को कही * आखें करके लाल॥३२०॥

चौपाई

जो मुख से यह वचन उचारा * तो सिर धड़ से होय नियारा।
राम भरत मेरे दो नैना * उनके हेत कहे अस बैना॥
राम राज हम को आनंदा * राम मेरी भक्ति का वन्दा।
तेरे मन यह कैसे आई * जो तू ने यह वान सुनाई॥
महाराजा से कहूँ जता के * जिव्हा लूँ तेरी कढ़वा के।

हाथ जोड़ कर बोली दासी * वचन सुनत मन छुई उदासी ॥
हित की बात कही मैं रानी * हित अनहित तुमनहीं पहिचानी
कोई होय अवध का राजा * इससे नहिं हमको कुछ काजा ॥

दोहा

मन विचार कुछ कैकई * बोली मीठे बैन ।
शुभ चिन्तक दासी मेरी * क्यों भरलाई नैन ॥३२१॥

चौपाई

हँस कर कहे मैंने यह वैना * तू क्यों भर लाई युग नैना ।
मेरे हित की बात सुनाओ * भूल सभी मेरी समझाओ ॥
ऐसा कार विचारो स्वामी * पूरण आशा होय हमारी ।
पुत्र पति का दुःख नहीं व्यापे * राज भरत को भूपत थापे ॥
सुन मंथरा कहे अस वानी * मेरे मन यह बात समानी ।
अपना वर भूपत से चाहो * अपने पूरण प्रण निभाहो ॥
पति जायें ना पुत्र सिधारें * तब आशा हो जगत मंझारे ।
इससे नहीं काम कोई नीका * होय भरत सिर राज का टीका ॥

दोहा

बोली रानी कैकई * दशरथ को कर सैन ।
वर मेरा अब दीजिये * ऐसे बोली बैन ॥३२२॥

चौपाई

पालो आप बचन भूपाला * वर मेरा दीजै तत्काला ।
सत पुरुषों का है यह लेखा * वचन होय पत्थर की रेखा ॥
जो सज्जन नर वचन उचारें * उस को पूरा अवश्य हि पारें ।
बोले नृप दशरथ सुन बैना * मैं ने बचन कहा था देना ॥
माँगो जो चाहो मन मानी * मेरी नहीं मनाई रानी ।
दीक्षा में मत रोक लगाना * और चाहे जो माँग सुजाना ॥

जो कुछ है मेरे आधीना * मांगो तुम हर्षाय प्रवीना ।
देने में नहीं कुछ इन्कारा * पूरण मानो वचन हमारा ॥

दोहा

स्वामी लेंगे दीक्षा * यह मन किया विचार ।
राज भरत को दीजिये * अय मेरे भरतार ॥ ३२३॥

चौपाई

बोले हैं दशरथ नृप वानी * राज भरत का है सब रानी ।
राज पाट से मुझे न कामा * भरत हेत है सब ही धामा ॥
राम लखन को लिया बुलाई * भूपत रहे उन्हें समझाई ।
वचन मैंने कैकेई को दीना * पूरण प्रण इस समय कीना ॥
परामर्श सुन मुझ को दीजे * आज्ञा मेरी पालन कीजे ।
बोले हँस कर राम सुजाना * जो वर माता क मन माना ॥
श्रेष्ट काम जननी ने कीना * भ्रात भरत हित राज को लीना।
इससे श्रेष्ठ और नहिं कामा * वीर भरत के कर हो धामा ॥

दोहा

भरत भ्रात हो अवध के * भूप हर्ष की बात ।
राज सिंहासन दीजिये * हो जग में विख्यात ॥३२४॥

चौपाई

सुन कर राम वचन भूपाला * विस्मय मन प्रगटा तत्काला।
प्रीति विशेष भरत की जानी * हो प्रसन्न बोले नृप वानी ॥
मंत्री लिये पास बुलवा के * तदनुसार दिया हुक्म सुना के
सुन कर भरत कहे कर जोरी * विनय एक सुनिये पित मोरी ॥
साथ आपके संयम लूँगा * राज अवध का नहीं करूँगा ।
करी प्रार्थना प्रथम मैं ने * अब कुछ शब्द और नहीं कहने
कहूँ अन्यथा जो मैं वैना * सब के सनमुख नीचे नैना ।

योग नहीं मेरे यह ताता * राज पाट नहिं चहिये ताता ॥

दोहा

दशरथ पुनः कहने लगे * सुनो वत्स धर ध्यान ।
आज्ञा मत टालो मेरी * कहन हमारी मान ॥३२५॥

चौपाई

मात तुम्हारी को वरदाना * एक दिवस किया प्रदाना ।
वह चिरकाल रहा मम पासा * आज लिया वह कर विश्वासा ॥
उस वर ने तुमको किया राजा * सारो अवध पुरी का काजा ।
मात-पिता का कहन न टारो * राज अवध का पुत्र संभारो ॥
राम रहे समझा मृदु वानी * भ्रात भरत तुम हो अति ज्ञानी ।
तुम मन राज कांक्षा नाही * फिर भी कुछ सोचो मन माँही ॥
पितु आज्ञा को धरिये शीशा * लीजे राज बनो अवधीशा ।
कीजे सत्य पिता के वेना * मेरा यह मानो अब कहेना ॥

दोहा

सुनकर शब्द सु राम के * जल भर आया नैन ।
हाथ जोड़ कर के विनय * बोले ऐसे वैन ॥ ३२६ ॥

चौपाई

गद् गद् स्वर जल पूरति नैना * चरन पकड़ बोले अस वैना ।
आप सरीखे भ्रात हमारे * त्यागी उच्चातम है भारे ॥
करना योग आप को राजा * यह है आप को उत्तम काजा ।
योग नहीं पर मुझ को लैना * शेष नहिं कुछ तुम से कहना ॥
अरु चाहे सो कीजे काजा * पर मैं नहिं लूँगा यह राजा ।
लेश राज की इच्छा नाहीं * देख भ्रात मेरे मन माँही ॥
तुम होते मैं राजा वाजूँ * आप सामने साज सु साजूँ ।
तुम सन्मुख नहीं राज हमारा * मैं सेवक रहूँ नाथ तुम्हारा ॥

दोहा

यह सुन कर कहे रामजी * सुनियो पितु मम वात ।
मेरे रहते भरत जी * राज लें नहीं तात ॥३२७॥

चौपाई

भरत राज नहिं करे स्वीकारा * विनयवान अति भ्रात हमारा ।
इस कारण मैं वन को जाऊँ * वचन पित का हर्ष निभाऊँ ॥
आज्ञा राम पिता से माँगी * हृदय भावना वन की जागी ।
तात चरण गहि के अस बोले * आनन अमल राम ने खोले ॥
कुछ दिन जाय रहूँ वन माँही * भरत भ्रात की करूँ मन चाही ।
इतना कह पितु आज्ञा पाये * तुरत राम ने चरन बढ़ाये ॥
नमस्कार कर के भक्ति से * विनय करी विन वित शक्ति से
कर में धनुष राम सँभाला * तरकस उठा गले में डाला ॥

दोहा

गमन किया पितु पास से * पहुँचे महल मुझार ।
कौशल्या के सामने * खड़े हुये उस वार ॥३२८॥

चौपाई

भरत रुदन करते अति भारी * व्याकुलता मन में हुई जारी ॥
प्रेम विवश मुख वचन न आवे * वार-वार देखे रह जावे ॥
पहुँचे राम मात के तीरा * बोले जाकर वचन गंभीरा
कौशल्या रघुवर को हेरी * बोले राम विनय सुन मेरी ॥
मैं अरु भरत युगल इक सारा * दोनों एक सम है तुम्हें प्यारा
पिता प्रतिज्ञा पालन हेता * राज भरत को दिया सचेता ॥
राज भरत नहिं ले महतारी * मम सन्मुख नहीं हो अधिकारी
इस करण में वन को जाऊँ * चरन आपके शीश नमाऊँ ॥

दोहा

अनुपस्थिति में मेरे * भरत पुत्र निज जान ।
करना प्रेम सु तुम से * राम दूसरा मान ॥३२६॥

चौपाई

मेरा वियोग वियोग मत मानो * अपना पुत्र भरत को जानो ।
कातर होना आप न माता * भरत तुम्हारे तट मम भ्राता ॥
सुनी बात जब कोशिल रानी * नैनों से सूखा चषु पानी ।
मूर्छित हो गिर गई धरन में * राम तुरत ली साध करन में ॥
चन्दन आदिक जल छिड़काया * कुछ-कुछ होश मात को आया ।
कौन होश में मुझ को लाया * किसने आन चेत करवाया ॥
चेत अवस्था से अति नीकी * मूर्छा सुगर चेतना फीकी ।
राम विरह किस रीत निहारूँ * कैसे धीर हृदय में धारूँ ॥

दोहा

दीक्षा धारण पति करे * पुत्र करें बनवास ।
कौशल्या जी कर करे * फेर कौन की आस ॥३३०॥

चौपाई

राम मात से कहें कर जोरी * कोमल हृदय मात अति भोरी ।
वीर केशरी की तुम नारी * वीर पुत्र की हो महतारी ॥
कैसे कायरी मन पे लाई * सुन कर गमन मात घबराई ।
सिंहनी माँ का सुत अलबेला * वन में घूमें सदा अकेला ॥
सिंहनी मन में नहीं घबरावे * स्वस्थ्य रहे आनंद मनावे ।
पिता का शिश पर ऋण है भारा * वह सुत क्या जिन नहीं उतारा ॥
ऋण से उऋण तात को करके * वन जाऊँ हृदय मुद भर के ।
राम तुरत माता समझाई * निज जननी से आज्ञा पाई ॥

दोहा

माता को समझाय के * चले राम तत्काल।
अन्य माता तट जाय के * चरन गहे खुश हाल॥३२१॥

चोपाई

माताओं को शिर झुका के * राम चले हैं चरण वढ़ा के।
वाहर मंदिर से हर आये * आगे पुनः चरन वढ़ाये॥
जनक सुता दशरथ तट जाके * दूर हि से निज शीश झुका के।
कौशल्या के मंदिर आई * आय सासुजी के पग लाई॥
गोदी में सीता वैठारी * हाथ फेर करके पुचकारी।

गायन

[तर्ज-विन। रघुनाथ को देखे]

सिया को सासूजी लेकर * विठाई गोदी के अन्दर।
कठिन वनवास का रस्ता * कहाँ जाती वधु सुन्दर॥टेर॥
पुरुप का पाँव वंधन हो * जा परदेश संग नारी।
सासु श्वसुर की करे खिदमत * पति सेवा से यह वहतर॥१॥
वदन नाजुक है तेरा * वैठ पींजस में फिरती है।
वहाँ पैदल का चलना है * शूल का फेर है खतर॥२॥
कठिन सहना क्षुधा तृपा * रहना फिर वृक्ष की छाया।
परिसहा ठंड गरमी का * मानले कहन रह जा घर॥३॥
हरगिज यहाँ न रहूंगी * रहूँ जहाँ नाथ वो रहवे।
पतिव्रत धर्म यही सहे * दुख सुख संग में रह कर॥४॥
'चौथमल' कहे सच्ची नारी * पतिव्रता पियु प्यारी।
लेवे शोभा जहाँ अन्दर * पति सेवा में यूँ रह कर॥५॥

चौपाई

नैन नीर भर के अस वोली * वेटी तू अति ही है भोली॥

राम पिता की आज्ञा पाके * वन को नाहर गये सु धाके ।
कठिन नहिं यह नर के काजे * उनके मन रस वीर विराजे ॥

दोहा

पर तुम कैसे सहोगी * कोमल तुमरा गात ।
लालन पालन हुआ है * तुमरा हाथों हाथ ॥ ३३२ ॥

चौपाई

पद नहिं चली कभी सुकमारी * कैसे वन में जाओ प्यारी ।
वन की भूमि कठिन हो भारी * कंटक लगे रुधिर हो जारी ॥
चलत-चलत पग में हो छाले * फिर किस विध मन रहे खुशाले,
वन में सिंह स्यार और भालू * जो होते हैं सदा अदयालू ॥
वन में होय क्लेश अति भारी * बन जाओ न जनक दुलारी ।
चली वाहनों पर तुम बाला * कभी भूमि पर चरन न डाला ॥
संकट विकट बहुत हों मन में * छिण-छिण दुख व्यापेगा तन में ।
इससे कहन मानले प्यारी * बन जाओ मत तुम सुख मारी ॥

दोहा

बोली सीता सुन्दरी * सुनो वचन मम मात ।
वन में दुख किंचित नहीं * कहूँ जोड़ कर हात ॥ ३३३ ॥

चौपाई

यह सुन कर बोली अस सीता * सासु सामने होय अभीता ।
विकसत कमल भान लख जैसे * प्रफुल्लित कमलाननी तैसे ॥
घन के संग रहे जिम दामिन * स्वामी संग रहे जिम कामिन ।
संग पति के मैं बन जाऊँ * दर्शन कर नित प्रति सुख पाऊँ ॥
तुमरी भक्ति विपत को टारे * श्रद्धा संकट सकल विदारै ।
अस कह सासू को शीश नवाया * घर के बाहर चरन बढ़ाया ॥
राम ध्यान हृदय में करके * घर बाहर पग धरा निकर के ।

देख दृश्य सब मन अकुलाये * दासी दास नैन भर लाये ॥

दोहा

सीताजी का गमन लख * घबराये नरनार ।
पड़ा कुलाहल महल में * होता हा हा कार ॥२३४॥

चौपाई

शुक सारिका विकल अति होती * बन्द पींजरे में पड़ी रोती ।
सुरभी रही महा दुख पाके * तड़फ-तड़फ रह जाय रमा के ॥
दृश्य दुष्ट त्रियों के आया * देख-देख हृदय भर आया ।
नीर लगा नैनों से वहने * गद्-गद् कंठ लगी अस कहने ॥
पति भक्ति ऐसी नहीं पाई * जो सीता के हृदय समाई ।
देव तुल्य पति को सिय माना * संग विपन में जाना ठाना ॥
त्रिय जात को उच्च उठाया * हो आदर्श यह पाठ पढ़ाया ।
भय नहीं हृदय कष्ट का कीना * पति के संग चरन वन दीना ॥

दोहा

उत्तम शील प्रभाव से * युग कुल उत्तम कीन ।
उत्तमता के कृत की * आज हद्द कर दीन ॥२३५॥

चौपाई

राम गमन सुन लक्ष्मण धाये * शीघ्र गमन कर महलों आये ।
भभक उठा क्रोधानल मन में * रोष नहीं रुकता नैनन में ॥
राज भरत से मैं ले लूँगा * गादी राम भ्रात को दूँगा ।
राम नीति के हैं अति आगर * नीतिवान पुरुषों में नागर ॥
तृण वत् समझो कर से डारा * करें न राम राज स्वीकारा ।
मेरा कृत अनीति युत माने * पिता दुख अति मन में ठाने ॥
मुझ से दुख नहिं होय पिता को * त्यागूँ मैं ऐसी प्रभुता को ।

संग भ्रात के मैं बन जाऊँ * कानन भ्रात्री नैम निभाऊँ ॥

दोहा

ऐसा सोच विचार के * लक्ष्मण चरन बढ़ाय ।
माता के महलों गये * बोले मुद मन लाय ॥२३६॥

चौपाई

माता निकट लक्ष्मण जब आये * हाथ जोड़ जब वचन सुनाये ।
माता राम विपिन को जाते * पितु अनुशाशन हर्ष निभाते ॥
मैं भी संग भ्रात के जाऊँ * सेवा से नहिं बदन छिपाऊँ ।
सागर विन मर्यादा जैसे * राम बिना लक्ष्मण है तैसे ॥
राम विना लक्ष्मण नहीं जीवे * भोजन करे न पानी पीवे ।
बोली मात सुमित्रा रानी * अति प्रसन्न चित्त मीठी बानी ॥
धन्य धन्य सुत भाव तुम्हारा * जो बन जाना चित्त बिचारा ।
दीर्घ भ्रात है पिता समाना * भावज को निज माता जाना ॥

दोहा

जो आज्ञा हो भ्रात की * उसको रखना शीश ।
जाओ संग सु भ्रात के * बन को विश्वावीश ॥२३७॥

चौपाई

ज्येष्ठ भ्रात की सेवा करना * भ्राता आज्ञा सिर पर धरना ।
वन को गमन राम ने कीना * मारग से निज मन को दीना ॥
संग भ्रात के पुत्र सिधारो * वार हुई जल्दी पग धारो ।
सुत प्रणाम माता को कीना * धन्य धन्यँ जननी तू यश लीना ॥
पहुँचे माता कौशल्या तीरा * लक्ष्मण सुभट विकट रण धीरा ।
कर प्रणाम चरणों सिर दीना * बोले वचन लखन परवीना ॥
माता भ्रात गमन वन कीना * कानन चरन अकेले दीना ।

मैं भी संग जाऊँ सुन लीजे * वन जाने की आज्ञा दीजे ॥

दोहा

बोली माता कौशल्या * नैनों भर के नीर ।
लाल जाय तू भी चला * कौन बन्धावे धीर ॥२३८॥

चौपाई

लक्ष्मण मानो वचन हमारा * तुम मुझ से मत करो किनारा ।
पीड़ित हृदय सांत्वना पावे * देख तुम्हें सुत मन सुख चावे ॥
जननी आप राम की माता * उत्तम क्षत्राणी विख्याता ।
धीरज धरो मात मन माँही * बन्धु संग लक्ष्मण जाहीं ॥
आज्ञा मात हर्ष कर दीजे * करुणा जननी सुत पर कीजे ।
मुझे न रोक माता प्रवीना * लक्ष्मण राम के है आधीना ॥
कर प्रणाम धनुष कर धारा * तरकस तुरत गले में डारा ।
शीघ्र चाल से चरन बढ़ा के * राम निकट पहुँचे है जाके ॥

दोहा

नगर नारी नर देख कर * मन में अधिक उदास ।
राम लखन जाते लखे * लेते ठंडी स्वाँस ॥२३६॥

चौपाई

व्याकुल पुर के नर अरु नारी * उठ धाये संग बिना विचारी ।
कैकई की सब करें बुराई * जनता संग राम के धाई ॥
दशरथ नृप परिवार समेता * चल धाये तज दिया निकेता ।
रानी चली राम के पीछे * प्रेम स्नेह सबों को खींचे ॥
राजा प्रजा बाहर आई * शून्य अयोध्या पड़े दिखाई ।
माता पिता को राम निहारा * लौटाना मन माँहि विचारा ॥
विनय सहित नृपको समझाया * सबको पुन पीछे लौटाया ।
प्रेम सहित पुर के नर नारी * समझा कर लौटाये पिछारी ॥

दोहा

राम लखन सीता सहित * चले अगाड़ी धाय ।
शीघ्र गमन करके चले * मारग चिन्ह भुलाय ॥३४०॥

चौपाई

ग्राम निवासी आगे आवें * राम लखन को चहे ठहरावें ।
अस्वीकार ठहरना कीना * आगे चरन राम ने दीना ॥
करे न भरत राज स्वीकारा * कैकयी पे क्रोधित अति भारा ।
भावी प्रेम बढ़ा मन आ के * राज दिया ठुकरा झुँझला के ॥
दशरथ नृप समान्त बुलाये * पास बिठा कर के समझाये ।
राम लखन को सादर लाओ * ऊँच नीच सब ही समझाओ ॥
धाये मंत्री संग सामन्ता * राम प्रेम में मन हुलसन्ता ।
शीघ्र चाल से सनमुख आये * सविनय सादर वचन सुनाये ॥

दोहा

अचल प्रतिज्ञी राम ने * एक न मानी कहन ।
मंत्री और सामन्त को * उत्तर लागे देन ॥ ३४१ ॥

चौपाई

राम वचन नहिं मन में धारें * संग चले शुद्ध शब्द उचारें ।
पहुँचे विकट विपिन में जाई * पुन आज्ञा राम ने सुनाई ॥
आगे मारग विकट महा है * जाओ लौट यह वचन कहा है॥
कहना कुशल क्षेम सब जाके * देना पितु को अति समझा के॥
मिल कर सेव भरत की करना * आज्ञा शीश हर्ष के धरना ।
सुनत वचन मंत्री दुख पाया * चरन पकड़ के वचन सुनाया॥
है धिकार हमें सौ वारा * जो सेवा स- करें किनारा ।
योग न हम से वाके चीने * चरन कमल से पृथक् कीने ॥

दोहा

जाती है प्रवाह से * सरिता गहन गंभीर ।

शीतल सुन्दर स्वच्छ अति * वहता देखा नीर ॥३४२॥

चौपाई

केवटिया को तुरत पुकारा * सुन कर केवट आन मंझारा।
हाथ जोड़ कर गिरा उचारी * आज्ञा दो जन को सुख कारी॥
राम कहे नैया तट लाओ * यहाँ से हम को पार लगाओ।
हो प्रसन्न केवट उठ धाया * नैया तुरत तीर पर लाया ॥
हाथ जोड़ चरणों शिर ना के * कह केवट अस वचन सुना के।
कैसे नैया में वैठा लूँ * किस मुख से अस वचन निकालूँ
चरन पखारे विन मैं स्वामी * नैया पास न लाऊँ हित गामी।
पहिले चरन पखारन दीजे * पीछे नाव काम निज लीजे ॥

दोहा

प्रथम चरन पखार लूँ * जव वैठारूँ नाथ ।
करो क्षमा अपराध को * चरन नमाऊँ माथ ॥३४३॥

गायन

[तर्ज-करना जो चाहे कर वे]

कैसे मैं नाथ तुम को * नैया में अव विठाऊँ ।
मौका न शुध स्वामी * पुन वार-वार पावें ॥
विन पग पखारे स्वामी * कैसे मैं हर्ष पाऊँ ।
हर्षा पवित्र पावन * पग मैं पखार पाऊँ ॥
पावन चरन तुम्हारे * नैया में जव पड़ेंगे ।
नर तन सफल यह होगा * पद युग पखारने से ॥
फिर नाथ नाविकों को * किस रीति से बचाऊँ।
लाकर सुभक्ति मन में * निज शक्ति आजमाऊँ ॥
लग जाय पातिकी मन * पावन चरन कमल से ।
करिये दया दयानिधि * वस प्रेम दान चाऊँ ॥

विस्मय हुवा है सुन कर * कर्तव्य आपके हर ।
'मुनि चौथमल' कहे यों * जिन पद को नित मैं ध्याऊँ ॥

दोहा

चरन धोये पथवार ने * माना मन आनंद ।
नैया में लीने चढ़ा * राम लखन सुखकंद ॥३४४॥

चौपाई

केवट नैया पार लगाई * सरिता पार हुये रघुराई ।
राम कहे सिय को समझाई * चूड़ामणि दीजै उतराई ॥
केवट कहे राम से वैना * प्रेम विवश भर आये नैना ।
मेरो आपको वर्ण है न्यारो * कर्म दोउन को एक विचारो ॥
सरिता पार करें स्वारथ से * आप उतारें परमारथ से ।
नाथ कर्म से मोय न टारो * भवसागर से मोय उतारो ॥
सुन कर राम बहुत हर्षाये * लक्ष्मण को अस बचन सुनाये
श्रद्धा केवट की लख भाई * कैसी अविचल प्रीति दिखाई ॥

दोहा

नैया में से उतर कर * चले सिंह युग वीर ।
सती शिरोमणि साथ में * जाय विपिन धर धीर ॥३४५॥

चौपाई

नदी तीर सामन्त विचारें * राम लखन को खड़े निहारें ।
नैन लोप हुवे तीनों प्रानी * गद्-गद् स्वर मंत्री कहे वानी ॥
नैनन से वहे जल की धारा * चला नहीं कोई उपचारा ।
होकर दुखी अवधपुर आये * समाचार सब आन सुनायें ॥
सुन उदास हुवे नृपाला * कौन रीति कहो कृत संभाला ।
राम लखन नहिं उलटे आये * उनने मेरे वचन निभाये ॥
राज ग्रहण अब सुत तुम कीजे * दीक्षा में बाधा मत दीजे ।

आयुष मानो पुत्र हमारा ॥ इस में यश जग होय तुमारा ॥

दोहा

उत्तर दीना भूप को ॥ करके भरत विचार ।
मैं लाऊँ लौटाय के ॥ प्रेम हृदय में धार ॥३४६॥

चौपाई

कर प्रसन्न लौटा के लाऊँ ॥ जो पितु की मैं आज्ञा पाऊँ ।
आकर कहे कैकई रानी ॥ बोली पति से ऐसे बानी ॥
जो स्वामी की आज्ञा पाऊँ ॥ संग भरत के मैं भी जाऊँ ।
राम लखन को लौटा लाऊँ ॥ अपना मर्म सभी समझाऊँ ॥
निज करनी के फल को पाया ॥ बिन सोचे कृत आगे आया ।
निज कर्त्तव्य पर अति पछताई ॥ बुद्धि बिसारी अकल गँवाई ॥
मैं अपराध क्षमा करवा के ॥ राम लखन लाऊँ लौटा के ।
आज्ञा भूपत दो हर्षा के ॥ भरत संग मैं जाऊँ धा के ॥

दोहा

आज्ञा दीनी राम ने ॥ देखा धर कर ध्यान ।
कैकइ मन्त्री सहित सब ॥ कीना तुरत पयान ॥३४७॥

चौपाई

शीघ्र गमन कर भरत सिधाये ॥ छट्ठे दिवस राम तट आये ।
राम लखन तरुवर तर पाये ॥ जाय भरत ने शीश झुकाये ॥
वत्स वत्स करी कैकई भागी ॥ जाकर राम हृदय से लागी ।
मस्तक चूम कही अस बानी ॥ सुनो राम सुत तुम हो ज्ञानी ॥
राम देख माता को धाये ॥ आकर चरणों शीश झुकाये ।
सीता चरन पड़ी रानी के ॥ पाँव लगी शुभ सुख सानी के ॥
रोने लगी राम के आगे ॥ हृदय से धीरज सब भागे ।
बहे भरत के जल की धारा ॥ नैन नीर से चरन पखारा ॥

दोहा

भरत राम के चरन गिर * करी हुवे बे होंश।
शीतल वायु से हुआ * आकर कुछ-कुछ होंश॥३४८॥

चौपाई

भ्रात त्याग मुझ को कस धाये * सेवक को नहिं संग लगाये।
मुझे अभक्ति जान तुम त्यागा * दोष मात के कृत से लागा॥
लोभी मुझे प्रजा ने जाना * राज लोभ सब जग ने माना।
मुझ को वन में लेकर जइये * मेरे सिर से दोष हटइये॥
या चल अवध राज तुम कीजै * सेवा में सेवक को लीजे।
आप अवध का राज संभारो * मंत्री पद लक्ष्मण सिर धारो॥
प्रतिहारी मैं नाथ बनूँगा * पत्र हाथ रिपु घन के दूँगा।
आप अवध में पग अब धारो * विनय दास की आप विचारो॥

दोहा

बोली रानी कैकई * सुनिये राम सुजान।
भरत भ्रात की विनय पे * दीजै किंचित ध्यान॥३४६॥

चौपाई

बोल भरत की मानो बाता * भ्रातृ वत्सल हो तुम त्राता।
तात भ्रात का नहिं कुछ दोषा * इस कृत से हैं सब निर्दोषा॥
यह सब कृत मेरा सुत जानो * त्रिय स्वभाव कटुक पहिचानो।
कुटिल आदि त्रिय दोष बखानो * सो सब मेरे में सुत जानो॥
पुत्र पति ने जो दुःख पाया * माताओं ने कष्ट उठाया।
वही अपराध क्षमा तुम कीजै * हर्षित मन कर उत्तर दीजै॥
बोले राम सु मीठी बानी * मात विनय सुनियो हित सानी।
कैसे मैं प्रतिज्ञा छोड़ूँ * निज प्रण से कैसे मुख मोड़ूँ॥

दोहा

दोनों की आयुष भरत * टालो नहीं सुजान।

आज्ञा मेरी आप को ❋ है सहयोग प्रमान ॥ ३५० ॥

गायन

[तर्ज-बिना रघुनाथ के देखे नहीं दिल को करारी है]

कहे श्री राम भरत तांई ❋ भैया बात सुन लीजे ।
बैठ के अवध की गादी ❋ अदल इन्साफ ही कीजे॥कहे०
परस्त्री मात सम जानी ❋ कभी महोब्बत में मत फँसना ।
लोभ को त्याग कर धन में ❋ भंग मर्याद ना कीजे ॥ १ ॥
नीच इन्सान की संगत ❋ कभी मत भूल के करना ।
अदू के सामने भैया, ❋ सदा ही शूरमा रहजे ॥ २ ॥
विपत् और सम्पदा दोनों ❋ शुभाशुभ कर्म के फल हैं ।
धैर्यता धार जननी को ❋ सदा विश्वास तू दीजे ॥ ३ ॥
नसीहत देके वन अन्दर ❋ चले सियाराम व लक्ष्मण ।
' चौथमल ' कहे जाते यूँ ❋ प्रजा की पालना कीजे ॥ ४ ॥

चौपाई

सीता ने लाके जल दीना ❋ राज अभिषेक भरत का कीना ।
कैकई को करके प्रणामा ❋ रखा शीश पर कर शुभ कामा॥
किया अवध को तुरत रवाना ❋ दक्षिण को हरि किया पयाना॥
भरत अयोध्या में जब आये ❋ ज्येष्ठ भ्रात की आज्ञा लाये ॥
राम आज्ञा पर चित्त धारा ❋ राज अवध का कर स्वीकारा।
दशरथ नृप ने संयम धारा ❋ पुरजन का बहुसंग परिवारा॥
सत्यभूति मुनि तट दीक्षा लीनी ❋ करनी मनमानी नृप कीनी ।
राज भरत करते दिन राता ❋ मन में याद रहे हर भ्राता ॥

दोहा

परम प्रिय निज भ्रात के ❋ प्रेम प्रास मझदार ।
बन्धे राज़ रक्षा करे ❋ जैसे चौकीदार ॥ ३५१ ॥

चौपाई

लक्ष्मण राय अगाड़ी धाये * चित्रकूट देखा हर्षाये ।
कुछ दिन वास गंग तट कीना * फिर आगे चलना मन दीना॥
अयवंती नगरी तट आये * वट तरु आ विश्राम लगाये।
बोले लक्ष्मण सुनिये भ्राता * यह उपवन कस सूखा जाता ॥
ऊजड़ हुआ हाल यह देशा * देख इसे हो मन में क्लेशा ।
कीसी सभ्य से भेद निकालो * जो यहाँ होय विपत सो टालो॥
एक पथिक जाता नज़राया * रघुबर अपने पास बुलाया ।
सादर हाल पूछते सारा * प्रेम सहित निज तट बैठारा ॥

दोहा

कैसे उजड़ यह हुआ * इसका कह सब हाल ।
सत्य सत्य बतलाय दो * भेद भाव तत्काल ॥३५२॥

चौपाई

उत्तर दिया सुनो महाराजा * सिंहोदर है यहाँ का राजा ।
दशांगपुर एक देश प्रवीना * सिंहोदर के वह आधीना ॥
अधिपति वज्र करण तस नामा * करे देश में उत्तम कामा ।
सिंहोदर का वह सामन्ता * तेज प्रतापी बहु गुणवन्ता ॥
गया शिकार खेलने वन में * ध्यानारुढ़ अनगार विपन में।
पुच्छा करी मुनि से जाके * दीजे मुझ को भेद बता के ॥
वन में क्या करते हो स्वामी * हाल कहो मुझ से हित गामी ।
ध्यान समाप्त किया मुनिराया * सन्मुख खड़ा वीर एक पाया ॥

दोहा

उत्तर मुनि देने लगे * सुनो भूप धर ध्यान ।
आतम हित के कारने * रहते वन दरम्यान ॥३५३॥

चौपाई

तप संयम वन में आराधे ✻ इकले रहें मुक्त पद साधे ।
कर्म कटक को दूर हटावे ✻ केवल सिद्धों के गुण गावें ॥
हिंसा में अति दोष भुवाला ✻ कर्म नशे में जग मतवाला ।
सुन कर मन आया विश्वासा ✻ दर्शन पा पूरण भई आशा ॥
श्रावक धर्म किया स्वीकारा ✻ संग-संग ऐसा व्रत धारा ।
देव गुरू को ही सिर नाऊँ ✻ औरों को नहिं शीश झुकाऊँ ॥
लेकर व्रत नृप घर आये ✻ हृदय में यह ख्याल समाये ।
सिंहोदर से कस वश पावे ✻ वह अवश्य मम सिर झुकवावे ॥

दोहा

मणि मुद्रका वनाय के ✻ अंकित अरिहन्त नाम ।
करवायो हर्षाय मन ✻ यह समझो शुभ काम ॥२५४॥

चौपाई

प्रभु स्मरण करके सिर नावे ✻ यही रीति नृप काज चलावे ।
चुगल जाय नृप से अहवाला ✻ सुना दिया जाके तत्काला ॥
सुन के सिंहोदर झुँझलाया ✻ मन में कुपित हुये अति राया ।
आया कोई पुरुष उपकारी ✻ आकर वात सुनाई सारी ॥
वोले वज्र करण उस वारा ✻ भूप कुपित किस रीति हमारा ।
कुन्दन पुर एक नग्र ललामा ✻ श्रावक संगम रहे उस ठामा ॥
उसका पुत्र मुझे नृप जानो ✻ वातें सत्य सव मेरी मानो ।
लेकर माल उज्जैनी आया ✻ कामलता को देख लुभाया ॥

दोहा

नगर नार को द्रव्य सव ✻ दीना जा उस वार ।
पुनः वैश्या कहने लगी ✻ कुण्डल लाओ उतार ॥२५५॥

चौपाई

सिंहोदर के महलों जाकर * देखे कुण्डल निघा उठा कर।
श्री धरा बोली अस वानी * जो भूपत की थी पटरानी॥
नागिन क्यों निद्रा नैनों में * रूखापन दीखे बैनों में।
सिंहोदर ने उत्तर दीना * वज्रकरण ने क्रोधित कीना॥
उसका शीश जो न झुकवाऊँ * तो जाके वह शीश उड़ाऊँ।
सुन यह वचन तुरत मैं धाया * हाल सुनाने को मैं आया॥
यह सुन नृप ने सव कृत कीना * अन्न तृण से भर के घर दीना।
फाटक वन्द नगर के कीने * वन्दोवस्त यह नृप मन दीने॥

दोहा

घेरा आकर नगर को * सिंहोदर भूपाल।
वज्र करण को दूत से * पत्र लिखा तत्काल॥ ३५६॥

चौपाई

कपट वहुत मेरे संग कीना * अव तक मुझको धोखा दीना।
मुद्री रख आकर प्रणामा * जो चाहे रक्षित निज ग्रामा॥
जो न दूत के संग पग धारा * प्रथक् होय धड़ शीश तुम्हारा।
व्रज करण ने उत्तर दीना * मैंने मान वस कुछ नही कीना।
देव गुरु को शीश झुकाऊँ * अन्य पुरुप को नाहिं सिर नाऊँ।
वसुधा चाहे सकल तुम लीजै * विचालित नहीं धर्म से कीजै॥
मैं पुर तजने को तैयारा * नियम विरुद्ध करूँ नाहिं कारा।
वज्रकरण ऐसा कहलाया * सिंहोदर कुछ ध्यान न लाया॥

दोहा

घेरा है गढ़ आन कर * सिंहोदर भूपाल।
उजड़ गया वन जभी से * कहा सत्य सव हाल॥३५७॥

चौपाई

सुन रघुवर दशांगपुर धाये * निकट वाग में आसन लाये।

लक्ष्मण राम की आज्ञा पाई ※ वज्र कर्ण पर गये हैं धाई ॥
वज्र कर्ण ने लखन निहारे ※ बोले धन-धन पग शुभ धारे।
भोजन मेरे अतिथ स्वीकारो ※ प्रेम सहित मन में कुछ धारो ॥
उत्तर दिये लखन हर्षा के ※ भ्रात रहे मुझ उपवन आके।
वज्र करण सुन कर तत्काला ※ सुवर्ण थाल भोजनों घाला ॥
भोजन तुरत मनुष्यों द्वारा ※ लखन संग भेजा उस वारा।
राम निकट रामानुज आये ※ हाल सभी आकर समझाये ॥

दोहा

पाकर भोजन राम ने ※ लखन बुलाये तीर।
समझा कर बोले वचन ※ बहुत गहन गम्भीर ॥३५८॥

चौपाई

पहुँचे लखन सिंहोदर पासा ※ मधुर वचन कहे कर विश्वासा।
भरत भूप की आज्ञा मानो ※ वज्र करण से रण मत ठानो ॥
सुन कर सिंहोदर अस बोला ※ भेद सकल निज मन का खोला।
मेरा वज्र करण सामन्ता ※ झुके नहीं मुझ को अभिमंता ॥
वज्र करण अविनयी मत जानो ※ धर्म परायण उसको मानो।
इस कारण प्रणाम नहिं करता ※ धर्म नीति निज मन में धरता ॥
भूप भरत की आज्ञा मानो ※ उन को निज भूपति पहिचानो।
सागरान्त तक उसका राजा ※ करै तेज तप से बहु काजा ॥

दोहा

लक्ष्मण के सुन कर वचन ※ सिंहोदर झुँझलाय।
कौन भरत कैसा नृपत ※ रहा रोब दिखलाय ॥३५९॥

चौपाई

वज्र करण का पक्ष संभाला ※ कौन भरत कहाँ का नृपाला।
मुझको यह भेजा कहला कर ※ खुद लड़े क्यों न यहाँ आकर ॥

सुन कर क्रोध लखन मन छाया * रामानुज मन में घबराया ।
भरत भूपति तू नहीं जाने * क्या तू उन को नहिं पहिचाने ॥
तुझे कराता हूँ पहिचाना * समर युद्ध को उठा कृपाना ।
जाने नहीं भुजा बल मेरा * मान चूर कर दूँ मैं तेरा ॥
सुनकर वचन सैन हुंकारी * टूटे सुभट शस्त्र कर धारी ।
लक्ष्मण देख क्रोध कर गाढा * गज का स्थंभक तुरत उखाड़ा ॥

दोहा

गज स्थम्भ उखाड़ के * दल पर टूटा जाय ।
सिंह स्यार पर जिस तरह * लखन पड़ा अराय ॥ ३६० ॥

चौपाई

दल पर मारा मार मचाई * देख मार सेना घबराई ।
उछल तुरत गज ऊपर ठाड़ा * जाकर सिंह समान दहाड़ा ॥
सिंहोदर का वस्त्र उतारा * भूमण्डल पर तुरत पछारा ।
लिया बाँध नहीं करी अवारा * राम निकट ले तुरत सिधारा ॥
दशांगपुर के नर अरु नारी * देख अचम्भित हुये भारी ।
राम समीप लाय कर डारा * देख राम ने वचन उचारा ॥
सिंहोदर करके आधीनी * स्तुती बहु राम की कीनी ।
रघुकुल मणि कृपा अब कीजे * बन्ध छुड़ाय मेरे प्रभु दीजे ॥

दोहा

मेरी है अनभिज्ञता * करी नहीं पहिचान ।
रघुकुलमणि करके कृपा * दीजै मुक्ति दान ॥३६१॥

चौपाई

यह अज्ञात दोष है मेरा * क्षमा करो जो होय निवेरा ।
सेवक को सेवा बतलाओ * दास जान आज्ञा सुसुनाओ ॥
स्वामी कोप आपका कैसे * गुरु का क्रोध शिष्य पै जैसे ।

सुन कर दिया राम अनुशासन * मानो वचन किया प्रकाशन ॥
वज्र करण से सन्धि करलो * वचन मेरे हृदय में धर लो।
विनय करी वचन उच्चारा * राम वचन सादर स्वीकारा ॥
वज्र करण रघुवर तट आया * आय रामको शीश नमाया।
हाथ जोड़ कर वचन उचारा * मुझ पर किया अनुग्रह भारा ॥

दोहा

ऋषभदेव भगवान के * हुये वंश में आप।
वसुदेव बलदेव हो * मेटोगे सन्ताप ॥ ३६२ ॥

चौपाई

भाग्य विवश दर्शन हम पाये * धन्य भाग्य अपने कर भाये।
बहुत दिवस पीछे पहिचाना * तीन खण्ड का नायक जाना ॥
अर्द्ध भरत के नृपति सारे * सो सब किंकर नाथ तुम्हारे।
सिंहोदर को स्वामी छोड़ो * उनकी शठता से मुख मोड़ो ॥
गुरु निर्ग्रंथ देव अरिहन्ता * सिद्ध भये जेते भगवन्ता।
शीश उन्हीं के चरनों नाऊँ * अन्य को मस्तक नहीं नवाऊँ ॥
प्रति वर्द्धन मुनि से व्रत लीना * यह व्रत मैं हर्षा कर कीना।
सिंहोदर सुन कर स्वीकारा * वज्र करण जो वचन उचारा ॥

दोहा

सिंहोदर हित से मिला * वज्र करण से धाय।
मिले सहोदर जिस तरह * अति प्रसन्न हो आय ॥३६३॥

चौपाई

वज्र करण से हित अति कीना * आधा राज प्रसन्न हो दीना।
वज्र करण ने मन हर्षाई * कन्या अपनी आठ बुलाई ॥
कन्या त्रियशत सिंहोदर की * पाली पोशी संग सादर की।
लक्ष्मण निमित्त कहे कर जोरी * राम सामने करे निहोरी ॥

उत्तर लखन भूप को दीना * नीति सरस कारज यह कीना।
वन से पुर में चरण धरूँगा * पाणि ग्रहण उस समय करूँगा॥
आज्ञा करा तुरत स्वीकारा * सिंहोदर निज नगर पधारा।
वज्र करण पुनः शीश नवाया * आये पाये नगरी धाया॥

दोहा

निश भर वन आराम कर * कीना भोर पयान।
पहुंचे निर्जल वन विषे * देख धर के ध्यान॥३६४॥

चौपाई

जल का दीखे नहीं ठिकाना * सीता का अति जी घबराना।
नीचे वृक्ष के बैठे जाई * शीतल वायु जब कुछ आई॥
लक्ष्मण जल लेने को धाये * एक सरोवर के तट आये।
नृप कुबेर पुर का रखवाला * सरबर पर करे सैर रसाला॥
नाम कल्याण भूप सुख माला * अद्भुत रुप अनूप रसाला।
लक्ष्मण लख मन माँहि विचारी * यह तो दीखे है कोई नारी॥
नमस्कार लक्ष्मण को कीना * प्रेम सहित मन नृप पै दीना।
मम सत्कार करो स्वीकारा * बनो अतिथ मेरे इस वारा॥

दोहा

मेरे स्वामी सीय संग * बैठे विपिन मुझार।
उनके बिन नहीं कर सकूँ * महमानी स्वीकार॥३६५॥

चौपाई

नृप ने मंत्री को भिजवाया * राम सिया को नगर बुलाया।
सीता राम संग उठ धाये * वन को त्याग नगर में आये॥
मंत्री जा प्रणाम किया है * आमंत्रण हर्षाय दिया है।
कल्याण माल ने शीश नवाया * मुख से मीठा वचन सुनाया॥
अति उत्तम शुभ शिविर लगाया * हर्ष राम को वहाँ ठहराया।

ठहर शिविर में मुद मन दीना * स्नानाहार हर्ष युत कीना ॥
कल्याण माला सुमन विचारा * स्त्री रूप तुरत मन धारा ।
राम समीप मंत्री संग आई * हाथ जोड़ कर विनय सुनाई ॥

दोहा

पूछा राम सुजान ने * उसका सब अहवाल ।
मुनि वेष किस हित किया * इसका कहिये हाल ॥ ३६६ ॥

चौपाई

यह सुन तुरत कहा पुनरानी * बोली मिष्ट मधुर शुच वानी ।
बाल्य खिल्य यहाँ का नृपनाहा * पृथ्वी नाम प्रिय सुख माहा ॥
रानी गर्भवती मम भाई * यवनों ने कर दीनी चढ़ाई ।
बाल्य खिल्य को बान्धा आ के * ले गये अपने संग लगा के ॥
समय पाई पुत्री भई पैदा * सब नारिन को रखा अलहदा।
मंत्री ने घोषणा कराई * पुत्र जन्म की खुशी मनाई ॥
खबर सिंहोदर ने जब पाई * आज्ञा दूत हाथ भिजवाई ।
बालक ही को मानो राजा * मंत्री करे राज का काजा ॥

दोहा

पुत्र समान रही सदा * बाल-काल से नाथ ।
मंत्री माता के सिवा * कोई न जाने बात ॥ ३६७ ॥

चौपाई

बहुत द्रव्य यवनों को दीना * भूप न छोड़ा धन ले लीना ।
कृपा करी मम नाथ छुड़ाओ * ऐसा अनुग्रह मुझ पर लाओ॥
राम तुरत आश्वासन दीना * भूप छुड़ाना निश्चय कीना ।
जब तक पिता न आवे तेरा * तब तक पुरुष वेष ही हेरा ॥
कर स्वीकार भेष नर धारा * राम अनुग्रह कीना भारा ।
मंत्री विनय राम से करता * शीश राम के चरनों धरता ॥

कल्याण माला हित बतराऊँ * लक्ष्मण को कन्या परणाऊँ।
लौट अवध जब चरण धरेंगे * लक्ष्मण संग जब ब्याह करेंगे॥

दोहा

चौथे राज पयान कर * सीता लक्ष्मण राम।
नदी नर्बदा के निकट * पहुँचे हैं सुख धाम ॥३६८॥

चौपाई

मंजन कर आगे पग दीना * पथ विद्यावटी का हर लीना।
मना बहुत रघुवर को कीना * पर उन आगे ही पग दीना॥
शिवल के तरु बोला कागा * शकुन राम के मन नहिं लागा।
आगे चल कर दल अति पाया * राम नज़र में वह दल आया॥
यवनों की सेना अति भारी * सेना पति महा दुराचारी।
सीता को लख मन लुभिआया * तुरत सैन को हुकम सुनाया॥
इनको मार त्रिया ले आओ * यह आज्ञा अब तुरत उठाओ।
आज्ञा सुन कर योधा धाये * निकट राम लक्ष्मण के आये॥

दोहा

लक्ष्मण तब कहने लगे * सुनो नाथ धर ध्यान।
यवनों को संहार के * मारूँ नृपु के मान ॥३६९॥

चौपाई

लक्ष्मण तुरत धनुष टंकारा * गिन गिन कर यवनों को मारा।
सिंहनाद से जैसे हाथी * भागन लगे यवन के साथी॥
मलेच्छ भूप लक्ष्मण के तट आया * शस्त्र छोड़ कर शीश नवाया।
अपना हाल सकल समझाया * राम लखन के पग सिर नाया॥
मैं अब हूँ आधीन तुम्हारे * आप नाथ मुझ को निस्तारे।
आज्ञा अब किंकर को दीजे * सेवा कुछी दास से लीजे॥
अविनय क्षमा करो अब नाथा * जोड़ूँ हाथ नवाऊँ माथा।

बोले राम सुनो मम बानी * बाल खिल्य को छोड़ सुजानी॥

दोहा

आज्ञा शीश चढ़ा तुरत * बाल्य खिल्य दिया छोड़।
दुष्ट करम से यवन ने * लीना मुख को मोड़ ॥३७०॥

चौपाई

वचन राम का शीश चढ़ाया * काक सुनत उठ कर के धाया॥
कुँवर नगर सोच भिजवाया * बाल्य खिल्य नृप को पहुँचाया॥
काक आया पल्ली को धाया * आगे राम ने चरन बढ़ाया।
तापी सरिता के तट आये * सीता राम युगल सुख पाये॥
पहुँचे अरुण नगर हर जाई * देखा पुर को दृष्टि उठाई।
तृषित भई सिया महारानी * कहा पिलाओ थोड़ा पानी॥
राम वचन सुन मन में लाये * एक विप्र मंदिर में आये।
कपिल विप्र की नारी सुशर्मा * शुचिता से करे धर्म कर्मा॥

दोहा

राम लखन को देखकर * सादर लिया बुलाय।
पृथक्-पृथक् आसनन पर * दीने तुरत बैठाय ॥३७१॥

चौपाई

शीतल सलिल तुरत मंगवाया * सीता राम लखन को पाया।
अति स्वादिष्ट नार मन भाया * उसी समय द्विज घर में आया॥
क्रोध किया नारी पे आ के * अग्निहोत्र दिया अशुद्ध कराके।
यह सुन क्रोध लखन को आया * ऊँचा कर द्विज खूब घुमाया॥
अधम विप्र पर क्रोध न करना * धीरे ला धरनी पर धरना।
राम वचन सुन लखन विचारा * द्विज धीरे से धरन उतारा॥
आगे चले भ्रात युत सीता * मन में अधिक बढ़ी सत प्रीता।
आगे के पथ के हर धाये * एक सघन वन में हर आये॥

दोहा

काजल सम घन हो गये * आया वर्षा काल ।
समय जान रघुकुल तिलक * बात रहे हैं टाल ॥३७२॥

चौपाई

जलधर वरस रहे चहुँ ओरी * हो घनश्याम कहे वर जोरी ।
आया घर घुमड़ चौमासा * राम विपिन मे किया निवासा ॥
वट के नींचे आसन कीना * हो प्रसन्न मन वन में दीना ।
वर्षा ऋतु यहाँ करे कयामा * साता कारी है यह धामा ॥
देव अधिष्ठाता उस बन का * छाया तुरत घोर जी घन का ।
पहुँचा निज अधिकारी तीरा * बोला वचन जाय धर धीरा ॥
इम कर्ण के सुन कर वैना * चाया गौकर्ण उत्तर देना ।
तुरत लगाया अवधि ज्ञाना * बन का भेद भाव सव जाना ॥

दोहा

जो आये हैं पाहुने * वासुदेव बलदेव ।
अष्टम यह प्रगट हुवे * करो उन्हों की सेव ॥३७३॥

चौपाई

निश में गया गो कर्ण देवा * राम लखन की करने सेवा ।
वन में नगरी जाय वसाई * नौ योजन जिसकी चौड़ाई ॥
वारह योजन की लम्बाई * वन में अद्भुत छवि सुहाई ।
कोट कंगूरे अति चमकारे * छवि को देख-देख मन हारे ॥
ऊँचे महल मंद्र अति नीके * सुखदायक जोवे अति जी के ।
किये हाट वज़ार तयारा * द्रव्य कोष में भरा अपारा ॥
वापी कूप तड़ाग वनाये * वाग वगीचे सुगर दिखाये ।
अवधपुरी के सम सुख धामा * रामपुरी राखा तस नामा ॥

दोहा

रात्रि के ही समय में * बसा दिया सुख धाम।
अति विचित्रता से किया * सुर ने पूरण काम ॥ ३७४ ॥

चौपाई

मङ्गल ध्वनि पड़ी जो काना * उठे तुरत तब राम सुजाना।
देख नगर को राम नरेशा * मन मे मोद बढ़ाय विशेषा ॥
इम कर्ण के कर मे वीना * राम रूप उस पर चित्त दीना।
विस्मय नगर देख मन पाया * किसने ऐसा नगर रचाया ॥
यक्ष जोड़ कर सन्मुख आया * विनय सहित अस वचन सुनाया
जब तक आप निवास करेंगे * वन में पावन चरन धरेंगे ॥
जब तक सेवा करूँ तुम्हारी * भक्ति भाव निज मन में धारी।
आनंद आप करो जी भर के * पावन करें अरण पग धरके ॥

दोहा

कपिल विप्र उस वन विपे * आ निकला उस वार।
समिध लेन वन में गया * हाथ कुल्हाड़ी धार ॥३७५॥

चौपाई

नगरी देख अचम्भा छाया * आगे अपना चरन बढ़ाया।
माया है या इन्द्रजाला * सोच-सोच मन करे ख्याला ॥
देखी खड़ी सुगर इक नारी * पूंछा करने की मन धारी।
नव नगरी किस भूप वसाई * नाम ग्राम दीजै समझाई ॥
सुन नारी ने उत्तर दीना * यक्ष गोकर्ण यही कृत कीना।
वसे राम सीता सुखकारी * रामपुरी यह नाम प्रचारी ॥
राम देय दीनों को दाना * दुखी जनों को सुखी बनाना।
जो इस नगरी में आते है * तो वह कृतार्थ हो जाते हैं ॥

दोहा

यह सुन कर बोला कपिल * सुनो लगाकर कान।

मुझ को कैसे मिलेंगे * सुन्दर राम सुजान ॥ ३७६ ॥

चौपाई

चार द्वार नगरी के भारी * चारों यक्ष जिनके अधिकारी।
इस नगरी के पूरव द्वारे * साधु एक तप करते भारे॥
मुख वस्त्रिका लगी आनन पे * डोरी चढ़ी सुगर कानन पे।
रजोहरण (ओघा) है कर में * करें पर्यटन पृथ्वी भर में॥
जो दर्शन उन के कर आवे * तो नगरी में जाने पावे ।
जिसको महामंत्र नवकारा * याद होय मुख करे प्रचारा॥
श्रावक बन नगरी में जाये * तो मन वंछित शुभ फल पाये।
श्रावक बन कर भीतर जाओ * तो रघुवर के दर्शन पाओ॥

दोहा

निकट साधु के आय के * करी वंदना जाय ।
वानी सुन हर्षित हुआ * मन में मोद बढ़ाय ॥३७७॥

चौपाई

वाणी सुनी दर्श मुनि कीना * श्रावक धर्म हर्ष के लीना।
निज त्रिया को धर्म सुनाया * तुरत नार के मन में भाया ॥
निकट राम के दोनों आये * राम सिया के दर्शन पाये ।
भय द्विज के मन बीच समाया * राम निकट से भागन चाया ॥
लक्ष्मण मधुर वचन अस भाषे * भाव कपिल के स्थिर कर राखे।
भोगो जो इच्छा मन माँही * होय राम के निकट न नाहीं॥
आशिर्वाद राम को दीना * सादर हरि ने बैठा लीना ।
राम कहे तुम कहाँ से आये * मुख से मीठे वचन सुनाये ॥

दोहा

अरुण ग्राम है वास मुझ * सुनिये दीन दयाल ।
ब्राह्मण हूँ मैं वर्ण का * सत्य सु कहूँ सब हाल ॥३७८॥

चौपाई

आप अतिथ भये मम घर माँही * आप कियो मैं आदर नाहीं।
बोले कटुक वचन मैं भारे * क्षमा करो अपराध हमारे ॥
कही सुशर्मा ने अस वानी * सुन विनय सीता महारानी ।
राम दयालु बहु धन दीना * कर के हर्ष विदा पुनः कीना ॥
पहुँचे अपने ग्राम मझारी * मन में भई खुशी अति भारी ॥
नन्दावतंश मुनि वहाँ आये * सुख पती सुख अधिक सुहाये ॥
जीव रक्षण हित ओघा कर में * सुन उपदेश न नर जग भर में।
कपिल विप्र ने दीक्षा लीनी * करनी समता से अस कीनी ॥

दोहा

पावस ऋतु गई बीत कर * सोचा राम सुजान ।
लक्ष्मण से कहने लगे * कीजे भ्रात पयान ॥३७६॥

चौपाई

बोला गौकर्ण कर जोरी * नाथ भई सेवा अति थोरी।
आप गमन करना मन धारा * खेद होय यह सुन कर भारा॥
करिये क्षमा भूल नर नाथा * जोड़ूँ हाथ नवाऊँ माथा।
स्वयं प्रभा आते सुन्दर हारा * यक्ष राम की ग्रीवा डारा ॥
कुंडल अर्पण किये लखन के * पूरण किये भाव निज मन के।
चूड़ामणि सिया को दीनी * सेवा बनी सो हर्षा कीनी ॥
मन गमती शुभ वीणा सुहाई * सो सीता को लाय गहाई।
राम चरण जब आगे दीना * यक्ष नगर को तस नश कीना ॥

दोहा

निकट विजय पुर के हुवे * राम उपस्थित आय ।
बाहर पुर उद्यान के * डेरा दिया लगाय ॥३८०॥

चौपाई

राम विटप वट नीचे आये * छाया देख परम सुख पाये ।

मन्द्र समान वृत्त की डाली * झुकी नहीं पर अति शुभ वाली ॥
वट नीचे विश्राम लगाया * सुगर धाम सीता मन भाया ।
विजय पुर का भूप महीधर * इन्द्राणी रानी अति सुन्दर ॥
अति सुन्दर तस सुता रसाला * नाम सुगर शुभ था वन माला ।
पड़े लखन के गुण तस काना * वरूँ लखन को प्रण अस ठाना ॥
राम लखन का सुन वनवासा * भूप महीधर आरत भ्यासा ।
लखन लौट कब वन से आवें * जो पुत्री से व्याह रचावें ॥

दोहा

चन्द्र नगर नृप तनय से * करना चहा सम्बन्ध ।
वनमाला ने मरन का * सुन के किया प्रबन्ध ॥३८१॥

चौपाई

घर से तुरत निकल के धाई * देवयोग उस वन में आई ।
यक्षालय में जा पग धारा * हाथ जोड़ अस वचन उचारा ॥
होय उपस्थित प्रण को पालो * विपता सकल मेरी अब टालो ।
मन्दिर से वह नीचे आई * जिन भगवन् से डोर लगाई ॥
इस भव में पति लखन न हुवे * मन के भाव मन ही में मूवे ।
सत भक्ति जो होय लखन में * जो बाहर अन्दर वही मन में ॥
यहाँ से मर कर जहाँ मैं जाऊँ * वहीं जाय लछमण वर पाऊँ ।
बान्धा वस्त्र वृत्त की डाली * दूजा छोर उठा कर हाली ॥

दोहा

डाली फाँस सु कंठ में * करने आतम घात ।
लछमण तुरत निहार के * साधी हाथों हात ॥३८२॥

चौपाई

लछमण झपट फाँस को खोला * मधुर बैन पुनः मुख से बोला ।
ऐसा करे किस लिये कामा * मेरा ही है लछमण नामा ॥

राम उठे जब हुवा प्रभाता ❋ लखन सखे भये जागृत भ्राता।
वनमाला का हाल सुनाया ❋ विविध भाँति हरिको समझाया
वनमाला पग सिय के लागी ❋ भक्ति भावना हृदय जागी।
नमस्कार रघुवर को कीना ❋ आगे बढ़ चरनों सिर दीना॥
भोर होत जब जगे भुवाला ❋ देखी महल नहीं वनमाला।
रानी क्रंदन करने लागी ❋ तन की सकल धीरता भागी॥

दोहा

जाते हैं नृप ढूँढ़ने ❋ निज कन्या का हाल।
सेना लीनी संग में ❋ चल दीने तत्काल॥३८३॥

चौपाई

सेना सहित चले नृप राया ❋ भूप महिपत वन में आया।
सीता निकट लखी वन माला ❋ देख हुआ क्रोधित भूपाला॥
आज्ञा सेना को दे दीनी ❋ सैन मान अनुशासन लीनी।
मारो मारो भई पुकारा ❋ देख लखन कर धनुष संभारा॥
खेंच डोर टंकोर लगाई ❋ सेना रिपु की सब घबराई।
सुन टंकोर वीर गिरे धरनी ❋ मिला कुफल जैसी की करनी॥
रथ में रहा महीधर राजा ❋ देखे लक्ष्मण का सब काजा॥
भूप महीधर लखन निहारे ❋ मन पहिचान प्रेम संस्कारे॥

दोहा

लक्ष्मण को पहिचान के ❋ कहे महीधर भूप।
धन्य धन्य है आपको ❋ सुन्दर सुगर स्वरूप॥३८४॥

चौपाई

चिल्ला धनुष से आप उतारो ❋ है सौ विनय मित्र श्रुत धारो।
पुण्य सुता के से तुम आये ❋ दर्श आपके हमने पाये॥
लक्ष्मण चिल्ला लिया उतारी ❋ प्रेम विवश भये भूपत भारी।

रथ से उतर राम तट आया * राम चरण में शीश झुकाया।
लक्ष्मण से है प्रेम सुता का * स्वीकारो पति प्रेम सुता का॥
इस कारण मन यही विचारा * कन्या योग लखन वर धारा।
लखन वीर से हुआ समागम * मन के दूर हुवे सारे भ्रम॥
लखन समान मिला जामाता * राम सरीखे जिनके भ्राता।

दोहा

कर सन्मान गये लिवा * महलों के मझधार।
स्वच्छ सु सुन्दर महल में * दीना उन्हें उतार॥३८५॥

चौपाई

बैठे महीधर के दर्बारा * दूत आय कृत किया सुभारा।
अति वीर्य नृप ने बुलवाया * समाचार सब तुम्हें सुनाया॥
भरत भूप से हो संग्रामा * निज सहायता हित अभिरामा।
भरत संग बहुतेरे राजा * करे सुमन से उनका काजा॥
इस हित भूपत तुम्हें बुलाया * निज सहायता तुम से चाया।
लक्ष्मण कहे मुझे समझाओ * रण का सब कारण बतलाओ॥
अति वीर्य अनुशासन चहता * निज आज्ञा युत भरत चलाता
भरत करे इस से इन्कारा * रण जुड़ने का येही कारा॥

दोहा

बोले राम सुजान यों * भूप चढ़ कर जाओ।
सैन तुम्हारी के सहित * कारज करी आओ॥३८६॥

चौपाई

सैना के संग रघुकुल नायक * हाथ उठाया अपने सायक।
नंद्यवर्त पधारे : जाई * जाय विपिन में सैन टिकाई॥
वन रक्षक सुर वन में आया * आय राम को शीश नमाया।
जो इच्छा हो मुझे सुनाओ * सेवा सेवक से करवाओ॥

राम कहे हम को नहीं कामा ॥ वन में टिके देख शुभ धामा।
यद्यपि आप करें सब काजा ॥ किन्तु दीजिये मुझ सुसाजा॥
मैं निज मन से ऐसा चाऊँ ॥ सैन सभी त्रिय रूप बनाऊँ।
यह कृत अपना दिखलाया ॥ सैना स्त्री रूप बनाया॥

दोहा

सैना के संग राम ने ॥ कीना तुरत पयान।
राज मन्द्र के निकट ही ॥ पहुँचे रघुवर आन ॥३८७॥

चौपाई

द्वारपाल नृप तट भिजवाया ॥ सैना समाचार कहलाया।
द्वारपाल की सुन के वार्ता ॥ बोला अतिवीर्य अभिमानी॥
आप महीधर जो नहीं आया ॥ तो सैना को क्यों भिजवाया।
करूँ भूप को विजय अकेला ॥ सैना को नहीं संग सकेला॥
सैना त्रियों की भिजवाई ॥ मेरी यों अप कीर्ति कराई।
मम सीमा से इसे निकालो ॥ ऐसी सेना को अब टालो॥
सुन सामन्त उपद्रव कीना ॥ ग्रीवा पकड कष्ट बहु दीना॥
क्रोधित हुवे लखन उस वारा ॥ तुरत खंभ एलान उखारा॥

दोहा

मारा मार मचाय के ॥ पट के सूर तुरन्त।
काम लिया स्थम्भ से ॥ धरनी पड़े सामन्त ॥ ३८८॥

चौपाई

सुन कर धरन गिरे सामन्ता ॥ कुपित हुआ भूप बलवन्ता।
ले कृपान तुरत उठ धाया ॥ लक्ष्मण झपट सामने आया॥
खड्ग छीन लीना तत्काला ॥ केश पकड़ कर भू पर डाला।
वस्त्र उतार बाँध झट लीना ॥ लखन वीर ने यह कृत कीना॥
देख नगर की प्रजा सारी ॥ भूप विलोक तृपित भये भारी॥

सीता ने नृप छुड़वा दीना * लछमण कहा सिया कीना ॥
भरत भूत को निज पति मानो * उन अनुचर तुम वनना ठानो।
स्त्री रूप मिटाया सारा * अति वीरज मन वीच विचारा॥

दोहा

नष्ट समझ कर मान को * मन आया वैराग ।
क्या मैं अव सेवक वनूँ * इस से जग दूँ त्याग ॥३८६॥

चौपाई

दीक्षा लेना निश्चित कीना * राज विजय रथ सुत को दीना।
राम कहा तुम हो मम भ्राता * दीक्षा मत लो रख सुख साता॥
इस पर भी दीक्षा ले लीनी * राम कही उसने नहिं कीनी।
विजय रथ निज वैन वुलाई * लछमण संग परणाना चाही॥
राम काज को कर स्वीकारा * आनंद मन में माला भारा।
राम विजय पुर को पुनः आये * विजय रथ अवध पुर को ध्याय॥
भरत भूप अति आदर कीना * उचित स्थान मुदित हो दीना।
कर सत्कार पास वैठाया * मन में अति आनंद मनाया ॥

दोहा

आज्ञा पा महीधर की * कीनी राम पयान ।
सिया राम आगे चले * लखन पिछाड़ी राम ॥ ३९०॥

चौपाई

लछमण कहे प्रिये वनमाला * भ्रात हेत मैं वन को चाला।
वनमाला के चक्षु जल आया * गद्-गद् स्वर से वचन सुनाया॥
हृदय नाथ विनती सुन लीजै * विनय मेरी पर स्वीकृत दीजे।
लग्न कर तजो न नाथ निराशा * स्वीकारो मेरी अरदासा ॥
करके व्याह रहो खुश रंगा * खिदमतगार रहे इक संगा।
प्रेम विवश लछमण कहे वानी * प्राणप्रिये मम मन की रानी ॥

मैं हूँ श्रेष्ठ भ्रात का चाकर ※ परनूँगा तुमको मैं आकर।
मातृ सेवा में लवलीना ※ हुआ बान्धव का आधीना॥

दोहा

तव निवास हृदय मेरे ※ सुनो माननीय बैन।
वन से लौटूँ शीघ्र ही ※ पुनः आऊँगा लैन॥३६१॥

चौपाई

लच्य लच्य पंथ करी हर्षा के ※ वन माता की आज्ञा पाके।
जो मैं लौट पुनः नहीं आऊँ ※ निश भोजन का दोष कहाऊँ॥
निश का अन्तिम भाग जो आया ※ राम लखन ने चरन वढ़ाया।
वन उपवन निरखे कई कई ※ क्षेमा जल का मारग लेई॥
क्षेमा जल पुर के तट आये ※ लख उद्यान हर्ष मन लाये।
साया में कीना विश्रामा ※ देखा सुन्दर सुखद सुधामा॥
लच्मण जाके वन फल लाये ※ सीता के निज कर संभराये।
सीता राम लखन मन भाया ※ तीनों ने फिर भोजन पाया॥

दोहा

कीना भोजन प्रेम से ※ वन फल लख स्वादीष्ट।
निर्मल नीर पिया हर्ष ※ किया याद मन इष्ट॥३६२॥

चौपाई

कहिं वन फल कहिं अन्न सुखारे ※ ऐसे वन में किये गुजारे।
आज्ञा पाय लखन पुर धाये ※ हाट वजार देख हुलसाये॥
वचन ढ़िढ़ोरे का सुन पाया ※ सुन कर मन में विस्मय आया।
राज सभा में लछमण आये ※ देख राव ने वचन सुनाये॥
शत्रु दमन वचन यों बोले ※ कहाँ से आये हो तुम भोले।
लखन तुरत उत्तर अस दीना ※ दूत भरत नृपत मन दीना॥
तुम ने एक ढ़िढ़ोरा फेरा ※ वीच वजारों में भी हेरा।

तब कन्या से व्याह रचाऊँ * शक्ति तुम्हारी को अजमाऊँ॥

दोहा

पूछा भूप बढ़ाय मुद * सुनो लगा कर कान ।
जो प्रहार मेरा सहो * ऐसे हो बलवान ॥३६३॥

चौपाई

सहूँ पाँच तुम्हारे प्रहारा * पूर्ण शक्ति से कीजे वारा ।
पांच वार नृप ने कस कीन्हे * लखन प्रहार सहन कर लीन्हे ॥
दो प्रहार हाथों पर लीने * दो युग बगलों में गह लीने ।
एक प्रहार दाँत से दाबा * जैसे गज गन्ने को चाबा ॥
जित पद्मा लख हुई खुश हाला * लक्ष्मण के डाली बरमाला ।
शत्रु दमन यों कहे हर्षाई * कन्या करी समर्पण आई ॥
लक्ष्मण कहे सुनो यह बाता * विपिन बिराजे हैं मम भ्राता ।
मैं उन्हीं का दास कहाऊं * विन आज्ञा कोई कृत न ठाऊँ ॥

दोहा

शत्रु दमन वन जाय के * देखे राम सुजान ।
कर प्रणाम आधीन हो * लाया निज मकान ॥३६४॥

चौपाई

करी राम की हित से पूजा * रघुबर को समझा नहिं दूजा ॥
भोजन सरस सुरस से सेवा * अन्न आदि नाना विध मेवा ॥
किया अति ही अतिथ सत्कारा * प्रेम परस्पर कर प्रस्तारा ।
कर सत्कार ग्रहण हरि चाले * आगे चरण धरे मनवाले ॥
पहुँचे वंश शैल गिरि धा के * बास तलहटी में किया आके
वंश स्थलपुर में जब आये * राज प्रजा भयभीत दिखाये ॥
जग भय के नरनाथ निवारन * पूछे पुर भय का सब कारन ।
उस नर ने सब हाल सुनाया * सुन राम के मन अस चाया ॥

दोहा

लखन कहन सुन रामजी ❊ गिरि के ऊपर जाय ।
देखा दृष्टि उठाय के ❊ मन में मोद बढ़ाय ॥३६५॥

चौपाई

साधु युगल दृष्टि मे आया ❊ कायोत्सर्ग का ध्यान लगाया ।
राम लखन सीता खुश भारी ❊ कर वन्दना मुदित मन भारी ॥
वीणा कर में राम उठाई ❊ मान मुदित मन खूब बजाई ।
गावें सुमन अलापं धारें ❊ लीला लखन करे कृत सारे ॥
निश जागरण राम ने कीना ❊ मोद सहित हित मन में दीना
अनल प्रभा आया वैताला ❊ मुनियों को दुख देय विशाला ॥
शब्द भयंकर मुख से काढ़े ❊ घोर नाद से जनु घन फाड़े ।
महा मुनिन को कष्ट जो देता ❊ करे उपद्रव अपने हेता ॥

दोहा

सीता को मुनि के निकट ❊ दीनी है बैठाय ।
राम लखन वैताल पै ❊ चले एक संग धाय ॥३६६॥

चौपाई

देखा राम लखन को आते ❊ भागा सुर मन में भय पाते ।
मुनिन को हुआ केवल ज्ञाना ❊ आये सुरन महोत्सव रचाना ॥
बोले राम जोड़ युग पानन ❊ कहो उपद्रव का प्रभु कारण ।
कुल भूषण मुनि ऐसे बोले ❊ कमलानन मुनि अपने खोले ॥
नगरी एक पद्मनी साजै ❊ विजय पर्व जहाँ भूप विराजै ।
अमृत स्वर एक दूत अनूपा ❊ उपभोगा तस प्रिय शुभ रूपा ॥
उदित मुदित दो सुत थे प्यारे ❊ वसु भूति द्विज मित्र सुखारे ।
उपभोग भई द्विज आशक्ता ❊ प्रेम विवश हुई सह सकता ॥

दोहा

चाहे मारन पति को * ऐसा किया विचार ।
भूपति आज्ञा से चली * दूत कही एक वार ॥३१७॥

चौपाई

दून संग वह विप्र सिधारा * वन में जा अमृत स्वर मारा ।
उपभोगा को हाल सुनाया * सुन कर मोद सु मन में पाया ॥
दोनों पुत्रों को अरु मारो * इन्हें मार अपना भय हारो ।
सुन कर पुत्र भये खिसियाने * पितु को रिपु विप्र को जाने ॥
समय पाय द्विज दिया संहारा * मर कर वह म्लेच्छ हुवा भारा ।
मत वर्द्धन मुनि वहाँ पधारे * विजय भूप मन में मुद धारे ॥
धर्म सुना नृप दीक्षा लीनी * संयम ले नृप करनी कीनी ।
उदित मुदित हुय अणगारा * संयम ले निज कारज सारा ॥

दोहा

दौड़ा देखी मुनिन को * म्लेच्छ मारने काज ।
म्लेच्छ पति ने रक्षा करी * सारा यह शुभ काज ॥३१८॥

चौपाई

मुनियों ने संथारा कीना * सुर पुर में जाके पग दीना ।
महा शुक्र हुए देव अपारा * सुर पुर में हुवा जै जै कारा ॥
वसूभूति भव भव भ्रमाया * पुण्य बढ़े मानुष तन पाया ।
तापस बना किया तप भारा * धूमकेतु हुवा देव अपारा ॥
उदित मुदित सुर पुर से आये * रीष्टापुरी जन्म सु पाये ।
अनुद्धर नाम तीसरा भ्राता * मन राखे क्रोध मद माता ॥
रत्न सुरथ राजा पद पाया * दो सुत को युवराज बनाया ।
प्रिम्वदा नृप दीक्षा धारी * देव हुवे करनी कर भारी ॥

दोहा

रत्न रथ भूपाल को * श्री प्रभा शुभ नार ।
अनुरुद्ध ने आशक्त हो * कीना कुटिल विचार ॥३६६॥

चौपाई

त्याग सुपद मन में यह धारा * भूमि लूटना हृदय विचारा ।
रत्नुरथ उस पर चढ़ धाया * कर परास्त उस को ले आया ॥
छोड़ दिया मन में हित जाना * अनुरुद्ध तापस बना सुजाना ।
वह भव भ्रमण करे पुनः जाई * पैदा हुआ मनुष भव मांई ॥
पुनः तापस तप किया अजाना * हुवा देव ज्योतिषी जाना ।
देन उपसर्ग हम को आया * देख तुम्हारा तप घबराया ॥
चित्र रथ रत्नुरथ दीक्षा धारी * अच्युत कल्प हुवे सुर भारी ।
वहाँ से चवि नर भव में आये * क्षेम करन नृप गृह में जाये ॥

दोहा

वो ही दोनों भ्रात हम * दीक्षा लीनी धार ।
कुल अरु देश भूषण युग * लीना कारज सार ॥४००॥

चौपाई

उपाध्याय वर घोष सुजाना * बारह वर्ष पढ़े शुभ ज्ञाना ।
संग गुरु के हर्षा आये * मार्ग में नृप मंदिर पाये ॥
बैठी एक झरोखे नारी * देखत प्रेम हुआ अति भारी ।
राजा को जा सलाह दिखाई * देख भूप मन खुशी समाई ॥
सुन्दर वही नज़र फिर आई * माता से कहि कर चतुराई ।
माता ने सब हाल सुनाया * कनक प्रभा को बहन बताया ॥
यह सुन बहुत लाज मन आई * मन ही मन रहे युग पछताई ।
गुरु समीप आ दीक्षा धारी * गिरि पर आय ममत सब टारी ॥

दोहा

समय उस समय जान के * कहै गरुड़ पति चैन।
महा लोचन सुर प्रेम से * नीचे कर के नैन ॥४०१॥

चौपाई

काम वहुत अच्छा तुम कीना * गिरि पर आन दर्श तुम दीना।
सेवा कुछ ही मुझे, वताओ * आज्ञा कर कुछ कृत कराओ ॥
सुन कर वोले राम सुजाना * काम नहीं कुछ मुझे महाना।
गरुड़पति महालोचन वोला * राम समिप सु आनन खोला ॥
करूँ उपकार तुम्हारे संगा * हृदय मेरा लेय उछंगा ॥
ऐसा कह महलोचन धाया * सुर पुर में जाकर ठहराया ॥
सुन कर वंशस्थल भूपाला * गिरि पर आ लख रूप रसाला।
राम दर्श कर, कीना प्रणामा * पूछा ठाम धाम शुभ नामा ॥

दोहा

सेवा पूजा राम की * नृप कीनी हर्षाय ।
राम की आज्ञा पाय के * शोभित किये वनाय ॥४०२॥

चौपाई

आज्ञा से गिरि को समराया * राम गिरि तस नाम वताया।
आगे राम चरन जव धारे * मन में कुछ रहे मता उपारे ॥
पहुँचे दण्डक वन में जाई * देख चहु लंग नजर उठाई।
ऊँच गिरी की गुफा निहारी * सुन्दर भूमि सु मन में धारी ॥
उसी विपिन में ठहरे रामा * समझा वह अति सुन्दर धामा।
कीना वहीं निवास स्थाना * साता कारी वह वन जाना ॥
इक दिन दो चारण मुनि आये * राम देख उनको हर्षाये।
श्रद्धा सहित वन्दना कीनी * साधु चरण में श्रुति दीनी ॥

दोहा

सीता ने अति प्रेम से * दीना मुनि को दान ।
अन्न नीर इत्यादि से * कीना है सन्मान ॥ ४०३ ॥

चौपाई

रत्न वर्ष्टि सु गिरि पर कीनी * वर्षा वारी धार शुभ दीनी ।
रत्न जटित दो सुर संग आया * आय राम का शीश नमाया ॥
अश्व सहित रथ हरि को दीना * होय प्रसन्न काम यह कीना।
रागी एक पक्षी वहाँ आया * चारण मुनि का दर्शन पाया ॥
मुनि चरणों को जा स्पर्शा * रोग रहित हुआ मन हर्षा ।
हुआ जाति स्मरण ज्ञाना * जिससे मुर्च्छित हुआ निदाना ॥
पृथ्वी पर गिर हुआ बे होंशा * सीता जल डाल किया होंशा ॥
पक्षि निरोग हुआ उस वारी * स्वर्ण मयी वपु पक्षी धारी ॥

दोहा

स्वर्ण मयी पर हो गये * पद्म मणि से पाँम ।
चंचु पक्षां सम हुआ * आकर के उस ठाम ॥ ४०४ ॥

चौपाई

हुआ शरीर प्रभायुत सारा * शीश शिखा का सा आकारा ।
रत्नांकुर की श्रेणी समाना * जटा लगी दीखन विधि नाना ॥
दिया जटायु उस का नामा * कीना बहुत सुगर शुभ कामा ।
राम करी पुच्छा मुनि राया * कहि कारण ऐसा तन पाया ॥
पक्षी गिद्ध हो माँस अहारी * मोटी बुद्धि के अधिकारी ।
पर यह गिद्ध निकट कस आया * जो शरणा मुनि पद का पाया ॥
हुआ शांति शरण पद पाके * हुआ निरोग किस विध यह आके
अति कुरूप था यह वपु वाला * क्षण भर में हुआ रूप रसाला ॥

दोहा

सुगुप्त मुनि बोले तुरत * सुनिये राम सुजान।
साधु सम गम से हुआ * यह सब शुभ परिणाम ॥४०५॥

चौपाई

सागर भये भूप अति भारी * शान्ति मयी सत संगत धारी।
हरिश्चन्द्र भये सुगर नरेशा * सतवादी भये भूमि विशेषा ॥
साधु संग से जग सुख पावे * जो सत संगत को अपनावे।
ऐसे साधु शरण इन पाई * रोग सोग सब गयो विलाई ॥
सती हाथ ले नीर जो डाला * उस प्रभाव हुआ रूप निराला।
सत संगत जग में अति प्यारी * होय जहाँ में अति सुखकारी ॥
प्रथम यहाँ कुम्भ कारक नामा * नगर यहाँ बसता शुभ धामा।
उस की सारी कथा सुनाऊँ * पूर्व भव गिद्ध का बतलाऊँ ॥

दोहा

यही पक्षी उस नगर का * था दण्डक भूपाल।
जित शत्रु राजा हुआ * सावत्थी नर पाल ॥४०६॥

चौपाई

जित शत्रु राजा शुचि ज्ञानी * जिनके सुगर धारनी रानी।
दो सन्तान पुत्र एक कन्या * अति सुखमाल रूप में धन्या ॥
पुरंदरी यशा शुभ नामा * करे सदा आनंद का कामा।
कुम्भकार कद नृप को व्याई * रहे आनंद मना सुखदाई ॥
एक बार दण्डक राजा ने * पालक भेजा निजका जाने।
विप्र दूत जित शत्रु तीरा * पहुँचा करी बात मत धीरा ॥
धर्म विरुद्ध उन वचन उचारा * करन लगा दूषित उस बारा।
स्कंधक नृप सुत ने वहाँ आके * कायल कीना अधिक बना के ॥

दोहा

स्कंधक का सुत पा समय ❋ चर्चा करी बनाय ।
पूर्व युक्तियों सहित सुन ❋ किया निरुत्तर आय ॥४०७॥

चौपाई

सभ्य जनों ने कर उपहासा ❋ पालक लख अति हुवा उदासा।
घटना लख तन क्रोध समाया ❋ कुछ मुख से नहिं कहने पाया॥
जित शत्रु ने कीना रवाना ❋ भेद सभी हृदय का जाना ।
पहुँचा निज भूपत के पासा ❋ कहा न कुछ मन रहे उदासा ॥
स्कंधक ने संयम पद धारा ❋ संग पाँच सौ नृप सुत प्यारा।
मुनि सुव्रत स्वामी के तीरा ❋ तप संयम करे योगिक वीरा ॥
कुंभकार तट जाना चाहा ❋ मुनि सुव्रत से वचन सराहा।
प्रभु के निकट जा आज्ञा माँगी ❋ उत्तर दिया जगत् के त्यागी ॥

दोहा

जाने से होगा तुम्हें ❋ मरणान्तिक क्लेश ।
और आप मन से चलो ❋ जानो करे विशेष ॥४०८॥

चौपाई

खन्धक मुनि पुनःवचन उचारा ❋ उत्तर एक और उस वारा ।
संकट में हम होय अराधक ❋ या कोई हो जाय विराधक ॥
उत्तर दिया सु अन्तरयामी ❋ तुमरे सिवा सब हो अनुगामी।
स्कंधक मन में अति खुश हुआ ❋ तो समझूँ प्रण पूरण हुआ ॥
आज्ञा पा मुनि किया विहारा ❋ चले पाँच सौ मुनि परिवारा।
पहुँचे कुम्भकार कट पासा ❋ जा उपवन में किया निवासा ॥
पालक दृष्टि साधु पर आई ❋ प्रथम वैर प्रगट हुवा आई।
इस कारण उसने तत्काला ❋ सन्तों के पथ टन्टा डाला ॥

दोहा

उपवन में शस्त्र दिये * पालक ने गड़वाय ।
समय देखता रहा पुनः * वार वार मन लाय ॥४०९॥

चौपाई

दण्डक चले संग परिवारा * करन वन्दना हैं तप धारा ।
देख साधु को शीश झुकाया * सुनी देशना मन हर्षाया ॥
सवा कर महलों में आया * मन में अति आनंद मनाया ।
पालक ने जब समय निहारा * नृप को संग ले अलग सिधारा ॥
स्कंधक कपटी है अति भारा * शूरवीर संग ले पग धारा ।
योद्धा सबरे साधु बनाय * शस्त्र भूमि तल में गड़वाये ॥
तुम को मार छीन ले राजा * फेर करेगा मन का काजा ।
आप स्वयं चल कर लें जाँचा * नहिं साँच को किञ्चित आँचा ।

दोहा

सुन कर पालक के वचन * राजा हुवे तैयार ।
मुनियों के स्थान में * गड़े पड़े हथियार ॥४१०॥

चौपाई

शस्त्र देख नृप मन अस धारी * मंत्री को आज्ञा उस वारी ।
बिन सोचे भूपत उच्चारा * मन में हुआ दुख अपारा ॥
तुमने कपट भेद पहिचाना * मैंने तो सत साधु जाना ।
अब इस दुर्मत को जो चाओ * कर मेरे यह वचन निभाओ ॥
योग्य दण्ड तुम इस को दीजे * मेरे पास खबर नहिं कीजे ।
मैंने हुक्म दिया एक वारा * मत पूछना अब आन दुवारा ॥
इस प्रकार नृप आज्ञा पाई * मन में पालक बहु हर्षाई ।
यंत्र पेलने का बनवाया * लेजा कर उद्यान रखाया ॥

दोहा

श्री स्कंधक आचार्य के ※ सन्मुख यह अन्धेर।
साधु लगा पिलवायने ※ तनिक करी नहीं वेर ॥४११॥

चौपाई

इक-इक मुनि को यंत्र में डाले ※ पैल-पैल पुनः छार निकाले।
पीलते समय स्कंधक आचार्य ※ आराधना करी अनिवार्य ॥
सव पील चुका मुनि परिवारा ※ स्कंधक ने यों वचन उच्चारा।
वालक मुनि को पीछे डालो ※ पहिले मेरा तेल निकालो ॥
इतना कहा मानिये पालक ※ सोच समझ सन्ता के घालक।
पालक ने यह उत्तर दीया ※ वही करूँ जो चाहे जीया ॥
पालक दुष्ट एक नहीं मानी ※ वालक मुनि को पटका घानी।
सारे मुनि पा केवल ज्ञाना ※ मुक्ति गये हुआ निर्वाना ॥

दोहा

जव स्कंधक आचार्य ने ※ किया नियाणा जाय।
जो फल तपस्या का मिले ※ वदला लूँ मैं आय ॥४१२॥

चौपाई

हुवे देव जा अग्निकुमारा ※ लखा ज्ञान से अनर्थ सारा।
रजोहरण रक्तमयी पाया ※ पंजों में पक्षिणी दवाया ॥
पटका महल भूप के जाई ※ रानी ने आ लिया उठाई।
रजोहरण भ्रात का जाना ※ कपट सभी नृप का पहिचाना ॥
क्रोध वहुत रानी को आया ※ कुल देवी ने तुरत उठाया।
मुनि सुव्रत के सन्मुख आई ※ दीक्षा ले ली मन हुलसाई ॥
अग्नि कुमार प्रकोपा भारा ※ दण्डक पालक सहित पजारा।
भस्म नगर कर दीना सारा ※ वचा नहीं कोई परिवारा ॥

दोहा

नगर हुआ ऊजड़ सभी * जंगल हुवा महान ।
दण्डकवन के नाम से * जाने सभी जहान ॥ ४१३ ॥

चौपाई

दण्डक नृपत जगत् भ्रमाया * पंछी की योनी में आया ।
गंधनाम रोग हुवा भारी * कष्ट वहुत पाया इस वारी ॥
दर्शन आज हमारे पाये * जाति स्मरण ज्ञान उपाये ।
पग परसत सव रोग नसाया * हुई स्वच्छ निरोगी काया ॥
पूर्व भव पक्षी सुन पाया * आनंद मन में वहुत मनाया ।
पुन मनि चरणों में सिर दीना * अंगीकार श्रावक व्रत कीना ॥
मुनि ने मन इच्छा पहिचानी * त्याग रुचा मन में अस जानी ।
जीवघात पुनः माँस अहारा * निश भोजन त्यागा इक वारा ॥

दोहा

दीना है आदेश पुनः * पंछी को समझाय ।
राम लखन के पास तू * रहियो मोद वढ़ाय ॥ ४१४ ॥

चौपाई

वोले राम परम हुलसाई * यही पक्षि है मेरा भाई ।
करी वंदना मुनि चरनों में * पुनः पुनः पग कंज करनों में ॥
मस्तक मुनि के चरनों नमाया * नर तन का शुभ लाभ उठाया ।
मुनि पथ पुनः आकाश सिधारे * राम कुटि के तट पग धारे ॥
दिव्य यान में हो असवारा * सैर करन रघुवर पग धारा ।
सीता लखन लिये हरि साथा * संग जटायु धार्मिक भ्राता ॥
अन्य-अन्य कई स्थान निहारे * वड़े वड़े कानन पग धारे ।
कानन देख राम खुश भारे * आगे चले मुदित मन धारे ॥

दोहा

लंक पयाला अधि पति ॥ खर नामे भूपाल।
स्वरूपनखा अर्द्धंगनी ॥ सुन्दर रूप रसाल ॥४१५॥

चौपाई

तिन का शम्बुक सुगर कुमारा ॥ विद्या साधन को उस वारा।
सूर्य हंस खड्ग साधन को ॥ विद्या मन में आराधन को॥
दण्डकवन में शम्बुक आया ॥ देख विपिन शुचि ध्यान लगाया॥
कौंच नदी के जाय किनारे ॥ वंश भिटों क लिये सहारे॥
भूमि शुद्ध देखी उस वारी ॥ शुद्धात्मा जती ब्रह्मचारी।
पग बाँधे ह वड की डालो ॥ औंधा मुख कर लटका हाली॥
बारह वरस चार दिन बीते ॥ तीन दिवस में हो मन चीते॥
समय सुविद्या सिद्ध का आया ॥ सूर्य हंस खड्ग चमकाया॥

दोहा

लखन विपिन में घूमत ॥ आ निकले उस ठाम।
वंश भिटे में हो रहा ॥ सुंदर तेज ललाम ॥४१६॥

चौपाई

लखन तेज लख बढ़े अगाड़ी ॥ खाँडो लियो उठाकर काढ़ी।
शस्त्र अपूर्व देख हुलसायों ॥ लेन परीक्षा मन में चाया॥
वंश जाल पर दियो चलाई ॥ रक्त की धार दृष्टि में आई।
आगे बढ़ कर तुरत निहारा ॥ शीश देख पछताया भारा॥
निष्कारण इसको मैं मारा ॥ यह अनर्थ हुआ अति भारा।
वड़ से बँधा शरीर निहारा ॥ लक्ष्मण ऐसा सुमन विचारा॥
सिद्ध कर रहा था बन्धन डाली ॥ राम निकट पहुँचे तत्काली।
राखा खड्ग समीपे जाई ॥ सारी व्यथा जाय समझाई॥

दोहा

भाई तेने जान कर ॥ ली उपाधी उठाय।

खान्डे को आकर लिया * तुम ने हाथ बढ़ाय ॥४१७॥

चौपाई

स्वरूपनखा ने समय निहारा * विद्या सिद्धि सुमन विचारा ।
पूजा पानी अन्न अनूपा * लेकर चली विपिन शुभ रूपा ॥
शीश पड़ा भूमि पर पाया * देख शीश मन आरत छाया ।
किसने आकर यह कृत कीना * सोच बहुत अपने मन दीना ॥
वत्स-सत्स कर रुदन मचाया * मन में अपने क्रोध बढ़ाया ।
भूमि पर पग चिन्ह निहारे * आई लखती चिन्ह सहारे ॥
आकर देखे सीता रामा * देख राम भई आतुर कामा ।
काम बाण हृदय में लागे * आरत सोच सुमन से भागे ॥

दोहा

देखा आकर राम को * तजा भेष विकराल ।
शोभायुत सुन्दर सुगर * धारा रूप रसाल ॥४१८॥

चौपाई

नाग कन्यका के अनुमाना * सुन्दर रूप स्वरूप सुहाना ।
स्वरूपनखा रघुवर तट आई * देख राम मूरत हुलसाई ॥
भद्रे सुनो लगाकर काना * कैसे हुआ इस वन में आना ।
दारुण दण्डक अरण्य निदाना * यम राजा के मंद्र समाना ॥
सुन कर उत्तर देने लागी * बात बना मन कहने लागी ।
अयवन्ती नृप मेरा ताता * कहूँ आप सन्मुख सब बातां ॥
खेचर मुझ को हर कर लाया * दण्डक वन में लाय टिकाया ।
देख मुझे विद्याधर दूजा * पहिला विद्याधर लख धूजा ॥

दोहा

बोले ले कृपान कर * सुन मूरख नादान ।
रतनहार जिम चील ले * उड़े तुरत असमान ॥४१९॥

चौपाई

ऐसे ही यह विष तू लाया ※ काल तेरा मैं बन कर आया ।
युद्ध हुआ दोनों में भारा ※ शस्त्रों का होता झनकारा ॥
भिड़े मत्त गजराज समाना ※ दोनों लड़ दे दीना प्राणा ।
तब से इधर उधर मैं डोलूँ ※ मानुष नहीं बरन किससे बोलूँ ॥
मार्ग में अनभिज्ञ सुनाऊँ ※ किससे कहूँ कहाँ मैं जाऊँ ।
आज आपके दर्शन पाये ※ हृदय में आनंद मनाये ॥
करो कामना मेरी पूरी ※ जो मैं बनूँ भाग्य की भूरी ।
मेरे साथ विवाह तुम कीजे ※ विनय धार मेरी चित्त लीजे ॥

दोहा

महत्पुरुष के निकट जा ※ करे प्रार्थना कोय ।
उस याचक की याचना ※ कभी वृथा नहीं होय ॥४२०॥

चौपाई

सुन कर बातें किया विचारा ※ बुद्धिवान राम मन धारा ।
लक्ष्मण राम प्रेम नयनन से ※ कहा परस्पर शुभ बैनन से ॥
माया की त्रिया यह कोई ※ या नाटकनी होई कोई ।
कूट कपट कर छलने आई ※ रिझा रही नाटक दिखलाई ॥
हास्य सहित रघुवर कहे बेना ※ मुझे चाह त्रिया की है ना ।
मैं हूँ त्रिया सहित सुजाना ※ स्त्री रहित लखन बलवाना ॥
निकट आप लक्ष्मण के जाओ ※ उनको मन का मता सुनाओ ।
बोली लक्ष्मण के तट जा के ※ रही अपनी सु विनय सुना के ॥

दोहा

उत्तर लक्ष्मण ने दिया ※ सुनो लगा कर कान ।
मन में खूब विचार लो ※ सच-सच करूँ बयान ॥४२१॥

चौपाई

प्रथम पूज्य भ्राता पर धाई * उन पर नियत जाय डिगाई।
मुझ को तुम हो पूज्य समाना * सुनो वचन अब धर के ध्याना॥
ऐसी वात न मुझे सुनाओ * आप राम भ्राता पर जाओ।
देख याचना खंडित भारी * अपमानित मन किया विचारी॥
रूप भयंकर कर के धाई * जनक सुता पर आ धुधियाई।
लक्ष्मण देख क्रोध अति वाढ़ा * खाँडा तुरत म्यान से काढ़ा॥
नाक विहीन करन मन चाया * राम तुरत लक्ष्मण समझाया।
त्रिया पर नहीं हाथ उठावें * जो सच्चे क्षत्री कहलावें॥

दोहा

कर निशान प्रथक करी * भ्राता आज्ञा मान।
धक्के देकर विपिन से * दी निकाल रीस आन॥४२२॥

चौपाई

लंक पयाला तुरत सिधारी * खर के सन्मुख जाय पुकारी।
शम्बुक का सिर खण्डित कीना * नाक निशान मेरा कर दीना।
सुन कर क्रोध किया अति भारी * सेना तुरत सजाई सारी।
खेचर संग में चौद हज़ारा * खर ले अपने संग सिधारा॥
दण्डक वन में घेरा जा के * मार-मार रहे वचन सुना के।
पर्वत पिड़ित के हित जैसे * खर जाता बस चढ़ के ऐसे॥
लखा राम ने दल को आते * राम तुरत उठ धनुप उठाते।
देख लखन ने धनुप उठाया * अनुशासन भ्राता से चाया॥

दोहा

आज्ञा दीजे बन्धु अब * कीजे नहीं विचार।
मैं निश्चर की सैन को * करूँ क्षिणक में क्षार॥४२३॥

चौपाई

जीतो सेना रिपु की जाके * वैरी को दो तुरत भगा के।
जो सहायता अपनी चाओ * सिंहनाद कर तुरत बुलाओ॥
मैं हर समय तुम्हारे पासा * सुन कर शब्द राखो विश्वासा।
लक्ष्मण धनुष उठा कर चाले * भू भूधर सब थर-थर हाले॥
क्रोध सैन लख कर के आया * हाथ लखन ने धनुष उठाया।
की टंकार गगन थर्राया * खेचर दल में भय आ छाया॥
जैसै गरुण व्याल को मारे * मार खेचरन भू पर डारे।
देख मार खेचर घबराये * इत उत देख भागना चाये॥

दोहा

भागी है रण से तुरन * गई लंक दरम्यान।
रावण नृप से जाय के * किया हाल सब व्यान॥४२४॥

चौपाई

लखन राम दो पुरुष अजाने * दण्डक वन आये हैं स्याने।
तेरे भाणेज को उनने मारा * चिन्ह नाक मेरी पर डारा॥
तब बहनोई चढ़ कर धाया * जाकर उनने युद्ध मचाया।
चौदह हज़ार खेचर अति बाँके * जो रण में अधिक लड़ाके॥
उन से करे लखन संग्रामा * जमा एकला रण के धामा।
चल कर आप उन्हें सर कीजे * रण भू में चल कर पग दीजे॥
रावण कहे कौन यह वाता * होती सैन्य संग तो जाता।
दो मनुष्यों पर मैं क्या जाऊँ * क्या बल पौरुष उन्हें दिखाऊँ॥

दोहा

शूर्पनखा ने सोच कर * चली दूसरी चाल।
सीता की तारीफ से * कर दीना वाचाल॥४२५॥

चौपाई

राम सिया संग करे विलासा * लक्ष्मण का उसको विश्वासा।
सीता सुन्दर अधिक अनूपा * लावण्यता की सीम स्वरूपा॥
सुरी-नरी नहीं है कोई समाना * दूजी तिय पर रूप न आना।
असुरों की तिय दासी योगा * उसे लेन का कर उद्योगा॥
तीन लोक नहीं सुंदर ऐसी * अकथनीय यह सिय है जैसी।
वाणी वरन करें क्या उसका * रूप सिन्धु उमड़ा है उसका।
जितने रत्न आपके हेता * स्त्री रत्न हो तेरे निकेता।
यदि उसे तू प्राप्त कर लावे * तो तू मन वाँछित फल पावे॥

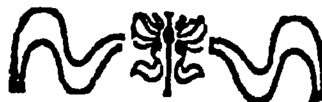
दोहा

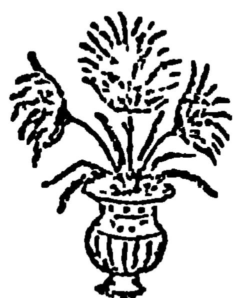
सुन कर यह सुन्दर वचन * रावण कर के ध्यान।
आकर तुरत सवार हो * बैठा पुष्पक यान॥ ४२६॥

चौपाई

दिया विमान उड़ा असमाना * चला तुरत वनी स्थान समाना
बैठे लखे राम को वन में * भय व्यापा रावण के मन में॥
रावण देख दूर हो जाता * अग्नि देखी जिम सिंह डराता।
चित्त में रावण रहा विचारी * कैसे हरूँ यह सुन्दर नारी॥
तेजवान नर इसके तीरा * सन्मुख इस के बन्धे न धीरा।
अविलोकन विद्या उर धारी * निज मन में दशकंठ निहारी॥
पूर्वार्द्ध रामायण यह सारी * 'चौथमल' कहे आनंद कारी।
अब उत्तरार्द्ध सुगर मन लाओ * शील सु महिमा हृदय जमाओ॥

* पूर्वार्द्ध रामायण समाप्तम् *





आदर्श रामायण

उत्तरार्द्ध





आदर्श रामायण

उत्तरार्द्ध

दोहा

श्री वाणी भगवती को * वार वार सिर नाय ।
रामायण उत्तरार्द्ध में * कंठ विराजो आय ॥४२४॥

गायन

[तर्ज—हो वन्दन तने मात भारती]

प्रेम पय से पदाम्बुज पखारती * हो दया माता न रूप निहारती ॥
वीतराग देशन चार प्रकरे * आगम जिन्हें हैं पुकारते ।
दान शील तप भावना * प्यारे जो पुर्ष हृदय में धारते ॥
दान दया से हया से मया से * पूरण सु प्रेम प्रचारती ॥ हो० ॥
तप तो हो काया से भावना भावे * शील की महिमा वतावो ।
चंचला चित को थिर कर दिखावो * खाँडे की धार चलावो ॥
प्रीति व रीति से ज्ञानकी नीतिसे * 'चौथमल' उतारे है आरती हो०

दोहा

सहज अगन से निकलना * सागर करना पार ।
सर्प खिलाना सहज है * कठिन शील आचार ॥४२५॥

चौपाई

अविलोकन विद्या उर धारी * निज मन में दशकंठ संभारी ।
हुई उपस्थित विद्या आ के * रावण के सम्मुख तब धाके ॥

रावण देख हर्ष अति पाया ❋ विद्या को यह वचन सुनाया।
कारज आज सार तू मेरा ❋ इस कारण किया स्मरण तेरा ॥
पूरा काज आज तू कर दे ❋ आशा से मम गोदी भर दे।
तेरे सनमुख कुछ न काजा ❋ तुझ से कहे लंकपति राजा ॥
इस कारण ही तुझ को साधा ❋ बहुत परिश्रम से आराधा ।
कारज पूरण करो हमारा ❋ तेरा ही अब यहाँ सहारा ॥

दोहा

सीता के हर लैन में ❋ कर सहायता आय ।
यह मैं तुझ से चाहता ❋ बतला कोई उपाय ॥४२६॥

चौपाई

विद्या कहे सुनो दे काना ❋ काज नहीं यह आप समाना।
शील रत्न को मती गँवाओ ❋ गये रत्न को पुन नहीं पाओ ॥
होय शील से अनल सुनीरा ❋ व्याल माल हो दैन सुधीरा।
बाघ शील से होय बिलाई ❋ संकट सारे जायें पलाई ॥
उत्सव होय विघ्न अस्थाना ❋ दुर्जन होय सज्जन समाना ।
सिन्धु होय तालाब सुखारा ❋ अटवी महल होय सुख सारा॥
निंदक हो उपमा के लायक ❋ शील से हो भूप हो निज पायक
शीलवान् के जै जै कारे ❋ होय सदा आनंद सु भारे ॥

दोहा

चैन चित्त पावे नहीं ❋ छण छण छीजै देह ।
चंद्र रहे नित बारवें ❋ जिन पर तिय से नेह ॥४२७॥

चौपाई

करो भूप मत अनुचित कामा ❋ इससे होय जगत बदनामा ।
सतियों माँहि शिरोमणी सीता ❋ शीलवती सतवती पुनीता ॥
शिक्षा मेरे हृदय नहिं आवे ❋ सीता बिन नहिं मन सुख पावे

राम सामने सीता कैसे ❊ जाय नहिं कोई कारण ऐसे ॥
सर्प मणी को सुलभ लेना ❊ दुर्लभ राम निकट पग देना ।
सुरपति भी नहिं सके उठाई ❊ राम सामने सीता आई ॥
तुझ को एक उपाय बताऊँ ❊ लक्ष्मण का संकेत जताऊँ ।
सिंहनाद का वचन सुनाया ❊ सो रावण के मन में भाया ॥

दोहा

दशकंधर आज्ञा करी ❊ सिंहनाद कर जाय ।
लक्ष्मण की आवाज हो ❊ सुन ले श्रवण लगाय ॥४२८॥

चौपाई

कीना जाके विद्या नादा ❊ लक्ष्मण सदृश काज को सादा।
सुन अवाज चौंके रघुराई ❊ लक्ष्मण को सके कौन हराई ॥
कौन मात ऐसा भट जाया ❊ जिसने लक्ष्मण वीर हराया ।
कूटे खर को खर की तिरिया ❊ यह रघुनाथ कहैं हर विरियां॥
वार वार सुन कर आवाजा ❊ सीता कहे सुनो रघुराजा ।
लक्ष्मण पे संकट दिखतारे ❊ वार वार वह तुम्हें पुकारे ॥
राम कहे सीते समझाऊँ ❊ तुम्हें त्याग मैं कैसे जाऊँ ।
यहाँ निशिचर हैं कपटाचारी ❊ इनका नहिं विश्वास है प्यारी॥



सीता-हरण



दोहा

सीता को तज चल दिये ॐ रण में राम सुजान ।
धनुष बाण ले तुरत ही ॐ पहुँचे रण दरम्यान ॥ ४२६ ॥

बहर खड़ी

कुछ समय कुसमय नहीं देखा ॐ वज्रावत तुरत उठाया है ।
वनपति की तरह निडर रघुवर ॐ संग्राम भूमि में आया है ॥
जो भविष्य होय वह होय अवश ॐ होनी ने रंग दिखाया है ।
देखी है अकेली सीता को ॐ दशकंठ सामने आया है ॥
बलात् उठाना चाहता है ॐ सीता की नजर घूम आई ।
कह करके राम राम सीता ॐ अति दीर्घ सुरों से चिल्लाई ॥
रोती चिल्लाती सीता को ॐ दशकंठ विमान विठाया है ।
जैसे बटमार भागता हो ॐ ऐसे ही लेकर धाया है ॥

दोहा

तुरत जटायु आ गया ॐ करता हुवा पुकार ।
यह जड़ बुद्धी ले चला ॐ सीता को इस वार ॥ ४३० ॥

बहर खड़ी

जिसतरह अरुण पुष्पों की माल ॐ फल समझ स्वान ले जाता है ।
इसी तरह विन राम के यहाँ ॐ से सिय को हरना चाहता है ॥
रख याद जटायु जब तक है ॐ सीता को नहिं लेजा सकता ।
यह खाद्य शेर का है, इसको ॐ नहिं स्यार कभी है खा सकता ॥
तू दे उतार सीता जी को ॐ जो अपना भला चाहता है ।

अब तक नहिं कुछ भी बिगड़ा है ❊ क्यों नाहक आब बहाता है।
ऐसा कह वीर जटायु ने ❊ पंजों से तुरत वार किया ।
दशकंठ भूप अभिमानी का ❊ पल भर में मान क्षार किया ॥

दोहा

नाखूनों की तीक्षणी ❊ दिया जटायु मार ।
उर स्थल दशकंठ का ❊ दीना तुरत विदार ॥४३१॥

बहर खड़ी

जैसे भूमि कृपक हल से ❊ कारन के हेत चीरता है।
यों पंजों से वीर जटायु ❊ वह दिखलाता रहा वीरता है॥
रावण ने दारुण क्रोध किया ❊ अरु खड्ग हाथ में लीना है।
होकर सकोप दशकंधर नृप ❊ पक्षी पर वार पुनः कीना है ॥
बचाय पक्षी ने वार दिया ❊ फिर अपना वार चलाया है ।
लीना उतार कर शीश मुकट ❊ अरु भू पर तुरत गिराया है॥
मारा है चपेटा पुनः उड़ कर ❊ मुख घायल तुरत बनाया है ।
पीछे नहिं हटता है किंचित ❊ रावण के सन्मुख धाया है ॥

दोहा

खड्ग उठा दशकंठ ने ❊ कीना पंख विहीन ।
फड़ फड़ाय कर गिर पड़ा ❊ होय जटायु दीन ॥४३२॥

गायन

[तर्ज-कव्वाली]

तुरत रघुनाथजी आकर ❊ बचा लोगे तो क्या होगा ॥
निशाचर ने ग्रही मुझ को ❊ छुड़ा लोगे तो क्या होगा॥टेक॥
मुझे मालूम न थी इसकी कि ❊ यह देश प्रपंची है ॥
धोका देके ले जाता है ❊ छुड़ा लोगे तो क्या होगा ॥१॥

चिड़िया को पकड़ ले बाज ※ इस मानिंद करी उसने ।
अरे इस नीच पापी को ※ हटा दोगे तो क्या होगा ॥२॥
सुनो लक्ष्मण मेरे देवर ※ तुम्हारी भाभी पर आकर ।
पड़ी आफत बड़ी भारी ※ मिटा दोगे तो क्या होगा ॥३॥
दयालु कोई दया करके ※ मेरी तकलीफ की बातें ।
अभी श्रीराम पे जाकर ※ सुना दोगे तो क्या होगा ॥४॥
तन से ज़ेवर गिराती हूँ ※ आना इस खोज को पाकर ।
मुझे निराधार को आधार ※ बँधा दोगे तो क्या होगा ॥५॥
'चौथमल' कहे सुनो सज्जन ※ सिया रो रो पुकारे है ।
कोई रघुनाथ से मुझ को ※ मिला दोगे तो क्या होगा ॥६॥

बहर खड़ी

पुष्पक विमान दशकंधर ने ※ ऊंचा अस्मान उड़ाया है ।
पूरण कर तुरत मनोरथ को ※ अति शीघ्र गमन कर धाया है ॥
सीता पुकारती जाती है ※ रोती चिल्लाती जाती है ।
आकाश धरती को क्रंदन से ※ तुरत रूलाती जाती है ॥
लक्ष्मण देवर संग्राम तजो ※ आकर के मुझे छुड़ाओ तुम ।
हे राम कहीं पर जो हो यदि ※ निशिचर से आन बचाओ तुम ॥
भामंडल वीर कहाँ तुम हो ※ जाता है लिये यह सीता को ।
अरु पूज्य पिता लीजे बचाय ※ इस अपनी सुता सु प्रीता को ॥

दोहा

भनक पड़ी है कान में ※ रत्नजटी के जाय ।
खेचर मन सोचन लगा ※ निज मन में अकुलाय ॥४२३॥

बहर खड़ी

यह रुदन राम-पत्नी का है ※ ऐसा विचार मन में किया ।
यह शब्द किधर से आता है ※ इसके ऊपर फिर ध्यान दिया ॥

आता है रुदन सिन्ध तट से ः इस लिये जान यह पड़ता है।
धोखा दे राम सुलछमण को ः सीता ले आगे बढ़ता है ॥
दशकंठ हरण कर सीता को ः बैठा विमान जाता दीखे ॥
सीता करती जाती है रुदन ः वह उसको धमकाता दीखे ॥
इसलिये उचित है सीता को ः जाकर के छुड़वाना चहिये।
लेजाकर अपने संग तुरत ः रथनुपुर पहुँचाना चहिये ॥

दोहा

ऐसा सोच विकट सुभट ः लीना खड्ग निकाल।
दाँत पीस दशकंठ पर ः टूटा है तत्काल ॥४३४॥

बहर खड़ी

तलवार खींच कर रत्नजटी ः रावण के ऊपर टूटा है।
जिस तरह मृगेश गजेन्द्रों पर ः दशकंठ का मन भव लूटा है ॥
देखा है रत्नजटी आते ही ः रावण मन में मुसकाया है।
विद्या बल से उसकी सारी ः विद्या को छीन गिराया है ॥
जैसे हो पंछी पंख रहित ः वही गति उस की कर डाली।
विद्या विहीन कर पटक दिया ः अपने सिर से आफत टाली ॥
कम्पू गिरि पर गिर गया तुरत ः लाचार होय कर रहन लगा।
वह रत्नजटी भय से वन का ः मारग छुप कर गहन लगा ॥

दोहा

बैठा जाय विमान में ः मारग ले आकाश।
पार समुंदर कर रहा ः देखा कर के ख्यास ॥४३५॥

बहर खड़ी

उस समय सिया से कहन लगा ः कामिन तू मान कहा मेरा।
खेचर भूचर का स्वामी है ः वह दास बना चाहे तेरा ॥

तू पटरानी पद को पाकर अब * सब पर हुक्म चलावेगी।
कर कर के रुदन वृथा अपने * मन को विह्वल कर डालेगी॥
तज शोक हरष कर बात करो * इस से ही सुख तुम को होगा।
मैं विनय कर रहा हूँ तेरी * कुछ इस पर असर ज़रा होगा॥
वह मंद भाग्य वाला रघुवर * जिस से तेरा विधि संग किया।
अनुचित वह जान मैंने भामिन * संबंध तुम्हारा तोड़ दिया॥

दोहा

उचित कृत मैंने किया * दिल में करो विचार।
करो प्रेम मुझ से प्रिया * अपने मन हित धार॥४३६॥

गायन

[तर्ज—बिना रघुनाथ के देखे नहीं दिल को करारी है]

सिवा सीता तेरे बोले * नहीं दिल को करारी है।
कहे रावण जरा तो देख * क्या मरजी तुम्हारी है॥टेर॥

अठारह सहस्र मम रानी * करूँगा सब में पटरानी।
मान ले बात सुलतानी * तेरी ही इंतज़ारी है॥१॥

देखो लंका की अब बहार * पहिनो मणि मोतियों का हार।
सजो दिल चाहे सो सिंगार * सब हाज़िर तैयारी है॥२॥

फँसी आ मेरे कबज़ में * कहीं अब जा नहीं सकती।
मेरे मिजाज के आगे * क्या ताकत तुम्हारी है॥३॥

राम लक्ष्मण तो बनवासी * नहीं संग फौज जिनके है।
देख ले राजबल मेरा * खड़ी कैसी सवारी है॥४॥

कहे यों 'चौथमल' ज्ञानी * तजो व्यभिचार की बातें।
मगर जो थी सती सच्ची * तो रह गई बात सारी है॥५॥

बहर खड़ी

ओ देवि! दास को सेवा में * अब तो अपनी स्वीकार करो।

पति की तरियां से मान मुझे ※ मेरा कहना सरसार करो ॥
जब दास आपका सुन भामिन ※ दशकंठ भूप हो जायेगा ।
सारे खेचर खेचरियों पर ※ फिर तव शासन जम जायेगा ॥
यह शब्द सुनाये रावण ने ※ निज शीश चरण में रख दीना ।
हर तरह रहा परचा उनको ※ हृदय में भाव यही कीना ॥
सीता ने अन्य पुरुष लख कर ※ अपने युग पैर हटा लीने ।
मुख पर कर क्रोध दिया उत्तर ※ सम्बोधन शब्द कटुक कीने ॥

गायन

[तर्ज–न इधर के रहे न उधर के रहे]

अरे जुल्मी क्यों जुल्म पे बान्धे कमर ।
सतियों का सताना अच्छा नहीं ॥

जरा मन में सोच क्या इसमें मजा ।
दिल किस का जलाना अच्छा नहीं ॥ टेक ॥

मेरे रूप को देख आशिक हुआ ।
आक़बत का जरा भी न ख्याल किया ॥
तेरे हाथों से मुँह को क्यों तू काला करे ।
यह पाप दिवाना अच्छा नहीं ॥ १ ॥

न भला हुआ न होगा कभी ।
परनारी पे तूने जो ध्यान दिया ॥
रहे दूर न हाथ इधर को तू ला ।
धर्म किसी का घटाना अच्छा नहीं ॥ २ ॥

पूर्व पाप किया जिस से छूटे पिया ।
उस गम से भी शाद न हुआ जीया ॥
कर जोड़ी कहूँ प्रभु ऐसा समय ।
दुश्मन के भी सर आना अच्छा नहीं ॥ ३ ॥

चाहे चाँद हो गर्म या शीत रवि।
समुद्र मर्याद भी भङ्ग करे॥
तो भी मन तो गिरिवत् डुलता नहीं।
नाहक दिल ललचाना अच्छा नहीं॥ ४॥

क्या मजाल जो कोई मेरा शील हने।
मुझे मरने का खौफ ज़रा भी नहीं॥
मैं तो अच्छे के लिये जिताती तुझे।
दाग कुल के लगाना अच्छा नहीं॥ ५॥

यह काम हराम बदनाम करे।
अरे मान कहा अरे मान कहा॥
कहे 'चौथमल' समझावे सिया।
नहीं ध्यान में लाना अच्छा नहीं॥ ६॥

दोहा

बोली है सीता सुगर * कर के क्रोध महान्।
लंपट पन का अब तुझे * जल्दी होगा भान॥४३७॥

बहर खड़ी

लम्पट छल कपट तेरा अब * सब आगे तेरे आ जायेगा।
निर्दयी निर्लज्ज निर्हया तू * फल इसका जल्दी पा जायेगा॥
परतिया कामना का तुझ को * फल मृत्यु हो कर मिल जाये।
यह कभी नहीं हो सकता है * बिन भान के पंकज खिल जाये॥
यह सुन कर रावण कहन लगा * मेरा तप तेज निहार ज़रा।
मैं भान से ज्यादा तेजवन्त * ले देख सु मन में धार जरा॥
क्यों मति मतवारी हुई तेरी * जुगनू से पुष्प खिलाता है।
कामान्ध मूर्ख मति हीन सोच * खद्योत से भान मिलाता है॥

दोहा

जाकर ठहरा लंक में * पुष्पक वायुयान।

मंत्री सारण आदि बहु * आ पहुँचे बलवान ॥४३८॥

बहर खड़ी

देखा है संग सिया को जब * सामंत किया उत्सव भारी।
उत्साही साहसी बल धारी * त्रियखंड अधिपती सुखकारी॥
नंदनवन के अनुमान विपिन * लंका में पूरब दिश प्यारा।
सुर-क्रीड़ा स्थल के से समान * सीता को जाकर बैठारा॥
खेचरों की रमणी जहाँ रमण * कर रमण रात दिन करती थीं।
नाना प्रकार के सुख भोगें * सुख मय आयुष मन धरती थीं॥
उस देव रमण उपवन में जा * सीताजी को ठहराया है।
इक अरुण अशोक विटप नीचे * बैठा कर मन हुलसाया है॥

दोहा

बैठी हैं सीता सती * तल अशोक के आन।
शोक सहित श्री जानकी * मस्तक धर के पान ॥४३९॥

बहर खड़ी

उस समय सिया ने नियम किया * सूचना न जब तक पाऊँगी।
श्री राम लखन की क्षेम कुशल * मिल जाय तो भोजन खाऊँगी॥
जब तक नहिं समाचार मुझको * श्री राम लखन का मिले कहीं।
तब तक नहिं भोजन पान करुं * जब तक हृदय नहिं खिले कहीं॥
भेज दिनी रावण ने रक्षिका * त्रिजटा आदि सुखभारी सी।
निश दिवस पास रहने वाली * बसु पहर रखें रखवारी सी॥
यह बंदोवस्त कर दशकंधर * अपने महलों को धाया है।
मन्दोदरी आदि सुन्दरी जहाँ * उस ही मंदिर में आया है॥

दोहा

लक्ष्मण के तट रामजी * करके शीघ्र पयान।
आये देखा भ्रात को * करता युद्ध महान ॥४४०॥

बहर खड़ी

लक्ष्मण लखा निकट राम * अपने मुख से शुभ शब्द उचारा है
हे आर्य बंधु ! तुम क्यों आये * यह क्या चित बीच विचारा है॥
इस निर्जन वन में सीता को * किस तरह अकेली तज आये।
क्या कारण ऐसा था भ्राता * जो पास दास के भज आये॥
सुन सिंहनाद तेरा लक्ष्मण * आया सहायता करने को।
हर तरह सहायक हूँ तेरा * संकट तुझ पर से हरने को॥
नहीं सिंहनाद मैंने कीना * प्रपंच किसी ने धारा है।
पाछे जाओ अति शीघ्र आप * धोखा इस में अति भारा है॥

दोहा

दल बल कर संहार मैं * आता हूँ तत्काल।
आप पधारो शीघ्र अति * देखो जाकर हाल ॥४४१॥

बहर खड़ी

इस सिंहनाद के होने से * निश्चय धोखा हो जाता है।
देखो जा शीघ्र जानकी को * मेरे मन ऐसा आता है॥
कहिं सीता हरने के कारण * कपटी ने कपट चलाया हो।
यह कर कुमन्त्रण भ्रात सुनो * इस कारण तुम्हें हटाया हो॥
इस धोखा देने में मुझ को * नहिं कारन और दरसता है।
मालूम यही तो पड़ता है * सीता का व्योग सरसता है॥
यह सुन रघुवर ने कूँच किया * स्थान शून्य दिखलाया है।
सीता नहिं नजर पड़ी हरि के * लख कर मन में घबराया है॥

दोहा

मन घबराये रामजी * देखा नयन पसार।
जनक सुता दीखे नहीं * खाई राम पछार ॥४४२॥

बहर खड़ी

उठ कर फिर इधर उधर-देखा * सीता का पता न पाया है।
सीता सीता कह दी अवाज * आगे को चरन चढ़ाया है॥
जब रक्त से रंजित भू देखी * तो मन में भरम समाया है।
है पंख विहीन दीन पन में * भू पड़ा जटायु पाया है॥
लख कर यह दशा जटायु की * रघुवर ने मन अनुमान किया।
सीता का हरण हुआ अलबत्त * निश्चय यह मन में ध्यान किया
जिसने सीता का हरण किया * उसने पंछी को मारा है।
इसने सामना किया होगा * इससे इस को संहारा है॥

दोहा

लीना है कर उठा के * पंछी को तत्काल।
महामंत्र नवकार का * शरण दिया है हाल ॥४४३॥

बहर खड़ी

तत्काल ही मर कर वह पक्षी * चौथे सुरलोक सिधारा है।
सत् संगत मिलने से उसका * जग से हुवा निस्तारा है॥
हर तरफ देखते सीता को * सीता का पता न पाता है।
कर-कर सीता की याद राम * मन में अपने घबराता है॥
कर रहे संग्राम उधर लक्ष्मण * बल निशाचरों का संहारा।
खर को कर पीछे रण भू से * त्रिशिरा सन्मुख आ ललकारा॥
फिर रामानुज ने त्रिशिरा के * हृदय से मान निकाला है।
मानिन्द पतंगिये के उस को * क्षण भर में भू पर डाला है॥

दोहा

सैना को ले संग में * आया तुरत विराध।
चंद्रोदर का सुत चतुर * करता कारज साध ॥ ४४४ ॥

बहर खड़ी

लछमण को नमस्कार कर के ❋ श्रद्धायुत शब्द सुनाये हैं।
मैं आपके शत्रु का शत्रु ❋ ऐसे लछमण समझाये हैं॥
अब युद्ध की आज्ञा दो मुझ को ❋ मैं तुमरा दास कहाऊँगा।
बिन आपके अनुशासन स्वामी ❋ नहिं पग भी कहीं उठाऊँगा॥
हँस कर के रामानुज बोले ❋ संग्राम बिलोको हँस-हँस कर।
संहार करूँ शत्रु दलों का ❋ रह जाय रिपु सब फँस-फँस कर
हैं बडे भ्रात स्वामी तेरे ❋ तू उनका दास कहावेगा।
अब लंक पयाला का मालिक ❋ लछमण तुझ को बनवावेगा॥

दोहा

खर खिसियाना हो गया ❋ लख विराध को पास।
क्रोधातुर होकर तुरत ❋ लेता लम्बी साँस॥ ४४५॥

बहर खड़ी

धनु पर चिल्ले को चढा लिया ❋ अरु ऐसा वचन उचारा है।
विश्वासघात की तू ने ही ❋ शम्बुक कुमार को मारा है॥
संग ले विराध को अब तू क्या ❋ कुछ रक्षित होना चाहता है।
इसकी सहायता ले कर के ❋ दुख अपना खोना चहता है॥
उत्तर लछमण हँस कर दिया ❋ क्यों इतना कोप जनाता है।
मालूम हुवा तू शंबुक को ❋ जल्दी से देखा चाहता है॥
त्रिशिरा तो पास भतीजे के ❋ जाकर के खुश होता होगा।
अति हर्ष-हर्ष मुख चूम-चूम ❋ उसकी सूरत जोता होगा॥

दोहा

तू भी जो जाना चहे ❋ शंबुक के यदि पास।
तो मैं पहुँचा दूँ तुझे ❋ मत मन करे उदास॥ ४४६॥

बहर खड़ी

पैरों के नीचे आकर के * जैसे कीड़ा मर जाता है ।
वैसे ही कुतुहल के वश हो * शम्बुक भी जान गँवाता है ॥
क्रीड़ा प्रहार से तेरा सुत * मरने का संकट उठा गया ।
कुछ पराक्रम उसमें नहीं था * जिसका कुकृत्य है फला गया ॥
अपने को सुभट समझाता है * सुभटों से जय पाने वाले ।
रण कौतुक देख जरा मेरा * कर में धनु चमकाने वाले ॥
लक्ष्मण पर सर तीक्ष्ण छोड़ * वर्षा वाणों की वर्षाई ।
प्रहार किये अति शक्तिवान * भुजवल की शक्ति दिखलाई ॥

दोहा

लक्ष्मण ने भी हजारों * छोड़े वाण कराल ।
चले लप-लपाते तुरत * जैसे विषधर व्याल ॥४४७॥

बहर खड़ी

छोड़े हैं वाण कराल लखन * आच्छादित असमान किया ।
या मार्तंड के आगे आ * आवरण व्याल गण ने दिया ॥
इस प्रकार युद्ध होता कराल * जिम व्याल हला हल छोड़े हैं ।
खेचर गण देख देख संगर * रण से मुख अपना मोड़े हैं ॥
मारा है वाण तान कर के * खर का धड़ से सिर दूर किया
पड़ गई खेचरो मे हलचल * ऐसा रण चकनाचूर किया ॥
दूषण सेना को ले कर के * लक्ष्मण के सन्मुख आन डटा
जिस तरह वाल क्रीड़ा करते * दूषण का ऐसे शीश कटा ॥

दोहा

विजय युद्ध करके चले * लीना संग विराध ।
चले रामजी के निकट * अपने मन को साध ॥४४८॥

बहर खड़ी

जव विजय युद्ध करके लौटे * तो बायां नेत्र फड़कता था ।

उठती थीं हिलोरें बुरी-बुरी ❊ और हृदय-कमल तड़फता था॥
यह अशुगन लक्ष्मण के मन से ❊ धीरजता को जब खोन लगी।
सिया अरु राम के लिये अशुभकी ❊ मन में शंका होन लगी ॥
बैठे हैं राम अकेले ही ❊ नहीं जनक-सुता है पास सुनो।
लक्ष्मण विचित्र चित्रित से रह ❊ उठ गई हृदय से आश सुनो॥
सन्मुख हो गये खड़े जा के ❊ रघुवर ने दृष्टि उठाई ना।
वन सारा सब शोकातुर था ❊ औरों को खुशी सुहाई ना ॥

दोहा

ऊँचा आनन कर रहे ❊ रघुवर करत विचार।
सीता को मैं ढूँढ़ता ❊ घूमा विपिन मझार॥४४६॥

बहर खड़ी

पाया है नहिं पता सिया का ❊ दुख दिया विधाता ने भारी।
वन देवी और वन देव कहाँ ❊ जा दृष्टि पड़ी हो कहो सारी॥
मैं गया जानकी को तज के ❊ इस महा भयंकर जंगल में।
लक्ष्मण के पास तुरत पहुँचा ❊ उस वीर युद्ध के दंगल में॥
उस को भी उस रण में छोड़ा ❊ दौड़ा पुनः इस वन में आया।
बहुतेरा इधर उधर देखा ❊ पर पता सिया का नहिं पाया॥
दुर्बुद्ध राम हुआ कैसा ❊ सीता को छोड़ दिया वन में।
लक्ष्मण भ्राता को छोड़ दिया ❊ हा विकट भयंकर उस रन में॥

दोहा

इस प्रकार कहते हुवे ❊ राम हुवे बे होश।
मूर्छित हो गिरने लगे ❊ भूमी पै कर घोष॥४५०॥

बहर खड़ी

उस समय दुख रघुवर का लख ❊ वन को आरत होता था।
पशु क्रंदन करते थे वन में ❊ लख लख कर धीरज खोता था॥

यह हाल देख लक्ष्मण बोला * भ्राता तुम यह क्या करते हो।
खर को जीत यहाँ मैं आया * क्यों आरत मन धरते हो ॥
विजय शब्द कानों में आये * राम नैन जब खोले हैं ।
धन धन लक्ष्मण तुम बलधारी * वचन यह मुख से बोले हैं ।
फिर कंठ लखन को लगा लिया * मुख से हरि वचन उचारा है।
जनक-सुता का पता नहीं है * ऐसे श्री राम पुकारा है ॥

दोहा

लक्ष्मण अस समझा रहे * सुनो भ्रात धर ध्यान ।
नाद किया जिसने छला * जनक-सुता लो जान ॥४५१॥

बरह खड़ी

अब उसी लंपटी कपटी को * सीता समेत मैं लाऊँगा ।
आरत को तजो उठो भाई * सीता को लाय दिखाऊँगा ॥
यह वीर विराध खड़ा सन्मुख * मालिक है लंक पयाला का।
चलकर इस को दीजे स्वामी * पालो यह शब्द भुवाला का ॥
इनका चल राज इन्हें दीजै * यह वचन युद्ध में दीना था।
इनकी करुणा सुन कर मैंने * अश्वासन इन से कीना था ॥
करुणा निधान करुणा कर के * अब पीर इन्हों की हर लीजे ॥
शरणागति को शरणा दीजे * निज कर से राज तिलक कीजे ॥

दोहा

दीने भेज विराध ने * खेचर चारों ओर ।
बैठ विमानों में चले * लगी कर्तव्य से डोर ॥४५२॥

बहर खड़ी

देखे हैं वन वन सीता को * कहिं उसका पता न पाया है।
गिरि खोह विटप लता को देखी * नहिं चिन्ह नज़र तक आया है॥
देखे ग्रह महल नरेन्द्रों के * पुर नगर ग्राम वस्ती सारी।

जहाँ तक थी उनकी शक्ति सुनो ❊ वहाँ तक कीनी कोशिश भारी ॥
सब देख देख कर हार गये ❊ कहीं उसका पता नहीं पाया।
खेचर दल बैठ विमानों में ❊ निज स्वामी के सन्मुख आया॥
नीचा मुख कर सब खड़े हुवे ❊ नहिं ऊँची दृष्टि उठाई है।
क्या दें जवाब सोचें सब ❊ हा लज्जा ने लिया दबाई है॥

दोहा

किया काम तुमने बड़ा ❊ बोले राम सुजान।
यथा शक्ति शक्री लगा ❊ देखा बीयाबान ॥४५३॥

बहर खड़ी

कुछ नहीं दोष तुमारा वीरो ❊ है होनहार बलवान बड़ी।
विपरीत विधाता जब होता ❊ विपता होती है आन खड़ी॥
यह सुन विराध कर जोर कहै ❊ स्वामी मत सोच करो मन में।
कुछ सोच करे से लाभ नहीं ❊ यो कब तक पड़े रहो वन में॥
हर समय आप की सेवा को ❊ कर जोड़ दास खड़ा रहेगा।
खेचर विराध सच कहता है ❊ हर दम यह पास खड़ा रहेगा॥
अब लंक पयाला को चलिये ❊ सीता की खबर मँगाऊँगा।
भेजूँगा सुभट सवार कहीं ❊ काह और देखने जाऊँगा॥

दोहा

राम लखन विराध संग ❊ लंक पयाला पास।
सैन सहित जाकर टिके ❊ देखा कर के ख्यास ॥४५४॥

बहर खड़ी

सैन लेकर खर का नंदन ❊ झट त्यारी करके आया है।
वह सुंद वीर करने को युद्ध ❊ सन्मुख विराध के धाया है॥
हुवा है युद्ध खूब डट के ❊ योद्धा कट-कट कर गिरते हैं।
मदमत्त भिड़े कुंजर से कुंजर ❊ रण से पीछे नहिं फिरते हैं॥

यह हाल देख लक्ष्मण सर ले * मैदान जंग में आये हैं।
देखा जब नाहर को आते * गीदड़ सारे दहलाये हैं॥
लक्ष्मण को लख कर सूर्पनखा * अपने सुत को समझाय दिया।
रावण की शरणे जा बेटा * यह सुत से अनुशासन किया॥

दोहा

सुं: वचन सुन मात के * सूर्पनखा के साथ।
लंक पयाला में गया * राम लखन युग भ्रात॥४५५॥

बहर खड़ी

मिल कर के लंक पयाला में * पहुँचे हैं राम लखन दोनों।
देखा पताल लंका को जा * बतराते संग सखन दोनों॥
फिर राज पै लंक पयाला के * हरि ने विराध बैठाया है।
उसके कर मनाभाव पूरे * लख कर लक्ष्मण हर्षाया है॥
खर के महलों में आनन्द से * रहते हैं लखन राम दोनों।
युवराज तरह रहता है सुंद * करते हैं सुगर धाम दोनों॥
भेजे विराध ने विद्याधर * सीता की खोज लगाने को।
हर तरफ सुभट दौड़े फिरते * मंगल आनंद सुनाने को॥

दोहा

उधर सिद्ध विद्या भई * साहस गति की आय।
प्रतारणी विद्या प्रबल * सिद्ध करत हुलसाय॥४५६॥

बहर खड़ी

सुंदर सुकंठ का रूप बना * आकाश के मारग धाया है।
करने को मनोभाव पूरा * किष्किंधा के तट आया है॥
मानिंद चोर के छुपा रहा * जब तक शुभ समय न पाया है
उस समय तलक देखा रस्ता * वन में दिन-रात गँवाया है॥
लख कर वसंत का शुभ समय * सुग्रीव करन क्रीड़ा धाया।

साहसगति समय पाय सुंदर * सुग्रीव के महलों में आया ॥
तारा का रूप देख सुंदर * खुश होता अरु हुलसाता है।
हिंमत कुछ टूटी जाती थी * चढ़ते में जी घवराता है ॥

दोहा

देखे तारा को हर्ष * मन ही मन ललचाय ।
तव तक नृप सुग्रीव जी * महलों में गय आय ॥४५७॥

वहर खड़ी

लख कर दरवान चकित हुवा * हृदय के बीच विचारा है ।
भूपति को आय समय बीता * यह नकली रूप निहारा है ॥
ऐसा विचार दरवान तुरत * रोका है नृप को जाने से ।
महाराज पधारे महलों में * तुम दीखो रूप वनाने से ॥
यह सुना हाल वाली सुत ने * काकी के महलों में जा के ।
कपटी सुग्रीव निकाल दिया * मन में जयवन्त गुस्सा खा के ॥
महलों के ताले जड़ दीने * किया विलम्ब नहिं एक पल का
पहरे पर आप खड़े हुवे * लखने को दृश्य सु छल वल का॥

दोहा

वाली का सुत अति वली * प्रवल न वल का अंत ।
द्वारपाल वन द्वार पर * खड़े हुवे वलवंत ॥ ४५८ ॥

वहर खड़ी

तारा की सुंदरताई लख * सुगराई भी शरमाती थी ।
तारा प्रत्यक्ष मोहनी थी * रंभा रति देख लजाती थी ॥
चौदह अक्षोहणी दल जिन के * ऐसा सुग्रीव भुवाला था ।
प्रभुता अपार का पार नहीं * अद्भुत शक्ति वलवाला था ॥
दस सहस आठ सौ गज जिस में * तीस सहस आठ सौ सत्तर रथ
छासठ हजार घोड़े सवार * आज्ञा में चलते थे सत पथ ॥

इक लाख नव सहस पैदल हों * पुन साढ़े तीन सौ ऊपर हों।
दो लाख वसु सहस तीस और * कुल योग सु संख्या भू पर हो ॥

दोहा

होती है इतनी सुनो * इक अक्षोहणी सैन।
चौदह थी अक्षोहणी * दल भूपत के ऐन ॥४५६॥

बहर खड़ी

जयवन्त दृष्टि आकर डाली * दोनों को इक सा पाया है।
नहिं किसी बात में अंतर है * ऐसा छल रूप बनाया है ॥
दोनों का बल अजमाने को * मन में एक मता उपाया है।
दोनों का मल्ल युद्ध अपने * मन में करवाना चाया है ॥
नहिं हार मानता है कोई * दोनों अति वीर जुझारे हैं।
साँचा तो साँचा रहता है * आखिर झूँठ झकमारे हैं ॥
कलु हंस हंस एक रंग हैं * सूरत मूरत सब इक सी है।
मोती अरु मीन मिलाने से * खुल जाय अवर यह कैसी है ॥

दोहा

हर प्रकार कर जाँच को * मंत्री और नृपाल।
नहीं होय यह परीक्षा * किया बहुत सा ख्याल ॥४६०॥

बहर खड़ी

लाकर के काँच मणी दोनों * देखो तो चमक मारती हैं।
लखता परखैया आकर के * तो नकल दमक विसारती है ॥
कर ख्याल काग अरु कोयल पर * हैं दोनों रंग समान सुगर।
विकसित ऋतुराज होय जिस दम * हो जाय परीक्षा शुभ सुन्दर ॥
मंत्री ने कर विचार मन में * समझाया है युवराजा को।
दो भाग में सैन अब करके * निबटा दें तुरत अकाजा को ॥
सात अक्षोहणी युगल पक्ष को * देकर के युद्ध करा देंगे।

महाराज हमारे जीतेंगे ❋ नकली को अवश हरा देंगे ॥

दोहा

दोनों में होना हुआ ❋ शुरु घोर संग्राम ।
लखें परीक्षा आन कर ❋ पुर के पुरुष तमाम ॥४६१॥

बहर खड़ी

भालों की चोटों से अगनी ❋ झड़ झड़ कर भूमि निकलती थी
करते थे उछल उछल चोटें ❋ हिंमत वीरों की बढ़ती थी ॥
रथ से रथ हाथी से हाथी बढ़बढ़ ❋ सवार मन भरन लगे ।
पैदल के पैदल हो सनमुख ❋ संग्राम शूर सब करन लगे ॥
सुग्रीव भूप ने नकली को ❋ आकर के सन्मुख ललकारा ।
लम्पटी समर भूमि पे पैसा ❋ कह कह कर उसका फटकारा ॥
सुन छद्म वेष सुग्रीव तुरत ❋ मदा मत्त नाग की तरह चला ।
कर रक्त नैन क्रोधित होकर ❋ रण अटल रहा पग नहीं टला ।

दोहा

दोनों में होने लगा ❋ विकट घोर संग्राम ।
झन्नाटे कृपान के ❋ झननन होय तमाम ॥ ४६२ ॥

बहर खड़ी

दोनों हैं विद्यावान बली ❋ दोनों ही शस्त्र चलैया हैं ।
दोनों हैं खेचर शक्तिवान ❋ दोनों ही मान रखैया हैं ॥
जैसे युग हाथी मत्त होय ❋ आपस में द्वंद मचाते हैं ।
चिक्कार मार कर के वन में ❋ वृक्षों को तोड़ गिराते हैं ॥
बस इसी तरह से नृप दोनों ❋ संग्राम विकट अति करते हैं ।
छोड़े हैं शस्त्र समर कर के ❋ पर पीछे चरन न धरते हैं ।
चक्कर में आया आसमान ❋ धरती थर थर थर्राती है ।
दिग्पाल देखते खड़े हुवे ❋ दीग्गज दाढे हिल जाती हैं ॥

दोहा

तुरत बुला बजरंग को * युद्ध किया पुनः घोर ।
समझ सके नहिं तत्त्व को * कौन शाह पुन चोर ॥ ४६३ ॥

बहर खड़ी

सोचे हैं चित सुग्रीव नृपत * अब काम कौन सा करना है ।
किस तरह न्याय होगा इसका * किस तरह परन अब परना है॥
बलवंत महा वाली जग में * जो था सो संयम धारा है ।
अब कौन योग है इस कृत के * जो करे आन निपटारा है ।
दशकंधर अवश बली दीखे * पर छलियापन अति भारा है ।
दोनों को मार भगा देगा * ले जाय आन कर तारा है ॥
खर खेचर एक बहादुर था * जिसको रघुवर ने हन डारा ।
दिया विराध को राज तुरत * न उन्होंने अपना पन डारा ॥

दोहा

शरण राम की मैं तुरत * करूँ जाय स्वीकार ।
वे ही संकट-सिंधु से * कर दें नौका पार ॥ ४६४ ॥

बहर खड़ी

सुन कर विराध की विन्ती को * किय लंक पयाला का राजा ।
उनकी शरण स्वीकार करूँ * बन जाय सकल मेरा काजा ॥
ऐसा विचार सुग्रीव नृपत * विश्वासी दूत बुलाया है ।
सब हाल दूत को समझा कर * रघुवर के निकट पठाया है ॥
पहुँचा विराध के पास दूत * दीना है हाल सुना सारा ।
इस समय सहायक हो जाओ * अहसान तुम्हारा हो भारा ॥
सुग्रीव भूप को पास मेरे * भेजो तुरत यहाँ से जा के ।
उपकारी लक्ष्मन राम युगल * उनकी शरणागत लो आ के ॥

दोहा

राम लखन से आन के * करे भूप अरदास ।
काम करें नृप का तुरत * दें दुश्मन को त्रास ॥ ४६५ ॥

बहर खड़ी

सब समाचार जाकर तुरंत * सुग्रीव भूप को समझाये ।
सुन कर सैना को ले संग में * नृप लंक पयाला को धाये ॥
लेकर विराध को संग नृपत * रघुवर के सन्मुख आये हैं ।
करके प्रणाम राम को सब * मन भाव सफल समझाये हैं ॥
तुम हो पर दुख हरता स्वामी * मेरे भी दुख को हर लीजे ।
मैं दास आपके चरणों का * यह काज प्रभु मेरा कीजे ॥
जिम अथाह सिन्धु में डूबत को * नौका का एक सहारा है ।
बस इसी तरह इस सेवक को * अवलम्ब सु नाथ तुम्हारा है ॥

दोहा

सुन कर कपि-पति के वचन * बोले राम सुजान ।
काज तुम्हारा हो अवश * कीजे मन में ध्यान ॥४६६॥

बहर खड़ी

उत्तम मनुज निज कारज से * पर कारज अच्छा मानते हैं ।
अपने कारज को स्थगित करी * पर कारज करना ठानते हैं ॥
बस इसी तरह से रघुवर ने * सुग्रीव को आश्वासन दिया ।
होकर प्रसन्न हर रीति से * कारज करना स्वीकार किया ॥
पुन सिया हरन के समाचार * कह कर विराध समझाये हैं ।
सुग्रीव भूप ने सुन कर के * हरि को यों वचन सुनाये हैं ॥
हे प्रभु ! मेरे इन वचनों का * अब आप अवश विश्वास करो ।
इन पावन चरनों का मुझ को * हो सके जिस तरह दास करो ॥

दोहा

शत्रु पराजय होत ही * करूँ आपका काज ।

अनुचर हो कर के रहूँ * साजूँ सारे साज ॥४६७॥

बहर खड़ी

पुन लखन राम दोनों भ्राता * किष्किन्धा के तट आये हैं ॥
पुर के बाहर देख मही * आकर के चरन टिकाये हैं ॥
सुग्रीव असल ने आकर के * नकली को पुन ललकारा है।
सुन कर अवाज़ संग्राम हेतु * चट सन्मुख आन दहाड़ा है ॥
द्विज को आलस ना भोजन में * रण में आलस ना वीरों को।
बस इसी तरह से कायरता * होती न कभी रण धीरों को ॥
इस ही प्रकार युग वीरों ने * आकर के युद्ध मचाया है।
मदोन्मत्त करी जैसे भिड़ते * ऐसा ही दृश्य दिखाया है ॥

दोहा

निरख राम दोनोंन को * मन में किया विचार।
पड़े नहीं पहिचान में * देखा बहुत निहार ॥४६८॥

बहर खड़ी

दोनों को राम समान लखा * बल में पौरुष में हिम्मत में।
सुंदरता में सुगराई में * चंचलता में अरु-किस्मत में।
दोनों को देखा एक सार * नहीं कोई किसी से हारा है।
पहिचान न असली पड़ता है * रघुवर ने खूब निहारा है ॥
देखें हैं खड़े-खड़े रघुवर * आखिर में यही विचारा है।
लेकर वज्रावत धनुष तुरत * अपने कर बीच सँभारा है ॥
धनु की टंकार करी जिस दम * आकश भूमि थर्राई है।
भागी है विद्या संग छोड़ * असली दिया रूप दिखाई है ॥

दोहा

छाया क्रोध प्रचंड मन * उठा लिया कोदंड।
एक बाण में ही किया * साहसगति का खंड ॥ ४६९ ॥

बहर खड़ी

लग करके बाण गिरा धरनी * गिर कर यों वचन उचारा है।
सुग्रीव सहायक बन कर के * किस कारण अनुचर मारा है॥
क्या हित तुम को सुग्रीव से था * साहस गति को क्या अपु जाना।
अपराध बिना किस कारन से * मारना किसी को मन ठाना॥
तुम तो नैयायक पूरे हो * और न्याय पथ पर चलते हो।
मेरे संग क्यों अन्याय किया * हित मित्र के पथ से टलते हो॥
सज्जन पुरुषों को पर नारी * माता भगनी सम होती है।
इससे विशेष अपराध नहीं * सारी दलील यह थोती है॥

दोहा

दिया राज सुग्रीव को * रघुपत मन हर्षाय ।
पुर-जन सेवक भूप के * चरनों झुकते आय ॥४७०॥

बहर खड़ी

पुन मन विचार सुग्रीव नृपत * आराम से विन्ती करते हैं।
तेरह कन्यायें ग्रहण करो * निज शीश चरन पर धरते हैं॥
बोले हैं राम सुनो भूपत * मुझ को नहिं चाह किसी की है।
जगत में है जो आवश्यकता * तो मन के बीच किसी की है॥
सीता का पता लगाओ तुम * नहिं और चाह मेरे मन में।
हृदय में हृदय स्वामिनी है * उस ही की फ़िक़र लगी तन में॥
सुन कर सुग्रीव नृपत बोले * स्वामी मैं जाकर आऊँगा।
महलों में धर आभ्रण हैं * उन को ला कर दिखलाऊँगा॥

दोहा

तुरत नृपत महलों गये * भूषण लाय उठाय ।
धरे राम के सामने * कहन लगे समझाय ॥ ४७१॥

बहर खड़ी

गिरि पर मैं स्वामी बैठा था * दो चार मित्र थे साथ मेरे।

आनंद देखते थे वन के * सुख के समान थे हस्त मेरे ॥
आया विमान उड़ता उस दम * उस में कोई नारि पुकारती थी।
भामंडल भाई कहती थी * कब राम लखन उच्चारती थी ॥
उसने यह भूषण फेंक दिये * इनको मैं नाथ उठा लाया।
रख दिये महल में ला कर के * अब सन्मुख लाकर दिखलाया ॥
कीजे पहिचान आभरण की * जो पता इन्हीं से लग जाये।
तो बहुत खोज किस कारन हो * सीता हृदय यदि जग जाये ॥

दोहा

देखे भूषण राम ने * लेकर अपने हाथ।
लक्ष्मण से कहने लगे * सुनो भ्रात मम बात ॥ ४७२ ॥

बहर खड़ी

यह लखन जरा पहिचान करो * क्या भूषण जनक सुता के हैं।
इन में कुछ गंध प्रेम की है * क्या उस ही विज्जुद्युता के हैं ॥
इनको अपने कर में लेकर * भाई लक्ष्मण पहिचानो तो।
कुछ गौर करो इन के ऊपर * सीता के भूषण जानो तो ॥
कर जोड़ लखन श्री रघुवर से * अति विनय सहित यों कहने लगे।
जिस तरह शान्ति रस के समुद्र * ले ले तरंग शुभ बहन लगे ॥
यह तो भूषण ग्रीवा के हैं * इनको मैं कैसे बतलाऊँ।
जो चरण आभरण यदि होते * पहिचान उन्हीं की समझाऊँ ॥

दोहा

माताजी के चरण का * मैं हूँ सेवक नाथ।
सदा चरन मैंने लखे * और न जानूँ भ्रात। ४७३॥

बहर खड़ी

मैं तो सेवक हूँ चरणों का * चरणों की सेवा करता था।
अर्चन के योग चरन-पावन * उन ही को हृदय धरता था ॥

पद्-भूपण नाथ अगर होते * तो उनको तनिक जानता मैं।
नहीं अन्य अंग देखा कैसे * फिर उनको पहिचानता मैं॥
ऐसा कह आभरण रख दिया * श्री राम निहारे हैं उनको।
भूपण को कर में उठा उठा * मन चींच विचारें हैं उनको॥
सुग्रीव राव आज्ञा पा कर * अपने महलों को धाये हैं।
पुर वाहर शिविर लगे हरि के * रघुवर रह कर सुख पाये हैं॥

दोहा

सुन कर खर दूपण मरन * लंका शोक अपार।
आरत सव के है प्रगट * महलों रोवे नार ॥ ४७४ ॥

वहर खड़ी

संग सुंद पुत्र को लेकर के * सूर्पनखा लंक में आई है।
रावण के कंठ लिपट कर के * रोवे अरु द्वंद मचाई है॥
तेरे वहनोई भानिज को * जिसने निधड़क हो हन डारा।
दो देवर और हने संग में * खेचर सेना को भी मारा॥
तेरी दी लंक पयाला को * ली छीन दनि कर काढ़ा है।
दिना विराध को राज सौंप * उसके आनन्द अति वाढ़ा है॥
मैं भ्रात शरण अव तेरी हूँ * शरणागति को शरणा दीजे।
तेरे होते अन्याय हुवा * अन्याय दूर सारा कीजे॥

दोहा

जाए हाथों से तेरे * अव सोने की लंक।
जीते जी मत शीश पर * अपने लगा कलंक ॥४७५॥

बहर खड़ी

सोने का वना नगर तेरा * कुछ दिन में यह छिन जायेगा।
जिस मान से तू अव वैठा है * मान का सभी चिन्ह जायेगा॥
जंगल के भील रहन वाले * ऐसा साहस दिखलाते हैं।

पाते ही खबर वह सीता की * लंका पर चढ़ कर आते हैं ॥
रोदन करती हुई भगनी को * रावण ने कंठ लगा लिया ।
घबरा मत हृदय संभाल रखो * ऐसा कह आश्वासन दिया ॥
जिसने पति पुत्र तेरा मारा * उस पल में मार गिराऊँगा ।
जो लंक पयाला छीनी है * चल कर के तुझे दिलाऊँगा ॥

दोहा

दशकंधर इस शोक से * विह्वल हुआ अपार ।
विरह वेदना सिय की * से है वह बीमार ॥४७६॥

बहर खड़ी

बीमारी जैसे खा जाये * वह हाल हो रहा रावन का ।
भर साँस पलंग पर लौट रहा * है प्रेम भरा मन भावन का ॥
उस समय आन कर मंदोदरि * स्वामी की तरफ निहारती है ।
कर जोड़ लगी कहने पति से * क्या बात हृदय में धारी है ॥
सामान्य मनुष्यों की भाँति * निश्चेष्ट आप हैं पड़े हुवे ।
साधारण सी इन बातों में * किस लिये आप हैं अड़े हुवे ॥
यह सुन बोले दशकंठ भूप * प्यारी मुझ को दुख भारा है ।
फिर भी लंकापति जीता है * यह सभी प्रताप तुम्हारा है ॥

दोहा

सिय के विरह-ताप से * बेकल सकल शरीर ।
विना मिले सिय के प्रिया * बंधे न दिल को धीर ॥४७७॥

बहर खड़ी

सीता के विरह ताप से प्रिय * बेकल सा यहाँ पड़ा हूँ मैं ।
बेकल को कल कैसे आवे * मिलने के हेत अड़ा हूँ मैं ॥
मुझ में सामर्थ नहीं प्यारी * कुछ करूँ या करके दिखलाऊँ ।
न मेरा हौंसला पड़ता है * जो उसके मैं सन्मुख जाऊँ ॥

इसलिये मानती जो मुझ को * तू जीवित रखना चाहती है।
तो मान छोड़ कर सीता को * जाकर क्यों नहिं समझाती है॥
कर विनय पास में ला अपने * कर प्रेम मुझे अपनाये वह।
दशकंधर है जीवित जब ही * जब पास मेरे आ जाये वह॥

दोहा

मैंने किया नियम यह * गुरु समीप हर्षाय।
अनइच्छू परतीय से * प्रेम करूँ नहिं जाय॥ ४७८॥

बहर खड़ी

वह नियम आज मेरे सन्मुख * अगेज की तरह आ जाता है।
जब पास सिया के जाता हूँ * थर थर शरीर थर्राता है॥
सुन वचन सकल पति पीड़ा के * सुनकर विह्वल हो जाती है।
मन से विचार सब त्याग दिया * सब लाज का प खो जाती है॥
पहुँची है देव-रमण वन में * जो जनक-सुता पर नजर पड़ी।
बैठी अशोक तरु शोक मई * जा करके सनमुख भई खड़ी॥
सीताजी शीश झिये नीचा * मन में विचार कुछ करती थीं।
पावन रघुवर के चरण-कमल * हृदय मंदिर में धरतीं थीं॥

दोहा

कहन लगी मंदोदरी * सुनो सिया यह बैन।
पटरानी दशकंठ की * मैं हूँ सुनिये बहन॥ ४७९॥

बहर खड़ी

मैं भी दासी होकर तेरी * तेरा ही हुकम उठाऊँगी।
जो कुछ आज्ञा तेरी होगी * उसको निज शीश चढ़ाऊँगी
लंकापति से यदि प्रेम करे * लंकापति पत्नी वाजेगी।
आज्ञा तेरी रहे तीन खण्ड * शृंगार अनेकों साजेगी॥
है धन्य धन्य तुमको सीता * अति भूर भाग वाली तुम हो।

त्रिय खंड पति तुमको चाहे * शुभ लालों में लाली तुम हो ॥
जो विश्व पूज्य होकर तेरी * पूजा को करना चाहता है।
तेरे ही चरण कमल पावन * निज हृदय बीच बसाता है ॥

दोहा

वचन सुनत सीता हृदय * छाया क्रोध अपार ।
उष्ण स्वाँस चलन लगी * जिम नागिन फूँकार ॥४८०॥

बहर खड़ी

क्या भोली बातें करती हो * कहाँ सिंह अरु कहाँ स्यार भला
कहाँ गरुड़ अरु कहाँ काग पक्षि * किस भाँति बराबर धार भला ॥
गुल की समता क्या खार करे * क्या नार नूर के समतल हो ।
क्या गधा हो सके कामधेनु * कलु हंस हंस से उज्ज्वल हो ॥
कहाँ राम अरु कहाँ रावण है * कुछ सोच समझ उच्चारो तुम।
कहाँ तेजवान दिनकर रमेश * खद्योत कहाँ मन धारो तुम ॥
तेरा अरु पापी रावन का * दम्पति पन मानो योग ही है।
पर तिय गामी वह तू कुटनी * तेरा उसका संयोग ही है ॥

दोहा

होजा ओझल अलग हट * मुख मत मुझे दिखाय ।
संभाषण के योग तू * किञ्चित भी है नाय ॥४८१॥

बहर खड़ी

सन्मुख से तू हट जा मेरे * संभाषण के है योग नहीं ।
मैं तुझे नहीं देखा चाहूँ * मेरा तेरा सहयोग नहीं ॥
बस उसी समय दशकंधर भी * सनमुख आकर के यों बोला।
हे सीता ! तू क्यों कोप करे * इन शब्दों से मुख को खोला ॥
यह मंदोदरी दासी तेरी * है देवी तेरा दास हूँ मैं।
होकर प्रसन्न मुख से बोलो * हर समय तुम्हारे पास हूँ मैं ॥

तू अपनी अमृत दृष्टि से * मुझ को प्रसन्न क्यों नहिं करती
मेरा है प्रेम परम तुझ से * क्यों प्रेम नहीं हृदय धरती ॥

दोहा

सीता ने मुख फेर कर * दीना कड़क जवाब ।
मुझे पड़े मालूम यह * विगड़े तेरी आब ॥ ४८२ ॥

बहर खड़ी

मैं जानूँ हूँ अब काल तेरे * शिर के ऊपर मँडराया है ।
जो सूने वन में से जाकर तू * मुझ को हर कर लाया है ॥
जिम अरुण पुष्प की माला को * फल जान स्वान ले जाता है ।
खाने के समय देख उस को * शिर धुनता अरु पछताता है ॥
बस इसी तरह से तू मुझ को * बिन राम उठा कर लाया है ।
इससे मालूम यही पड़ता * कि समय तेरा तट आया है ॥
शत्रु का कालरूपी लछमण * जिस समय खबर यह पायेगा ।
लंका पर चढ़कर आवेगा * अरु तुझ को मार गिरायेगा ॥

दोहा

सीता के सुन कर वचन * रावण कहे उचार ।
मैं चंदा तू चाँदनी * देखो दृष्टि पसार ॥ ४८३ ॥

बहर खड़ी

किस तरह चन्द्र से चन्द्र-वदन * अब कहो चाँदनी दूर रहे ।
शशि लख सरोजनी खिले सदा * किस कारण से मज़बूर रहे ॥
लख श्वाँति बिन्दु को अब सीपी * किस कारण मुख को बंद करे ।
कर सकता हेत न जो अपना * औरों का क्या प्रबन्ध करे ॥
विकसेगा रामचन्द्र जिस दम * खिल जाय जुन्हैया सीता सी ।
जो हो सरोज सन्मुख राहु * खिल जाय तो हो अवनिता सी ॥
धोखा दे यदि वारिध बरसे * सीपी का कभी मुख खिले नहीं ।

कैसी ही चमकें हो विशेष * सुवर्ण का टुकड़ा डुले नहीं ॥

दोहा

देखी रावन नृपत की * मत मतवारी होत।
लखे कभी वारिज विमल * विकसत जुगनू जोत ॥४८४॥

बहर खड़ी

नहिं कमल खिलें जुगनू द्युति से * हो वृंद चाहे चमत्कार करें।
सिंहनी नहीं डरती है जम्बुक से * चाहे जितनी धद्कार करें॥
लख राम दिवाकर को पंकज * सीता हृदय खिल जाता है।
जंबुक समान तू खड़ा खड़ा * नाहक धद्कार सुनाता है॥
सीता की वाणी वाण तुल्य * रावण का हृदय वेदृती है।
तीक्ष्ण कमान की वाण अनी * जिस तरह सु तन को छेदृती है॥
वह काम क्रोध से अंधा हो * सीता को कष्ट पहुँचान लगा।
विद्या के वनचर बना छोड़ * रावण महलों को जान लगा॥

दोहा

दशकन्धर मन क्रोध कर * कहे वचन स्पष्ट।
सीता को देने लगा * विद्या शक्ति से कष्ट ॥ ४८५ ॥

बहर खड़ी

फण-पति फूँकार लगे करने * हरि ने हुँकार लगाई है।
चीत्कार करें गज आ-आ कर * रहा अन्धकार निश छाई है॥
चीते अपनी चिल्लाहट से * दिल में डर पैदा करते हैं।
कहिं व्याघ्र पूँछ को फट कारें * धीरज का धीरज हरते हैं॥
परस्पर बीछियाँ लड़तीं हैं * कहिं अग्नि चिंगारी झड़तीं हैं।
कहिं बिन्दु तीर सी पड़ती हैं * कहिं आन सिंहनी अड़तीं हैं॥
कहिं प्रेत पिशाच उछलते हैं * सीता को देख मचलते हैं।

वैताल भून वरछियाँ लिये * वढ़ने को अग्र सँभलते हैं ॥

दोहा

सीता ने मन में किया * महामंत्र का ध्यान ।
करी न परवाह प्रान की * राखा अपना मान ॥ ४८६ ॥

वहर खड़ी

संकट पड़ने पर सिया ने * निज मन को नहीं डिगाया है ।
प्रलय समीर से जिम सुमेर * मन ऐसा अचल वनाया है ॥
सारा वृतान्त विभीषण ने * कानों से जब सुन पाया है ।
उस देव रमण उद्यान बीच * सीता के सन्मुख आया है ॥
हे भद्रे ! कौन सुंदरी तुम * अरु किनकी सुता कहाई हो ।
किस वीर पुरुष की त्रिया हो * किस सवव यहाँ पर आई हो ॥
यहाँ कौन तुम्हें लाया जा के * इसका सव भेद वता दीजे ।
निर्भीक हो मुझ से कह दीजे * स्वीकार विनय मेरी कीजे ॥

दोहा

समझ सहोदर आपना * मती छुपाओ हाल ।
जो कुछ हो वृतान्त सव * कह दीजे तत्काल ॥ ४८७ ॥

वहर खड़ी

सज्जन सतपुरुष समझ उसको * वोली सिय नीचा मुख कर के ।
लज्जा से नहीं वचन निकले * शुचि राम चरन हृदय धर के ॥
मैं जनक भूप की पुत्री हूँ * भामंडल मेरा भाई है ।
दशरथ नृप की हूँ पुत्र-वधू * मम नाम सिया सुन भाई है ॥
श्रीराम, अनुज अरु वधू सहित * दंडाकारण वन में आये ।
वहाँ लखन मम देवर वन की * कुछ सैर करन को मन लाये ॥
आकाश से आता इक खड्ग * वन में देवर के नज़र पड़ा ।
वह तुरत उन्हों ने कर में ले * लख कर महान् अति मोद वढ़ा ॥

दोहा

मन विचार कर लखन ने * लीना हाथ उठाय।
पास बाँस के जाल पर * दीना उसे चलाय ॥४८८॥

बहर खड़ी

उस बंश-जाल में साधक था * साधना खड्ग की करता था।
अनजाने शीश कटा उसका * जो आश हृदय में धरता था॥
पछताये लखन बहुत मन में * पछताय वहाँ से धाये हैं।
निज जेष्ठ भ्रात के निकट तुरत * कर पश्चाताप सु आये हैं।
लक्ष्मण के चरण चिन्ह लखकर * एक त्रिय वहाँ पर आई है।
मेरे स्वामी का रूप निरख * उनके ऊपर लुभियाई है॥
उसकी अनुनय को स्वामी ने * सुन कर के नहिं स्वीकार करी।
सुन कर वह वहाँ से चल दीनी * सैना जाकर तैयार करी॥

दोहा

भारी सैना संग ले * आई रण मंझार।
लक्ष्मण ले कर में धनुष * हुवे युद्ध को त्यार॥४८६॥

बहर खड़ी

उस समय लखन से राम कहा * जो मुझे बुलाना चाहो तुम।
तो सिंह नाद करना भ्राता * संकेत हृदय में लाओ तुम॥
माया से सिंहनाद उसने * बन में जाकर करवाया है।
जब राम युद्ध में चले गये * रावण मुझ को ले आया है॥
जो था वृतान्त प्रारंभित से * भाई वह तुम्हें सुनाया है।
इस में है चूक नहीं किंचित * सच अर्थ तुम्हें समझाया है॥
सुन कर के वचन विभीषणजी * दरबार बीच में आये हैं।
कर नमस्कार अति विनय सहित * रावण को शीश झुकाये हैं॥

दोहा

भाई किया आपने * यह क्या खोटा काम।

चलत पलीता लाय कर ❋ दिया मंद्र मुक़ाम ॥४६०॥

बहर खड़ी

काली नागिन विष भरी खरी ❋ पर नार धरी स्वर में ला के।
जिस तरह हो सके अब इसको ❋ छोड़ो वन ही में लेजा के॥
सम्पदा नाश करनी तरूनी ❋ अति तीक्ष्ण अपति निशानी है।
यह सती श्राप न दे बैठे ❋ बैठी वन हो खिसियानी है॥
हो सुंदर चाहे असुन्दर यह ❋ आखिर को वस्तु बिरानी है।
यह काल रूप हो कर आई ❋ औरों को वस्तु दिखानी है॥
लो मान विनय मेरी भाई ❋ कुल कीरत बहुत पुरानी है।
अपकीरत जगत् में हो भारी ❋ अपयश की निकले वानी है॥

दोहा

सीता को ले जाय कर ❋ उसी ठाम दो छोड़।
राम लखन ना आ सके ❋ जब तक लो मुख मोड़॥४६१॥

बहर खड़ी

जो जाओ आप नहीं भाई ❋ तो आज्ञा मुझ को दे दीजे।
जाकर के पहुँचा आऊँ मैं ❋ यह विनय दास की सुन लीजे॥
दशकंठ क्रोध कर कहन लगा ❋ सुन ले तू अनुज वीर मेरे।
लाई वस्तु नहीं फेर सकूँ ❋ जब तक हैं कुशल बदन मेरे॥
हैं भील राम लछमण दोनों ❋ वन के वासी कहलाते हैं।
अन वाहन चरण-विहारी वह ❋ जिस तरह उदासी जाते हैं॥
वाहन विद्या का जोर मेरे ❋ वह आकर यहाँ करेंगे क्या?
आ गये भूल से लंकपुरी ❋ विन आई मौत मरेंगे क्या?

दोहा

आ जायें यदि लंक में ❋ तो उन को तत्काल।
छल-बल कर मरवाय दूँ ❋ दूँ बलाय को टाल॥४६२॥

बहर खड़ी

ज्ञानी ने जो कुछ वचन कहे * वह असत्य नहीं हो सकते हैं।
होनी ने डंका बजा दिया * किस तरह समय खो सकते हैं॥
सीता के कारण लंका का * इक रोज नाश हो जायेगा।
कुल नष्ट होगा रावण का सब * अत्यन्त त्रास यही पायेगा॥
ज्ञानी ने कह दीना जो कुछ * वह समय शीघ्र आता दीखे।
इस लंक पुरी का राज भ्रात * तेरे कर से जाता दीखे॥
ऐसा नहिं होता जो भाई * तो मेरे वचन मान लेता।
इस आग सुलगती सीता को * लंका से तुरत टाल देता॥

दोहा

वचन विभीषण के सुने * लोचन हो गये लाल।
लगा काँपने क्रोध से * भैराई तन ज्वाल॥४६३॥

बहर खड़ी

ऐसे क्या बोल रहा भीरू * तू मेरे वल को भूल गया।
मैं वहु पराक्रमी रावण हूँ * सब देख-भाल प्रतिकूल गया॥
यह राह-रास्त पर आकर के * सीता मेरी हो जायेगी।
कुछ दिन में खुश होकर मुझसे * कर रघुवर से धो जायेगी॥
फिर राम लखन गर आवेंगे * तो आकर के पछतायेंगे।
या लंक देख फिर जायेंगे * या नाहक जान गवायेंगे॥
कर जोड़ विभीषण कहन लगे * होनी ने बुद्धि बिगारी है।
जो हो भविष्य वह अवश्य होय * होनी ने वल पसारी है॥

दोहा

कहन विभीषण की नहीं * मानी रावण एक।
उठ कर तट से चल दिया * रखी आपनी टेक॥४६४॥

बहर खड़ी

उठ कर कर गवन चला वह तो * उपवन अशोक में आया है।

चलता है झूमता गज सुमस्त * इस तरियाँ चरन बढ़ाया है ॥
देखी अशोक तल शोक मयी * सीता विचार कुछ करती है।
या महामंत्र का जाप करे * या राम चरन उर धरती है ॥
पुष्पक विमान में सीता को * रावन ने पुनः बैठाया है ।
क्रीड़ा के शुभ स्थान जहाँ हैं * उस ठाम सिया को लाया है॥
ऐश्वर्य दिखाता है अपना * मुख से यह वचन उचारे हैं।
हे हंस गामिनी ! नज़र करो * यह रमण-धाम शुभ भारे हैं ॥

दोहा

शिखर रत्नमय शुभ सुगर * शैल शैल आनंद ।
झरने सुंदर नीर क * झरें खिले मकरंद ॥४६५॥

बहर खड़ी

स्वादिष्ट सलिल के यह श्रोते * पर्वत से वह कर आते हैं ।
अपने वहने की लहरों से * यह शायद तुम्हें बुलाते हैं ॥
यह क्रीड़ा धाम हमारे हैं * नंदनवन को शरमाते हैं।
करने जब क्रीड़ा आते हैं * यह देख हमें सरसाते हैं॥
स्वेच्छानुरूप भोगने के यह * योग बना धारा ग्रह है।
अरु हंस हंसनी सहित क्षीर * सागर सा यह सुंदर द्रह है॥
यह स्वर्ग खंड के तुल्य बना * रति ग्रह हमारा सुंदर है।
इस को यहाँ आकर देख देख * शरमाता स्वमन पुरंदर है॥

दोहा

सीता ने उत्तर नहीं * दीना उसको ऐक ।
कोप हिये में गोप के * धारा बुद्धि विवेक ॥४६६॥

बहर खड़ी

दशकंठ रमण-स्थान सभी * सिया को दिखाता फिरता है।
उन सुंदर सुगड़ सुधामों की * रचना दिखलाता फिरता है॥

जब सिया का उत्तर नहिं पाया * तो अपने मुख को मोड़ लिया।
भ्रमण करवा कर के सिय को * आ देव रमण में छोड़ दिया॥
यह हाल विभीषण ने देखा * रावण उन्मत्त हुवा भारी।
समझाये नहीं मानता है * ठुकरा दी नेक सला सारी॥
इस पर विचार करन के हेत * बुलवाये हैं मंत्री सारे।
रख के प्रस्ताव दिया सन्मुख * और बचन इस तरह उच्चारे॥

दोहा

दशकंधर के शीश पर * हुवा काम असवार।
यह मारग दे छोड़ कर * करो कोई उपचार॥४६७॥

बहर खड़ी

इस पथ को जो नहिं त्यागेगा * तो अनर्थ भारी हो जाये।
सब में है कहो कौन ऐसा * जो जाकर उसको समझाये॥
इस कामदेव के कारण ही * वह आफत में फँस जायेगा।
लंकागढ़ धूल मिलायेगा * कस जटिल पाश में जायेगा॥
केवल हम नाम के मंत्री हैं * मंत्री का साहस आप में हैं।
समझाओ उन्हें आप जाकर * जो फँसे नाथ संताप में हैं॥
हां असर हमारे कहने का * हमको अनुमान नहीं होता।
मिथ्यादृष्टि को जिस तरिया * जिन धर्म का ज्ञान नहीं होता।

दोहा

लखन राम से मिल गये * बड़े बड़े बलवान।
पौरुष उनका देख कर * कपि कपि अरु हनुमान॥४६८॥

बहर खड़ी

न्यायी महात्माओं का पक्ष * कहो कौ ग्रहण नहिं करता है।
सत गुरु के सुन्दर सुगर शब्द * अपने सिर कौन न धरता है॥

इस ही सीता के निमित्त सुनो * रावण कुल क्षय हो जायेगा।
आवेंगे राम लखन जब चढ़ * उनसे फिर कौन बचावेगा।
रावण के कुल का नाश खास * ज्ञानिन ने अस फरमाया है।
दशकंठ का मरना लछमण के * हाथों से सुना बताया है॥
तो भी उपाय करना दुख का * सु सभ्य जनों के योग ही है।
संकट से शोक से बचने में * करना सब को सयोग ही है।

दोहा

जिस नर वर की कामिनी * लाया हर लंकेश।
वह नर-नाहर किस तरह * आवे ना इस देश॥ ४९९॥

बहर खड़ी

दिया निमंत्रण जिस नर वर को * वह तो भोजन को आयेगा।
जिस तरह हो सकेगा अपना * कर काज सिद्ध वह जायेगा॥
नहिं ढील विभीषण करी जरा * सामान समर का करन लगे।
अन्न आदि इकत्रित करवा के * दुर्ग के कोषों में भरन लगे॥
कोटों कोटों पर तोपों के * अति बन्दोवस्त करवाये हैं।
बुर्जों पर दुर्ग के यंत्रों को * ले जाकर के धरवाये हैं॥
गोलंदाजों को तुरत हुकम * जब वीर विभीषण दीना है।
चेतन हो के कारज कीजे * हुशियार सभी को कीना है॥

दोहा

बीते सीता विरह में * दिवस मास अनुमान।
बेकल होकर लखन से * बोले राम सुजान॥ ५००॥

बहर खड़ी

जैसे जैसे जाता है वक्त * तन विरह वेदना बढ़ती है।
जिस तरह गरल की लहर * जहर से वायु दूनी चढ़ती है॥
बस यही हाल रघुवर का है * कुछ काम न करना भाता है।

रमणीक रमण वन है, रमणी * बिन फीका मुझे दिखाता है ॥
कुछ भी अन्न पान अच्छा मुझ को * सीता के बिन नहीं लगता है।
बाँधू हूँ मन में धीर बहुत * पर धीरज कर से भगता है ॥
सुग्रीव का आश्वासन मुझ को * कुछ समय हुआ अवलम्ब भला ।
पर कपिपति नहीं यहाँ आया * हुवा है बहुत विलम्ब भला ॥

दोहा

वचन सुनो मेरे लखन * कहूँ तुम्हें समझाय ।
नीर न आवे तृषित तट * तृषित नीर तट जाय ॥ ५०१ ॥

बहर खड़ी

कपिपति सुख में सब भूल गये * कुछ मेरी खबर नहीं लीनी ।
विश्वास दे गये थे मुझ को * उसकी परवाह नहीं कीनी ॥
रघुवर के बचन सुनो लक्ष्मण * तन में अति क्रोध समाया है ।
हो गये हैं लोचन लाल-लाल * बल आ ललाट पर छाया है ॥
फड़कें हैं भुजा अधर कड़कें * और दन्त कटाकट बजते हैं ।
कर में निज धनुष उठा लीना * शुभ खंग हाथ में सजते हैं ॥
कर नमस्कार धनु को संभार * लक्ष्मण ने चरन बढ़ाया है ।
कँप गई दिशा कोपैं हैं मही * आकाश देख थर्राया है ॥

दोहा

उखड़ उखड़ गिरने लगे * विटप विपन थर्राय ।
हुवा कुलाहल जब लखन * धाये चरन चढ़ाय ॥ ५०२ ॥

बहर खड़ी

पहुँचे किष्किधा में जाकर * हट गये द्वार के द्वार पाल ।
सुग्रीव भूप कँप गये तुरत * दीखे हैं सुंदर रुप काल ॥
कर जोड़ लगे विंती करने * मैं भूल गया अपराधी हूँ ।
करिये अपराध क्षमा मेरा * मैं नाथ क्षमा का आधी हूँ ॥

लच्मण के चरण पकड़ लीने * अपराध तुरत स्वीकारा है ।
हो आप क्षमा सागर प्रभु * अलबत अपराध हमारा है ॥
लच्मण झुँझला कर बोल उठे * रघुवर की तुझ को खबर नहीं ।
निर्भय हो तू सुख भोग रहा * समझा तुझ से को ज़बर नहीं ॥

दोहा

सीता की मँगवा खबर * कहूँ तुझ से समझाय ।
भला इसी में जान तू * जो सुख अपना चाय ॥५०३॥

बहर खड़ी

जो चाहत हो तुम सुख अपना * तो सिय की खबर मँगाओ तुम ।
इस ही में भला समझ लेना * रघुवर के सन्मुख जाओ तुम ॥
सुन कर सुग्रीव हुवा आगे * पीछे लच्मण धनुधारी है ।
श्रीराम के सन्मुख कपिपति ने * जाकर के अरज़ गुज़ारी है ॥
हे देव ! दयालु आप तो हैं * मैं दास आप के चरणों का ।
चाहता हूँ दया दृष्टि निश दिन * है बड़ा भरोसा करनों का ॥
योद्धा बुलवा लीने सारे * सब बैठ मता यों कीना है ।
चलने को आप तयार हुवा * और हुक्म सबों को दीना है ॥

दोहा

आज्ञा मानी भूप की * खेचर बैठ विमान ।
फिरें खोज करते सभी * गिरवर बीयावान ॥५०४॥

बहर खड़ी

पर्वत वन खंड खोह सरिता * फिरते हैं ढूँढ़ते सीता को ।
द्वीपों में नगरों में ग्रामों में * देख रहे अब सीता को ॥
भामंडल को जब मिली खबर * सीताजी के हर जाने की ।
हो कर सवार चल दिये तुरत * सुध भूले पीने खाने की ॥
बैठे हैं राम निकट आके * सेवा करने को मन चाया ।

अत्यन्त राम को देख दुखित * भामंडल का मन भर आया ॥
स्वामी के दुःख को लख विराध * भारी सेना ले आया है।
प्यादे की तरह रहन लागे * ऐसा मन में ठहराया है॥

दोहा

मन सुग्रीव विचार कर * कम्बू द्वीप दरम्यान।
आ निकले उस वन विषे * देखा धर कर ध्यान ॥५०५॥

बहर खड़ी

जब रत्नजटी ने कपि पति को * आता निज ओर निहारा है।
रह गया सोचता वहीं खड़ा * कुछ मन में किया विचारा है॥
अब मुझे मारने के काजे * रावण ने इसे पठाया है।
सुग्रीव भूप बलवान महा * इस कारण ही यह आया है॥
पहिले तो विद्या हर लीनी * अब हरना चाहे प्रानों से।
किस तरह बचूँ अब मैं इस से * हन डालेगा यह बानों से॥
सोचे था खड़ा-खड़ा मन में * जब तक सुग्रीव वहाँ आया।
इस तरह कहे सुग्रीव भूप * क्यों देख मुझे मुख दुबकाया॥

दोहा

रतनजटी कहने लगा * सुनो भूप धर ध्यान।
हरण जानकी का किया * रावण वन दरम्यान ॥५०६॥

बहर खड़ी

उस वन में रावण को रोका * संग्राम छिड़ गया भारी है।
मैंने जब रोका मारग को * हर ली विद्या मम सारी है॥
जब से मैं वन में पड़ा हुआ * वन-फल खा दिवस बिताता हूँ।
जब देखूँ हूँ आते जाते * तो वृक्षों में छुप जाता हूँ॥
सुग्रीव भूप ने रत्नजटी * अपने विमान बैठाया है।
तत्काल उड़ाया वायुयान * रघुवर के तट ठहराया है॥

स्वामी यह पता जानकी का * सारा तुम को बतला देगा।
जिस तरह जानकी जाती थी * सब सच्चा हाल सुना देगा॥

दोहा

बोले राम सुजान जब * दे खेचर को धीर।
सीता का सब हाल अब * सत्यासत्य कहे वीर॥५०७॥

बहर खड़ी

यह सुन कर रत्नजटी बोला * स्वामी सब हालत सुन लीजे।
उस कपटाचारी रावण की * दुर्नीति अब चित्त में दीजे॥
वह क्रूर जिस समय सीता को * बैठा विमान ले जाता था।
दशकंठ दुरातम तेजी से * अति वायुयान उड़ाता था॥
सीता मुख राम-राम लक्ष्मण * यह शब्द निकलते जाते थे।
भामंडल भाई कहःकह कर * हृदय के भाव उछलते थे॥
यह हाल देख मेरे तन में * गुस्से का वेग समाया था।
संग्राम किया उससे मैं ने * मम विद्या छीन गिराया था॥

दोहा

सीता का वृतान्त सुन * रघुवर मन हर्षाय।
रत्नजटी को झपट कर * लीना कंठ लगाय॥५०८॥

बहर खड़ी

पूछे हैं रघुवर बार बार * पुनः रत्नजटी बतलाता है।
श्री राम सु मन बहलाने को * सीता का नाम सुनाता है॥
सुग्रीव आदि सब सुभटों को * सादर निज निकट बुला लिया।
लंका है कितनी दूर कहो * ऐसा रघुवर ने प्रश्न किया।
वह लंका दूर या निकट होय * पर विकट वीर दशकंधर है।
है विश्वविजेता तेजवान * प्रतापी ईश पुरन्दर है॥
उसके समान बलवान कोई * भूमि पर नज़र नहीं आता।

विद्या में बल में छल-बल में * अरु दूजा वीर नहीं पाता ॥

दोहा

ऐसी बातों का कुछी * करिये मती विचार ।
विजय पराजय युद्ध में * नैना लेओ निहार ॥ ५०९ ॥

बहर खड़ी

तुम हमें अलग से रावण को * दर्शन के तौर दिखा देना ।
फिर दूर खड़े होकर तुम सब * संग्राम का सुन्दर रस लेना ॥
लक्ष्मण के बाणों की वर्षा * वर्षे जब रावण के ऊपर ।
ग्रीवा में उसके विषियर से * लिपटेंगे जब कुछ होय असर ॥
तुम जिसे वीर बतलाते हो * कायर कपटी अरु क्रूर है वह ।
लम्पटी हटी परतिय गामी * जिसको बतलाते शूर है वह ॥
लक्ष्मण के धनु से विषधारी * जब निकले प्राण हरंत बान ।
उस समय देख लेना कैसा * लक्ष्मण निकले सामर्थ वान ॥

दोहा

सुन लक्ष्मण कहने लगे * कर के क्रोध कराल ।
मेरे धनु के बांण हैं * उसको विषियर व्याल ॥५१०॥

बहर खड़ी

ऐसे की क्या तारीफ करो * जो माल मारन जानता है ।
कूकर की तरिया छुप-छुप कर * त्रिय को उधारन जानता है ॥
किस तरह युद्ध करता होगा * जो धोखा देना जानता है ।
कर कपट रूप छल-बल करके * नारी हर लेना जानता है ॥
मैं समर क्षेत्र में जब उसको * अपने सन्मुख लख पाऊँगा ।
संग्रामी सभ्य रूपी नाटक * कर के उसको दिखलाऊँगा ॥
रणभूमि अपने बाणों से * व्यालों की तरियां भर दूँगा ।
क्षत्रियाचार से पल भर में * शिर छेदन उसका कर दूँगा ॥

दोहा

जामवंत कहने लगे * सुनो लगा कर कान ।
ज्ञानी पुरुषों ने कहा * वह सुन लीजै ब्यान ॥५११॥

बरह खड़ी

आये थे अनल वीर्य ज्ञानी * उनने ऐसा फरमाया था ।
जो कोटि शिला उठा लेगा * उस के कर काल वताया था ॥
सामर्थवान तुम सव कुछ हो * वीरों में भी प्रधान हो तुम ।
गुणवान अरु वलवान हो तुम * तपवान पौरुषवान हो तुम ॥
ज्ञानी के शब्द असत नहीं है * किस दी भी वक्र हो सकते हैं ।
जो अंकित हृदय पट पर हैं * क्यों कर उन को धो सकते हैं ॥
जो कोटि शिला आप चल कर * अपने कर में यदि धारेंगे ।
होगा विश्वास देख मन में * आप ही रावण को मारेंगे ॥

दोहा

लखन वचन सुन कर हुवे * चलने को तैयार ।
जहाँ होय कोटि शिला * मैं लूँ उसे निहार ॥५१२॥

बहर खड़ी

बैठे हैं वायुयान वीच * मार्ग आकाश के धाये हैं ।
जिस गिरि पर कोटि शिला पड़ी * उस गिरि पर लक्ष्मण आये हैं ॥
देखो है शिला आन कर के * उस को तत्काल उठा लिया ।
पौरुष सामर्थ तुरत अपना * उन सब को लखन दिखा दिया
आकाश से पुष्पों की वर्षा * खुश होकर सुर वर्षाई है ।
जै कारे होते रहे गगन * आनंद बधाई छाई है ॥
हो गई प्रतीत सबों के मन * अति प्रीति रीति का भाव बढ़ा ।
पुन राम लखन के संग रहे * ऐसे सब के मन चाव बढ़ा ॥

दोहा

आये हैं प्रतीत कर * लखन राम के पास।
अब सब मिल कर दूत की * करने लगे तलाश ॥५१३॥

बहर खड़ी

सब वृद्ध पुरुष मिल कर बैठे * आपस में मता उपाया है।
साहसी विवेकी बुद्धिवान * हो दूत यही मन चाया है॥
यदि समाचार देने से ही * जो अपना काम सँभल जाये।
किस कारण फिर संग्राम होय *क्यों सारा दल चढ़ कर जाये॥
हो प्राक्रमी और बुद्धिमान * जो बन कर दूत वहाँ जाये।
जाकर के मिले विभीषण से * उसको हर तरियाँ समझावे॥
वह नीतिवान बुद्धिवान भी है * अरु राक्षक-कुल में आला है।
रावण को वह समझा कर के * झगड़ा निपटाने वाला है॥

दोहा

सुमत बुला सुग्रीव ने * दीना भेज तुरंत।
समझा कर कह दीजियो * लाओ बुला हनुमंत॥ ५१४॥

बहर खड़ी

सुन कर के आज्ञा चला दूत * प्रह्लाद नगर में आया है।
प्रणाम किया अति हर्ष सहित* सारा अहवाल सुनाया है॥
सुनते ही हनुमत चल दीने * नहिं पथ में वार लगाई है।
आगये बीच किष्किधा के * गये तुरत सभा में आई है॥
सविनय प्रणाम राम को कर * हर्षा हनुमान चरन लागे।
उन पावन चरन कमल के वन * अलि शुभ सुंदर रस में पागे॥
सुग्रीव भूप ने रघुवर से * बजरंग का परिचय करवाया।
सुत वीर पवनञ्जय के यह हैं * ऐसा कपिपति ने फरमाया॥

दोहा

सीताजी के शोध के * योग यही बलवान।

इन को आज्ञा दीजिये * जायेंगे हनुमान ॥ ५१५ ॥

बहर खड़ी

सुन कर के हनुमान बोले * मेरे सम वीर घनेरे हैं ।
कपिपति की मुझपर दया बहुत * करुणानिधेश यह मेरे हैं ॥
हैं गव गवाक्ष गवया शर भज * नल नील द्विविधअति बलशाली
गंध माधन जामवन्त अंगद * हैं मैंद आदि प्रतिभाशाली ॥
हैं बहुत उपस्थित विद्याधर * सब एक एक से बल वाला ।
विद्या में गुण में और बल में * सभी शस्त्र चलाने में आला ॥
सब द्वीप राक्षस सहित अगर * आज्ञा पाऊँ तो ले आऊँ ।
रावण को बंधुओं सहित बाँध * लंका को तुरत उठा लाऊँ ॥

गायन

[तर्ज-कव्वाली]

प्रभु तेरी कृपा से आज * बल इतना रखावें हम ।
राक्षस द्वीप से लंका * उठा के यहाँ पै लावें हम । १ ॥
सहित रावण कुटुम्ब सारा * बाँध के ला धरें प्रभु पाँ ।
कहो निर्वंश रावण का * करें ना वार लावें हम ॥ २ ॥
सत्यवती सती-सीता को * लाऊँ मोद से यहाँ पर ।
हुक्म दीजे कृपा सिन्धु * कार्य करके दिखावें हम ॥ ३ ॥
'चौथमल' राम कहे ऐसे * सत्य हनुमान तुम समरथ ।
एक दफे जाय कर आवो * खबर जल्दी से पावे हम ॥ ४ ॥

दोहा

सुन उत्तर देने लगे * सुनो वीर हनुमान ।
सब प्रकार सामर्थ तुम * शुभ बल बुद्धि निधान ॥ ५१६ ॥

बहर खड़ी

पर अभी काम यह है भाई * कि जनक सुता के तट जाओ ।

लंका में जाकर के देखो * सूचना सिया को पहुँचाओ ॥
यह चिह्न रूप मुद्री मेरी * सीता को जाकर दे आना ।
और जनक सुता का चुड़ामणि * तुम चिह्न रूप में ले आना ॥
कहना मेरा संदेश जाय * अरु कुशलोक्षेम सुनाना तुम ।
जैसा वहाँ दृश्य नज़र पड़े * वह आकर मुझे बताना तुम ॥
तुम राम विरह से हे देवी * निज जीवन मती छोड़ देना ।
आशा से थोड़े दिवस जियो * मत अपनी आश तोड़ देना ॥

दोहा

अन्न वियोग में आपके * लगे न किंचित स्वाद ।
घड़ी-घड़ी पल-पल समय * आवे तुमरी याद ॥५१७॥

बहर खड़ी

कल दिन में पड़े नहीं किंचित * अरु निश में नींद न आती है ।
हर घड़ी ध्यान तेरा रहता * तुझ विन तावियत घबराती है॥
कुंजर जैसे वन में खुश हो * मैं खुश हूँ देख तुम्हें प्रिया ।
जिम योगी योग किये खुश हो * मैं तुम्हें देख कर खुश सिया ॥
लक्ष्मण के बाणों से रावण * जल्दी विह्वल हो जायेगा ।
जैसा कृत किया दशानन ने * वह वैसा ही फल पायेगा ॥
मेरे भेजे हैं हनुमान * इनसे मुंद्री ले लेना तुम ।
अपनी चूड़ामणि चिह्न तौर * इनको खुश हो देना तुम ॥

दोहा

कर प्रणाम श्री राम को * चले वीर हनुमान ।
शीघ्र गमन वाला लिया * अपने साथ विमान ॥५१८॥

पवन-तनय संकट हरन * रघुनायक के दूत ।
हो सहाय वर दीजिये * भुज वल कर मजवूत ॥५१९॥

बहर खड़ी

ऐसा न हुवा न दृष्टि आवे * भविष्य को ज्ञानी जानते हैं।
था बल अकूत मजबूत महा * इस को सब ही पहिचानते हैं॥
हे राम तनय अब बात बने * हो दया आप की जो स्वामी।
कर काज लाज रखियो मेरी * गुणवान वली अम्बर गामी॥
मैं तुझे मनाता हूँ हनुमत * अब विजय करवैयो आकर के
कर दीजे मेरा कृत पूरण * धीरज धरवैयो आकर के॥
कर याद तुम्हें हृदय में मैं * अब राम की लीला गाता हूँ।
कहे 'चौथमल मुनि' हृदय में * इस कारज तुम्हें मनाता हूँ॥

दोहा

गगन गती जाते चले * सुगर वीर हनुमान।
मारग में सु दृष्टी पड़ा * महेन्द्रपुर सु स्थान॥ ५२०॥

बहर खड़ी

लख कर पुर वदन क्रोध छाया * जब याद पुरातन आई है।
मम मात अंजनी निरपराध * पुर से नृप ने कढ़वाई है॥
ऐसा विचार कर हनुमत ने * बाजा रण का बजवाया है।
आकाश में ध्वनि छाई भारी * नृपति चक्कर में आया है॥
कोलाहल महेन्द्रपुर में छाया * सारी प्रजा घबराई है।
उस बाज जुझाऊ की अवाज * कानों भूपत के आई है॥
राजा महेन्द्र संग पुत्रों के * सैना को लेकर चढ़ आया।
देखा है पुर को घिरा हुआ * आकर के गुस्सा तन छाया॥

दोहा

प्रसन्न कीत कहने लगे * सुनो पिता धर ध्यान।
समर भूमि में जाय कर * देखूँ इसका मान॥ ५२१॥

बहर खड़ी

वह समर करूँगा समर समर * धरती आकाश दहल जाये।

सागर का नीर उछलने लगे * पर्वत पहाड़ सब बल खाये ॥
वर्षा वर्षा हूँ बाणों की * जिम हस्त नक्षत्र की धार पड़े ।
भागें शत्रु मैदान छोड़ * जब रिपु पर मारा मार पड़े ॥
इतना कह धावा कर दिया * हनुमान के सन्मुख आया है ।
छिड़ गया युद्ध चलते शस्त्र * झन्नाटा सा वन छाया है ॥
सन सन कर बाण निकल जाते * आते हैं विषियर काले से ।
हनुमंत वीर भी डटे रहे * जैसे कुँजर मतवाले से ॥

दोहा

मन विचार हनुमंत ने * नृप सुत बाँधा जाय ।
बँधा पुत्र को जान कर * भूप दहाड़े आय ॥ ५२२ ॥

बहर खड़ी

छोड़े हैं शस्त्र तीव्र तीखे * हनुमान विकल कर देते हैं ।
विविध प्रकार नाना के बाण * निज वक्षस्थल पर लेते हैं ।
बेकार हुये शस्त्र जिस दम * महेन्द्र भूपति घबराये हैं ।
हनुमान देख उनको विह्वल * कर जोर सामने आये हैं ॥
मैं दुश्मन नहीं आपका हूँ * माता अंजनी का जाया हूँ ।
जाता कारज स्वामी के था * तुम से मिलने को आया हूँ ॥
वीरोचित कर्म देख भूपत * अति ही प्रसन्न हुवे मन में ।
फूले नहीं अंग समाते हैं * हनुमत को लगा लिया तन में ॥

दोहा

मैं जाता हूँ लंक को * निज स्वामी के काज ।
मिलो जाय तुम राम से * जहँ कपि पति का राज ॥५२६॥

बहर खड़ी

प्रसन्न हुवे महेन्द्र भूपत * आनन्द की सीमा नहीं रही ।
कल्याण होय हो काज सफल * शुभ वाणी भूप ने हर्ष कही ॥

नाना का आशीर्वाद पाया * हनुमंत करी है किलकारी।
मारी कुलाँच चढ़ वायुयान * आगे बढ़ जाते बलधारी ॥
तेजी से छोड़ा वायुयान * आकाश मार्ग से जाते हैं ॥
पहुँचे हैं दधि मुखी द्विप बीच * वहँ का अहवाल सुनाते हैं ॥
उस वन के बीच प्रज्ज्वलित थी * वरनी प्रचंड अति बलशाली।
करते थे दो मुनि ध्यान जहाँ * जब कपी नज़र उन पर डाली ॥

दोहा

तप करतीं थीं विपिन में * कन्या तीन निहार ।
हनुमत ने कीना तुरत * अपने हृदय विचार ॥ ५२४ ॥

बहर खड़ी

होती है घात वृथा इनकी * यह अग्नी में जल जायेंगे।
नहिं छोड़ इन्हें जाना चाहिये * अपने कारज बन जायेंगे ॥
ऐसा विचार कर हनुमत ने * सागर से पानी लाकर के।
वरनी पर दिया ओज तुरत * दीनी है आग बुझा कर के।
कन्याओं की सध गई विद्या * मन में आनंद समाया है ॥
अपना सारा अहवाल आन * हनुमत को तुरत सुनाया है।
है गा धन धन बलवान तुम्हें * संतों का उपद्रव टाल दिया ॥
जो आया था आँधी समान * वर्षा कर उसे निकाल दिया ॥

दोहा

पवन तनय कहने लगे * कौन तुम्हारा ग्राम ।
मात पिता है कौन से * कौन सुगर है धाम ॥ ५२५ ॥

बहर खड़ी

दधि मुक्खनगर गान्धर्व राव है * नारी प्रिया कुसुममाला ।
उनकी हम तीनों कन्या है * अहवाल सत्य सब कह डाला
मुनियों ने पितु से भविष्य कहा * जो साहस गति को मारेगा ।

इन कन्याओं को वही वरे * वे ही यश माला डारेगा ॥
पितु बहुत तलाश करी उनकी * पर उनका पता न पाया है।
पछता के बैठ रहे पित तो * हम विद्या साधन चाया है॥
सुन कर हनुमान लगे कहने * जिसने साहस गति मारा है।
वह वीर रहे किष्किंधा में * वही राम भक्त का प्यारा है॥

दोहा

अस कह कर किया गमन * पवन तनय हनुमान ।
पवन गति से जा रहे * उड़े हुए असमान ॥५२६॥

बहर खड़ी

लंका के निकट विकट बंका * होकर निशंक जब आया है।
देखा अशालिका विद्या को * अग्नी का कोट बनाया है॥
बोली है विद्या हनुमत से * आगे को तु कहाँ जाता है।
मैं खड़ी राह देखूँ तेरी * मुझ से क्यों बदन छुपाता है॥
मैं यही चाहती थी हनुमत * आवे उसका आहार करूँ।
क्षुधा लग रही बहुत मुझको * तुझ से अब अपना पेट भरूँ॥
केशरी कुमार यह सुन कर के * विद्या के मुख में तुरत गये।
उर को विदार निकसे बाहर * रवि बदली से जिम प्रगट भये॥

दोहा

धाये कोट फरलांग कर * गये लंक दरम्यान ।
नाम वजर मुख राक्षस * तुरत दहाड़ा आन ॥५२७॥

बहर खड़ी

उस गढ़ का रक्षक वह निश्चर * जो कोट की रक्षा करता था।
हर तरह भूप दशकंधर के * हृदय को निश दिन भरता था॥
लख हनुमान गुस्सा कर के * कृपान उठाकर बढ़न लगा॥
दीखे है काल कराल आन * हनुमान वीर से लड़न लगा॥

एक ही चपेटे में उसको * हनुमान वीर ने मार दिया।
जैसे गज कमल नाल तोड़े * इस तरह खंड कर डार दिया॥
मार्ग के कंटक प्रथक् किये * कुछ आगे वढ़ना चाया है।
जव तक आ लंका सुन्दरी ने * मार्ग को आन दबाया है॥

दोहा

वल बुध विद्या रूप में * जो थी अति हुशियार।
वज्जर मुख की बालिका * हुई लड़न को त्यार ॥ ५२८॥

बहर खड़ी

अति रूपवान विद्याशाली थी * लंक सुन्दरी एक नारी।
निज पितु का बदला लेने को * आकर वाघन सी धुधि मारी॥
अति चूर मूर भरपूर युवा * सग्राम के हित ललकारी है।
देखा है हनुमान उसको * जव मन के बीच विचारी है॥
हनुमत कर रहे विचार अभी * उसने इक वाण चलाया है।
रोका उसको हनुमान तुरत * बीच ही में काट गिराया है॥
उसने छोड़े हथियार बहुत * हनुमत ने निष्फल कर दिये।
नहिं किया वार नारी ऊपर * यह नीति वचन चित्त धर लिये

दोहा

असल रूप धर वीर ने * किये शस्त्र बे काम।
सुन्दरता लख वीर की * शरमाया मन काम ॥ ५२६॥

बहर खड़ी

जब चला जोर नहीं हनुमत से * भर दृष्टि पुनः निहारा है।
हनुमत का रूप विलोक सुन्दरीने * तन मन धन वारा है॥
पित वैर के हित बिन जाने ही * तुम से संग्राम किया मैंने।
अब क्षमा करो अपराध मेरा * संगर बे काम किया मैंने॥
वाणी भविष्य मुनिराज ने की * जो तेरे पित को मारेगा।

वह पुण्यवान तेरा पति हो * सब तेरा कारज सारेगा ॥
अब शरण आप के आई हूँ * आशा मेरी पूर्ण कीजे ।
दासी को अपनाओ स्वामी * खुश होकर नाथ वचन दीजे ॥

दोहा

विनय वचन सुन वीर ने * कर गन्धर्व विवाह ।
कन्या को अपनाय कर * ली आगे की राह ॥५३०॥

बहर खड़ी

अनुमत प्रिय से ले चल दीने * लंका में गया कपि प्यारा है ।
लंकापुरी को देखी सारी * मन्दिर एक उच्च निहारा है ॥
गये भक्त विभीषण के घर में * सादर उनको बैठारा है ।
आने का कारण हनुमत से * पूछा मोदित हो सारा है ॥
लंका पति सीता को हर कर * वन में से यहाँ ले आया है ।
तुम दो छुड़ाय जा सीता को * मैंने तुमको समझाया है ॥
दशकंठ के योग न था यह कृत * जो ग़लती से कर डाला है ।
जिसको वह जामन समझे थे * निकला वह भौंरा काला है ॥

दोहा

कहन विभीषण यों लगे * सुनो वीर बजरंग ।
दशकन्धर के शीश पर * छया कुमत का रंग ॥ ५३१ ॥

बहर खड़ी

बोले हैं विभीषण हनुमत से * सच सारा कथन तुम्हारा है ।
समझाया जेष्ठ बन्धु को बहुत * नहीं माने कहा हमारा है ॥
अब मान आज्ञा आपकी मैं * पुनः भाई को समझाऊँगा ।
जो आपकी आज्ञा है मुझ को * उस ही को शीश चढ़ाऊँगा ॥
अब पुनः प्रार्थना करूँ कपि * मैं सीता के छुड़वाने की ।
हर तरह करूँगा कोशिश मैं * लंकेश के अब समझाने की ॥

अच्छा हो उसके हृदय से यह * कुमत का जाल निकल जाये।
ले कहना मान दास का अब * और जिद् सुमन से टल जाये॥

दोहा

सुनकर महलों से चले * तुरत वीर हनुमान।
पहुँचे बजरंग धाय कर * देव रमण उद्यान ॥ ५३२ ॥

बहर खड़ी

बैठी सीता है शोक मयी * अशोक वृक्ष के नीचे है।
मुख पर उड़ रहे हैं श्याम केश * दोनों नैनों को मींचे हैं॥
नैनों से नीर वर्ष कर के * जड़ तरु अशोक की सींचें हैं।
उस जड़ में से जो उबल जाय * कर देव भूमि पर कीचे हैं॥
जिस तरह कमलिनी हिम पीड़ित * ऐसा आनन मुरझाया है।
जिस तरह दूज का चन्द्र लीक * तन ऐसा जीर्ण बनाया है॥
या विज्जु भूल घन आन गिरि * उसकी आभा सब क्षीण भई।
या इन्द्रलोक की इन्द्राणी * मार्ग को भूल मलीन भई॥

दोहा

अधर शुष्क हैं दुक्ख से * व्याकुल हैं सब गात।
नीचा मुख है सीय का * शीश धरे युग हाथ ॥ ५३३ ॥

बहर खड़ी

वस्त्र मलीन तन क्षीण महा * अति दुखित विपिन बैठी सिया।
हनुमत देख अति दुखी हुए * अपने विचार मन में किया॥
होते हैं नैन पवित्र दर्श * ऐसी सतियों के करने से।
प्रत्येक वाम को इनके गुण * अपने हृदय के भरने से॥
इस महासती के विहर बीच * पीड़ित यदि राम सुजान जो है।
है दुक्ख उन्हें सो सम्भव है * इस शीलवती का ज्ञान जो है॥
ऐसी सुन्दर और शीलवती * मिलती है पुण्यवान नर को।

है राम भूप को धन्य धन्य जो * न्याय को बैठे कर भर को ॥

दोहा

मणि मुद्रि हनुमान ने * लीनी हाथ उतार।
हो अदृश्य चढ़ वृक्ष पर * दी गोदी में डार ॥ ५३४ ॥

बहर खड़ी

सुन्दर मुद्रि को लख सीता * हो गई शुभ तेज कमर सी है।
हो मोह सिन्धु के बीच पड़ी * वह मुद्री आन भँवर सी है॥
खुश हो सीता ने ली उठा * प्यारी मुद्री पिय प्यारे की।
ले हाथ लगी चतराने को * इस जीवन के रखवारे की ॥
किस तरह लंक में तू आई * तू राम के कर की प्यारी है।
मैं यदि हृदय की प्यारी हूँ * तू मुझ से भी अति प्यारी है ॥
क्या मेरी तरह तुझे कोई * लंका में हर ले आया है।
या तुझे सहायक अपना कर * मेरी सुध लेने आया है ॥

दोहा

उन कर की तू मुद्रिका * जो कर कमल प्रधान।
वह कर कैसे त्याग कर * लंका पहुँची आन ॥ ५३५ ॥

बहर खड़ी

छायाँ है जिनकी तीन खण्ड * ऐसे कर तजकर आई है।
क्या हृदय मन्द्र के राणा की * कुछ मुझे सूचना लाई है ॥
आखों से, लगा लगा सीता * मुन्द्रि को हृदय लगाती थी।
फूली नहीं अंग समाती थी * मुन्द्रि से प्रेम बढ़ाती थी ॥
लखकर प्रसन्न मन सीता को * जाकर त्रिजटा ने खबर करी।
अति दुखित रहें थी जो सीता * उसके मन हुल्लास भरी ॥
आरत सब नाश हुआ उसका * अति मोद समाया है मन में।
हँसती प्रसन्न चित्त बैठी है * अति फूल रही है वह तन में ॥

दोहा

सुन कर मन्दोदरी से * बोले रावण बैन ।
आज सिया प्रसन्न है * लो मनाय यह कहन ॥ ५३६॥

बहर खड़ी

जाकर सीता को समझाओ * वह आज राम को भूली है।
अनुराग तरफ मेरी हुवा * और मोद से मन में फूली है ॥
पति का दूतीपन करने को * सुनकर मन्दोदरी चल दीनो।
सीता का सुमन लुभाने को * राह अशोक वन की लीनी ॥
देखी है जनक सुता बैठी * प्रसन्न चित्त अति पाई है।
हिम कण से कमल हुआ पावन * ऐसी छवि आनन छाई है ॥
फिर विनय-भाव से सीता के * मन को निज हाथ उठाया है।
सम्पत्तिवान और अति सुंदर * दशकंठ तुम्हें समझाया है ॥

दोहा

सुन्दर, सुगर, सुहावना * लावणता की खान ।
लंकापति के योग तुम * सुनो लगा कर कान॥ ५३७ ॥

बहर खड़ी

यद्यपि उस मूर्ख विधाता ने * नहिं योग पती तुम को दिया।
नहिं यान तलक जिसके तट था * ऐसे से तेरा साथ किया ॥
अब योग पुरुष जानकी तुम्हें * रावण जैसा मिल जायेगा।
बिन रवि कुमलाई कमालिनी थी * दिनकर लख दिल खिल जायेगा॥
माने हैं बड़े बड़े जिसको * नृप अर्चन योग सु देवा है।
वही लंकेश करे प्यारी * आकर के तेरी सेवा है ॥
ऐसे स्वामी के मिलने से * फिर भी तुम मुँह छिपाती हो।
जो तुम को तन मन से चाहे * तुम उसको क्यों नहिं चाहती हो

दोहा

सीता बोली क्रोध कर * सुन मन्दोदरी बात ।

दूती पापिन दुर्मुखी * कहते नहीं लजात ॥ ५३८ ॥

बहर खड़ी

तेरे प्रितम दशकंठ का अब * तू आया समय समझ लीजो।
लंका का नाश तुरत होगा * मेरे वचनों पर चित्त दीजो॥
जिसने खर आदिक को मारा * वह लंक में आने वाला है।
तेरे पति को और देवर को * परलोक पठाने वाला वाला है॥
तुझ को वैधव्य दान देकर * मनसा पूरण कर जायेगा।
नहीं बाकी रहें निशाचर यहाँ * ऐसी सम्पत्ति भर जायेगा॥
हो दूर यहाँ से तू कुटनी * मत मुझ को मुख दिखलैयो तू।
है शपथ तुझे निज स्वामी की * मत मेरे सन्मुख अइयो तू॥

दोहा

आया है दशकंठ पुनः * देखा दृष्टि पसार ।
सीता से कहने लगा * कर में ले तलवार ॥५३८॥

बहर खड़ी

सीता ले मान कहा मेरा * मत ज्यादा मुझे सतावे तू।
बेकल दिल को कल दे देवी * कलपा के न कलपावे तू॥
बस भला इसी में तेरा है * लंकापति की आज्ञा मानो।
हट छोड़ हटीली तू अपनी * हट को अपनी अब मत तानो॥
हट करी हटीली गर अब जो * कृपान तेरा खूँ चाटेगी।
जो अब जिह्वा पर ना आई * तो जिह्वा तेरी काटेगी॥
स्वीकार प्रेम मेरा जो करे * तो पटरानी हो जायेगी।
इनकार किया इससे तेने * तो नाहक मारी जायेगी॥

दोहा

इस भवकी से सिंहनी * भय नहिं करे लगार।
बाघन को डरपा रहा * खड़ा सामने स्यार ॥ ५४० ॥

गायन

(तर्ज—बिना रघुनाथ के देखे)

कहे सीता सुनो रावण * तू डर किसको दिखाता है।
सिवा श्री, राम के मुझ को * नज़र दूजा न आता है ॥टेर॥

तुझे है राज का अभिमान * या सोने की लंका का।
मगर ना चीज़ जानूँ मैं * क़दर तू क्यों घराता है ॥१॥

अठारह सहस्र घर नारी * सबर तुझ को नहीं आता।
गैर औरत से इस दिल को * अरे! क्यों नहीं हटाता है ॥२॥

स्वयंबर जीत के लाता * क़ायदा था नरेशों का।
चुरा के तू मुझे लाया * फेर मुँह क्यों दिखाता है॥३॥

अगर गंगा चले उल्टी * चाँद से आग भी निकले।
फेर, सूरज भी शीतल हो * मगर ये सत न हटता है ॥४॥

नहीं परवा सुरेन्द्र की * तेरी फिर हैसियत है क्या।
भेज दे राम पे मुझ को * जो तू आराम चाहता है ॥५॥

सिया ने बहुत रावण को * कहा लेकिन नहीं माना।
'चौथमल' कहे जो होनी हो * नही फिर ध्यान आता है ॥६॥

बहर खड़ी

जम्बुक दशकंठ समझ मन में * मैं सिंह पुरुष की नारी हूँ।
गीदड़ के डर से क्या डर कर * मैं तज सकती आचारी हूँ ॥
कागा से कोयल किस तरियाँ से*कहो प्रेम कर सकती है।
कहीं काम धेनु भी गद्धे की * मूरख नारी बन सकती है ॥
बिन चंद्र के विकसे किस तरियाँ* सर में नलिनी खिल सकती है।
किस तरह असुर से सुरपति की* रानी आकर मिल सकती है ॥
तू दिखता रहा कृपान किसे * कृपान काम नहीं आवेगी।
सुख सम्पति धन वैभव तेरी * सब पड़ी यहाँ रह जायेगी ॥

दोहा

सब रह जायेंगी यहीं * पड़ी हुकूमत जान ।
गर्भ गले क्षण में तेरे * निकल जायेंगे प्रान ॥५४१॥

बहर खड़ी

गज रथ सब यहाँ के यहीं रहें * संग जाये न बालकी पालकी है
योधा सब रहें देखते ही * जब लाठी भूमै काल की है ॥
जिन रत्नों को चमकाता है * वह रत्न काम नहीं आयेंगे ।
लक्ष्मण के बाणों के सन्मुख * सब मान तेरे ढल जाँयगे ॥
तलवार की ताकत तुझ में थी * तो राम के सन्मुख से लाता ।
क्यों कूकर कासा कर्म किया * सिंहों की तरह निडर आता ॥
अब समय आ गया है तेरा * इस से मन तेरा डोल रहा ।
मरना लक्ष्मण सर से चाहे * इसलिये बोल यह बोल रहा ॥

दोहा

यह सुन दशकंधर गया * करके क्रोध कराल ।
उतर विटप से आ गये * सन्मुख कपि तत्काल ॥५४२॥

बहर खड़ी

जाता देखा है रावण को * कर जोड़ खड़े हनुमान हुवे ।
माताजी कुशल राम लक्ष्मण * कह कर खुश पुष्प समान हुवे ॥
मैं राम की आज्ञा से माता * यहाँ तुम्हें खोजने आया था ।
सारी लंका में खोज करी * जब आपको यहाँ पर पाया था ॥
जब खबर आपकी लेकर के * यहाँ से किष्किंधा जाऊँगा ।
उस समय राम को संग लेके * माता मैं लंका आऊँगा ॥
जब हनुमान को जनक सुता * ऊँचा कर शीश निहारा है ।
नैनों में जल कण छाय रहे * सिया ऐसा वचन उचारा है ॥

दोहा

हे वीरा तुम सब करो * अपना सत्त बयान ।
नाम ग्राम का दो बता * तुमरा कहाँ स्थान ॥५४३॥

बहर खड़ी

किस नृप के वीर पुत्र तुम हो * सब अपना हाल बता देना ।
क्या नाम आपका है मुझ को * शुभ नाम से सूचित कर देना ॥
यह सुन कर पवन कुमार अपना * सब नाम धाम बतलाते हैं ।
प्रह्लाद नगर के पवन भूप * उनके हम पुत्र कहाते हैं ।
हे मात नाम है हनुमान * अंजनी मात का जाया हूँ ।
रघुनाथ का कारज करने को * मैं लंक पुरी में आया हूँ ॥
श्रीराम लखन अति मन प्रसन्न * किष्किंधापुर में ठहरे हैं ।
बस विरह आपके के उनके * अति घाव ज़िगर में गहरे हैं ॥

दोहा

वायुयान द्वारा किया * सागर मैंने पार ।
पुन सागर को लाँघ कर * आया लंका द्वार ॥५४४॥

बहर खड़ी

जिस तरह बिछुड़ कर गौ छौना * माता के हेत फड़कता है ।
बस इसी तरह लक्ष्मण तुम बिन * माता दिन रात फड़कता है ॥
सुग्रीव भूप उनको निश दिन * आश्वासन देते रहते हैं ।
भामन्डल और विराध वीर * उत्साहित करते रहते हैं ॥
महेन्द्र आदि भारी राजा * सब राम की सेवा करते हैं ।
सेना होगई एकत्र बहुत * संग्राम का अब दम भरते हैं ॥
देकर मुद्रिका राम मुझ को * माता तव पास पठाया है ।
विश्वास के कारण चूड़ामणि * तुम से भी मात मँगाया है ॥

दोहा

पूछा है हनुमान ने * मात कहो सब बात ।
भोजन कब से नहिं किये * जो कुमलाया गात ॥५४५॥

बहर खड़ी

बीते हैं दिन इकीस बीर * धीरज धर मन बहलाती हूँ ।
मैं राम चरन का ध्यान धरूँ * न पीती हूँ न खाती हूँ ॥
यह सुन कर वीर कुलांच भरी * फल फूल तोड़ कर लाये हैं ।
हनुमान आग्रह से सिय को * पुनः भोजन तुरत कराये हैं ॥
दीनी उतार फिर चूड़ामणि * लो वत्स इसे तुम ले जाना ।
मेरा यह चिन्ह स्वरूप जाय * रघुनाथ को वीरा दिखलाना ॥

गायन

[तर्ज-श्री नंदजी के कन्हैयालाल मारे घर आवजो २]

मुद्रिका मुझ कर की हनुमान * लेई ने जावजो ॥ २ ॥ टेर ॥
कहीजो सीताजी ने खास * प्रभु को चित्त तुम्हारे पास ।
लग रही एक मिलन की आश * यही सुनावजो ॥ २ ॥ १ ॥
स्वाद न लागे अन-जल पान * सुन्दर एक ही तेरा ध्यान ।
योगी जैसे भजे भगवान् * धैर्य बंधावजो ॥ २ ॥ २ ॥
विश्वास खूब उसे दिराजो * कहेजो मतना प्राण गमाजो ।
आता चूड़ामणि तुम लाजो * भूल मत जावजो ॥ २ ॥ ३ ॥
'चौथमल' कहे राम यूँ फेर * लक्ष्मण आने की है देर ।
मार रावण को बरतावे खैर * न संशय लावजो ॥ २ ॥ ४ ॥

बहर खड़ी

अब शीघ्र गवन कर लंका से * यदि राक्षस आया जानेंगे ।
तो तुम्हें कष्ट पहुँचावेंगे * नाहक में रार बढ़ावेंगे ॥

दोहा

सीता माता के वचन * सुन बोले हनुमान ।

माता मेरी ओर को * दीजे किंचित ध्यान ॥५४६॥

बहर खड़ी

वात्सल्य प्रेम से माताजी * तुमने यह वचन उचारा है।
जो तीनों लोक विजैता हैं * उनका यह दूत पियारा है॥
इस बाल्य अवस्था पर मेरी * मत मात ध्यान कुछ करना तुम
मेरे लिये इन निशाचरों से * मन में मात न डरना तुम॥
इतना कह कर हनुमान वीरने * अपना वदन बढ़ाया है।
विद्या से वीर रूप धर कर * सीताजी को दिखलाया है॥
फिर विकट भेष धर बजरंगी ने * ऐसे वचन उचारा है।
माता जब दया आपकी तो * रावण क्या चीज विचारा है॥

दोहा

जो आज्ञा दो तुम मुझे * तो माता इस बार।
सैन सहित लंकेश को * पहुंचाऊं यम द्वार ॥५४७॥

बहर खड़ी

ऐसा कौतुक कर दिखलाऊं * निश्चरों को यम पुर पहुचाऊँ।
दूँ डुबा सिन्ध में लंका को * तुम को धर कन्धे लेजाऊं॥
सुन कर सीताजी हनुमत से * खुश होकर ऐसे कहन लगी।
जिसतरहशान्तिसुरसरिनिर्मल * ले ले उमंग मन बहन लगी॥
हे भद्रे ! तुम्हारे वचनों की * प्रतीत मेरे मन आई है।
मैं जान गई तुझ को वीरा * हनुमंत बड़ा बलदाई है॥
जो वचन सुनाये हैं मुख से * तू पूरे कर दिखला देगा।
ले जाके हर्ष सहित मुझ को * श्री राम निकट बैठा देगा॥

दोहा

शक्ती इसी प्रकार की * है तेरे तन माँहि।
पर मैं दूजे पुरुष का * तन परशूंगी नाहिं ॥५४८॥

गायन

(तर्ज-श्री नंदजी के कन्हैयालाल मारे घर आवजो ३)

लेकर चूड़ामणि हनुमान * वेगा जाव जो ३ ॥ टेक ॥
प्रभुने कहीजो तुम्हारी दासी * आपके दर्शन की है प्यासी।
जानकी रहवे सदा उदासी * सविनय सुनावजो ३॥१॥
मरती सिया न संशय लगार * जीवी नाम तणों आधार।
लीजो सुध कौशल्या कुमार * न देर लगाव जो ३ ॥ २ ॥
यह है दुश्मन का ही स्थान * हुश्यार तुम रहना हनुमान।
अर्ज मेरी जहाँ पर है भगवान् * ठेठ पहुँचावजो ३ ॥ ३ ॥
'चौथमल' कहे सीता हितकार * लगाओ मत रघुवर अब वार।
भैया लछमन को ले लार * वेगा आव जो ३ ॥ ४ ॥

बहर खड़ी

अब तुरत राम के पास वीर * ले चूड़ामणि चले जाओ।
हो चुका काम यहाँ का सारा * नाहक तुम वार मती लाओ ॥
जाऊँगा तुरत राम तट में * पर परिचय इन्हें करा जाऊँ।
संसार में और बली कोई * हैं या नहिं जरा दिखा जाऊँ ॥
वीरों का धर्म यही माता * दिखला प्राक्रम है जाना।
रावण सर्वत्र विजयी बनता * नहिं और किसी का बल जाना॥
हो विजय तेरी जाओ बेटा * सीता ने आशीर्वाद दिया।
पद शीश झुका कर हनुमत ने * सीता के तट से गमन किया॥

दोहा

देखा जा बजरंग ने * उपवन दृष्टि पसार।
बड़े बड़े तरु क्षणिक में * दीने तुरत उखार ॥ ५४६ ॥

बहर खड़ी

भुजबल से देव रमण बन के * तरु तोड़ तोड़ कर डारे हैं।

इमली और आम्र अनार विटप * जड़ में से तुरत उखारे हैं ॥
कदली कदम्ब कुदरू कटैर * लीने उखाड़ भू पटके हैं ।
गेंदा गुलाब चम्पा मरुआ * केतकी चेमली झटके है ॥
रक्षक यह देख देख धाये * हनुमत के सन्मुख आये हैं।
हनुमत तोड़-तोड़ तरु को * रक्षकों के शीश झुकाये हैं ॥
बहुतेरे हुवे धराशायी * जो रहे सो जाये पुकारे हैं।
आया हनुमान अशोक विपिन * अरण्य तरु तोड़-तोड़ कर डारे हैं

दोहा

दशकन्धर से जाय कर * रक्षक करें पुकार।
आया कपि एक बाग में * दीना विपिन उजार ॥ ५५० ॥

बहर खड़ी

तरवर वर सब सेब शरीफों के * सारे उपवन से तोर दिये
नींबू अनार और नारंगी * टहनी को पकड़ मरोर दिये ॥
आड़ू अमरूद आम्र इमली * अब देते नहीं दिखाई हैं।
तोड़ अशोक तरुवर सारे * लत को तोड़ गिराई हैं ॥
तोड़ा है राय बेल बेला * शुभ जुही चमेली सारी है।
चम्पा और चाँदनी चन्दन की * डाली डाली कर डारी है ॥
सारा उद्यान उजाड़ दिया * रक्षक भी मारे सारे हैं ।
वह तड़फ रहे उपवन में पड़े * जिनके तन घायल भारे हैं ॥

दोहा

सुन कर रक्षकों के वचन * किया क्रोध कराल।
अक्ष कुँवर को सैन संग * भेज दिया तत्काल ॥ ५५१ ॥

बहर खड़ी

सैना के संग तुरत रावण * अक्षय कुमार भिजवाया है।
देखा है देव रमण उपवन * ऊजड़ लख मन झुँझलाया है ॥

रे कपि मूर्ख विपिन सारा * तेने ऊजड़ कर डारा है ।
रक्षकों को मारा क्यों तूने * इनने क्या तेरा विगाड़ा है ॥
यह कह वाणों की वर्षा कर * हनुमान से वह लड़ने लागा ।
सैना के वल पर फूल फूल * आगे सन्मुख वढ़ने लागा ॥
जव हनुमान ने यह देखा * भारी एक वृक्ष उखारा है ।
कर में उठाय कर घुमा घुमा * अक्षय कुमार के मारा है ॥

दोहा

अक्षय कुमार का सुन मरन * रावण किया विचार ।
इन्द्रजीत को वाग में * भेज दिया उस वार ॥५५२॥

वहर खड़ी

सुन कर के भाई का मरना * मन इन्द्रजीत झुँझलाया है ।
सेना के संग तुरत उठकर * हनुमान के सन्मुख आया है ॥
मारुती खड़ा रहे खड़ा रहे * छुपने से चलता काम नहीं ।
सन्मुख आकर संग्राम करो * खाली कर जाना धाम नहीं ॥
ऐसा कह करी वाण वर्षा * वजरंग भी डट मैदान गये ।
चलते हथियार दुतर्फा से * गिरते धरती पर ज्वान गये ॥
एक एक पर शस्त्र छोड़ रहे * नभ भान नहीं दरसाते हैं ।
कल्पान्त काल कैसे कराल * विकाल वाण वरषाते हैं ॥

दोहा

युद्ध भयंकर हो रहा * रण का छाया रंग ।
देख हाल तरु तोर कर * लिया हाथ वजरंग ॥५५२॥

वहर खड़ी

मारा है ताल घुमा कर के * निश्चर सेना थर्राई है ।
मैदान छोड़ भागने लगी * डटती नहिं भूमि डटाई है ॥
जव इन्द्रजीत ने यह देखा * अपने मन में झुँझलाया है ।

कर लोचन लाल-लाल दोनों * कर तीक्षण बाण उठाया है ॥
जितने शस्त्र रिपु ने छोड़े * हनुमन्त ने काट गिराये हैं ।
वह युद्ध कला दिखला दीनी * लख सब ने चक्कर खाये हैं ॥
पुष्कलवर्त सम मेघ धार * दश पुत्रों ने वर्षाई है ।
बजरंग वीर ने देख युद्ध * किलकारी एक लगाई है ॥

दोहा

कटकंटांय कर कड़क कर * कर लीना हथियार ।
इन्द्रजीत के कूद कर * मारी है पुन मार ॥५५४॥

बहर खड़ी

नहीं सहन हुआ बजरंग वार * जब इन्द्रजीत उर धारा है ।
अहि बाण लिया धनु पै चढ़ाय * हनुमत के ऊपर मारा है ॥
बँध गये वीर बजरंग तुरत * कस लिया व्याल ने तन सारा ।
जिस तरह लिपटता चन्दन से * अति व्याल वृंद आकर भारा ॥
गिरते गिरते बजरंगी ने * ऐसी माया फैलाई है ।
निश्चर के दल के दल सारे * धरती पे दिये गिराई है ॥
फिर सोचा खण्डन करूँ पाश * पर कौतुक नज़र न आवेगा ।
इसलिय पाश में बँधा रहूँ * दरबार मुझे ले जावेगा ॥

दोहा

यह विचार कर वीर ने फैलाई नहिं शक्ति ।
सोच समझ कर रह गये * सत्त राम के भक्ति ॥५५५॥

बहर खड़ी

आये हैं भूमि के ऊपर * छवि छित पै छटा चमकती थी
दिनकर सम दम दमाट हुवा * दम दम में दमक दमकती थी ॥
बाँधे बजरंग रंग भू से * सब संग सैन की धारा है ।
रावण का कर्म कुकर्मों के * फैलाने का नक्कारा है ॥

फूले पलास की तरह पाप * तसु फारन का यह आरा है।
पारेंगे हा हा कार नगर * जारन के हित अंगारा है॥
जा के ठहराये सभा बीच * रावण की नज़र गुजारा है।
राजे वह देख देख हँसते * दशकंधर वचन उचारा है॥

दोहा

दुर्मति तैने क्या किया * बिना विचारे कार।
राम लखन आश्रित मेरे * तुम क्यों हुवे लार ॥५५६॥

बहर खड़ी

वासी हैं बन के फल अहारी * अति दीन मलीन वस्त्र पहरे।
जैसे कि रान रहते वन में * वलकल धारण कर अति गहरे॥
वह भूचर हैं अति बुद्धिमान * आगे मोहरे पर भेजा है।
किस तरह यहाँ पर वह आते * इतना कहाँ बड़ा कलेजा है॥
तुझ पर प्रसन्न जो हो भी गये * तो तुझ को वह क्या दे देंगे।
तेरी नैय्या को मल्लाह बन * क्या जग समुद्र से खे देंगे॥
पहले सेवक तू मेरा था * अब उनका दूत कहाया है।
भीलों के कहने से मूरख तू * लंकागढ़ में आया है॥

दोहा

आया बन कर दूत तू * अवध इसी से जान।
वरना कर जाते तेरे * आज ही प्रान पयान ॥५५७॥

बहर खड़ी

पर सजा अवश ही अब तुझ को * अपने कृतों की पानी है।
बँध कर आये मेरे सन्मुख * कर लीनी वह मनमानी है॥
दशकंठ की बातें सुन कर के * हनुमंत वीर ललकारे हैं।
सेवक हम तेरे थे कब से * हुये स्वामी आप हमारे हैं॥
लज्जित नहीं होते कहते मैं * हम सदा सहायक तेरे थे।

दीनी सहायता छोड़ तेरी * जब से लम्पटपन घेरे थे ॥
सामन्त तेरा सब से नामी * नामी बलवान कहाया था।
उस वरुण भूप से आकर के * मेरे पित न छुड़वाया था ॥

दोहा

दूजी बार बुलाय कर * अपना भला कराय।
हो प्रसन्न निज भानजी * दीनी मुझ को ब्याय ॥५५८॥

बहर खड़ी

उस वरुण नृपत के पुत्रों के * हाथों से तुझे बचाया था।
जिस समय सुभय का साम्राज्य * तेरे आनन पर छाया था ॥
इस समय पाप में रत है तू * तू रक्षा करने के योग्य नहीं।
परतिय हरता लम्पटी कभी * तुझ से करना सहयोग नहीं॥
बस एक लखण के बाणों से * रक्षक न कोई लंका में है।
फिर राम का कहना ही क्या है* बैठा तू किस शंका में है ॥
जो भला चाहता है अपना * तो राम की चलकर शर्ण गहो।
वह दीन बन्धु हितकारी हैं * उनके जाकर के चरण गहो ॥

दोहा

सुनकर हनुमत के बचन * छाया क्रोध कराल।
भृकुटि कुटिक लीनी चढ़ा * लोचन कीने लाल ॥५५९॥

बहर खड़ी

अति किया भेष विकाल लाल * लोचन ललाट पर छाया बल।
कर लिया भयंकर भेष चबाता * ओष्ठ फड़क रही है कल कल ॥
रे वानर पक्ष विपक्षी लेकर * क्यों इतना इतराता है।
उलटी सुलटी बातें करके * मूर्ख क्यों मरना चाहता है ॥
होगई इस क़दर क्यों नफरत * अपने जीवन से तुझ को है।
बन कर तू दूत यहाँ आया * यही ख्याल बस मुझ को है ॥

पर सुन मुँडवा कर शीश तेरा * गधे सवार करवाऊँगा ।
लंका की गली गली तुझको * पिटवा कर ढोल-घुमाऊँगा ॥

दोहा

सुन कर बोले विभीषण * सुनियो चित्त लगाय ।
वस्त्र लिपटवा पूँछ से * दीजे अग्नि लगाय ॥५६०॥

बहर खड़ी

यह सुनकर खुश हुवे सभी * वस्त्र दुम में लिपटाय दिये ।
अति हर्ष धरी निश्चर धाये * मन मान कृत तुरत किये ॥
तोड़ी है नाग पाश हनुमत * कर क्रोध तुरत ललकारा है ॥
मारी कुलाँच किलकार मार * रावण का मुकुट उतारा है ॥
ऊपर जा बैठे झपट तुरत * दश कंठ के होश उड़ा दिये ।
कर में फिर मुकुट लिया * टुकड़े टुकड़े उसके किये ॥
दशकंठ देख अति क्रोध किया * मारो मारो मुख से बोला ।
सुन कर अवाज धाये निश्चर * संग भागा निश्चर दल डोला ॥

दोहा

महल महल पर उछल कर * दीनी अग्नि लगाय ।
करी होलिका लंक को * रही आग भैराय ॥५६१॥

बहर खड़ी

घर घर में हा हा कार मचा * यह दृश्य दिखाया हनुमत ने ।
रोते हैं नर-नारी सारे * यह द्वन्द मचाया हनुमत ने ॥
सब अटा अटारी लगे जरन * ऐसा कोलाहल छाया है ।
खुश होकर मन बजरंग तुरत * फिर सागर तट पर आया है ॥
कर शांति अग्नि सारी दम में * खुश हो कुलाँच एक मारी है ।
हो कर के पार धार सागर * आ गये तुरत बलकारी है ॥
कर नमस्कार रघुनायक के * चरनों में शीश झुकाया है ।

चूड़ामणि दीनी हाथ तुरत * सारा अहवाल सुनाया है॥

दोहा

कर उठाय लिया तुरत * चूड़ामणि उस वार ।
वार वार कर में उठा * उसको रहे निहार॥ ५६२॥

बहर खड़ी

सीता की भाँति चूड़ामणि को* अति प्रेम से राम निहार रहे।
हृदय से लगाते वार वार * कर उसके प्रति सत्कार रहे॥
फिर पुत्र की तरिया हनुमत को* रघुवर ने कंठ लगा लिया।
मैं तुम उऋण न हो सकता * ऐसा विचार प्रगट किया॥
तुम सुभटों में हो परम सुभट * वीरों में तुम बलदाई हो।
हृदय के प्यारे हो मेरे * हनुमन्त भरत सम भाई हो॥
पुन लंका का वृत्तान्त सभी * हनुमत से सुन हर्षाये हैं।
हनुमत की प्रशंशा सब ही * राजा-जन मिल कर गाये हैं॥

दोहा

सीताजी का सब सुना * श्री राम ने हाल।
करी चढ़ाई हर्ष-युत * रघुवर ने तत्काल॥ ५६३॥

बहर खड़ी

सब कटक विकट सज गया तुरत* सुग्रीव आदि बहु राजे हैं।
भामन्डल, जामवन्त, अंगद * नल नील सुआदि विराजे हैं॥
कपि पति नंद सलील आदि * महेन्द्र पवञ्जय के नंदन।
संग वीर विराध महा बल भी * भूपति सुखे न करते वंदन॥
विद्याधर बैठ विमान चले * रथ गज तुरंग कोई धाये हैं।
उत्साह सहित मिलके सबने * रण के बाजे बजवाये हैं॥
नभ मंडल गूँज उठा सारा * रवि रथ छुप गया विमानों में।
दल बादल सा जा रहा बढ़ा * छाया गुबार असमानों में॥

दोहा

लख राम संग जा रहा * सारा कपिदल फूल।
पहुँचे निकट महेन्द्रपुर * काटा है तम तूल ॥५६४॥

बहर खड़ी

पहुँचे महेन्द्रपुर में जा के * पुर बाहर ठहरी सेना है।
वहाँ के नृप सेतु समुद्र युगल * देखा लश्कर भर नैना है॥
रोका लश्कर को आकर के * सेना से युद्ध मचाया है।
नल ने समुद्र को बाँध लिया * कस नील सेतु को लाया है॥
कर दिये खड़े हरि के सन्मुख * दोनों राजों को जाकर के।
श्री राम ने छाड़ दिये दोनों * लीना उनको अपना कर के॥
भूपत समुद्र ने लक्षण को * तीनों कन्या परणाई है।
फिर संग राम के हो लीने * सारी सैना सजवाई है॥

दोहा

आगे जाकर दृष्टि में * आया सुवेल गिरि धाम।
नृप सुवेल को जीत के * वहीं किया विश्राम ॥५६५॥

बरह खड़ी

होते ही भोर पयान किया * सागर के किनारे आये हैं।
गज, बाज पयादे, रथ आगे, * जाके सब ही ठहराये हैं।
तेला कर बैठ गये रघुवर * सुर लौन सेठिया आराधा है॥
व्रत नेम के पूर्ण होते ही * दी दूर हटा सब बाधा है।
आकर के सुर प्रकट हुआ * श्रद्धा युक्त शीश झुकाया है॥
कर जोर कहे कहिये भगवन् * किस कारण मुझे बुलाया है।
मैं दास आपका हूँ भगवन् * कृपा कर शीघ्र सुना दीजे॥
जो कारज दास के योग होय * उस कारज की कृपा कीजे।

दोहा

सुन कर अस कहने लगे * करन धार जग धार।

मार्ग हमको दीजिये * हम जायेंगे पार ॥५६६॥

बहर खड़ी

सुन कर सुर वानी को बोला * जो वड़े वड़ापन धारते हैं।
वह छोटों की हर समय नाव * डूबी हुई यों ही उबारते हैं॥
हे नाथ ! आपकी दृष्टि से * प्रलय का समय दिखाता है।
लोचन फिर जाते हो रौरव * अलकापुर सम हो जाता है॥
सेवक आज्ञा के करने को * हर समय समय तैयार तो है।
अनुशाशन स्वामी का सिर पर * रखना मुझको स्वीकार तो है॥
इस खाड़ी सागर का स्वामी * इसका तो सेतु बँधा लीजे।
इस में विलम्ब नहिं हाय ज़रा * मार्ग निष् कंटक कर दीजे॥

दोहा

सुगम पंथ कीजे प्रभु * लीजे सेतु बँधाय।
दीजे आज्ञा दास को * जो मन और समाय ॥५६७॥

बहर खड़ी

दो नरेश आपकी सना में * जो साथ जा रहे हैं रण में।
नल नील अद्वितीय जान कर * हुशियार बहुत हैं इस फन में॥
सुन कर रघुनायक ने दोनों * राज़ों को पास बुलाया है।
तुम सेतु बाँध दो सागर का * यह हर्षा हुकुम सुनाया है॥
पाषाण शिला मँगवा कर के * चातुरता भूप दिखाते हैं।
बँध गया सेतु यह आकर के * रघुनायक को समझाते हैं॥
अब चरण धारिये असुरारी * लो देख सेतु तैयार हुआ।
सेना को आज्ञा दे दीजे * अब जाय उतर सर सार हुआ॥

दोहा

बाँधा सेतु सुहावना * देखा दृष्टि पसार।
राम लखन मन हो मुदित * कहते वारम्वार ॥५६८॥

बहर खड़ी

धन धन्न कुशलता को नृपवर * जब तक यह सेतु बँधा रहेगा।
जब तक जग में हो अक्षय सुयश * नल नील को धन धन जग कहेगा ॥
जब उतर सैन भई सेतु पार * तो हंस द्वीप में आये हैं।
लख दल को हंस द्वीप के * सब नर नारी मन दहलाये हैं ॥
फिर तुरत हंस रथ दी आज्ञा * सब कटक राम का रोक दिया।
लिया है राम ने जीत उसे * निश में फिर वहीं कयाम किया ॥
यह हुई सूचना लंका में * कि राम लखन चढ़ आये हैं।
घर घर में मचा कुलाहल सा * नर नारी सब दहलाये हैं ॥

दोहा

जैसे राशी झक विषय * आन शनी ढ़ैराय।
उसके आन से तुरत * खल बल जग मच जाय ५६६॥

बहर खड़ी

बस वही दशा लंका की थी * घर घर में खल बल मची हुई।
प्रत्येक नारि नर के मन में * लंका जाने की जँची हुई।
नज़रों में प्रलय काल का सा * उनको वह समय दिखाता है ॥
शंका लंका की है सबको * हृदय घबराया जाता है ॥
जब मिली सूचना रावण को * लंका के निकट राम आये।
मारीच आदि तय्यार हुवे * पुन हस्त प्रहस्त तुरत धाये ॥
मदमस्त निशाचर लड़ने को * श्रीराम लखन तैयार हुए।
रणतूर सुना दशकंधर का * योद्धा सारे हुशियार हुए ॥

दोहा

अति उतावला विभीषण * गया जहाँ लंकेश।
बोला है वाणी मधुर * विनती करी विशेष ॥५७०॥

बहर खड़ी

बन्धु क्षण समय शान्त हो कर * एक अर्ज मेरी सुन लीजै तुम।

शुभ फल प्रकटाने वाली मम * बातों पै लक्ष सु दीजे तुम ॥
आये हैं राम सिया के हित * सीता को ले जाओ स्वामी।
हर्षा के मिलो राम से जा * शुभ शब्द हृदय लाओ स्वामी ॥
स्वागत से लंका में लाकर * उनका सत्कार करो स्वामी।
ये वचन आपके हित के हैं * हृदय के बीच धरो स्वामी ॥
यदि ऐसा नहीं करोगे तुम * तो फिर पीछे पछताओगे।
जिसने साहस गति और खरको * मारा वह मार्ग पाओगे ॥

दोहा

सुन कर बोला इन्द्रजय * कायर क्रूर महान ।
सारा कुल दूषित किया * मूरखपन में आन ॥ ५७१ ॥

बहर खड़ी

ऐसी ही बातें कर कर के * पितु को डरपोक बनाते हो।
पहिले भी ठगा पिताजी को * तुम अब भी ठगना चाहते हो ॥
दशरथ के मारने के कारण * पहिले भी तुम ही धाये थे।
आकर कह दिया मार आये * पर बिन मारे ही आये थे ॥
होकर निर्लज्ज भूचरों का डर * अब भी तुम दिखलाते हो।
और राम की रक्षा इस कर से * अब भी तुम करना चाहते हो।
तुम राम के पक्षी दिल से हो * लंका का बुरा चाहते हो।
चाहते हो विजय राम की * तुम उन्हीं के गुण को गाते हो ॥

दोहा

पक्ष ना रिपु दल का मुझे * मगर आप का ध्यान ।
भ्रात समझ के बात को * निज मन में पहिचान ॥ ५७२ ॥

बहर खड़ी

यह इन्द्रजीत कुल शत्रु हो * कुल में उत्पन्न हुआ आकर।
मानेगा यह जब ही सुनिये * सारे कुल को क्षय करवा कर ॥

लंकेश आप कामन्ध बने * तुमको कुछ नज़र नहीं आता।
शुभ परामर्श जो होता है * वह तेरे जिगर नहीं भाता॥
यह बात विभीषण की सुन के * रावण के क्रोध समाया है।
ले खड्ग हाथ अपने रावण * भाई के ऊपर धाया है॥
यह देख विभीषण खड्ग उठा * रावण के सन्मुख आया है।
पुन इन्द्रजीत और कुम्भकरण * दोनों को प्रथक् कराया है॥

दोहा

छोड़ तुरत जाओ चले * लंका को तत्काल।
मुख मत दिखलाना मुझे * जो हो वीर कराल॥५७३॥

बहर खड़ी

दशकंठ वचन को सुन कर के * लंका को छोड़ सिधार चले।
वह भक्त बिभीषण राम की * सेवा को करके स्वीकार चले॥
दश सहस आठ सौ थे हाथी * तीस हज़ार आठ सौ सत्तर रथ।
छियासठ हज़ार घोड़े सवार * ले लिया विभीषण कस सथ॥
एक लक्ष नव सहस्र थे पैदल * तीन सौ पचास पैदल जानो।
यह हुवा योग अक्षोहणी का * ऐसी ही तीस अक्षोहणी मानो॥
यह दल चल दिया संग उनके * दशकंठ न परवाह जरा करी।
पहुँचे हैं निकट राम दल के * श्रद्धा उनके मन बीच भरी॥

दोहा

देखा है सुग्रीव नृप * बोले हर्षे बैन।
लंकापति का भ्रात प्रभु * आवे संग ले सैन॥५७४॥

बहर खड़ी

भेजा है दूत विभीषण ने * आने की खबर पठाई है।
पहुँचा है दूत तुरत हरि पर * सब जाकर खबर सुनाई है॥
विश्वासपात्र सुग्रीव ओर * जब राम ने तुरत निहारा है।

सुग्रीव ने पाके समय हाल * मुख ऐसे वचन उचारा है ॥
हे देव जन्म से ही सारे * निश्चर मायावी होते हैं ।
आवे है विभीषण आने दो * वह प्रेम के बीजे बोते हैं ॥
हम गुप्त रीति से उनका सब * हृदय का भाव समझ लेंगे ।
जो होय हमारे शुभ में जो * तो निज दल में रहने देंगे ॥

दोहा

देख विभीषण सैन युत * खेचर कहे विशाल ।
लंका में धर्मात्मा * एक यही खुश हाल ॥५७५॥

बहर खड़ी

सीता के छुड़ाने का आग्रह * रावण से विभीषण कीना था ।
जब कुपित होय दशकंधर ने * इसको निकाल झट दीना था ॥
यह विभीषण ने देखा तो * शरण आपकी आया है ।
इस में नहीं मिथ्या बात कोई * सब मैंने हाल सुनाया है ॥
नहिं भली चाँदनी चोरों को * और झूँठ न सांचों को नीका ।
लम्पट को शील नहीं भावे * अंध का काँच सदा फीका ॥
आगया विभीषण शिविर बीच * आओ लंकेश कहा हरि ने ।
पूछे हैं कुशलो क्षेम सुभट * मिल बार बार हरि नरवर ने ॥

दोहा

दिवस आज धन है प्रभो * दर्शन मिला अमोल ।
आप चरन सेवा करूँ * बोले ऐसे बैन ॥ ५७६ ॥

बहर खड़ी

मैं चरण शरण आया भगवन * अब बना रहूँ आज्ञा कारी ।
मुझ को भी दास समझ लीजे * शरणा दीजे जग हितकारी ॥
सेवक को जो आज्ञा होगी * वह ही होगा सब काम प्रभू ।
जिस जगह मुझे ठहरा दोगे * वह ही होगा शुभ धाम प्रभू ॥

श्री राम ने खुश होकर उसको * आश्वासन दे समझाया है ।
लंका के धनी आप ही हो * ऐसा मुख से फरमाया है ॥
अब रहो कुशल से तुम भाई * निर्भय सब भय को दूर करो ।
सुग्रीव नृपत के संग रहो * आनद सुक्ख भरपूर करो ॥

दोहा

किया आठ दिवस वहां * श्री रघुनाथ कयाम ।
फिर लंका तट जाय कर * देखा है शुभ धाम ॥५७७॥

बहर खड़ी

घेरी है योजन बीस भूमि * जाकर सेना ठहराई है ।
सेना का रचा विशाल व्यूह * सारी सज-धज दिखलाई है ॥
कोलाहल सुन लंका वासी * अपने दिल में घबरान लगे ।
देखे हैं अटा अटारी चढ़ * हृदय में इष्ट मनान लगे ॥
उस हंस द्वीप में आठ दिवस * रह कर हरि चरण बढ़ाये हैं ॥
कल्पान्त काल के जैसे घन * दल बादल से यों धाये हैं ।
लंका के बाहर आकर के * मारु डंका बजवाय दिया ।
सैना का घोर विशाल हुआ * दशकंठ सेन को हुक्म किया ॥

दोहा

दशकन्धर की सु आज्ञा * सुन कर वीर महान ।
प्रहस्तादि योद्धा सजे * कर में ले कृपान ॥ ५७८ ॥

बहर खड़ी

सेना पाते ही आज्ञा के * रण साज सजाने को धाई ।
सैनापति धार ज़िरैह बख्तर * कृपान कमर में लटकाई ॥
कोई हाथी कोई घोड़े पर * कोई होकर सिंह सवार चले ।
कोई बैठ गधे पर धाये हैं * कोई रथ में हो असवार चले ॥
कोई कुबेर की तरह मनुष * असवारी उत्तम जाने हैं ।

कोई भैंसे पर हो सवार * यमराज की समता ठाने हैं ॥
कोई विमान में बैठ चले * कोई धाये अश्व सवारी पे।
हथियार बाँध कर के सुर्वार * खुश है रण की तयारी पे ॥

दोहा

आखें लाल मसाल सी * भई क्रोध से आन ।
थर थर तन काँपन लगा * लीनी कर कृपान ॥५७९॥

बहर खड़ी

लेके आयुध नाना प्रकार * दशकंठ थान आसीन हुवे ।
सन्मुख भई छींक बैठते ही * इस तरह चिन्ह कुछ दीन हुवे ॥
रथ से नीचे दशकंठ उतर * दरबार में आन पधारा है।
मन में विचार का वेग बढ़ा * होनी का पंथ नियारा है ॥
दर्बार राम के में अंगद * हनुमान आदि मन सोच रहे।
नल नील सुन्द भामन्डल नृप * सब बैठे मुख संकोच रहे ॥
श्री राम उपस्थित हैं जिस जां * और जामवन्त आदिक राजा।
परस्पर विचार किया सब ने * जिससे सब सफल होय काजा॥

दोहा

अंगद को भेजा तुरत * रावण के दरबार ।
जाके सब देना सुना * यहाँ के सम्माचार ॥ ५८० ॥

बहर खड़ी

सुन कर के वचन चले अंगद * रावण के सन्मुख आये हैं।
श्री राम लखन के समाचार * आकर सब तुरत सुनाये हैं ॥
मानो दशकंठ वचन मेरे * कुछ समझाने मैं आया हूँ।
संग्राम वृथा न हो तुम से * यह समाचार मैं लाया हूँ ॥
सीता को देकर मिल जाओ * इसमें ही भला तुम्हारा है।
वह राम अद्वितीय वीर महा * यह मानो वचन हमारा है ॥

जो धनुष उन्होंने उठा लिया * तो युद्ध तुरत छिड़ जायेगा।
फिर वन्दोवस्त नहिं हो कोई * संग्राम शुरु हो जायेगा॥

दोहा

दशकन्धर कहने लगे * लोचन करके लाल।
चढ़ कर वह आये नहीं * लाया उनका काल॥५८१॥

बहर खड़ी

जिस तरह समुद्र सी सेना मेरी * चढ़ कर के जायेगी।
जिसके दल को तृण पुंज * बहा कर के छिण में ले जायेगी॥
क्या तुच्छ भी लड़े वनवासी * आकर मुझ से संग्राम करें।
खर साहसगत समझा मुझको * नाहक निज सूना धाम करें॥
कर सकती क्या वानर सेना * निश्चर दल मार भगावेगा।
उन दोनों को एक इन्द्रजीत * जाकर के मार गिरावेगा॥
सुन कर के अंगद कहन लगे * नहिं लाज तुम्हें कुछ आती है।
सुन सुन कर झूंठी वातों को * तन में वरनी भैराती है॥

दोहा

वाली का वल किस तरह * गये दशकंधर भूल।
जिस सैना को अव रहे * देख देख कर फूल॥ ५८२॥

बहर खड़ी

उस समय कहाँ थी वह सेना * वाली न तुम्हें हराया था।
निज काँख दवा कर सागर का * चक्कर तुम को दिलवाया था॥
अव जोर दिखाते हो किस को * वल आप का सारा देख लिया।
कव भूमो जोती तुम ने * कहाँ कहाँ पौरुष का काम किया
अच्छा पैर जमाता हूँ * जो मेरा चरण उठा लेगा।
संग्राम शान्ति करवा दूँगा * सब झगड़े को निबटा लेगा॥
ऐसा कह चरण जमा दिया * लख वड़े वड़े वलवान उठे।

नहिं चरण किसी से उठता है * बल बुद्धि अरु तेज निधान उठे॥

दोहा

चरण न अंगद का उठा * झुँझलाये लंकेश।
पैर उठाने के लिये * उठे तुरत नृपेश ॥५८३॥

बहर खड़ी

दशकंठ को अंगद ने देखा * आता है चरण उठाने को।
सम्पत्ति मद में अन्धा हुवा * और विजय लक्ष्मी पाने को॥
झट चरन उठा कर अंगद ने * मुख से यों वचन सुनाया है।
मेरे चरनों के छूने से * कुछ लाभ नहीं समझाया है॥
छू कर चरण राम से मिल * सारा संकट कट जायेगा।
वह भक्ति हितैषी हैं उनके * मिलने से अघ कट जायेगा॥
ऐसा कह वहाँ से चल दिये * और राम के सन्मुख आये हैं।
श्री राम लखन को समाचार * लंका के सब समझाये हैं॥

दोहा

इधर राम दल हो गया * लड़ने को तैयार।
लंका से दशकंठ भी * हो कर चला सवार ॥५८४॥

बहर खड़ी

दशकंठ संग में कुंभकरण * कर में त्रिशूल संभाला है।
संग इन्द्रजीत भी चल दिये * लीना उठाय कर भाला है॥
सामन्त सुन्द मारीच आदि * सारण शुक मय तय्यार हुवे।
रण कार्य चतुर हथियार बाँध * रण के लिये हुशियार हुवे॥
संग एक हज़ार अक्षोहणी है * दल सिंध वेग सा जाता है।
काला कज्जल गिरी के समान * आगे को बढ़ता आता है॥
है सिंह ध्वजा वाला कोई * कोई अष्टापद की ध्वजा लिये।
चमरू की ध्वजा लिये कोई * कोई गज ध्वज से प्रेम किये॥

दोहा

कोई लीन मयूर की * सर्प ध्वजा कोई थाम।
कोई स्वान की ले ध्वजा * गर्जे हैं संग्राम ॥५८५॥

बहर खड़ी

कोई धनुष किसी के हाथ खड्ग * कोई लिये भुशन्डी धाये हैं।
कोई मुग्दर त्रिसूल लिये कोई * परघ हाथ में लाये हैं॥
कोई कुठार कोई पाश लिये * प्रतिपक्षी को ललकार रहे।
रण-स्थल में वह बडी बड़ी * चातुरता हृदय धार रहे॥
प्रतिकूल सैनिकों की निंदा * दोनों दल वाले करते हैं।
आगे को कदम बढ़ाते हैं * कर में हथियार पकरते हैं॥
झनकार होय हथियारों की * विद्युत् से खड्ग चमकते हैं।
कोई ताल ठोंकते चलते हैं * किस ही के धनुष दमकते हैं॥

दोहा

चक्र शक्र भाले परिघ * गदा धनुष अरु तीर।
गर्जे तर्जे के जा रहे * समर जुझारे वीर ॥५८६॥

बहर खड़ी

शस्त्रों से घन ढँक गया तुरत * नहिं दिनकर पड़े दिखाई है।
थी असित पताका घटा वही * बिजली कृपान चमकाई है।
गर्जना समर वीरों की जो * वह ही घन गर्जन दरस रही॥
वर्षे है बाण जो अम्बर से * वह ही ऋतु पावस बरस रही॥
तीरों में विधें शीश उड़ते * जाकर आकाश सुहाये हैं।
दिनकर के इधर उधर दीखे * राहु केतु से छाये हैं॥
मुद्गर की मारों से हाथी * मर मर कर भू पर गिरते हैं।
कहिं पैदल से पैदल जाकर * संग्राम भूमि में भिरते हैं।

दोहा

सिर कट कट कर भूमि पर * रिपु दल के रह लोट।

अधिक समय तक युद्ध में * हुई दुतर्फी चोट ॥ ५८७ ॥

बहर खड़ी

युद्ध स्थल से निश्चर सेना * हो कर के विचलित भागी है।
उस समय हस्त प्रहस्त तुरत * सैनिकों की निद्रा जागी है॥
नल नील सैनिकों के सन्मुख * गुस्से से आ ललकारे हैं।
विकाल युद्ध हो गया शुरु * धनु पर धर बाण संभारे है॥
कर दिया हस्त का शीश प्रथक्* नल ने ऐसा सर मारा है।
पुन नील ने आकर के प्रहस्त का* धड़ से शीश उतारा है ॥
देवों ने मोद मान मन में * नभ से पुष्पों की वर्षा की।
उस समय समर स्थली सुनो* आकाश नाद से सर्सा की।

दोहा

दशकंधर के हृदय में * छाया क्रोध कराल।
बड़े बड़े योद्धा चले * युद्ध करन तत्काल ॥ ५८८ ॥

बहर खड़ी

सिंहज धन शुक्र चन्द्र सारण * मारीच अर्क भी धाये हैं।
उद्दाम स्वयंभू विभत्स अरू * कामाद्य मकर रण छाये हैं॥
गम्भीर सिंह रथ ज्वर अश्वरथ* यह बड़े बड़े रण कुशल चले।
मदना कुमार सन्ताप प्रथित * अक्रोश आदि बलवान भले ॥
पुष्पास्त्र विघ्न अरु प्रतिकार * वानर संग्राम दहारे हैं।
एक-एक के सन्मुख आ एक-एक* अड़ गये रणवीर जुझारे हैं ॥
चोटें कर अरुण शिखा की सी * और-उछल उछल भू गिरते हैं।
ऊपर से नीचे आ गिरते * जिम कच्छ नीर में तिरते हैं॥

दोहा

श्रोणित की सरिता बही * भूमि हुई सुरंग ।
करें युद्ध अति क्रुध हो * एक एक के संग ॥ ५८९॥

बहर खड़ी

सेना रावण की घायल होकर * समर भूमि से भगने लगी ।
जिस तरह भान की तेजी से * तम तौम सैना दगने लगी ॥
नन्दन वानर ने ज्वर निश्चर को * अति घायल कर डारा है ।
उत तुरत दुरित ने शुक्र राक्षस * वह बलकर भू पै पारा है ॥
अब राम की सैना खुश होकर * किलकार मारती फिरती है ।
यह प्रथम विजय समझ अपनी * दिल हर्ष धारती फिरती है ॥
दिनकर ने गमन किया हर्षा * पश्चिम दिश आप पराय गये ।
अब राम सेन के योद्धा सब * अपने लश्कर में आय गये ॥

दोहा

बीती रात दिनकर उदित * हुवे पूर्व दिश आन ।
कपिपति के तट बैठ कर * सोच रहे हनुमान ॥ ५६० ॥

बहर खड़ी

इस तरह व्यू रचना को करो * जो अतु दल आन फँसे उस में ।
फिर समय समय हग्गो डाले * रहे सदा मुक्ति की कोशिश में ॥
जब तक निश्चर सैना ने * हरिदल पर धावा वाल दिया ।
जैसे दानव देवों पर चढ़ें * इस तरह स्वबल को तोल दिया ॥
निश्चर दल बीच बैठ रथ में * रावण सचालन करता था ।
उत्साहित सेना को करता था * हिम्मत सब की नृप भरता था ॥
क्रोधान्ध हो रहा था रथ में * पथ में नहीं बार लगाता था ।
आखों से अग्नि वर्षती थी * आगे को आता जाता था ॥

दोहा

विविध भाँति अस्त्रों सहित * सज दशकंधर आज ।
दिपै भयंकर वीर सा * मानों हो यमराज ॥ ५६१ ॥

बहर खड़ी

सैना नायक अपने सारे सुरपति * सम सुमन समझता था ।

प्रति पक्षी सैना नायकों को लख * तृणवत वह मूर्ख गर्जता था ॥
दशकंठ की सेना अरु सेना * नायक चढ़ बढ़ कर लड़ते थे।
करते थे युद्ध वानरों से * भिड़ जाते और झगड़ते थे ॥
देवता देखंत थे अकाश * मन्डल से बैठ विमानों में।
निश्चर लड़ते थे जमा पैर * रहते थे अपनी शानों में ॥
हुँकार सुनी जब रावन की * बढ़ कर दल आगे आया है।
रामादल पर की मार मार * शस्त्रों का मेह वर्षाया है।

दोहा

युद्ध स्थल में आ रही * शस्त्रों की झन्कार ।
सन सन कर जायें निकल * बाण आर से पार ॥५६२॥

बहर खड़ी

बहै निकली सरिता श्रोणित की * भूमी सब सुरंग नजर आती।
कट कर कर-पद झक सम बहते * यह दशा वहाँ की दर्पाती ॥
करियों के कलेवर पर्वत से * दीखे रण भू में पड़े हुए।
दीखें हैं मकर मुख टूटे रथ * जो पंथ घेर कर अड़े हुवे ॥
निश्चर योद्धा मगरों समान * श्रोणित की काटने धार लगे।
जो शस्त्र के सन्मुख हुआ खड़ा * उसको उतार न पार लगे ॥
सह सके न वानर वीर मार * पीछे को चरन उठाने लगे।
दशकंठ अनी को तेजी से * आगे को तुरत बढ़ाने लगे ॥

दोहा

सेना को पीछे लखा * हटते कपि पति हाल।
क्रोध चढ़ा सुग्रीव को * धनुष उठा तत्काल ॥ ५६३॥

बहर खड़ी

सेना को लेकर संग वीर * सुग्रीव अगाड़ी बढ़न लगे।
जैसे तम नाशन को दिनकर * अति ही तेजी से ढकन लगे ॥

बजरंग देख कर गदा उठा * सुग्रीव राव को रोक दिया।
जाने को स्वयं तैयार हुवे * रण स्थल के हित गमन किया॥
जहाँ करी राक्षस व्यूह-रचना * अगणित सैनिक वहाँ डटे हुवे।
चौ तर्फा घेर रहे उसको * शस्त्रों से मार्ग पटे हुए॥
दुर्भेद्य व्यूह में पवन तनय * सूक्ष्म श्रम से प्रवेश किया।
जैसे मंदिराचल सागर में * घुस कर के रूप विशेष किया।

दोहा

पवन तनय को देख कर * करता व्यूह-प्रवेश।
दुर्जयमाली नाम का * राक्षस आय विशेष॥५९४॥

बहर खड़ी

घन गर्जन करता हुआ तुरत * दुर्जयमाली जब आन चढ़ा।
टंकार धनुष की करता है * जैसे घन गर्जे अस्मान चढ़ा॥
दोनों में युद्ध परस्पर से * जब होने लगा विकाल महा।
सुर-पति सा हनुमत दीख रहा * निश्चर दीखे है काल महा॥
या सिंह आन दो लड़ते हैं * फटकार पूँछ की करते हैं।
मन विजय कामना भरते हैं * और चरन अगाड़ी धरते हैं॥
हनुमत ने दुर्जयमाली को * शस्तर विहीन जब कर दिया।
क्या युद्ध करूँ बूढ़े तुझ से * ऐसे कह उपदेश दिया॥

दोहा

आया और कहने लगा * वज्रोदर कर घोर।
रे! दुर्वचनी किस तरह * खड़ा मचावे शोर॥५९५॥

बहर खड़ी

सन्मुख संग्राम करो मेरे * मैं तुझ को आज छकाऊँगा।
देखूँ तू कैसा वीर तुझे * क्षण में यमलोक पठाऊँगा॥
सुन कर के शब्द वज्रोदर के * हनुमान वीर झुँझलाये हैं।

वनपति की तरह गर्जना कर * निश्चर के सन्मुख आये हैं ॥
होकर विकराल महा हनुमत * बन गये काल के काल महा ।
वर्षा बाणों की लगे करन * करके लोचन युग लाल महा ॥
कोपित महा होय हनुमान * घमसान युद्ध लगे करने को ।
ढ़क दिया बाण वर्षा के घन * तड़फे है भूमि निकरने को ॥

दोहा

बाणों को वेदित किया * वज्रोदर बलवान् ।
गर्ज तर्ज के सामने * आया जहँ हनुमान ॥ ५१६ ॥

बहर खड़ी

पुन हनुमान ने मार मार * वज्रोदर पर कर डाली है ।
अपने बाणों से बजरंगी ने * रण भू खाली कर डाली है ॥
जहाँ कोट भान अनुमान वीर * हनुमान तेज दिखलाने लगे ।
लख कर संग्राम वीर का सब * निश्चर मन में अकुलाने लगे ॥
जहाँ चले बाण गोली समान * छुरी पटा ढान नजराते हैं ।
निश्चर महान् लागे परान * कर से निशान गिर जाते हैं ॥
जहाँ धमक धमक कर चरन धरत * गिर परत निशाचर बलधारी ।
चलते अपार जिम अनीदार * हथियार धार अति ही भारी ॥

दोहा

लिया शीश उतार कर * वज्रोदर का हाल ।
करके कोप कराल अति * रावण सुत तत्काल ॥ ५१७ ॥

बहर खड़ी

आया है ज़ोर बाँध कर के * जम्बूमाली तत्काल वहाँ ।
ललकार मारता भन्नाता * लड़ते हैं अंजनीलाल जहाँ ॥
लखकर जुझार हुँकार मार * हथियार परस्पर छोड़े हैं ।
लेकर दुधार झूमे जुझार * नहीं हार मान मुख मोड़े हैं ॥

जम्बूमाली के रथ छोड़े * सारथी रहित कर डाले हैं।
फिर उस पर गदा मार मारी * बल सारे तुरत निकाले हैं॥
मूर्छित होकर गिर गया धरन * जम्बूमाली बेहोश पड़ा।
यह देख महोदर बलकारी * हनुमत के सन्मुख आन खड़ा॥

दोहा

चारों ओरी से लिया * बजरंगी को घेर ।
करी बाण वर्षा प्रबल * मचा दिया अंधेर ॥५९८॥

बहर खड़ी

बाणों की होती है वर्षा * बजरंगी लड़ते डट डट के।
अंजनी कुँवर के शस्त्रों से * गिरते हैं निशचर कट कट के॥
किस ही निश्चर की भुजा कटी * किस ही के कट कर पैर गिरे।
किसी के हृदय घुस गया बाण * किस ही के सिर बै सैर गिरे॥
अंजनी लाल उस समय हुवे * शोभित अति तेजवान रन में।
सागर में बड़वानल जैसे * दावानल घोर विकट बन में॥
तम के समूह को मार्तण्ड * जिस तरह नष्ट कर देता है।
हनुमत भी निश्चर सैन नष्ट कर * अमल कांति मुख लेता है॥

दोहा

देखा राक्षस सेन में * भगदड़ मचा अपार ।
कुंभकरण आया तुरत * कर में ले हथियार ॥५९९॥

बहर खड़ी

टूटा है रामादल पै आ * और मार मार एक संग करी।
शस्त्रों की वर्षा कर कर के * दिये गेर मही पर बहुत हरी॥
कल्पान्तकाल सागर समान * रावण के तपस्वी भाई ने।
कर दिया कुलाहल सब दल में * वानर दल के दुखदाई ने॥
यह देख झपट कर भामन्डल * सुग्रीव कुमुद अंगद धाये।

दधिमुख महेन्द्र पुन अन्याअन्य * राजे एकदम से चढ़ आये ॥
नाना प्रकार के शस्त्रों की * वर्षा रण में वर्षाई है ।
छा गया तुरत ही अंधकार * नहीं हाथों हाथ दिखाई है ॥

दोहा

कुंभकरण अस देख कर * किया क्रोध कराल ।
आगे बढ़कर के चला * जैसे द्वितीय काल ॥ ६०० ॥

बहर खड़ी

लीना है प्रस्वापननामा कर में * अमोघ अस्तर ठाया ।
वानर सेना पर दिया छोड़ * विद्या के बल को दिखलाया ॥
निंद्रावश वानर सेन भई * नहिं खड़ा हुवा जाता रण में ॥
यह हाल देख सुग्रीव भूप * करते विचार अपने मन में ॥
सुग्रीव भूप ने उसी समय * प्रबोधनी बाण चलाया है ।
जाग्रत हुई सारी सैना * पुनः होंश सभी को आया है ॥
कपि-पति ने गदा प्रहार किया * रथ तोड़ भूमि पर डाला है ।
यह देख कुंभकरण ने अपने * शस्तर को तुरत सँभाला है ॥

दोहा

दौड़ा है लेकर गदा * कुम्भकरण इक संग ।
गिरे झपट में आन कर * वानर हुये कुरंग ॥ ६०१ ॥

बहर खड़ी

रोका है रोक नहीं मानी * सुग्रीव भूप पर धाया है ।
मारी है गदा तान कर के * रथ को कर चूर गिराया है ॥
आकाश उड़ा सुग्रीव भूप * उड़ कर के बुद्धि निकाली है ।
एक भारी शिला तुरत लाकर * निश्चर पति ऊपर डाली है ॥
फिर कुंभकरणने उसे बीच ही में * चूरा कर उड़ा दिया ।
सुग्रीव ने विद्युति अस्त्र उठा * दशकण्ठ भ्रात पर वार किया ॥

उस कुम्भकरण को मूर्छित कर * भूमिपर तुरत गिराया है।
यह हाल देख कर इन्द्रजीत * झट समर क्षेत्र में आया है॥

दोहा

दशकन्धर को रोक कर * आया इन्द्रजीत।
युद्धस्थल में घूमता * रण से कर के प्रीत॥६०२॥

बहर खड़ी

लख इन्द्रजीत को वानर दल * रण छोड़ छोड़ कर भागा है।
जिस तरह मृग वन से भागे * यह जान मृगपति जागा है॥
सुग्रीव आन कर रणस्थल में * रिपु के सन्मुख ललकारा है।
रे मूर्ख जा रहा भगा किधर * या कस के जाय किनारा है॥
सुग्रीव से इन्द्रजीत भिड़े * घन वाहन से भामण्डल है।
चारों दिग्गज से दीख रहे * करते जिम विजय अखण्डल है॥
उनका रण देख कँपी पृथ्वी * ऊँचे पहाड़ भी काँप उठे।
सागर में उथल पुथल फैली * सुरभी निज मुख को ढाँप उठे॥

दोहा

छोड़े हैं हथियार बहु * दीखै नहीं दिनेश।
बाण लप-लपाते चले * जैसे विषधर शेष॥६०३॥

बहर खड़ी

फिर इन्द्रजीत घन वाहन ने * अस्तर अहि बाण चलाया है।
बँध गये वीर दोनों उस में * मन में योद्धा हुलसाया है॥
जब कुंभकरण को होश हुआ * हनुमत पर गदा प्रहार किया।
हो गये मूर्छित बजरंगी * ऐसा शत्रु ने वार किया॥
ले चला बगल में दाब उन्हें * लंका की ओर सिधारा है।
अंगद ने मार्ग घेर लिया * इक हाथ गदा का मारा है॥
जब कुम्भकरण ने अंगद के * मारन को हाथ उठाया है।

हनुमान कड़क आकाश गये * यह अद्भुत खेल दिखाया है ॥

दोहा

आज्ञा लेकर राम से * चले विभीषण धाय ।
इन्द्रजीत ने सोच कर * लीना बदन घुमाय ॥६०४॥

बहर खड़ी

पितु अनुज बन्धु पित के समान * ऐसा मन वीच विचारा है ।
नहिं करें युद्ध इन से जाके * प्रण ऐसा दिल में धारा है ॥
यह नाग-पाश में बँधे हुवे * शत्रु अलबत्त मर जायेंगे ।
दो छोड़ पड़ा मैदाने जंग * आखिर को दुःख टर जायेंगे ॥
दोनों के निकट विभीषणजी * जाकर मलीन मुख खड़े हुवे ।
श्री राम लखन दोनों भाई * अच्छा करने पर अड़े हुवे ॥
किया है याद महालोचन * सुर तुरत राम तट आया है ।
कर नमस्कार हो कर प्रसन्न * चरणों में शीश झुकाया है ॥

दोहा

सिंहनाद शुभ नाम की * विद्याकारी प्रदान ।
हल मूसल अरु रथ दिया * हो प्रसन्न महान ॥६०५॥

बहर खड़ी

लक्ष्मण को गरुड़ वान दीना * विद्युति गदा प्रदान करी ।
अग्नेय अस्त्र वायव्य अस्त्र * दिव्यस्त्र आदि दिये जान हरी ॥
दीना है रथ गारुड़ी एक * अद्भुत जिसका चमकारा है ।
दीना छत्र अमोल महा * देकर के देव सिधारा है ॥
गारुड़ी यान पर हो सवार * भामण्डल के तट आये हैं ।
लख गरुड़ तुरत वह नाग पाश के * व्याल छोड़ कर धाये हैं ॥
छुटते ही दोनों वीर तुरत * लग गये राम के चरणों पे ।
बलिहारी वार-वार जाते हैं सब * अडिग्ग निज परणों पे ॥

दोहा

जै जै कारा हो रहा * रामादल के बीच ।
शोक छया रावण ग्रह * शंकित निश्चर नीच ॥ ६०६ ॥

बहर खड़ी

दुर्जन दुष्टों का जन्म भाव * सज्जन को दुःख पहुँचाते हैं ।
जिस तरह मक्खिकअरु मच्छर * तन चूँट चूँट कर खाते हैं ॥
हरि-दल की खुशी देख निश्चर * दिल में बहु शोक मनाया है ।
शोकातुर निश-भर पड़े रहे * हुआ प्रातः उजाला छाया है ॥
निश्चर दल कर धावा आया * दाबा है वानर सेना को ।
कर रहे मथन सेना भीतर * मुख बोल करण कटु बैना को ॥
इस तरह सरोवर में सूकर * पानी में खल बल करता है ।
बस इसी हाल से निश्चर दल * वानर सेना को मलता है ॥

दोहा

पवन तनय सुग्रीव पुन * वानर वीर महान् ॥
निश्चर दल में घुस गये * ले ले कर कृपान ॥ ६०७ ॥

बहर खड़ी

कीनी है मारा-मार महा * निश्चर दल मन घबराया है ।
गये पैर उखड़ युद्धस्थल से * भागना सभी ने चाया है ॥
जिस तरह गरुड़ को देख सर्प * अपने दिल में घबराते हैं ।
जिस तरह बन सके छुप-छुपकर * वह अपने प्राण बचाते हैं ॥
सैना के पैर उखड़ते लख * दशकण्ठ क्रोध में छाया है ।
होकर रथ में असवार तुरत * संग्राम भूमि में आया है ॥
थर्राने लगी मेदनी भी * सन्ताप सैन में छाया है ।
जैसे दावानल में तर वर * मर्कट का कटक घबराया है ॥

दोहा

देखा रावण युद्ध में * प्रलय रहा दिखाय ।

धनुष उठा कर हाथ में * राम चले हैं धाय ॥६०८॥

बहर खड़ी

बोले हैं आन विभीषण जब * मत नाथ चरण आगे धरिये।
यह सेवक रण को जाता है * स्वामी ना आप कष्ट करिये॥
हो कर रथ में आरुढ विभीषण * रावण के सन्मुख आया है।
उससमयदेखदशकण्ठभ्रात को * समझाना मन में चाया है॥
तूने किस का आश्रय लिया * जो डर से जान बचाता है।
आगे तुझ को ही भेज दिया * निज जान बचाना चाहता है॥
जिस तरह शिकारी सूकर पर * श्वानों को ही दौड़ाता है।
जाकर वह घेर गिरा लेते * जब अपना वार चलाता है॥

दोहा

इस प्रकार रघुनाथ ने * भेजा तुझ को भ्रात।
करी बुद्धिमत्ता बहुत * आप न डाला हात ॥६०९॥

बरह खड़ी

सुन अनुज विभिषण तू मेरा * मैं पुत्र से ज्यादा जानता हूँ।
हे वत्स प्रेम मेरा तुझ पर * मै अपना तुझ को मानता हूँ॥
तू जा अपने स्थान पे अब * और नहीं विशेष समझाऊँगा।
मैं राम लखन को सैन सहित * अब यम द्वारे पहुँचाऊँगा॥
मरने वालों की सूची में क्यों * अपना नाम लिखाता है।
स्थान चला जा खुशी खुशी * क्यों मेरे सामने आता है।
अब भी मेरा हित है विशेष * तुझ पर तू प्यारा भाई है।
नहिं मुझे और की कुछ परवाह * तव प्रीती हृदय समाई है॥

दोहा

वचन विभीषण ने कहे * सुनो भ्रात धर ध्यान।
मैंने रोका है उन्हें * जो हैं राम सुजान ॥६१०॥

बहर खड़ी

अब वचन श्रवण कर के भ्राता * हृदय में जरा विचारो तुम।
नीतज्ञ आप भू मण्डल में * नीति को दिल में धारो तुम॥
मैं युद्ध का मिस कर के उनसे * तुम को समझाने आया हूँ।
रह जाये लाज निश्चर कुल की * तुम को जतलाने आया हूँ॥
मेरे वचनों को हृदय धार * सीता तुरत भेज दीजै।
इस में कुछ नहीं बिगड़ता है * इतना कहना मेरा कीजै॥
न मौत के डरसे राम के तट * मैंने कुछ आश्रय पाया है।
ना भ्रात राज का लोभ मुझ * ना आप से कुछ दुःख पाया है॥

दोहा

भय मुझ को अपवाद का * और नहीं कुछ ख्याल।
कर दीजै प्रथक प्रभु * यह कलंक तत्काल॥६११॥

बहर खड़ी

जो विनय प्रभु स्वीकार करो * तो लंका में आजाऊँ मैं।
आश्रय आप का ग्रहण करूँ * और आज्ञा सर्व उठाऊँ मैं॥
यह सुन दशकंठ क्रोध कर के * मुख ऐसा वचन सुनाया है।
दुर्बुद्धी कायर डरपोका * मुझ को समझाने आया है॥
मैं डरूँ भ्रातृ हत्या से केवल * यह सोच विचार मुझे।
तू मुझ को ही डरपाता है * दूँ चढ़ा खड्ग की धार तुझे॥
ऐसा कह कर दशकन्धर ने * कर उठा धनुष टंकार करी।
हो गये हुशियार विभीषणजी * रण भू में मारा मार करी॥

दोहा

दोनों योद्धा युद्ध से * भूमी रहे कँपाय।
तीव्र शस्त्र छोड़े खड़े * जैसे घन वर्षाय॥६१२॥

बहर खड़ी

मेघों की धारा के समान * अस्मान से बाण वर्षते हैं।

पड़ते हैं आ जिसके ऊपर * वह जीवन हेत तरसते हैं ॥
डट गये युद्ध में कुम्भकरन * और इन्द्रजीत बलवान महा।
मारे हैं अस्त्र शस्त्र तीक्ष्ण * कर रण में घमसान महा ॥
यह हाल देख कर राम लखन * युग-रण स्थल में आये हैं।
घेरा है कुम्भकरण को जा * ललकार सामने धाये हैं ॥
और इन्द्रजीत के आ सन्मुख * नाहर सम लखन दहाड़ा है।
सिंहज घन और भिड़ गये नील * यों युद्ध परस्पर बाढ़ा है ॥

दोहा

दुर्गति और स्वयंभू * दुर्मुख आदि जवान ।
शम्भु और नल आन कर * किया युद्ध घमसान ॥ ६१३ ॥

बहर खड़ी

मय अंगद अरु स्कन्द चन्द्र नख * भामन्डल जम्बूमाली ।
श्री दत्त कुम्भ हनुमान आदि * सुग्रीव कुन्द अरु सुखमाली ॥
होता है युद्ध परस्पर से * हथियार वीर नर छोड़ रहे ।
हुंकार मारते बढ़ बढ़ कर * शत्रु की शक्ति तोड़ रहे ॥
फिर इन्द्रजीत ने लक्ष्मण पर * एक तामस अस्त्र चलाया है।
रामानुज ने पवनास्त्र चला * उसको काट गिराया है ॥
फिर नाग-पाश में लखन वीर ने * इन्द्रजीत को बाँध लिया ।
और राम ने कुँभकरण बाँधा * लाकर शिविर बीच में डार दिया

दोहा

लिये राम सुजान ने * योद्धा बाँध महान् ।
घन वाहन आदिक बहुत * धरे छावनी आन ॥ ६१४ ॥

बहर खड़ी

यह दृश्य देख कर दशकन्धर * अपने मन में झुँझलाया है।
व्याकुल हो उठा क्रोध करके * जय लक्ष्मी शूल चलाया है ॥

लक्ष्मण ने अपने बाणों से * कर खन्डन तुरत विफल किया।
कर कर के बाणों की वर्षा * रावण दल बेकल कर दिया॥
तब विजय आरथी रावण ने * शक्ति अमोघ कर धारी है।
वह शक्ति उठा कर के नृप ने * अपने कर तुरत सँभारी है॥
ले शक्ति क्रोध करके कर में * ऊँची कर उसे घुमाया है।
वानर दल में हल चल फैली * उसको लख दल घबराया है॥

दोहा

तड़ तड़ करती शक्ति को * रघुवर तुरत निहार।
लक्ष्मण से कहने लगे * अपने स्वमन विचार॥६१५॥

बहर खड़ी

यह शक्ति विभीषण पर आई * तो राजब भ्रात हो जायेगा।
इसके प्रहार को झेल सका नहीं * जो तो दाग लग जायेगा॥
सुन लखन विभिषण के आगे * आकर के आप खड़े हुवे।
नहिं करी जान की कुछ परवा * आश्रत के आगे अड़े हुवे॥
हट गये देवता सन्मुख से * लक्ष्मण ने पीठ नहीं. मोड़ी।
कर क्रोध तुरत दशकन्धर ने * शक्ति को निज कर से छोड़ी॥
फिर वज्र तुल्य उस शक्ती का * लक्ष्मण पर झट प्रहार किया।
लगते ही तुरत बे होश हुए * भूमि पर लखन को गेर दिया॥

दोहा

लखन वीर धरनी गिरे * हुवा हा हा कार।
पंचानन रथ बैठ कर * राम चले उस वार॥६१६॥

बहर खड़ी

जा के रावण के वाहन का * कर चूर-चूर भू पर डारा।
इस तरह पाँच रथ रावन के * का चूरा हरि ने कर डारा॥
कुछ सोच समझ कर दशकंधर * लंका की ओर सिधार गया।

शोकाकुल राम लखन तट जा * गोदी में भ्रात समार गया ॥
यह शोक देख के दिनकर भी * पच्छिम की ओर पयान किया।
छुप गये तुरत आकाश में जा * भूमि को कर सुनसान दिया।
लक्ष्मण को मूर्छित देख राम * भूमि पर चक्कर खाय गिरे ॥
सुग्रीव आदि सब आकर के * हरि के चरणों में आय गिरे ॥

दोहा

चन्दन आदिक वीर को * सींचा हाथों हाथ ।
पास बैठ कर राम के * बोले मुख से बात ॥६१७॥

गायन

[तर्ज-बिना रघुनाथ के देखे नहीं दिल को करारी है]

लगा जो तीर लक्ष्मण के * पड़े गश खा के भूमि पर।
कहे तब राम आँसू भर * उठो लक्ष्मण उठो लक्ष्मण ॥टेर॥
सिया रावण के कब्जे में * और तुम ने करी ऐसी ।
मेरा इस बन में बेली कौन * उठो लक्ष्मण उठो लक्ष्मण ॥१॥
अरे रण बीच सेना को * सिवा तेरे हटावे कौन ।
गिराया क्यों धनुष तेने * उठो लक्ष्मण उठो लक्ष्मण ॥२॥
तेरी हिम्मत पे ही बन्धु * चढ़ाई की जो लंका पे ।
बँधावो धीर अब हम को * उठो लक्ष्मण उठो लक्ष्मण ॥३॥
रहे गर्भा यहाँ दुश्मन * इन्हों के गर्व को गालो ।
नहीं यह वक्त सोने का * उठो लक्ष्मण उठो लक्ष्मण ॥४॥
ये सुग्रीव और हनुमान * बिभीषण पास हैं ठाड़े ।
दे विश्वास अब इनको * उठो लक्ष्मण उठो लक्ष्मण ॥५॥
अगर नफरत हो लड़ने से तो * फिर वन को चलें वापस ।
कुछ भी तो कहो भाई * उठो लक्ष्मण उठो लक्ष्मण ॥६॥
तुझे बिन देख के हम को * माता रो-रो के पूछेगी ।

कहेंगे क्या ज़बां से तब * उठो लक्ष्मण उठो लक्ष्मण॥७॥
जिसके लिये ले लश्कर * खा के जोश आये यहाँ ।
मिटावे कौन दुख उस का * उठो लक्ष्मण उठो लक्ष्मण॥८॥
दयालु शख्स के कहने से * विसल्या को लाये हनुमान ।
भगी शक्ति सती को देख * उठे लक्ष्मण उठे लक्ष्मण॥६॥
हुआ आराम लक्ष्मण को * पाया सुख राम और सेना ।
जीत रावण को ली सीता * उठे लक्ष्मण उठे लक्ष्मण ॥१०॥
हुआ मङ्गल अयोध्या में * आये जब राम और लक्ष्मण ।
'चौथमल' कहे खुशी घर-घर * उठे लक्ष्मण उठे लक्ष्मण ॥११॥

बहर खड़ी

कुछ मुख से कहो भ्रात अपने * क्या दुक्ख आप तन छाया है।
किस संकट में तुम पड़े हुवे * किस शोक ने आन दबाया है ॥
किस लिये धारण मौन किया * किसलिये भूमि पर पड़े हुवे।
मुख बोलो नैन खोल देखो * किस ज़िद्द में तुम हो पड़े हुवे ॥
कुछ करो इशारा ही हम से * कुछ रण का हाल सुनाओ तो।
अपने बाँधव के प्रश्नों का * उत्तर भ्राता समझाओ तो ॥
सौंपा था मुझे धरो हर सी * क्या जाकर मैं दिखलाऊँगा।
रो-रो कर माता पूछेगी * जब उनको क्या बतलाऊँगा ॥

दोहा

दशकंधर को मार कर * दूँ झगड़ा निपटाय ।
बदला तेरे कष्ट का * लूँगा अभी चुकाय ॥६१८॥

बहर खड़ी

अब ठहर ठहर निश्चर पति तू * यह कह कर धनुष समार लिया
हो गये खड़े क्रोधातुर हो * मन में ऐसा प्रण धार लिया॥
सुग्रीव अगाड़ी आकर के * श्री रघुवर को ठहराया है।

हे पूज्य ! आपने रात्रि समय * अब कहाँ को जाना चाया है ॥
लक्ष्मण को होश में लाने का * उपचार करो अब तो स्वामी ।
पीछे रावण को बध करना * यह हृदय विनय धरो स्वामी ॥
यह सुन के राम लखन पुन * अपने कर बीच उठा लिया ।
हे भ्रात ज़रा मुख से बोलो * ऐसा कह कह के विलाप किया

दोहा

हरण सिया का हो गया * लखन गये सुर धाम ।
जब भी तो जीवित रहा * हाय हाय यह राम ॥६१६॥

बहर खड़ी

किस तरह धीर धारूँ मन में * होता विदीर्ण नहीं सीना है ।
जब लखन सरीखा भ्रात गया * धिक्कार जगत् में जीना है ॥
सुग्रीव विराध नल नील सुनो * निज निज घर को जाओ भाई ।
हनुमंत सुनो यह देवगती * किसको कहें समझाओ भाई ॥
नहिं सीय हरण का रंज मुझे * न रंज भ्रात के मरने का ।
लंका नहिं मिली विभीषण को * है रंज वचन के हरने का ॥
रावण को प्रातः के होते ही * अपने हाथों से मारूँगा ।
जब राज विभीषण को दे दूँ * उस समय धीर मन धारूँगा ॥

दोहा

सौंपूगा लंका तुम्हें * होते ही प्रभात ।
फिर जाऊँगा उस जगह * जहँ गया लक्ष्मण भ्रात ॥६२०॥

बहर खड़ी

सुन कर के कहा विभीषण ने * क्यों होते आप अधीर प्रभु ।
कुछ यन्त्र मन्त्र से निष भर में * होनी चाहिये तदवीर प्रभु ॥
सुन कर के राम कहन लागे * लक्ष्मण भाई मुख से बोलो ।
अब उठो उठो निद्रा त्यागो * सुन कर अवाज आखें खोलो ॥

मैंने तो तेरे बल पर ही * लंका देने का वचन दिया ।
हो गये रुष्ट तुम किस कारन * कैसे मुझ से मुख फेर लिया ॥
कर धनुष उठाओ अब भाई * संग्राम में धूम मचाओ तुम ।
रावन दल चढ़ा चला आवे * लड़ कर के इसे भगाओ तुम ॥

दोहा

यह सुन कर सुग्रीव ने * विद्या से उस वार ।
सात कोट दृढ़ शुभ रचे * रक्खे चार द्वार ॥ ६२१ ॥

बहर खड़ी

पूर्व द्वारे पर बजरंगी * सुग्रीव आदि बहु वीर खड़े ।
उत्तर में अंगद कूर्म आदि * जहँ बड़े बड़े रण धीर खड़े ॥
पच्छिम में समरशील दुर्धर * मन मथ जय विजय खड़े आके
दक्षिण दिश भामण्डल विराध * गज हुवे द्वार रक्षक जाके ॥
उस समय खबर यह सीता को * जाकर के कोई सुनाई है ।
सुन कर के सीता को इक दम * मूर्छा ने लिया दबाई है ॥
विद्या धारियों ने आकर के * शीतल जल मुख पै डाला है ।
शीतल वायु के चलने से पुन * कुछ कुछ होश सँभाला है ॥

दोहा

सीताजी को जिस समय * होश हुआ है आन ।
आक्रन्दन करने लगी * धरे शीश पर पान ॥ ६२२ ॥

बहर खड़ी

तुम कहाँ लखन धाये वीरा, * तज ज्येष्ट भ्रात को जंगल में ।
तुम चले गये शोकातुर तज * इस भारी विपत अमंगल में ।
तुम विन वह एक महूरत भी * जीना अच्छा नहिं जानते हैं ।
बिन आपके नश्वर जगत बीच * नहिं खाना पीना मानते हैं ॥
मुझ मंद भागिनी का जग में * जीना संसार असार का है ।

मेरे ही हेत राम लक्ष्मण पर * कृत हाय यह भार का है ॥
हे मही मात ! अपने उर में * स्थान मुझे कुछ दे दीजे ।
हे हृदय तु ही फट जा जल्दी * इस यश को निज सिर पर लीजे

दोहा

सीता के लख रुदन को * हृदय दया गई आय ।
एक निश्चरी इस तरह * कहन लगी समझाय ॥ ६२३ ॥

बहर खड़ी

सीताजी के दुख सुख का हाल* विद्या से तुरत निहारा है ।
अच्छे हो जायें प्रातः लखन * ऐसा उन वचन उचारा ॥
हे देवी ! मैंने विद्या से यह * सारा दृश्य निहार लिया ।
जैसा मुझ को दीखा वहना * वैसा मैंने उच्चार दिया ॥
रावण लंका में जाकर के * मन में अति मोद धारता है ।
मैंने लक्ष्मण को मार दिया * ऐसे मुख शब्द उचारता है ॥
जब इन्द्रजीत और कुम्भकरण * इत्यादि की सुनी गिरफ्तारी ।
तो हाय लगे करने रावण * मन में अति शोक हुआ जारी ॥

दोहा

सेना में आया तुरत * एक विद्या धर वीर ।
भामन्डल से आन कर * वचन कहे धर धीर ॥ ६२४ ॥

बहर खड़ी

जो चाहते हो लक्ष्मण को * अच्छा करना तो वीर सुनो ।
ले चलो राम के पास मुझे * यह शब्द मेरे रणधीर सुनो ॥
लक्ष्मण जीवित होने का * उनको उपचार बताऊँगा ।
जिस तरह लखन फिर सजग होय* वह सारा हाल सुनाऊँगा ॥
भामण्डल उसका हाथ पकड़ * श्री राम के तट ले आये हैं ।
करके प्रणाम विद्याधर ने * अपने सब पते बताये हैं ।

शशि मंडल का मैं नन्दन हूँ * प्रति चन्द्र मेरा है नाम प्रभु ।
शुभ प्रभा नाम है माता का * संगीत पुर है ग्राम प्रभु ॥

दोहा

जाता था मैं सेर को * अपने बैठ विमान ।
सहस विजय ने आन कर * पथ रण दीना ठान ॥ ६२५ ॥

बहर खड़ी

फिर चंडरवा शक्ति कर ले * उसने मुझ पे प्रहार किया ।
मैं गिरा अयोध्या के वन में * ऐसा वह तीक्ष्ण वार किया ॥
मुझ को वहाँ पड़ा देख दुख में * कृपालु भरत ने लाकर के ।
कुछ नीर सुगंधित मँगवाया * पुनः उसको दिया लगा कर के ॥
उस जल से शक्ति निकल गई * मुझ को आराम मिला भारी ।
तुम उस जल को मँगवा लीज * आरत को मन से दो टारी ॥
उस जल का सारा हाल मुझे * कर कृपा तुरत सुना दिया ।
जो कुछ बीता था हाल सभी * सब आप के सम्मुख ब्यान किया॥

दोहा

सुन कर राम सुजान ने * नहीं लगाई वार ।
भामन्डल सुग्रीवजो * अंगद हनुमत चार ॥ ६२६ ॥

बहर खड़ी

चल दिये आज्ञा पा कर के * तेजी से यान बढ़ाया है ।
आ गये अयोध्या नगरी में * भूपत जहाँ सोता पाया है ॥
आकाश में वायुयान रोक * गायन करना प्रारम्भ किया ।
निद्रा खुल गई भरतजी की * गायन पर अपना चित्त दिया ॥
नीचे सब तुरत उतर आये * आ नमस्कार नृप को किया ।
संग्रामक्षेत्र का समाचार सब * ब्योरेवार सुना दिया ॥
कुछ समय सोच कर भरत भूप * कौतुक मंगल पुर को धाये ।

पुन द्रोण मेघ के पुर में आ * नृप के शुभ महलों में धाये ॥

दोहा

दिया है सारा सुना * रण का तुरत बयान ।
एक सहस्र संग सखिन के * दीई विशल्या आन ॥६२७॥

बहर खड़ी

बैठाया वायुयान तुरत * अति शीघ्र गमन कर धाये हैं ।
भरत को उतार अयोध्या में * लंका की ओर सिधाये हैं ॥
था वायुयान का द्योत महा * जिसको लख सेना घबराई ।
समझा प्रकाश भान का है * ऐसी भ्रम घटा हिये छाई ॥
जब उतरा यान भूमि आकर * सेना ने मोद बढ़ाया है ।
भामण्डल लिये विशल्या को * श्री राम के सन्मुख आया है ॥
क्यों लाये विशल्या को याँ * इसका मतलब समझाओ सभी
गन्धोदक कहाँ छिपा रक्खा * लाकर के मुझे दिखाओ सभी

दोहा

भामण्डल ने राम को * दिया हाल सुनाय ।
पास लखन के ले गये * सती बिठा ली जाय ॥६२८॥

बहर खड़ी

कर परस लखन के वपु ऊपर * शक्ति का जी घबराया है ।
तन से भागी है तुरत निकल * हनुमान ने आन दबाया है ॥
हनुमान से शक्ति कहन लगी * बजरंगी मैं निर्दोषी हूँ ।
धरणेन्द्र ने रावण को दीनी * अब मैं उस ही की पोषी हूँ ॥
विद्या है प्रज्ञापति बहन * मैं उसकी बहन कहाती हूँ ।
है पूरब पुण्य विशिल्या का * बस उस ही से घबराती हूँ ॥
इसकी बरदास्त नहीं मुझ में * तप तेज सती का भारा है ।
तुम मुझे छोड़ दो अब हनुमत * होगा अहसान तुम्हारा है ॥

गायन

विकल निकल मचल मचल जाय कहाँ को ॥ टेर ॥
लक्ष्मण को विकल कर, अब तन से निकल कर,
जाने के शकल कर।
अटल मटल मचल मचल धाय कहाँ को ॥ १ ॥
तेरा करूँ निपात, अब तू है मेरे हाथ,
लक्ष्मण चरण में माथ।
रिगड़-रिगड़ बिगड़-विगड़ छाय कहाँ को ॥ २ ॥
मुख से शपथ करो, फिर न चरण धरो,
हरि के चरण परो।
वचन रचन लचन को लजाय कहाँ को ॥ ३ ॥
कहते हैं चौथमल, सब काम कर सँभल,
रहै धर्म पर अटल।
अकथ खपथ कर्म की, सुलझाय कहाँ को ॥ ४ ॥

दोहा

सुन कर शक्ति के वचन * दिया वीर ने छोड़।
अन्तर ध्यान हुई तुरत * लज्जित हो मुख मोड़ ॥८२६॥

बहर खड़ी

फेरा है हाथ विशिल्या ने * लक्ष्मण की निन्द्रा जागी है।
चन्दन आदिक का लेप हुआ * शक्ति की दुविधा भागी है॥
लक्ष्मण उठ खड़े हुए भू से * रघुवर ने कंठ लगाया है।
पुन सती विशिल्या का हरि ने * सारा अहवाल सुनाया है॥
पुन राम आज्ञा से रण में * लक्ष्मण का पाणिग्रहण किया।
मिल कर विद्याधर वीरों ने * जै जै से गगन गुँजा दिया॥
जंगल में मंगल देख-देख * सब सैनिक खुशी मनाते थे।

वानरदल उछल-उछल कर के * अति मंगल गायन गाते थे ॥

दोहा

लक्ष्मण का नहिं कर सकी * शक्ति कुछ ही विगाड़ ।
अब आग की किस तरह * बाँध सकेंगे पाड़ ॥६२०॥

बहर खड़ी

मेरा था यह ख्याल मंत्री * रामानुज अब मर जायेगा।
उसके वियोग में तड़फ तड़फकर * राम काल कर जायगा ॥
वानर-दल जाये आप भाग * जब राम लखन नहिं पायेंगे ।
तो कुम्भकरण और इन्द्रजीत * आदिक छुट कर आजायेंगे ॥
लीला विचित्र है कर्मों की * नहिं देवगते का पता लगा ।
शक्ति से लक्ष्मण मरा नहीं * सोते से पुनरपि सिंह जगा ॥
अब कुम्भकरण और इन्द्रजीत * के छुड़वाने का यत्न करो ।
जिस तरह हो सके उस तरियाँ * सारे रिपु-दल का पतन करो ॥

दोहा

सीता को छोड़े विना * होय नहीं छुटकार ।
कुम्भकरण आदिक जभी * आवें तुमरे द्वार ॥ ६२१ ॥

बहर खड़ी

सीता के दिये बिना स्वामी * हो सकता नहिं निस्तारा है ।
अब राम को सीता दे दीजे * यह मानो वचन हमारा है ॥
कुछ और भयानक लंका पै * आफत आती सी नजर पड़े ।
रोते हैं रात दिवस कूकर * तव वित जाती सी नज़र पड़े ॥
जो गये उन्हें तो जाने दो * जो रहे करो रक्षा उनकी ।
जा करो प्रार्थना रघुवर से * जब पाओगे भिक्षा उनकी ॥
उनकी रक्षा के लिये राम से * ही अर्जी करनी होगी ।
श्रीराम की आज्ञा को स्वामी * अपने शिर पर धरनी होगी ॥

दोहा

भाई ना मंत्रियों की * दशकन्धर को राय ।
तुरत दूत बुलावाय कर * हरि तट दिया पठाय ॥ ६३२ ॥

दोहा

जिस तरह हो सके रघुवर को * वहाँ जाकर के समझाना तुम ॥
उस कुंम्भकरण व इन्द्रजीत को * तुरत छुड़ा कर लाना तुम ॥
पाकर आज्ञा चल दिया दूत * और राम लखन तट आया है ।
कर विन्ती विनय भाव सेतो * चरणों में शीश झुकाया है ॥
दो छोड़ भ्रात सुत मेरे को * रावण ने यह कहलाया है ।
मैं दूँगा आधा राज तुम्हें * ऐसा मुख से फरमाया है ॥
सीता के बदले तीन हज़ार * कन्या राजों की दिलवाऊँ ।
जो माने नहीं वचन मेरे * तो सैना सहित पछड़वाऊँ ॥

बहर खड़ी

वचन सुने जब दूत ने * बोले राम सुजान ।
दशकन्धर से जाय कर * करना ऐसा ब्यान ॥ ६३३ ॥

बहर खड़ी

नहिं इच्छा मुझे राज की है * न सम्पति की है चाह कुछी ।
न मै लड़ने को आया हूँ * न हो सकता निर्वाह कुछी ॥
जो पुत्र बन्धु को यदि अपने * रावण छुड़वाना चाहता है ।
तो सीता की पूजा कर के * क्यो पास न लेकर आता है ॥
बिन मुक्त किये सीता जी के * नहिं उसके भ्रात बन्धु छूटें ।
चाहे जितना संग्राम होय * जो अटल बन्द हैं ना टूटें ॥
मेरे वचनों को जाकर के * रावण के निकट सुना देना ।
सब ब्यौरे वार बता देना * और हाल सभी समझा देना ॥

दोहा

बोला है सामन्त फिर * मुख से वचन सँभार ।

एक सिया के कारने * मत ठानो तकरार ॥ ६३४ ॥

बहर खड़ी

तुम एक स्त्री के कारण * संशय में प्राण डालते हो।
दो त्याग सिया का मोह ममत * नाहक में झगड़ा पालते हो॥
प्रहार से रावणके लक्ष्मण को * अब की बार बचा लिया।
अब हरगिज नहिं बच सकता है* जो दशकंधर ने वार किया॥
वह रावण विश्व जीतने की * अपने कर ताकत धरता है।
कोई जीत नहीं सकता उसको * ऐसा दम दिल में भरता है॥
जो वचन न मानोगे मेरे * तो समय सकल खो जायेगा।
इस सैना सहित लखन के भी * जीवन का अन्त हो जायेगा॥

दोहा

लखन बचन कहने लगे * छाया क्रोध प्रचण्ड।
समर करन को लखन के * फड़क उठे भुज दण्ड ॥ ६३५॥

बहर खड़ी

दशकंण्ठ ने अब तक रघुवर की* शक्ति को नहिं पहिचाना है।
इसका फल आगे होगा क्या * इसको अब तक नहिं जाना है॥
सारा परिवार मरा उसका * जो बचा बँधा वह समर पड़ा।
बाकी त्रिया रह गई शेष * इस पर भी अपनी टेक अड़ा॥
अब भी है उसे गुमान यही * कि विजय लक्ष्मी पाऊँगा।
वानर सेना और राम लखन * मैं सब को मार भगाऊँगा॥
यह महा धृष्टता है उसकी * नीचा नहिं होना जानता है।
वह सूखा काष्ट बना कैसे * जो लचना नहिं पहिचानता है॥

दोहा

वीरों ने गर्दन पकड़ * दीना दूत निकाल।
लंका में आ दूत ने * कह दीना सब हाल ॥ ६३६ ॥

बहर खड़ी

पुन बोला मंत्रियों से पूछा * अब काम कहो क्या करना है
वह राम लखन दोनों भाई * चाहें मम कर से मरना है ॥
सुन कर के मंत्री कहन लगे * अब राम को सीता दे दीजे।
है यही उचित सलाह स्वामी * इस को हृदय में धर लीजे ॥
सब राम विरोध का फल तुमरी* आखों के आगे आया है।
नहिं काम किसी ने भी सारा * जो किया वही फल पाया है ॥
अब करके प्रेम और देखो * जो होगा सो हो जायेगा।
मित्रता से कारज सिद्ध होय * पर रण में सभी कढ़ आयेगा ॥

दोहा

सीता को अर्पण करो * सुनी जिस समय कान।
मौन साध कर रह गया * कीना मन में ध्यान. ६३७ ॥

बहर खड़ी

हठ तजूँ किस तरह से अपनी * ऐसा विचार मन में छाया।
नस-नस में रक्त प्रवाह हुवा * और क्रोध उमड़ मन में आया ॥
लाचार होय मन मे विचार * विद्या की सुरत समारी है।
लच जाये शत्रु का दल सारा * बहु रूप विद्या भारी है ॥
कर दिये रवाना मंत्री सब * ऐसा दिल बीच समाया है।
विद्या साधन करने के हित * स्थान परम में आया है ॥
मणि पिष्टका पर बैठा है * मन थिर कर सुमरन करन लगा।
आसन अविचल कर विद्या का * निज ध्यान हृदय में धरन लगा॥

दोहा

बैठा आसन पदम कर * ज्यों आसीन महंत ।
जयमाला ले हाथ में * विधि से जाप जंपत ॥६३८॥

गजल

देवाधिदेव भगवन * कारज सुफल करीजै।

परमात्म रूप स्वामी * हृदय में शान्ति दीजे ॥
त्रिय छत्र शीश सोहे * सुन्दर स्वरूप मोहे ॥
प्रभु वंदना हमारी * अब तो सिकार लीजे ॥
मन कामना हमारी प्रभु * हो सफल अवश ही।
यह मंत्र नाम तुमरा * जिस पर सुभक्त रीझै ॥
इक नाम से तुम्हारे * सारे हों सिद्ध कारज।
उन नेत्रों से भगवन * अनुचर को देख लीजे ॥
जो आपका हृदय में * धरते हैं ध्यान भगवन।
अब 'चौथमल' का वेड़ा * जिनराज पार कीजे ॥

दोहा

पास बुला मन्दोदरी * दीना हुक्म सुनाय।
आठ दिवस तक नगर में * कीजे धर्म अधाय ॥ ८३६ ॥

बहर खड़ी

जिनधर्म का पालन करें सभी * आंबिल उपास व्रत दान करें।
सब जीवों को साता देकर * दुखियों के सारे दुक्ख हरें ॥
जा गुप्तचरों ने कपिपति को * यह सारी खबर सुनाई है।
बहुरूपणी विद्या सिद्ध करें * दशकन्धर अति दुख दाई है॥
जो विद्या सिद्ध हुई उसकी * तो झगड़ा बहु चढ़ जायेगा।
फिर बहुत परिश्रम से रावण * संग्राम में मारा जायेगा ॥
मैं करूँ किस तरह आक्रमण * यह पंथ बहुत ही गूढ़ बना।
यह सुन कर राम सुजान कहें * रावण जो ध्यानारूढ़ बना ॥

दोहा

सुन कर रघुवर के वचन * अंगदादि बहु वीर।
पहुँचे उस स्थान में * जहँ बैठा रणधीर ॥ ८४० ॥

बहर खड़ी

दीना है कष्ट बहुत उस को * दशकंठ उठा नहिं आसन से।

जिसतरह रोक नहिं सकते घन * दिनकर को कभी प्रकाशन से ॥
मंदोदरि की चोटी अंगद * जिस वक्त पकड़ कर लाया है।
रावण दिखा-दिखा सन्मुख * रानी को त्रास दिखाया है ॥
रे रावण ! शरण विहीन बना * अब यह पाखण्ड रचाया है।
अनहोने पर रघुवर के * तू तो सिया चुरा कर लाया है॥
पर देख तेरे सन्मुख ही हम * मन्दोदरि को ले जाते हैं।
तू बैठा देख रहा कायर * तेरे नहिं नैन लजाते हैं ॥

दोहा

भभक उठा जब क्रोध मन * अंगद गुस्सा खाय ।
केश पकड़ मंदोदरी * सन्मुख पटकी लाय ॥६४१॥

बहर खड़ी

कर रुदन पुकारती मंदोदरि * और शोक हृदय में भरने लगी।
करुणा स्वर से दशकंधर के * सन्मुख विलाप यों करने लगी ॥
कपि कटक से मुझ को लो छुड़ाय * ऐसा कह कर चिल्लाती है।
स्वामी यह अपति करें मेरी * रोती है और अश्रु बहाती है॥
आकाश को प्रकाशित करती * बहुरुपणी विद्या आई है ॥
मन इच्छित पूर्ण करूँ काज * ऐसे मुख से फरमाई है ॥
यह सुन कर यों दशकंठ कहे * जब इच्छा होय बुला लूँगा।
उस समय काज के करने की * हर्षा कर के आज्ञा दूँगा ॥

दोहा

सुन कर के विद्या हुई * पल में अंतर ध्यान।
वानर भी सब चल * आये निज-निज स्थान ॥६४२॥

बहर खड़ी

सुन कर मंदोदरी की बातें * रावण को गुस्सा आया है।
वह दाँत पीस रह गया खड़ा * अपने मन में झुँझलाया है ॥

मंजन कर भोजन पान किया * तन पर हथियार समारे हैं।
खुश हो कर देवरमण वन में * दशकंधर ने पग धारे हैं॥
सीता से ऐसे कहन लगा * मैं युद्धस्थल पग धारूँगा।
और राम लखन को सैन सहित * रण में जाकर संहारूँगा॥
मैं बहुत दिनों से विनय तेरी * आकर रोज़ाना करता था।
अनियम भंग कर अपनाऊँ * ऐसा विचार चित्त धरता था॥

दोहा

सुन कर रावण के वचन * गिरी मूर्छा खाय।
चेत हुवा कुछ देर में * उठ बैठी घबराय॥६४३॥

बहर खड़ी

यदि लखन राम की मृत्यु के * जो समाचार सुन पाऊँगी।
दूँ त्याग खान और सभी * अनशन कर दिवस बिताऊँगी॥
सुन कर के प्रतिज्ञा सीता की * दशकंठ बहुत घबराया है।
आरत मन में बढ़ गया अधिक * कुछ मन में सोच समाया है॥
सूखे में कमल उगाना जिम * सीता से प्रेम का करना है।
इच्छायें सारी व्यर्थ हुईं * क्या राग त्रिया से धरना है॥
उस वीर विभीषण की मैंने * वृथा ही अवज्ञा कर डारी।
अफसोस कलंकित कुल हुवा * मंत्री की बात लगी खारी॥

दोहा

सीता को इस समय जो * राम निकट दूँ भेज।
भीरू सब संसार कहे * घटे मान अरु तेज॥६४४॥

बहर खड़ी

सीता को जो इस समय अगर * रघुवर के तट पहुँचावेंगे।
संसार कहे भीरू मुझ से * कायर डरपोक बतावेंगे॥
परातिय गामियों के हृदय * ऐसे ही कलुषित हो जाते हैं।

जो नार बिरानी को तकते * वह रोते और पछताते हैं ॥
इस से तो समर भूमि जा के * दोनों को बाँध ले आऊँगा ।
फिर सीता उन को दे दूँगा * दुनिया में कीरत पाऊँगा ॥
यश होगा जगह-जगह मेरा * सब नीतिवान पुकारेंगे ।
धर्मज्ञ कहेंगे सब मुझ को * हृदय में निश्चय धारेंगे ॥

दोहा

नाना भाँति विचार में * दीनी रैन गँवाय ।
प्रात होत रण भूमि में * जान लगे हैं धाय ॥६४५॥

बहर खड़ी

दर्पन कर में ले मुख देखा * मुख उसको नहीं नजर आया
पुन खड्ग म्यान से निकल पड़ा * मन्दोदरि का दिल घबराया ॥
ठोकर खा शिर का मुकट गिरा * मंस्कारी मार्ग काट गई ।
दिया छींक किसी ने आ सन्मुख * जोगनी रक्त को चाट गई ॥
मन्दोदरि ने दामन गह कर * कर जोर पती से विनय करी ।
मत आज समर में तुम जाओ * ऐसा कह पति के चरन परी ॥
नहीं मानी बात एक, रावण * हो कर सवार रण धाया है ।
नाना प्रकार के शस्त्र सजा * संग्राम भूमि में आया है ॥

दोहा

वीरों की हुँकार से * लगी काँपने भूम ।
ताल ठोकते गर्जते * मचा रहे हैं धूम ॥ ६४६ ॥

बहर खड़ी

शूरों की ताल ठोकने से * मन में दिग्गज भी काँप उठे ।
चिल्लाने लगे जन्तु वन के * आकाश में मुख सुर झाँप उठे ।
जिम रुई के पहलों को समीर का * चल कर वेग उड़ा देता ।
निश्चर सेना पर इसी तरह * रामानुज सर वर्षा देता ॥

भागा निश्चर दल भय खा के * रावण ने करी बाण वर्षा ।
यह युद्ध भयंकर देख प्रलय का* रूप आन आखों दर्शा ॥
रण देख-देख रावण के मन * में हो गई विजय शंका ।
छाया विचार ऐसा दिल में * यह चली हाथ से अब लंका ॥

दोहा

सुमरण की बहु रूपणी * विद्या कटक मंझार ।
आय उपस्थित हो गई * रूप सुगर निज धार ॥६४७॥

बहर खड़ी

उस विद्या से नृप रावण ने * अपने बहु रूप बना लिये ।
चहुँ ओर चमकते हैं रावण * ऐसे विद्या से रूप किये ॥
लक्ष्मण ने बहु रावण देखे * तो मार-मार एक संग करी ।
गये गरुड़ यान पर तुरत बैठ * तर्कस तूँणी को कमर धरी ॥
लक्ष्मण की मार देख रावण * मन में अपने घबराया है ।
निज कर में चक्र उठा कर के * ऊँगली रख उसे घुमाया है ॥
चमकार चक्र की देख-देख * मन में सुर भी घबराये हैं ।
गये काँप वीर सुग्रीव आदि * आ राम को शब्द सुनाये हैं ॥

दोहा

दशकन्धर ने चक्र को * दिया लखन पर छोड़ ।
चम चमाट कर चल दिया * हित रावण से तोड़ ॥६४८॥

बहर खड़ी

चट चक्र प्रदक्षण लक्ष्मण की * देकर दक्षण कर आय गया ।
नहिं काम सुदर्शन ने किया * जब दशकन्धर घबराय गया ॥
जिस तरह उदय गिरि पर्वत पै* सूरज ने आ स्थान किया ।
बस उसी तरह लक्ष्मण कर पै * आ चक्र निवास स्थान किया॥
बोले हैं पुनः विभीषणजी * जो अब भी आप समझ जाओ

अपराध क्षमा अपना करवा * सीता को संग लिवा लाओ ॥
दशकंठ क्रोध कर के बोले * नहिं शस्त्र करन में धारूँगा ।
मुक्के से रिपु का नाश करूँ * और चूर-चूर कर डारूँगा ॥

दोहा

दशकन्धर के वचन सुन * लक्ष्मण मन रिसियाय ।
चक्र उठा कर हाथ में * दीना तुरत चलाय ॥६४९॥

बहर खड़ी

जब चक्र चला दशकन्धर पर * मुक्का रावण ने मारा है ।
किरणें हज़ार होगईं प्रथक् * दशकंठ का शीश उतारा है ॥
थी एकादशी जेष्ट कृष्ण * जिस दिन पूर्ण संग्राम भये ।
रामादल में आनन्द हुवा * रावण मर पंक प्रभा धाम गये ॥
देवों ने जै-जै कार किया * आकाश से पंकज वर्षाये ।
लक्ष्मण के ऊपर गिरे फूल * गल माल पहर कर हर्षाये ॥
वानर सेना हर्षित होकर * किलकार लगाती जाती है ।
करते हैं नृत्य मोद भर के * वह खुशी हृदय में आती है ॥

दोहा

जै जै कारे कर रहे * सुर सब बैठ विमान ।
धन्य धन्य तुम को प्रभो * कीना सुख प्रदान ॥ ६५० ॥

गायन

[मारवाड़ी धुन]

अब चिरकाल तुम्हारा सुयश * मही पर फैले महाराज ।
दशकन्धर को मार कर * कीना उत्तम काज ।
आनन्द उत्सव मन रहे * होते उत्तम काज ॥
मन ध्यान धर के प्रजा सारी * साजे सुक्ख साज ॥ १ ॥
सुन्दर भूषण साज कर * सारी सुखद समाज ।

चरण पड़ी श्री राम के * धन्य धन्य दिन आज ॥
सर सारी सारी सुरन मंडली* बजा रही शुभ बाज ॥२॥
सूर्य चन्द्र भ्रमण करें * जब तक भू पर आन।
नाम अमर तुमरा रहे * तब तक भूदयो थान ॥
यह कार तुम ने कर के स्वामी* रखी सती की लाज ॥३॥
'चौथमल' गुण गाय कर * रसना करी पवित्र ।
सब को साता दे सदा * होकर सुक्ख इकत्र ॥
लख मार सारी निश्चर सेना* घबराई सिर ताज ॥ ४ ॥

दोहा

दशकंधर को लखा मरा * भक्त विभीषण आय।
रघुवर के सन्मुख खड़े * चरनों शीश नमाय ॥६५१॥

बहर खड़ी

आज्ञा पाकर चल दिये तुरत * तट रावण राय के आये हैं।
निश्चर दल ढ़ासस दिया * जल नैनों में भर लाये हैं ॥
बलदेव आठवें हैं रघुवर * लक्ष्मण वसुदेव कहलाते हैं।
आओ सब इनकी शरणों में * ऐसा कह कर समझाते हैं ॥
सुन कर के वचन विभीषण के *आश्रय सब ने चरनों का लिया।
श्री राम लखन मन हर्षा के * छाया अपने करनों का किया ॥
होते हैं वीर सदा दयालु * दयालुता उन्होंने दिखलाई ॥
सब को धीरजता दे कर के * सब मेटा आरत दुखदाई।

दोहा

देखा है जब भ्रात को * पड़ा भूमि पर आन।
शोक विभीषण हो रहा * उर में दुक्ख महान ॥६५२॥

बहर खड़ी

हे भाई ! माने वचन नहीं * आकर भविष्य सिर छाया है।

अति उच्च नाद से भक्त विभीषण * ने वहाँ रुदन मचाया है ॥
हे वीर भ्रात तुम सा भाई * अब कैसे जग में पाऊँगा ।
पूछे जब कोई आकर के * उसको क्या बतलाऊँगा ॥
भाई मृत्यु होने से अति * शोक विभीषण ने किया ।
निश्चय, मरना अपना करके * कर से कटार को काढ़ लिया ॥
चाया है मार कर मर जाना * रघुवर ने पकड़ा हाथ तुरत ।
वीरों का यह कर्तव्य नहीं * हो गये मरने को साथ तुरत ॥

दोहा

वीरों के कर कृत को * जिसने कीना नाम ।
जो वीरों का कर्म था * वो ही कीना काम ॥६५३॥

बहर खड़ी

जिस कृत हेत वह आया था * यहाँ आकर पूर्ण काज किया ।
पाई है समर में वीर गति * अद्भुत लंका का काम किया ॥
जिस वीर से रणस्थल में आ * नहिं देवों ने भी जय पाई ।
उस वीर प्रतिज्ञी ने अपनी * दुनियाँ में कीरत फैलाई ॥
नहिं जीते जी सीताजी * जिसने देना स्वीकार किया ।
वह वीर प्रतिज्ञी था भारी * नहिं मान हाथ से जान दिया ॥
जो नाम कर चुका आ जग में * उसके लिये रोना क्या है ?
रोना तो है उनको पक्का * पे काम किये सोना क्या है ॥

दोहा

स्थापना कीरत करी * जिसने जग में आय ।
वीर गति जिसको मिली * सुभटपना दिखलाय ॥६५४॥

बहर खड़ी

रोते देखा मन्दोदरी को * रघुपति ने धीर बँधाया है ।
रोने से अब क्या होता है * ऐसा कह कर समझाया है ॥

फिर कुम्भकरन आदिक को आ * श्रीराम लखन ने छोड़ दिया।
धीरज सब को दीना हर्षा * शत्रुता से मुख को मोड़ लिया
सम्बन्धी हितु मिले सारे * सब खड़े हुवे सँकुचाई है।
चन्दन जो असल बामना था * उस से रच चिता रचाई है॥
ले अगर कपूर आदि वस्तु से * संस्कार मिल कीना है।
स्नान आदि कर के सब ने * रघुवर चरनों मन दीना है॥

दोहा

दोनों भ्रातों ने कहा * कुम्भकरन से आय।
राज करो तुम पूर्ववत् * मन आनंद मनाय ॥६५५॥

चौपाई

बोले राम वचन हर्षाई * करो राज अपना सुख पाई।
चाह न सम्पति की मन मेरे * सुख पाओ सुख साज घनेरे॥
तुमरा मैं चाहूँ कल्याना * सुक्ख करो तुम भाँति सु नाना।
सुन कर राम वचन अस बोले * कुम्भकरन पट घट के खोले॥
भुज विशाल मेरी सुन लीजे * करुणा अब हम पर प्रभु कीजै।
नहीं राज की हम को इच्छा * अब हम को प्रभु लेनी दीक्षा॥
तज झंझट को दीक्षा धारें * अपना आतम काज सँभारें।
मोक्ष धाम का काज सँभारें * तप संयम नहिं मन से हारें॥

दोहा

मुनिवर का आना हुवा * कुसुमायुध उद्यान।
उसी रात में मुनि को * प्रकटा केवल ज्ञान॥६५६॥

चौपाई

अप्रमेय बल मुनि का नामा * जहँ विचरें करें पावन धामा।
केवल उत्सव को सुर आये * जै जै कार गगन ध्वनि छाये॥
प्रात उठे श्री राम सुजाना * कुंभकरण आदिक बलवाना।

दर्शन मुनि के करन सिधाये * वन्दन कर मुनि को सिर नाये ॥
मुनिवर धर्मोपदेश सुनाया * सुना देशना मन हुलसाया ।
इन्द्रजीत अस विनय सुनाई * पूर्व भव दीजै समझाई ॥
मुनि ने पूर्व भवों का हाला * कहना किया समझ तत्काला ।
मुनि बोले मन हर्ष वढ़ाई * सुनिये अब तुम श्रवण लगाई ॥

दोहा

भरत क्षेत्र के बीच में * नग्र कौसम्बी जान ।
निर्धन ग्रहस्थी के भये * दोनों भ्रात समान ॥६५७॥

बहर खड़ी

प्रथम पश्चिम था शुभ नामा * रहते कर दोनों आरामा ।
भवदत मुनि उस नगर पधारे * सुना धर्म मन में हर्षा रे ॥
दिक्षा ले भये शान्ति कपाई * विचरे वन अति शान्ति वढ़ाई
फिर कौशम्वी नग्र पधारे * होय वसन्तोत्सव अति भारे ॥
क्रीड़ा करते नृप अविलोका * मन में वह आनंद विलोका ।
पश्चिम मुनि ने किया नियाना * प्रथम ने जब यह पहिचाना ॥
प्रथम मुनि ने वहु समझाया * तेरी समझ में एक न आया ।
मर कर इन्दुमती के जाया * रति वर्द्धन शुभ नाम सु पाया ॥

दोहा

राजा होकर राज का * करन लगे शुभ काज ।
मन आनंद मनाय के * लगे भोगने राज ॥ ६५८ ॥

चौपाई

प्रथम मुनि तप कर अति भारा* देवलोक पांचवें सिधारा ।
अवध ज्ञान जब देव लगाया * क्रीड़ा रति भ्रात को पाया ॥
सुर ने मुनि का रूप वनाया * देन देशना भू पर आया ।
रतिवर्द्धन ने आसन दीना * मुनि ने सत उपदेश सु कीना ॥
पूर्व भव का हाल सुनाया * सुन कर रति वर्द्धन मन लाया ।

प्रगटा जाती स्मरण ज्ञाना * हुवा पूर्व भव का जब भाना ॥
तज कर संसार दीक्षा धारी * रतिवर्द्धन हुये व्रतधारी ॥
संयम ले तप किना भारा * देवलोक पांचवें पधारा ॥

दोहा

सुर पुर की पूर्ण करी * आयुष दोनों भंग ।
महा विदेह में विबुधपुर * जन्मे हुवा रस रंग ॥६५६॥

चौपाई

दोनों प्रगटे नृप घर आई * पूर्व पुण्य शुभ समकित पाई ।
तप में दोनों चित्त लगाये * देव लोक बारवें सिधाये ॥
सुर पुर से चव कर युग भाई * दशकंधर ग्रह .जन्मे आई ।
इन्द्रजीत घनवाहन साता * यहाँ आकर हुये दोनों भ्राता ॥
इन्दुमति वहुतिक भव पाके * मंदोदरी भई यहाँ आ के ।
सुन कर पूर्व भव युग भाई * लीनी दीक्षा मन हर्षाई ॥
कुंभकरन मंदोदरि रानी * दीक्षा ले तप की मन ठानी ।
तप संयम में सुमन लगाया *समझो अनित्य अथिर यह काया

दोहा

मुनिवर को कर वंदना * किया राम पयान ।
जहँा शिविर था राम का * पहुँचे उस स्थान ॥ ६६० ॥

चौपाई

लक्ष्मण राम चले युग भाई * कपि पति संग चले हर्षाई ।
चले संग अंजनी कुमारा * विजय हर्ष जिनके मन भारा ॥
नाना वाहन संग में लीने * गमन हर्ष लंका पुर कीने ।
लंका को अति ही शृंगारा * देख मुदित मन हो अति भारा ॥
आगे चले विभीषण जाते * रघुवर को मार्ग दिखलाते ।
विद्याधरी गान शुभ गावें * भर अंजलि पुष्प वर्षावें ॥

मंगल मोद भरा घर-घर में * आनंद छाया लंका भर में।
लंकागढ़ को राम निहारा * वन अशोक में चलन विचारा॥

दोहा

पुष्प गिरी निकटस्थ ही * पहुँचे राम सुजान।
जहँ बैठी श्री जानकी * मन में शोक महान् ॥६६१॥

चौपाई

हनुमत ने जो हाल सुनाया * उसी हाल में सिय को पाया।
द्वितीय जीवन सम निज नारी * रघुवर ने निज तट बैठारी॥
यह लख सुर गण मन हर्षाये * नभ से पंकज शुभ वर्षाये।
जय जय महासती सीता की * पति-पद-रतिगुण गण गीता की
लक्ष्मण सी के चरन सिर धारा * हर्ष,अश्रु चले ज्यों परनारा।
सूँघा मस्तक सीय लखन का * आशीर्वाद दिया खुश मन का॥
चिरजीवी हो लखन पियारे * चिर आनंदी रहो सुखारे।
शत्रु सनमुख रहो विजेता * सत पुरुषों के बनो निकेता॥

दोहा

भामन्डल नृप सिर झुका * सिय को किया प्रणाम।
भाई को मन हर्ष के * दी अशीश सुख धाम ॥६६२॥

चौपाई

कपि पति और विभीषण वीरा * सिय के चरन छुये धर धीरा।
अंगद हनुमान हर्षा के * सिय के चरन पड़े हैं जा के॥
भुवनाँकृत हाथी मँगवाया * राम सिया को तस बैठाया।
संग विभीषण निश्चर वीरा * सुग्रीवादिक सब रण धीरा॥
रावण के आ महल निहारे * सहस्त्र थम्भ के महल पधारे।
कहें विभीषण नाथ पधारो * मुझ चरनों का दास विचारो॥
वचन विभीषण का हरि माना * प्रेम विभीषण को पहिचाना।

भोजन आदिक से सतकारा * मणी सिंहासन पर बैठारा ॥

दोहा

युगल वस्त्र पहराय के * बोले वचन समार ।
स्वामी करुणा दृष्टि से * सेवक ओर निहार ॥६६३॥

चौपाई

सुवर्ण रत्न आदि भंडारा * कोष सैन सब शस्त्रागारा ।
राक्षस द्वीप ग्रहण प्रभु कीजे * चरण सिंहासन चल कर दीजै ॥
मैं सेवक बन कर सिवकाई * करुँ सेव पद की हर्षाई ।
लंका का अधिकार समारो * पावन करो राज यह सारो ॥
विनय दास की चित्त में दीजे * अनुग्रहीत प्रभु हमको कीजे ।
सुन कर हरि ने उत्तर दीना * राज तिलक प्रथम ही कीना ॥
प्रेम विवशमय भूले कैसे * भक्ति विवश हो गये तुम ऐसे ।
भक्त विभीषण समझा दीना * मन में राम चिंतवन कीना ॥

दोहा

मन विचार श्री राम ने * दिठा विभीषण पास ।
हर प्रकार समझाय कर * दीना है विश्वास ॥६६४।

चौपाई

राम विभीषण पै चित्त दीना * राजतिलक लंका का कीना ।
इन्द्र भवन में सुरपति जैसे * रावण महल राम गये तैसे ॥
विद्याधरों की सुता बुलाई * थी जिन हित उनको परनाई ।
खेचरियों ने मंगल गाये * अद्भुत वाज सु साज बजाये ॥
सुग्रीव आदिक बानर राजा * करें राम सेवा का काजा ।
षटवर्ष आनंद मनाया * मन माता से मिलना चाया ॥
इन्द्रजीत घन वाहन धाये * भ्रमत मरु स्थली में आये ।
मुक्ति गये कर के तप भारे * अपने आतम काज सँमारे ॥

दोहा

कुंभकरण नर्वदा तट * किया मन हुलपाय ।
सथारा कर मुक्ति को * पहुँचे हैं मुनिराय ॥६६५॥

चौपाई

अवधपुरी में कौशिल माता * याद करे सुत की दिन राता ।
सऊमित्रा कुलदेव मनावें * कव तक दर्शन पुत्र दिखावें ॥
चिंता सुत की हृदय समाई * मिलें राम कव हर्ष बढ़ाई ।
इस अवसर नारद मुनि आये * रानिन ने झुक शीश नमाये ॥
कर सत्कार ऋषी बैठारे * देख ऋषी के वचन उचारे ।
मन मलीन कहि कारण रानी * सत्य कहो सव वात सुरानी ॥
उत्तर दिया कौशल्या माता * राम लखन की खवर न आता।
आज्ञा पितु की शीश चढ़ा के * पुत्र वधु सुत वन गये धा के ॥

दोहा

सीता को हर विपन से * ले गया रावण राय ।
हुआ युद्ध उन से वहाँ * सुनो ऋषी चित लाय ॥६६६॥

चौपाई

शक्ति लखन के हृदय मारी * हुवा मूर्छित सुत वलधारी ।
योद्धा लेन विशल्या आये * ले लंका तो तुरत सिधाये ॥
आगे हाल न कुछ भी पाया * इस कारण हृदय घवराया ।
इतना कह रानी विलापे * हाय हाय कर रुदन मचावे ॥
नारद मुनि ने ढाडस दीना * तुम ने सोच वृथा ही कीना ।
नारद तुरत पंथ निज लीना * चरण जाय लंका में दीना ॥
कर सत्कार राम वैठाया * आसन दे कर मोद वढ़ाया ।
आने का पूछा सव कारन * सुन कर नारद लगे उचारन ॥

दोहा

माताओं का दुःख सव * नारद दिया सुनाय ।

व्योग तुम्हारे में रही * माताजी विलखाय ॥६६७॥

चौपाई

सुन कर राम दुःख मन पाया * तुरत विभीषण पास बुलाया।
तुम से अति प्रसन्न हम भाई * अब तुम विदा करो हर्षाई ॥
दर्शन जाये मात के पाये * उनकी पद-रज शीश चढ़ाये।
दो सप्ताह और तुम रहिये * पन्द्रह दिन पीछे प्रभु जइये ॥
यह सुन राम वचन जब बोले * अपने पुन घट के पट खोले।
माता को गंगा सम जानूँ * तीर्थ रूप मात पहिचानूँ ॥
गर्भ माँहि माता नव मासा * रखे उठावे सारे त्रासा।
पोषण करें सुमन हर्षावे * दे आराम आप दुख पावे ॥

दोहा

भेजे कारीगर तुरत * लंकापति हर्षाय।
जा शृँगारो अवध को * बार करो मत माय ॥६६८॥

चौपाई

लंका के कारीगर आये * सुगर अयोध्या धाम सजाये।
इन्द्रपुरी सम अवध बनाई * अमर पुरी लख लज्जा खाई ॥
नारद शीघ्र गमन कर आये * समाचार शुभ आय सुनाये।
माना मोद कौशिल्या माई * फूली अति नहीं हर्ष समाई ॥
दिवस सोलवें सजा विमाना * बैठ राम लखन गुणवाना।
रानिन संग चले युग भ्राता * सुरपति युगल संग जिम जाता।
संग सुग्रीव विभीषण राजा * भामन्डल संग सकल समाजा ॥
हनुमान अतुलित बलधारी * राम लखन के चले अगारी ॥

दोहा

निकट अयोध्या आ गई * हनुमत पहुँचे जाय।
समाचार सब मोद युत * दिये तुरत सुनाय ॥६६९॥

चौपाई

सुनत भरत मन में हर्षाये * हनुमत को चट कंठ लगाये।
भरत शत्रुघन दोनों भाई * कारि पै बैठ चले हैं धाई॥
स्वागत हित कर के तैयारी * धाये तुरत हर्ष मन धारी।
आते देख आकाश विमाना * भरत मोद अति मन में माना॥
हाथी से नीचे युग आये * भरत शत्रुघ्न हर्ष चढ़ाये।
देख भरत को राम सुजाना * हृदय भ्रातृ प्रेम समाना॥
भूमि उतारा वायुयाना * मोद नहीं मन माँहि समाना।
राम लखन दोनों युग भ्राता * देख भरत को मन मुशकाता॥

दोहा

भरत शत्रुघन दौड़ कर * चरण पड़े हैं जाय।
राम लखन ने उठा कर * लीना कंठ लगाय ॥६७०॥

चौपाई

मस्तक चूम देह रज झारी * प्रेमातुर भये मन में भारी।
चारों भ्रात बैठ कर याना * हुये अवध को तुरत रवाना॥
घन मंडल भूमंडल साजे * सुर सब बजा रहे हैं बाजे।
पुर वासिन की भीर अपारा * अनमिष देख रहे इक वारा॥
जै जै कार अवध में जारी * गुण गावें मिल नर अरु नारी।
पास महल के गया विमाना * देख महल मन मोद समाना॥
मुक्ता कनक पुष्प वर्षावें * नारी हँस वधावे गावें।
जैसे जलधर की हो धारा * ऐसे वर्षे कनक अपारा॥

दोहा

तुरत उतर माता निकट * आये राम सुजान।
चरण पड़े हर्षाय कर * देखा धर के ध्यान॥ ६७१॥

चौपाई

सब के चरण छुये रघुवर ने * प्रेम लगीं माताएँ करने।

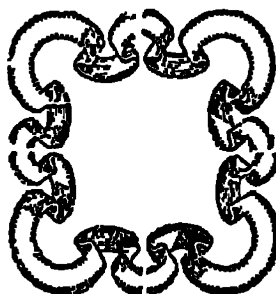
आशीर्वाद दिया हर्षा के * फूलो फलो पुत्र हर्षा के ॥
सीता और विशिल्याई आई * चरन पड़ीं मन में हर्षाई ।
आशीर्वाद हर्ष कर दीना * प्रेम सहित मन में मुद कीना ॥
बनो वीर पुत्रों की माता * दे सदबुद्धि तुम्हें विधाता ।
बार बार कौशल्या माता * पूछे लक्ष्मण से कुशलाता ॥
हो प्रसन्न हाथ सिर फेरे * कहे धन्य धन्य पौरुष तेरे ।
जीता दशकन्धर बलधारी * बल पराक्रम दिखाया भारी ॥

दोहा

दर्श मिले सद्भाग से * पुत्र तुम्हारे आय ।
पुनर्जन्म तुमरा हुवा * हुवा पुण्य सहाय ॥ ६७२ ॥

चौपाई

तुम सेवा से सीता रामा * कुशलक्षेम रहे वन धामा ।
लक्ष्मण कहें सुनो हो माता * आर्य बन्धु राम बड़ भ्राता ॥
पिता तुल्य करते मम पालन * सीता मात समझ निज लालन
दोनों ने वन में सुख दीना * पालन पुत्र समान ही कीना ॥
मेरे कारन ही वन धामा * रावण से हुआ संग्रामा ।
सीता हरी मेरे ही कारन * ऐसा लक्ष्मण किया उच्चारन ॥
मुझ कारन आपत्ति उठाई * संकट सहे बहुत ही भाई ।
रिपु सागर को करके पारा * आ के तुमरा चरन निहारा ॥



राम का राज्याभिषेक



दोहा

राज बहुत किया मैंने * सुनो भ्रात धर ध्यान।
आज्ञा पाली आपकी * कर चरनों का मान ॥६७३॥

चौपाई

अब अपना तुम राज समारो * प्रजा को कीजे निसतारो।
जो चित आज्ञा पै नहिं देता * तो पित संग दीक्षा लेता ॥
मैं जग से अब हुआ निराशा * अब कीजै पूर्ण मम आशा।
राज प्रभु अपना अब लीजे * राज काज निज कर से कीजे ॥
अश्रु नयन भर कर रघुराया * भरत भ्रात को वचन सुनाया।
भ्रात आपने क्या मन ठाना * जो यह शब्द पड़े मम काना ॥
आप बुलाये हम यहाँ आये * अब तुमने क्या वचन सुनाये।
जैसे राज आज तक किया * राज काज अब तक चित दिया ॥

दोहा

जाते हो अब तज हमें * आप राज के साथ।
प्रथम भाँति मम आज्ञा * अब भी मानो भ्रात ॥६७४॥

चौपाई

आग्रह देख भरत उठ धाये * लक्ष्मण ने कर पकड़ बिठाये।
देखा भरत भूप को सीता * बोली वचन सुखद कर प्रीता ॥
जल क्रीड़ा हित समझाया * तुरत विशल्या वचन सुनाया।
आग्रह जान भरत मुसकाना * वचन विशल्या का मन माना ॥

रानिन सहित भरत तब धाये * तीर सरोवर के झट आये ।
जल क्रीड़ा कीनी हुलषाई * एक महूर्त तक हर्षाई ॥
राज हंस की भाँति निकल कर * आये हैं सरवर के तट पर ।
भुवलाँकृत हाथी मदमाता * देखा भरत भूप ने आता ॥

दोहा

देखा है जब भरत को * हाथी दृष्टि पसार ।
गया उतर मद करी का * हुवा जै जै कार ॥६७५॥

चौपाई

सुन कर करि को द्वन्द मचाते * राम लखन आये झुंझलाते ।
हाथी चट हथशाल पठाया * संग महावत के भिजवाया ॥
केवल ज्ञानी मुनि पधारे * कुल भूषण देश भूषण भारे ।
राम लखन मिल दोनों भाई * भरत शत्रुघन मन हर्षाई ॥
चारों भ्रात संग परिवारा * वंदन करने हेत पधारा ।
कर वंदना बैठ मुनि पासा * पूछन लगे पूर्व भव भ्यासा ॥
भुवलांकृत हाथी मदमाता * देख भरत को खड़ा सिहाता ।
देश भूषण मुनि केवल धारी * मुख से ऐसी गिरा उचारी ॥

दोहा

ऋषभदेव के संग नर * दीक्षिक चार हज़ार ।
भगवन के संग विचर कर * चले करन मन धार ॥६७६॥

चौपाई

मौन धार कर विचरन लागे * ममत मोह निज तन से त्यागे ।
शुद्ध मिले नहीं भोजन पानी * निराहार विचरे मुनि ज्ञानी ॥
सहन हुई नहिं भूख पिपासा * और मुनि हुये निर आसा ।
तापस बन गये मुनी अनेका * विद्यावान एक से एका ॥
सुप्रभ नृप के सुत अभिरामा * चंद्रोदय था जिसका नामा ।

सुरादयो चंद्रोदय धाये * भव भव भ्रमण किया दुख पाये ॥
गजपुर नृप के हुये ललामा * हुवा कुलंकर जिसका नामा ।
सुरोदय भी द्विज के घर जाया * श्रुति रति नाम उन्होंने पाया ॥

दोहा

एक दिवस नृप कुलंकर * तापस आश्रम माँहि ।
मार्ग में मुनि मिल गये * अवधज्ञान जिन छाँहि ॥६७७॥

चौपाई

अभिनन्दन मुनि पथ पाये * नृप को ऐसे वचन सुनाये ।
जिनके निकट आप नृप जाते * वह पंच अग्नि तपन तपाते ॥
उस लक्कड़ में है इक व्याला * जो उस में रह कर प्रतिपाला ।
उसको पिता मात निज जानो * उसको जाकर के पहिचानो ॥
रक्षा करो उस सर्प की जा के * हाल दिया तुम को समझा के ।
सुन कर शीघ्र भूप उठ धाया * तापस के आश्रम में आया ॥
फड़वाया वह लक्कड़ जा के * विस्मय हुवे सर्प को पा के ।
भूप कुलंकर के मन आया * दीक्षा धारण करना चाया ॥

दोहा

श्रुति रति द्विज वहँ आ गया * बोला वचन समार ।
अंतिम आयु में नृपत * लेना दीक्षा धार ॥ ६७८ ॥

चौपाई

सुन कर हुआ लोप उत्साहा * लच पच माँहि रहा नर नाहा ।
श्री दामी रानी है तासा * श्रुति रति से चह करन विलासा
दुर्मति रानी को हुई शंका * मेरा भेद समझे नृप बंका ।
मारेगा निश्चय नृपाला * ऐसा सोच समय को टाला ॥
सलाह करी श्रुति रति से जाई * राजा को दें अब मरवाई ।

समय सोच कर कारज किया * रानी नृप को मरवा दिया ॥
अति रति द्विजभी मरण पाया* दोनों भव भव में भ्रमाया।
बहुत काल बीता इस भाँती * दुख पाते युग दिन और राती ॥

दोहा

जनम लिया द्विज महल में * दोनों ने इक सात ।
कापिल ब्राह्मण के तनय * हुये दोनों भ्रात ॥ ६७९ ॥

चौपाई

नाम विनोद रमण युग जानो * रमण गया पढ़ने मन मानो ।
विद्याध्ययन किया हर्षाई * आये पुन मन हर्ष बढ़ाई ॥
बीत गई निश अति अधिकाई * नग्र बीच नहीं गमने जाई ।
पंत्त महल में सोये जा के * सोचा जायें रात बिता के ॥
तिय विनोद की महलों आई * देखा मित्र को मन हर्षाई ।
दृत्त नहीं उसके ग्रह आया * रमण संग उन प्रेम लगाया ॥
शाखापति विनोद जब आया * तुरत रमण को मार गिराया ।
शाखा ने विनोद को मारा * भव भव में भ्रमा जग सारा ॥

दोहा

दोनों जा पैदा हुवे * इक धनाढ्य ग्रह जाय ।
इक प्रसिद्ध धन नाम से * इक भूषण भय थाय ॥ ६८० ॥

चौपाई

ब्याहीं उसको बत्तीस नारी * एक एक से रुप अधिकारी ।
इक दिन निश के चौथे पहरा * बैठ विचार करै मन गहरा ॥
उसी समय श्री धर मुनि राया * निर्मल केवल ज्ञान उपाया ।
केवल ज्ञान की करने महिमा * सुर आये हर्ष सु नैमा ॥
केवल उत्सव अति हर्षा के * देखा भूषण मोद बढ़ा के ।
धर्म भाव मन में बढ़ आये * दर्शन हेत सुमन मन लाये ॥

दर्श हेत जब चरन बढ़ाया * मार्ग बीच सर्प ने खाया ।
शुभ गतियों में भ्रमण कीना * जन्म विदेह में जाकर लीना ॥

दोहा

अचल नाम सम्राट् के * पैदा हुए आय ।
प्रिय दर्शन शुभ नाम से * हुवा अलंकृत धाय ॥ ६८१ ॥

चौपाई

संयम लेने को मन चाया * पिता वचन को नहिं ठुकराया ।
तीन हज़ार कन्या तस ब्याहीं * सुख पावे मन में हर्षाई ॥
चौसट सहस वर्ष पर्यन्ता * धर्माचरण किया गुणवन्ता ।
मर कर पंचम स्वर्ग सिधारे * व्रत उपवास बहुत किये भारे ॥
धन मर कर पोतनपुर आया * अग्नि मुखि द्विज पुत्र कहाया ।
कर अनीत नहिं नीत सँभाला * द्विज ने घर से तुरत निकाला ॥
इधर उधर वह भटकन लागे * सीखन कला समय पर लागे ।
धूर्त बना अपने ग्रह आया * आ कर काज करन मन चाया ॥

दोहा

अंत समय संयम लिया * पाला दृढ़ मन लाय ।
मर कर हुवा देवता * पंचम सुर पुर जाय ॥ ६८२ ॥

चौपाई

पूर्व कपट जो मन में भाया * गज का जन्म यहाँ पर पाया ।
प्रिय दर्शन का जीव सुख पाई * हुये भरत आप के भाई ॥
देख भरत को निज मन माना * उपजा जाति स्मरण ज्ञाना ।
उतरा मद इस कारण तिस का * हाल बताया तुमको जिसका ॥
सुन कर पूर्व भये वैरागा * संयम से बाढ़ा अनुरागा ।
एक सहस नृप राये समाजा * दीक्षा ली भरत महाराजा ॥
किया तप अति ही मन धारी * मोक्ष पंथ की करी तयारी ।

संथारा कर मुक्ति पधारे * होते जिनके जै जै कारे ॥

दोहा

सकल प्रजा कर आग्रह * गई राम के पास ।
पावन सिंहासन करो * सुनो मेरी अर्दास ॥६८३॥

चौपाई

खेचर वृन्द करै अरदासा * पूर्ण करो प्रजा की आशा ।
राज अवध का नाथ सँभारो * शीश मुकुट त्रिखण्ड का धारो ॥
यह सुन बोले राम सुजाना * लक्ष्मण करै अवध का त्राना ।
लक्ष्मण है अष्टम वसुदेवा * इन ही की सब करिये सेवा ॥
परामर्श सब ने स्वीकारा * सिंहासन लक्ष्मण बैठारा ।
प्रथम कलश लखन पै ढ़ाला * किया महूर्त शुभ तत्काला ॥
वासुदेव पद का उत्सव कर * जै जै कार करें सब मन भर ।
उत्सव पुन बलदेव का कीना * हर्ष बढ़ा कर मुद मन दीना ॥

दोहा

लखन वासुदेव आठवें * हरि अष्टम बलदेव ।
राज करो मन हर्ष के * सुर नर सारें सेव ॥ ६८४ ॥

चौपाई

वासुदेव बल का नहिं पारा * सेव करें सुर आठ हज़ारा ।
रहें सदा बलदेव उदारा * सेवक जिन सुर चार हज़ारा ॥
सोलह हज़ार देश जिन आना * राजा रहें उपस्थित नाना ।
हयवर गयवर रथवर भारे * पैंतालीस लाख मन धारे ॥
अड़तालीस क्रोड़ तस सैना * जिनका निरर्थक जाय न बैना ।
वर्ते जग में आन अखन्डा * सेवक सुर करें राज प्रचन्डा ॥
सब जग का जब मालिक रामा * उन्हें राज से फिर क्या कामा ।
राज भ्रात लक्ष्मण को दीना * हर्ष मान यह कारज कीना ॥

दोहा

उन रघुवर के धर्म से * सुखिया सब नर नार।
अधिक नेह गुण भ्रात में * दृष्टि पड़े सर सार ॥६८५॥

चौपाई

जलधर अधिक मेघ बरसावें * कृषिक सारे आनन्द पावें।
सुरभि दुग्ध दें अधिकाई * अधिक फूल फल प्रगटें आई॥
होय लाभ वांणिज में भारा * अधिक काज हों जग में सारा।
चाकर अधिक आज्ञाकारी * अति उत्तम सैना सरदारी॥
अधिक पुत्र कलित्र होय सुखारा * कमला किलोल करे अति भारा।
अधिक दान तप शील अपारा * अधिक होय तप सब प्रकारा॥
अधिक भावना पूज्य सुपावन * करणी अधिक होय सुख चावन।
पोषा अधिक अधिक समायक * अधिकाचार होय शुभ लायक॥

दोहा

अधिक सर्व सुख अवध में * अधिक बड़ा अधिकार।
प्रगटें अति धर्मज्ञ जहँ * होता जै जै कार ॥ ६८६ ॥

चौपाई

क्रोधी कायर क्रूर न देशा * हिंसा झूँठ नहीं लवलेशा।
नहीं चोर नहीं लम्पट जारा * नहीं लोभी नहीं द्वेष लिगारा॥
वाद विवाद नहीं पर निंदा * प्रजा सब करती आनन्दा।
नहीं कराल काल विकराला * नहीं विशन नहीं कुछ जंजाला॥
नहीं प्रपंच रंच पुर माँही * जहाँ वरतें आनन्द सदा-ही।
नहीं जार नहीं कोई ज्वारी * ऐसी प्रजा है सुखकारी॥
जहँ की उपम नहीं जग माँही * जहाँ राज करें राम गुंसाई।
आनन्द जहाँ रात दिन छाया * सत्त दत्त सब के मन भाया॥

दोहा

दिया राक्षस द्वीप भी * भक्त विभीषण राज ।

कपिपति को कपि द्वीप का * सौंपा सारा काज ॥८८७॥

चौपाई

हनुमत को श्री पुर का राजा * सौंपा राम करो सब काजा ।
दी विराध को लंक पयाला * नील ऋक्ष पुर राज सँभाला ॥
प्रित सूर्य को हनुपुर हरि दिया * रत्न जटी देवोगति किया ।
भामन्डल रथनुपुर दिया * जहाँ राज नृप ने जा किया ॥
यथायोग सब को दे देशा * सब को खुश कर राम नरेशा ।
शत्रुघन से हरि फ़रमाया * लेओ देश जो कुछ मन भाया ॥
मथुरा देश तेरे मन भाया * जिसमें संकट होय सुभाया ।
मथुरा का मधु नृप है राजा * करै जहाँ वह सब सुख काजा ॥

दोहा

चमर इन्द्र ने शूल एक * जिसको किया प्रदान ।
रिपु को हन आवे तुरत * उस में गुण यह महान ॥८८८॥

चौपाई

आप निशाचर गढ़ सर कीना * राज विभीषण को फिर दीना ।
मधु को क्या नहिं जीत सकूँगा * यह उपाय मैं आप करूँगा ॥
शत्रुघन का आग्रह जाना * देना मथुरा का मन ठाना ।
आज्ञा पाये शत्रुघन धाये * दल बल से मथुरापुर आये ॥
अखय बांण रिपुघन को दिये * कृतांत सैनापति संग किये ।
लक्ष्मण अग्नि बाँण धनु दिया * विदा शत्रुघन को पुन किया ॥
मथुरा ओर शत्रुघन चाले * यमुना के तट डेरे डाले ।
गुप्तचरों को तुरत पठाया * लौट तुरत सब हाल सुनाया ॥

दोहा

मधु मथुरा पति इस समय * गया बाग उद्यान ।
निर्भय क्रीड़ा कर रहा * हुवा निडर महान ॥८८९॥

चौपाई

शस्त्रागार शूल को धारा * क्रीड़ा करने आप सिधारा।
ऐसा अवसर फेर न आओ * अच्छा समय देख चढ़ जाओ॥
निश में मथुरा किया प्रवेशा * देखा सब रमणीय सुदेशा।
मधु मथुरा के तट जब आया * मार्ग मधु का तुरत रुकाया॥
हुवा दोनों में संग्रामा * विकट युद्ध कीना उस धामा।
शत्रुघन ने मधु सुत मारा * क्रोध विकट कर मधु ललकारा॥
धनु उठाय भूप मधु धाया * शत्रुघन के सन्मुख आया।
अस्त्र शस्त्र वहु भाँति चलाये * शत्रुघन मन में झुँझलाये॥

दोहा।

लिया हाथ उठाय कर * धनुष लखन का हाल।
अग्नि बाण तस धनुष पर * तान लिये तत्काल॥६९०॥

चौपाई

अग्नि बाण से मधु संहारा * गिरा धरन पर नृप उस वारा।
शूल हाथ नाहिं मेरे आया * शुभ कारज कुछ नहीं कराया॥
जाप न कुछ जिनवर का कीना * तप संयम में ना चित दीना॥
कर से दान सुपात्र न दीना * न कोई व्रत मुनि से लीना॥
शुभ्र भावना मन में धाई * शुभ करनी मन में तब भाई।
मर कर तीजे स्वर्ग सिधारे * देवलोक आनंद भये भारे॥
देख सुरों ने कंज गिराये * जै जै कारे कर हुलसाये।
पुष्प वृष्टि करते सुर हर्षा * आनंद बहुत सु मन में सर्षा॥

दोहा

चमर इन्द्र के तट गया * वह त्रिशूल सिधार।
छल कर शत्रुघन दिया * मधु राजा को मार॥ ६९१॥

चौपाई

मित्र मरन करनन सुन पाया * चमर इन्द्र सुन चरन बढ़ाया।

छारुड़पति लख कर हर्षाये * चमर इन्द्र को वचन सुनाये ॥
किस कारण तुम कहाँ को जाते * शीघ्र शीघ्र जो चरन बढ़ाते ।
मित्र शत्रु को मारन जाऊँ * मथुरा पुरी रहे समझाऊँ ॥
वैणुदारी वचन सुनाये * उनसे विजय होय नहिं जाये ।
विजय शक्ति दशकंधर पासा * विफल किया कर के मन हासा ॥
वासुदेव लक्ष्मण ने जीता * रावण मार ले आय सीता ।
उस लक्ष्मण की आज्ञा पा के * मधु मारा शत्रुघन ने आ के ॥

दोहा

चमर इन्द्र कहने लगा * करके क्रोध कराल ।
शत्रुघन को जाय कर * अवश हनूँ तत्काल ॥६६२॥

चौपाई

सत प्रभाव शक्ति को जीता * हुई विशल्या अब पति प्रीता ।
वह प्रभाव नहिं हो सकता है * मुझे कौन फिर जो सकता है ॥
अवश मित्र शत्रु को मारूँ * उससे मित्र का बदल निकारूँ ॥
इन्द्र चला तन क्रोध समाया * मथुरा नगरी में सुर आया ॥
देखा रिपु धन का शुभ शासन * प्रजा करती लखी विलासन ।
मथुरा में व्याधि फैलाई * गुण किये नर नारी जाई ॥
नृप उपचार बहुत करवाये * चारा नहीं कुछ चले चलाये ।
कुल देवी का सुमरण कीना * देवी ने आ दर्शन दीना ॥

दोहा

देवी बोली नृप सुनो * चमर इन्द्र रिस खाय ।
सुरपति ने मथुरा में * व्याधि दीय फैलाय ॥६६३॥

चौपाई

यह सुन रिपु धन अवध सिधाये * राम लखन को वचन सुनाये ।
कुल भूषण केवली पधारे * देश भूषण संग रहे सुखारे ॥

राम लखन शत्रुघन तीनों * मुनि के चरण कमल शिर दीनों
किया प्रश्न राम हर्षाई * कृपा कर दीजे वतलाई ॥
मथुरा का क्यों आग्रह किया * ऐसा चित्त क्यों रिपुघन किया।
देश भूषण बोले मुनिराया * पूर्व भव का हाल सुनाया ॥
प्रकटा मथुरा में कई वारा * इससे मथुरा नगर पियारा।
एक वार श्रीधर द्विज नामा * रूपवान अति ही जिम कामा॥

दोहा

रानी ने लिया बुला * श्रीधर को निज तीर।
पास बुला कर विप्र से * कही हृदय की पीर ॥६६४॥

चौपाई

ललित गया ललिता मन भाई * तुरत लिया द्विज को बुलवाई।
नृप महलों में चरन बढ़ाया * भय से द्विज को चोर वताया॥
भूपत ने अस हुकुम सुनाया * द्विज को वध स्थल भिजवाया।
मुनि कल्याण दया मन लाई * दीना द्विज को तुरत छुड़ाई ॥
ले संयम अति ही तप कीना * जाय चरन सुरपुर में दीना।
सुरपुर से चवि मथुरा आया * चन्द्रप्रभा नृप के घर जाया ॥
अचल नाम पाया सुखकारा * राजा रानी को अति प्यारा।
सात भ्रात ने स्वमन विचारा * मार अचल को दें जिय धारा।

दोहा

खवर मंत्री को पड़ी * अचल दिया चेताय ।
घर तज वन को चल दिया * अपनी जान बचाय ॥६६५॥

चौपाई

काँटा पैर लगा अति भारी * हुवा अचल को दुख अति जारी।
गिरा भूमि पर दुख अति पाया * काष्ट भार ले इक नर आया॥
देख दया उसके मन आई * काष्ट भार को दिया गिराई।

काँटा आकर तुरत निकाला * कष्ट दुखी का सब ही टाला ॥
बोले अचल सुनो तुम भाई * मुझ पर दया करी तुम आई ।
जब तुम सुनो राज मैं पाया * सारूँ काज तेरा जो चाया ॥
अचल गया कौसम्बी माँही * नृप से जाय मिले उस ठाहीं ।
बांण कुशलता नृपत दिखाई * हुवा खुशी अति मन हर्षाइ ॥

दोहा

प्रमुदित मन हुवे नृपति * मन में किया विचार ।
निज पुत्री दी अचल को * छाई खुशी अपार ॥६६६॥

चौपाई

लखत सैन मन भरा उछाया * अंग नगर ऊपर चढ़ धाया ।
विजय पाय मन में हर्षाये * अस्त्र शस्त्र बहु वहाँ से पाये ॥
मथुरा पर कर चला चढ़ाई * मन में बल देखन की आई ।
सातों भ्रात बाँध लिये जा के * मंत्रिन करी प्रार्थना आ के ॥
मंत्री तुरत अचल समझाया * मंत्री नृप को हाल सुनाया ।
सुन कर चन्द्र प्रभा हर्षाया * धूम धाम से अचल बुलाया ॥
राज अचल को हर्षा दिया * मथुरा का नृपत अस किया ।
रहे भ्रात नृप के आधीना * ऐसा कृत निज मन से कीना ॥

दोहा

देखा एक दिन अंक को * नाटक शाला बीच ।
धक्के देते थे उसे * अनुचर छोटे नीच ॥६६७॥

चौपाई

अचल नृपत ने पास बुलाया * श्री वस्ती का भूप बनाया ।
राज काज दोनों मिल कीना * मंत्री भाव हृदय में दीना ॥
समुन्द्राचार्य के तट आ के * दीक्षा ली दोनों हर्षा के ।
काल योग से मृत्यु पा के * अटके पंचम सुरपुर जा के ॥

वहाँ से चक्र भूमन्डल आये * भ्रात आप ऋपु घन हुलसाये।
सैनापति कृतान्त विचारा * अंक हुवा तस तुम अधिकारा॥
सुन कर राम अवध में आये * शत्रुघन को निज सग लाये।
प्रभापुर के नृप श्रीनन्द * सात पुत्र आदिक सुर नन्दा॥

दोहा

अष्टम सुत प्रकट हुवा * राजा के तिस वार ।
सातों सुत के सहित नृप * दीक्षा लीनी धार ॥६६८॥

चौपाई

मुनिवर किया कार सुवारा * उनसे संयम धार सिधारा।
श्री नन्द तप किया अपारा * संथारा कर मोक्ष पधारा॥
सप्त मुनि हुवे जंघा चारी * एक वार सातों मुनि विहारी।
करते विहार मधुपुरी आये * वर्षा ऋतु के अवसर पाये॥
पर्वत गुहा में किया निवासा * मथुरा में रक्खा चौमासा।
छट्टम अट्टम कर उपवासा * तप करते मुनिवर मन भासा॥
पारनो जाय अन्न पुर करते * ऐसे भाव सुमन में धरते।
उनके तप संयम से भाई * रोग तुरत ही गयो पलाई॥

दोहा

मुनि चरनों को धोय कर * पानी जो ले जाय।
सीचैं जाकर निज सदन * सारा दुख मिट जाय ॥६६६॥

चौपाई

अवधपुरी मुनि वर पग धारा * अर्हत के गये घर उस वारा।
लखा मुनि को संयमवन्ता * चौमासे में कस विचरन्ता॥
सेठ कहे सुनिये मुनिराया * कैसा तुम आचार गँवाया।
भेष साधु का लख आहारा * ले उपासरे गये अनगारा॥
आचारज ने आसन दीना * विनय सहित वन्दन तब कीना।

अन्य साधु मुनि शंका आई * वन्दन नहिं करी मन लाई ॥
कर पारणा मुनिराज सिधारे * पूछा करी तुरत अणगारे ।
मुनि तुरत मथुरा में आये * आचारज स्तुति करें बनाये ॥

दोहा

स्तुति सुन कर साधु सब * करते पश्चात्ताप ।
मुनि को मन से क्षमा कर * प्रथक किया संताप ॥७००॥

चौपाई

अर्हत सेठ तुरत वहाँ आये * सुन मुनिवर को तुरत क्षमाये ।
कार्तिक सित सप्तमी सुधारा * मथुरा पुरी गया उस वारा ॥
कर वन्दन अपराध क्षमाया * मन में सेठ बहुत पछताया ।
सप्त मुनि से खुश सब देशा * सुन पुनम को आये नरेशा ॥
विनय करी मन में मृदु भारी * आहर हेत प्रभु भवन पधारो ।
सुन कर मुनिवर अस फ़रमाई * राज पिंड हम लेते नाहीं ॥
शत्रुघन नृप वचन उचारे * रोग नसो प्रताप तुम्हारे ।
कुछ दिन और करो स्थाना * यह विनती करिये प्रमाना ॥

दोहा

मुनिवर अस कहने लगे * सुनो भूप धर ध्यान ।
साधु नहीं ममता करे * कीजे वचन प्रमान ॥७०१॥

चौपाई

आंबिल रहो सदा करवाते * रोग होय शांति बताते ।
ऐसा कह मुनि चरन बढ़ाये * शत्रुघन मन में हर्षाये ॥
गिरि वैताड़ रत्नपुर धामा * रत्नरत्थ तहाँ राजा नामा ।
रूपवती अति सुता सुहाई * मनोरमा सुन्दर वपु पाई ॥
तरुण भये नृप किया विचारा * कौन भूप संग हो व्यवहारा ।
नारद नाम लखन का लीना * रत्नरत्थ सुत क्रोध सु कीना ॥

अनुचर से कर दिया इशारा * नारद लख कर तुरत सिधारा ।
चित्र खींच कन्या का लीना * जाये लखन के कर में दीना ॥

दोहा

लक्ष्मण रूप निहार कर * सैन करी तैयार ।
राम लखन दोनों चले * रत्नपुर उस वार ॥ ७०२ ॥

चौपाई

विजय किया रथनुपुर जाई * गिरि बैताड़ आन मनवाई ।
श्री दामा रघुवर को दीनी * मनोरमा लक्ष्मण सग कीनी ॥
गिरि बैताड़ विजय कर सारा * मन आनंद मनाया भारा ।
साधन कर गिरि अवध पधारे * होंय सुमगल घर घर भारे ॥
सोलह सहस लखन की रानी * जो पति को निश दिन सुखदानी
पटरानी थी आठ विशाला * आदि विशल्या अरु वन माला ॥
रत्नमाल कल्याण सुमाला * सुखमाला पद्मा सुखवाला ।
अभयवती सुन्द अवधारा * मनोरमा मोहनी सु नारा ॥

दोहा

ढाई सौ नंदन हुवे * युद्ध कला सर सार ।
रुपवन्त गुणवन्त अति * पूरा सुर जुभार ॥ ७०३ ॥

चौपाई

विशल्या श्रीधर सुत नामा * रुपवती पृथ्वी तिलक सु धामा ।
वन माला का अर्जुन वीरा * जित पद्मा का श्री केश धीरा ॥
मंगल कल्याणि माला जाया * सुपार्श्व कीरत अनद सु पाया ।
मनोरमा का सुर तरु नंदन * मनोरमा का नंद सु कंदन ॥
विमल रत्न माला सुत जाया * अभयवती सत कीर्ति सुहाया ।
ऋतु असनान किया श्री सीया * विमल सेज सैन मन दिया ॥
अष्टापद युग स्वप्न निहारे * सुरपुर से मुख माँहि पधारे ।

हाल राम को सभी सुनाये * सुन कर राम बहुत हुलसाये॥

दोहा

देवी होयँगे आप के * युगल पुत्र बलवान ।
अष्टापद देखे युगल * होते बली महान ॥ ७०४ ॥

चौपाई

धर्म प्रभाव आप कृपा से * अच्छा होगा मात दया से।
सुन कर राम मोद मन लाये * प्रेम और हो गये सवाये ॥
सीता शीतल शशी समाना * सुन्दर सुखद शोभनी आना ॥
सौत सरीखा शूलन और। * सौत करै नहिं कृत अथोरा ।
सौत कहो क्या करन दिखावे * सौत-सौत को देख खिजावे।
सौत शस्त्र से तीखी जानो * सौत प्रताप तेज अति मानो ॥
मंत्र से सांपणी कीली जावे * सौत मंत्र को मन नहिं लावे।
काँजी दूर रहै पय नीका * काँजी गिर फटे होय नीका ॥

दोहा

सीताजी से छल किया * शोक भाव उर धार ।
रावण कैसा था वहन * करो चित्र तैय्यार ॥ ७०५ ॥

चौपाई

मैंने देखा नहीं शरीरा * चित्र किस तरह करूँ सुधारा।
केवल पैर निहारे मैंने * और नहीं कुछ शब्द कहे ने ॥
अच्छा लिखकर चरन दिखाओ * कुछ तो उसका चिन्ह बताओ।
दशकंधर के पैर बनाये * उस ही समय राम वहाँ आये ॥
देख राम को सौतें बोली * हृदय कपट गाँठ को खोली ।
सीता प्रिय आपकी स्वामी * रावण स्मरण करै सु नामी ॥
दशकंधर पद चित्र बना के * करै याद हृदय हुलसा के।
बात ध्यान में रखने योगा * शायद कभी मिलै संजोगा ॥

दोहा

सौतों ने मिल सलाह कर * दासी दीं सिखाय ।
प्रजा में प्रसिद्ध यह * दीनी बात कराय ॥७०६॥

चौपाई

आया मास वसन्त सुहावन * राम कहें सुनिये मन भावन ।
गर्भ कष्ट हो प्रथक सुकान्ता * खेलें चलकर बाग वसन्ता ॥
अति ही सुगड़ महेन्द्रोद्याना * विनोदार्थ सुन्दर सुख नाना ।
वहाँ चलें क्रीड़ा करने को * मोद विनोद सुमन भरने को ॥
वकुल वल्लरी अति सुखकारी * लता लवंग फूल रही प्यारी ।
सीता कहें दोहिला आया * पंकज पुंज तोड़ मँगवाया ॥
मंडप रचा करी तैयारी * पूर्ण किया दोहिला भारी ।
सीता सहित विपन में आये * उपवन में आ अति सुख पाये ॥

दोहा

विविध वसन्त विनोद में * मचा रहे बहु ख्याल ।
सीधा लोचन सिय का * फड़क उठा तत्काल ॥७०७॥

चौपाई

सीधा फड़कत देखा नैना * शंक भई मन हुवा कुचैना ।
काँपन लगी सिया की काया * हा पुन्य यह संकट फिर आया॥
उमगा हिया नैन जल छाया * प्रथम संकट बहुत उठाया ।
सिया राम से कहे विशेषा * सुन कर सोचें राम नरेशा ॥
सीधा नैन नहीं हो नीका * बोली सुन कर वचन पति का ।
निश्चय द्वीप देव ने दिया * पर संतोष न अब तक किया ॥
सुन कर रघुवर धीर बँधाया * कमलानन कैसे मुरझाया ।
नियम धरम से दुख विसराओ * होगी होनहार सुख पाओ ।

दोहा

काटा है दिन वर्ष सम * मन अति हुआ उदास ।

जाने हैं सब केवली * जो प्रकटा दुख तास ॥७०८॥

चौपाई

आरत हरन करन रघुराया * जनक सुता का मान बढ़ाया।
घट-घट महल महल यश छाया * हर्ष सिया के मन प्रकटाया॥
महिमा विश्व बढ़ी सीता की * सौतन शोच करें अति ताकी।
विजय सुरदेव सुजाना * पिंगल कश्यप अरु मधुमाना॥
कालक्षेम इत्यादिक नाना * रहें गुप्तचर नम्र विधाना।
राम निकट आये धर धीरा * थरथर काँपे होय अधीरा॥
राम कहें सुनिये चित्त लाई * अभय किया रहो मन में भाई।
हाल सत्य जो होय सुनाओ * अपने मन में मती डराओ॥

दोहा

अभय वचन सुन राम के * बोला विजय प्रधान।
हे स्वामी, इक बात है * सुनिये धर कर ध्यान॥७०९॥

चौपाई

सिय अपवाद लोग करते हैं * सीताजी के सिर धरते हैं।
हरण करी दशकन्धर सिया * कैसे रावण ने तज दिया॥
जब भोजन भूखे तट आवे * कैसे उन्हें कहो नहीं खावे।
लम्पट के संग तिया अकेली * होय निकट यदि नार नवेली॥
कैसे कर वह उसको त्यागे * होय असम्भव कंठ न लागे।
यह अपवाद अवध में जारी * चरचा करें नगर नर नारी॥
दिनकर सम तप तेज तुम्हारा * अब घर घर अपयश है भारा।
सुन कर राम मौनता धारी * मन में अपने बात विचारी॥

दोहा

किया काज तुमने परम * अच्छा सुनो सुधार।
चेताया मुझ आन कर * मानूँगा उपकार॥७१०॥

चौपाई

गुप्तचरों को दीई विदाई * अपने मन सोचा रघुराई ।
उसी रात को बाहर आ के * गली-गली विपन में जा के ॥
चरचा सुनी लगा कर काना * कहते सुने लोग स्थाना ।
सुन कर राम महल में आये * अन्य गुप्तचर पुनः पठाये ॥
समाचार पुन वोही दिये * सुन कर राम मौन धर लिये ।
लखन क्रोध कर बोले वैना * हुये लाल वरण दोऊ नैना ॥
तुरत लखन ने बाण सँभाला * दुष्टों को मैं काल समाना ।
जल पर यदपि तरै पाषाण * पश्चिम दिश चहे ऊगे भाना ॥

दोहा

चाहे वैश्या हो सती * सुधा हलाहल होय ।
रवि से तम चहै हो प्रगट * गौ पद सिन्ध समोय ॥७११॥

चौपाई

जल भीतर चहै वरनी लागे * चाहै सिंह गिद्ध लख भागे ।
चहै कमल प्रकटे पत्थर पै * अम्ब लगें कीकर तरवर पै ॥
ऐते होय उपद्रव भारी * सत्य तजे नहीं सीता नारी ।
यह सुन कहें राम सुन भ्राता * सुनी जाय नहीं ऐसी वाता ॥
सीता को महलों से टारूँ * सिर से अपयश भार उतारूँ ।
बोले लखन तुरत खिसयाई * नग्र बीच दूँ हुकम कराई ॥
मुख पर वचन सिय के लावे * प्राणदण्ड दण्ड वह पावे ।
सीता सती जगत सब जाने * सुरनर मुनि सब मन में माने ॥

दोहा

लिया तुरत बुलाय कर * कृतान्त वदन को पास ।
सीता को घर से अलग * दीजे तुरत निकाल ॥७१२॥

चौपाई

निर्जन विपन जाय तज दीजै * ममता नेक नहिं मन में कीजे ।

सुनकर वचन लखन विलखाये * राम चरन पड़ वचन सुनाये ॥
सीता नहीं त्यागने योगा * महासती किम सहै वियोगा ।
कहने में नहीं है कुछ सारा * रघुवर मुख से वचन उचारा ॥
देखे काल रूप श्री रामा * लखन गये तज कर निज धामा ।
गिरि समेत का करो वहाना * वन में सिय का तज कर आना ॥
जा कृतान्त सुनाई वाता * होगई सिया चलन को साता ।
रथ को आगे तुरत चढ़ाया * गंगा निकट यान झट आया ॥

दोहा

सीता को अशकुन वहुत * हुये पंथ में आय ।
मन में अति घवरा रही * मुख से कहा न जाय ॥७१३॥

चौपाई

गंगा के उतरे जव पारा * सिंह निनाद विपन मंझारा ।
रथ को वहीं खड़ा कर दिया * सोच अधिक निज मन में किया ॥
मुख मलीन दीन भई काया * जल आकर नैनों में छाया ।
सीता देख स्वमन घवराई * सैना पति को गिरा सुनाई ॥
सेनापति कहि कारन रोया * धीरज कहो किस तरह खोया ।
सैनापति वोले कर जोरी * माता सुनो विनय यह मोरी ॥
धिक् धिक दास कर्म जगमाँही * परतन्त्रता जैसो दुख नाहीं ।
जग करता अपवाद तुम्हारा * राम महल से तुम्हें निकारा ॥

दोहा

रावण के अपवाद से * तुम को दिया निकाल ।
गुप्तचरों ने नग्र का * आन सुनाया हाल ॥७१४॥

चौपाई

लक्ष्मण क्रोध किया अति भारा * राम आज्ञा से महल सिधारा ।
फिर आज्ञा मुझ को दे दीनी * सेवक आज्ञा पूरी कीनी ॥

पुण्य आपका यहाँ रखवाला * वो ही रक्षा करै समाला।
सुन कर वचन सिया मुरझाई * रथ से गिरी तुरत गश खाई ॥
सैना पति अति रुदन मचाया * हाय हाय कर बहु चिल्लाया।
बन में शीतल चली समीरा * सीता के जब लगी शरीरा ॥
होंश हुआ सीता को आई * सैनापति को गिरा सुनाई।
अवधपुरी है कितनी दूरा * मुख से कहो सत्य तुम शूरा ॥

दोहा

वचन कहे सैनापति * सुनो मात धर ध्यान।
अवध पुरी बहु दूर है * कीजै विनय प्रमान ॥७१५॥

चौपाई

रघुवर से कहना तुम जा के * बात न रखना कुछी छुपा के।
लोकपवाद सुना जब मेरा * किया नहीं क्यों प्रयत्न सवेरा॥
लेते आन परीक्षा मेरी * बुद्धिमता से करते जेरी।
मंद भागनी सीता भारी * वन में संकट सहै अपारी ॥
दुर्जन वचन बाण सम लागा * सुन कर जैसे मुझ को त्यागा।
मान मान दुष्टों का कहेना * जैन धर्म को मत तज देना ॥
इतना कह पुन गिरी धरन में * कसर नहीं कुछ रही मरन में
सावधान होकर पुन बोली * फिर नैनों की पुतली डोली ॥

दोहा

सीता बोली पुन वचन * सैनापति से आय।
कहना हरि से जाय कर * मेरी इतनी जाय ॥ ७१६ ॥

चौपाई

होय राम कल्याण तुम्हारा * लक्ष्मण को आशीश हमारा।
सुन कर सेनापति सिधारा * सीता तजी विपन मझधारा ॥
जनक-सुता वन भटकत डोले * मुख से राम-राम ही बोले।

विलख-विलख सिय रोवे वन में* धीर धरे नहीं किंचित मन में ॥
निज मुख से नहीं राम उचारा* विश्वासी दिया देश निकारा ॥
निज आनन जो वचन सुनाते * रसना श्रम कर तनिक हिलाते।
आज्ञा सुन नहिं धरना देती * न कुछ मैं अनशन कर लेती।
नहीं कूप सागर में पड़ती * ना फाँसी के ऊपर चढ़ती ॥

दोहा

सुन कर सिय के रुदन को * सोचे खड़ा नरेश।
यह करुणामय कहाँ से * आते शब्द विशेष ॥७१७॥

चौपाई

सुन कर रुदन भूप तट आया* देख सती को सोच बढ़ाया।
धरै आभरण सिया उतारी * बोली अस सतवन्ती नारी ॥
देख आभरण नृप मन सोचा * कैसा समय आ गया पोचा।
बहन न शंका मन में धारो * अक्षय हो शृंगार तुम्हारो ॥
अपना सकल हाल समझाओ * वन आने का सबब बताओ।
मंत्री सुमत कहै अस वैना * यह नृप वज्र जंघ सुन वैना ॥
पुंडरीक पुर के यह राजा * करें राज के सुन्दर काजा।
श्रावक भूप महा सतधारी * मात वहन समझे पर नारी ॥

दोहा

गज पकड़न के हेत नृप * आये विपिन मझार।
रुदन शब्द तुमरे सुने * इससे दुखित अपार ॥७१८॥

चौपाई

हाल सती ने दिया सुनाई * कहत कहत हिलकी भर आई।
गद्-गद् हुवे राव के नैना * धीर बाँध बोले अस वैना ॥
धर्म बहन तुम को मैं मानी * कहूँ सत्य मुख से मैं बानी।
लोक अपवाद से हरि ने त्यागा*-रंज तजो तुम मन शुभ लागा ॥

भामंडल सम मैं तव भाई * मेरे ग्रह रहो वन आ छाई ।
शिवका तुरत मँगा भूपाला * सीता को उसमें बैठाला ॥
नगर पहुँच शुभ महल दिया * सादर भूप स्वागत किया ।
धर्म ध्यान कर समय निकारे * मन में चित्र राम को धारे ॥

दोहा

सेना नायक सब दिया * हाल सुना उस बार ।
कहते कहते नैन से * गिरी अश्रु की धार ॥७१६॥

चौपाई

सिंह निनाद विपन कर आया * एक संदेश तुम्हें भिजवाया ।
एक पक्ष की सुन-सुन बातें * राम न करते ऐसी घातें ॥
किसी नीत में यह नहिं आया * एक पक्ष में नियाये पाया ।
है अभाग्य मेरा अस भारी * जो मुझ को रघुनाथ विसारी ॥
सुन अपवाद राम ने त्यागा * मन में नहिं विचार कुछ पागा ।
मिथ्यावत के सुन कर वेना * जैन धर्म को मत तज देना ॥
इतना कह गिरी भू मुरझाई * मैंने रथ दिया अग्र बढ़ाई ।
आ कर हाल सुनाया सारा * सुन कर मन में राम विचारा ।

दोहा

सीता मूर्छित पुन भई * कह कर सारा व्यान ।
बिन मेरे कैसे रहें * जीवित राम सुजान ॥ ७२० ॥

चौपाई

सुन कर वचन मूर्छा आई * गिरे सिंहासन से भू आई ।
लाकर चन्दन का जल डाला * लक्ष्मन ने आ तुरत सँभाला ॥
बोले राम कहाँ है सीता * महासती वह परम पुनीता ।
लोक अपवाद जान कर त्यागा * क्या मन बीच उपद्रव जागा ॥
कहन लगे लक्ष्मण लघु भ्राता * जीवित हो वन सीता माता ।

विरह आप के में मर जाना * मैंने मन में ये ही जाना ॥
मरने से पहिले पग धारो * दास विनय को तुम श्रुत धारो
सुन कर वचन राम कर ध्याना * मँगवा लीना तुरत विमाना ॥

दोहा

कपि पति अरु कृतान्त को * लीना रघुवर साथ ।
चले यान आसीन हो * रघुवर मलते हाथ ॥ ७२१ ॥

चौपाई

सिंह निनाद विपन में आये * तुरत विमान मही पर लाये ।
जहाँ सिया को दी छिटकाई * वहाँ नहीं पुन सीता पाई ॥
जल थल गिरि गुहा सकल निहारा * हाथ शीश निज दे-दे मारा ।
कै चीता के वाघ सताया * या कोई अरु जन्तु ने खाया ॥
यह विचार कर राम सुजाना * आरत करें शोक मन ठाना ।
लौट अवध में रघुवर आये * लक्ष्मण को सब वचन सुनाये ॥
आरत क्रोध दोऊ मन छाये * राम अधिक मन में घबराये ।
मृत्यु कर्म सिय के सब किये * राम दुखी भर आय हिये ॥

दोहा

वज्रजंघ भूपाल के * सीता जाये लाल ।
अनंग लवण मदनांकुश * युगल पुत्र सुविशाल ॥७२२॥

चौपाई

आनंद मंगल भूप मनाये * प्रचलित लव कुश कहलाये ।
पाँच धाय कनियाँ ले लालन * प्रेम युक्त करती है पालन ॥
भान कला सम दिन-दिन बढ़ते * छवि वपु में निश वासर चढ़ते ।
वाल कला जब करने लागे * वज्रजंघ नैनों के आगे ॥
भूपत देख अनन्द मनावे * हर्ष हृदय नहीं बीच समावे ।
सिद्धार्थ मुनि अणुवृत धारी * विद्याबल में कुशल सुभारी ॥

देश विदेश सब इच्छा चारी * जंघाचारी गगन विहारी ।
सिय के भवन चरन मुनि धारे * भोजन पानी हेत पधारे ॥

दोहा

सीता पूछे शान्तिता * मुनि बोले हर्षाय ।
गुरु प्रसाद मन शान्ती * सिद्ध कार्य कियो आय॥७२३॥

चौपाई

सीता का सुन कर मुनि हाला * सिद्धार्थ शुभ शब्द निकाला ।
चिंता करो न किंचित मन में * लक्ष्मण श्रेष्ठ पड़े इन तन में ॥
राम लखन सम ही यह वीरा * दें सदा तुमरे मन धीरा ।
पूर्ण करें मनोरथ सारे * होंय सुफल मन काज तुमारे ॥
साग्रह सिया किया अति भारा * शिक्षा हित मुख वचन उचारा ॥
सिद्धारथ ने हर्ष बढ़ाई * लव कुश को विद्या सिखलाई ॥
सारी कला सीख युग भाई * माता को सब दिया सुनाई ।
युवा अवस्था में पग धारा * काम वसन्त मनो वपु प्यारा ॥

दोहा

वज्रजंघ ने निज सुता * लव को दी परनाय ।
शशि चूला रानी सुगड़ * सतवंती कहलाय ॥७२४॥

चौपाई

कुश के व्याहन की मन लागी * पृथू भूप की कन्या माँगी ।
पृथूभूप करके अभिमाना * वज्रजंघ का वचन न माना ॥
कैसे कन्या दूँ तुम जाना * जिसके वंश का नहीं ठिकाना।
सुन वज्रजंघ रिसियाये * युद्ध करन को तुरत सिधाये॥
व्याघ्ररथ भूप बाँध झट लिया * ऐसा प्रवल युद्ध नृप किया ।
पोतनपुर का नृप चढ़ आया * वज्रजंघ निज सुतन वुलाया ॥
लव कुश संग चलो युग भाई * नहिं माने की बहुत मनाई ।

पहुँचे युद्धक्षेत्र में आई * लव कुश हर्ष रहे युग भाई॥

दोहा

दोनों सेनाओं में * युद्ध हुआ घमसान ।
शत्रु दल पर पड़ गया * होकर के बलवान ॥७२५॥

बहर खड़ी

दोनों सैना युद्धस्थल में * अपना पराक्रम दिखाती हैं ।
भर रही है विजय कामना मन * नहिं पीछे चरन बढ़ाती है ॥
बलवान शत्रुओं के दल ने * नृप दल को तुरत परास्त किया।
मामा की पराजय देख समर * लव कुश ने आकर चरन दिया॥
नाना प्रकार के शस्त्रों को * रिपु पै तुरत चलाया है ।
यह विकट मार नहिं सहन हुई * शत्रु का दल घबराया है ॥
जब समर छोड़ भागन लागे * अंकुश ने हँस कर वचन कहा।
प्रख्यात् वंशवाले होकर * नहिं तन पर मेरा वार सहा ॥

दोहा

ऐसी वानी श्रवण कर * लौटा प्रथू राज ।
नम्र भाव से कहे रहा * वचन भूप स लाज ॥७२६॥

बहर खड़ी

देखा भारी बल आपका जब * सद वंश हाल पहिचान लिया।
पराक्रमी वीर उच्च वंशज * पराक्रम से मैंने जान लिया ॥
नृप वज्रजंघ ने मम कन्या * कुश के हित मुझ से माँगी है।
कन्या देना स्वीकार मुझे * कन्या मेरी बड़ भागी है ॥
सब नृपवरों के ही सन्मुख * प्रथू राजा ने वचन दिया ।
शुभ समय मुहूर्त लग्न देख * कुश के संग तुरत विवाह किया
केई दिन रहे छावनी में * नारद मुनि वन में आये हैं ।
लव कुश के वंश के सब वृतान्त * प्रभु को सभी सुनाये हैं ॥

दोहा

बोले नारद हर्ष कर * सुनो हमारी बात ।
कुल इन का क्या पूछते * विश्व वंश विख्यात ॥७२७॥

बहर खड़ी

जिस कुल की उत्पत्ति प्रथम ही* भगवान ऋषभ के हाथ हुई ।
जिस कुल में सु प्रसिद्ध भरत * सम्राट् कीर्ति जिन साथ हुई ॥
बलदेव और वसुदेव अवध * पुर में जिस कुल के राजा हैं।
जिस कुल की आन है तीन खंड* माने यश सकल समाजा है॥
उस ही कुल में बलदेव राम * उनके यह दोनों बालक हैं।
अष्टापद के सुत अष्टापद * और शत्रु कुल के घालक हैं॥
जिस समय गर्भ में यह दोनों * माताजी के बहलाने को ।
अपवाद जान कर जनता का * निज सिर से उसे छुड़ाने को ॥

दोहा

अवध पुरी यहँ से कहो * है मुनि कितनी दूर ।
करें वास जहँ पर पिता * कुटुम सहित भर पूर ॥७२८॥

बहर खड़ी

सुन कर उत्तर नारद दिया * वह अवधपुरी है दूर बहुत ।
जहाँ राम रहें निर्मल चरित्र * बाल हैं संग में शूर बहुत ॥
योजन हैं एक सौ साठ सुनो * जहाँ राम दुहाई फिरती है ।
होता है जै जै कार सदा जहाँ * क्षमा शांति युग भिरती है ॥
यह सुन कर वज्रजंघ नृप से* होकर विनीत यों अर्ज़ करी ।
हम देखें राम राज्य जा कर * देखन की मन में हौंश भरी ॥
कैसे हैं राम लखन दोनों * जिसने दशकन्धर को मारा ।
निश्चर सेना के सहित बली * रावण को जिसने संहारा ॥

दोहा

लव अंकुश की बात को * भूप करी स्वीकार ।

कनक माल को प्रथू ने * रथ में करी सवार ॥७२६॥

वहर खड़ी

कर विदा कनक माला को दी * प्रभू के संग भूपाल चले।
लव अंकुश वज्रजंग भूपत * सैना के सहित नृपाल चले॥
मार्ग में विजय वहु देश किये * पुन लंकापुर तट आया है।
शुभ विपिन देख कर के लव ने * लश्कर को वहीं टिकाया है॥
आया कुवेर कान्त राजा * लव का सारा दल घेर लिया।
मृगों के झुंड में यों मृगपति * सब का अंकुश ने ढेर किया॥
कर विजय अगाड़ी धरे चरन * भ्रातृ शत भूपत जीता है।
गंगा को कर के पार चले * युग भ्रात वड़े निर्भीता हैं॥

दोहा

चाले हैं उत्तर दिशा * दोनों भ्रात अभीत।
नन्दन चारु नृपत को * लिया सहज ही जीत॥७३०॥

वहर खड़ी

कुंतल कालावुं नंदि नन्दन * सिंहल अरु अनल शूर सारे।
जीते हैं शलभ भीम आदिक * नृप वड़े वड़े वल दल वारे॥
आकर के सिन्ध किनारे पर * पुन विजय पताका फहराई।
माता के चरण पर्श ने की * युग भ्रातों के मन में आई॥
फिर पुन्डरीक पुर का मार्ग * हर्षा दोनों ने लिया है।
कुछ चन्द रोज के अरसे में * अपने नगर पग दिया है॥
निज विजय पताका फहराते * माता के महलों आये हैं।
अति विनय सहित दोनों वन्धव * चरनों में शीश झुकाये हैं॥

दोहा

चरन कमल निज मात के * पर्शे प्रेम बढ़ाय।
मस्तक सूँघा मात ने * दी आशीश दढ़ाय॥७३१॥

बहर खड़ी

दीनी आशीश सिया खुश हो * हो राम लखन से वल शाली।
यश ध्वजा गगन में उड़े सदा * कीरत छाये छित निरयाली॥
अवसर समाल नृप वज्रजंघ * लव अंकुश से यों कहन लगे।
है समय तात से मिलने का * शुभ अवसर कर में गहन लगे॥
कुन्तल कालवुँ लम्पाक शलभ * रुख अनलशूल संग राजे है।
रथ पैदल गजपालकी अश्वसव * अवधपुरी को साजे हैं॥
यंह सुनकर परम पावनी सिय * लवकुश से वचन उचारे हैं।
वह राम लखन दोनों भ्राता * अति बांके वीर जुझारे हैं॥

दोहा

ऐसा साहस मत करो * मानो वचन हमार।
तीन खंड का अधिपति * विजै किया असुरार॥७३२॥

बहर खड़ी

दल वल संग ले कर मत जाओ * यह मानो वचन हमारा है।
नम्रता युक्त जाकर मिलना * बेटा यह धर्म तुम्हारा है॥
हे मात आपका परित्याग * करके शत्रुता कमाई है।
इस कारण प्रेम भाव कर के * जाने में कौन बढ़ाई है।
इस रीति हमारे जाने में * उन को भी लज्जा आवेगी।
यदि युद्ध आवहन दें उनको * तो बात मात रह जायेगी॥
वीरो का धर्म यही जननी * वीरत्व दीखा कर मिल जाना।
मात पिता के चरनों में * वीरत्व दिखा कर गिर जाना॥

दोहा

सुन कर चुप सीता रही * उत्तर नहीं दिया।
दोनों ने संग सैना ले * तुरत पयान किया॥७३३॥

वहर खड़ी

भरी सैना के संग अयोध्या को * हो गये रवाना हैं।

पहुँचे जा निकट अवधपुर के * पुर बाहर दल ठहराया है ॥
जब राम लखन को खबर पड़ी * कोई शत्रु दल चढ़ आया है ।
सुन कर के लक्ष्मण कहन लगे * यह क्यों मन में गर्माया है ॥
जिस तरह अग्नि की लौ लखकर * लड़ने को पतंगी धाता है ।
नहीं कुछ बिगड़ा है वरनी का * यों अपने पंख जलाता है ॥
बस इसी तरह से शत्रु दल * यह अपना नाश करावेगा ।
क्या भान के आगे है जुगनू * भुनगे की तरह मर जावेगा ॥

दोहा

समर करन को चल दिये * राम लखन युग वीर ।
सुग्रीवादिक संग में * बड़े बड़े रणधीर ॥ ७३४ ॥

बहर खड़ी

आ के नारद सीता का जिक्र * भामंडल को समझाते हैं ।
सीता है पुंडरीक पुर में * यह वियान सभी पहुँचाते हैं ॥
भामण्डल बैठ विमान बीच * सीता के सन्मुख आये हैं ।
कर जोड़े हुये चरन आ के * सब समाचार सुन पाये हैं ॥
सीता भामण्डल दोनों ही * जाने को समर तैयार हुये ।
नहीं वार करी किंचित महलों * आकर विमान असवार हुये ॥
अति शीघ्र गति धारण करके * दल में विमान जब आया है ।
दोनों सुत सिंह समान देख * सीता का मन हर्षाया है ॥

दोहा

सीता माता के युगल * चरनों शीश नमाय ।
नमस्कार कर मात को * बैठे हैं तट आय ॥ ७३५ ॥

बहर खड़ी

सीता माता जब लव कुश से * हर्षा कर वचन उचरतीं हैं ।
मामा तुमरे है भामण्डल * समझा कर मन को भरती हैं ॥

लव कुश ने मन प्रसन्न होय * मामा को नमस्कार किया।
भामण्डल ने मस्तक चूमा * खुश होकर आशिर्वाद दिया॥
मम बहन वीर पत्नी प्रथम थी * अब यह शुभग घड़ी आई।
सद्भाग से हुई वीर गर्भा * पुन वीर माता भी कहलाई॥
सुत वीर हुवे तुमरे समान * जिनकी जग में प्रभुताई है।
निर्मलता सुर सर सलिल शुभ्र * सौ गुन शशि से उजलाई है॥

दोहा

काका के अरु पिता के * करो न संग संग्राम।
अवल अद्वितीय भ्रात युग * समर युद्ध के धाम॥ ७३६॥

बहर खड़ी

दोनों भाई हैं वीर प्रवल * अतुलित वल पौरुष भारा है।
अष्टापद राम लखन दोनों * जिन रावण सिंह संहारा है॥
जिसकी भृकुटी पर वल आते * घन वारिधार को छोड़े था।
सुर असुर नाग नर हार थे * नहिं कोई नैना जोड़े था॥
ऐसे रावण को राम लखन ने * बुरी तरह से मारा था।
विद्या वल भुज बल सैना बल * भारी को तुरत पछारा था॥
ऐसे हैं वीर पिता काका तुमरे * तुम मत संग्राम करो।
लो कहन हमारी मान पुत्र * मिल कर के संग विश्राम करो॥

दोहा

मामा आप स्नेह वश * रहे भीरुता दिखाय।
ऐसे ही माता ने हमें * चाहा देन डराय॥७३७॥

बहर खड़ी

माना कि वह हैं वीर महा * उन से हमरी सामर्थ्य नहीं।
संग्राम छोड़ कर जायँ भाग * इसका भी कोई अर्थ नहीं॥
फिर कहो पिता से मिलने का * क्या मार्ग और विचारा है।

ऐसा बतलाओ पंथ कोई * अपमान न होय हमारा है ॥
यहाँ पर यह परामर्श होता * संग्राम भूमि संग्राम छिड़ा।
ले ले कर शस्त्र युद्धस्थल * वीरों से आकर वीर भिड़ा॥
जब लगे बाण वर्षने भूमि * ज्यों प्रलय काल की हो वर्षा।
प्रारम्भ युद्ध हो गया वहाँ * भरते उत्साह वीर हर्षा॥

दोहा

आशंका से यान में * हो कर तुरत सवार।
भामंडल आये वहाँ * जहाँ युद्ध सर सार ॥७३८।

बहर खड़ी

लव कुश दोनों हथियार बाँध * मैदान जंग में खड़े हुए।
जिस तरह हिमाचल अरु सुमेर * सागर के तट पर अड़े हुए॥
सुग्रीवादिक ने जब देखा * भामन्डल युद्ध निहार रहे।
बैठ विमान के बीच भूप * कुछ मन में सोच विचार रहे॥
कपि पति यों लगे पूछने को * दोनों कुमार यह किनके हैं।
हैं असल केहरी बतला दो * मालूम होय जो जिनके हैं॥
उत्तर दिया भामंडल ने * यह दोनों राम कुमार सुनो।
सीताजी के अंगज दोनों * वीरों के हैं सरदार सुनो॥

दोहा

सीताजी के यह तनय * सुना जिस समय ब्यान।
सुग्रीवादिक चल दिये * पहुँचे सिय तट आन॥७३९॥

बहर खड़ी

कर नमस्कार चरणाम्बुज में * आकर के शीश नमाया है।
पूछा कुशल क्षेम सारा * दर्शन कर मन हुलसाया है॥
संग्राम भूमि में लव कुश ने * आ मारा मार मचाई है।
भगदड़ मच गया राम दल में * कर शस्त्र न दें दिखलाई है॥

लक्ष्मण के सन्मुख युग भ्राता * हथियार लिये कर आये हैं।
सुन्दर पुत्रों को देख राम * लक्ष्मण दोनों चतराये हैं॥
मन देख-देख इन दोनों को * भर प्रेम उछाले खाता है।
लूँ लगा कंठ इन दोनों को * हृदय में ऐसा आता है॥

दोहा

लव अंकुश रथ आन कर * सन्मुख दिया अड़ाय ।
फिर अंकुश कहने लगे * सुनिये कान लगाय ॥७४०॥

बहर खड़ी

वीरों से युद्ध करें रण में * मन में अभिलाषा भारी है।
तुम अजयवीर को विजय किया* हम देखें कला तुम्हारी हैं॥
विजयी वीरों के दर्शन पा * प्रसन्न हुवा मन भारा है।
है राम करो पूरी आशा * ऐसा शुभ भाव हमारा है॥
दशकंठ ने जो इच्छा पूरी नहीं * करी, उसे हम कर देंगे।
नाना प्रकार के शस्त्रों से * संग्राम से मन को भर देंगे॥
लव अंकुश राम लखन चारों * टंकोर धनुष की करते हैं।
कृतान्त सारथी वज्रजंघ * दोनों कर वाग समरते है॥

दोहा

आगे यान वढ़ा दिये * खड़े परस्पर आन।
चारों वीरों में छिड़ा * युद्ध घोर घमसान॥ ७४१॥

वहर खड़ी

मानी मानुष हित मान के ही * जीना और मरना जानते हैं।
प्राणों से मान विशेप मान * निज प्राण को देना ठानते हैं॥
इस ही आशय पर राम लखन* लव कुश से हुवा संग्राम महा।
छोड़े हैं नाना भाँति अस्त्र * नहिं देखें छाया घाम महा॥
दीनी है आज्ञा राम तुरत * कृतान्त वढ़ाया रथ आगे।

श्रम से थक गये अश्व रथ के * नहीं एक कदम भी अब आगे।
बाणों में विंधे अश्व रथ के * रथ भी तो खंडन सा हुवा।
रिपु आगे बढ़ा चला आवे * संग्राम सु मंडन सा हुवा॥

दोहा

मेरा भारी धनुष भी * अब नहिं देता काम।
देवमयी हथियार भी * हुये आज निष्काम ॥७४२॥

बहर खड़ी

थी यही दशा लखन की भी * नहीं भुज बल कर्तव करते हैं।
नहिं काम कोई हथियार दे * मन रोप अधिकतर धरते हैं॥
अंकुश ने बाण मार दीना * लक्ष्मण को मूर्छा आई है।
यह हाल देख कर करके विराध* दिया रथ को तुरत भगाई है॥
मार्ग की शीतल हवा लगी * पुन चेत लखन को आया है।
बोले सरोप झुँझला कर के * क्या कर्तव नया दिखाया है॥
दशरथ नृप के सुत के लिये * अनुचित संगर से जाना है।
रिपु के सन्मुख चल खड़ा करो * इस ही में सब कुछ माना है॥

दोहा

मेरे वाहन को तुरत * ले चल रण मैदान।
चक्र सुदर्शन से करूँ * रिपु का मैं कल्याण ॥७४३॥

बहर खड़ी

लक्ष्मण के वचन सुने जिस दम* रथ को पीछे लौटाया है।
मन में विराध प्रसन्न हुवा * रण भूमि ओर चलाया है॥
आ गये युद्ध स्थल में जब * हो गये नैन रतनारे हैं।
देखा अंकुश को खड़ा हुवा * लक्ष्मण कर क्रोध पुकारे हैं॥
अब निकट आ गया समय तेरा* यों कह कर चक्र उठाया है।
शत्रु का शीश काट कर ला * ऐसा कह खूब घुमाया है॥

छोड़ा है चक्र सुदर्शन को * अंकुश नहिं मन घबराया है।
देकर प्रदक्षिणा अंकुश की * पुनः चक्र हाथ पर आया है॥

दोहा

छोड़ा है पुन चक्र को * लक्ष्मण दूजी बार।
दे प्रदक्षिणा आ गया * किया नहीं प्रहार ॥७४४॥

बहर खड़ी

देखा है हाल चक्र का जब * मन में विचार हुवा भारी।
बलदेव और वसुदेव यही हुये * भरत क्षेत्र में अवतारी॥
उस समय दर्श नारद मुनि ने * आ के रघुवर ने दिया है।
लख कर के राम लखन दोनों * पद-वन्दन ऋषि का किया है॥
फिर कहा देव ऋषि राम आज * किस तरह उदासी छाई है।
इस हर्ष समय में आनन पै * कुछ सुस्ती पड़े दिखाई है।
आरत का कारण है यही * रिपु नहीं पराजय होते हैं॥
इन के ऊपर नहीं वार होय * हथियार पड़ गये थोते हैं॥

दोहा

सीता के सुत किस तरह * माने तुम से हार।
असल केसरी के तनय * पद नहिं रखें पिछार ॥७४५॥

बहर खड़ी

सीता के शूरवीर सुत दो * तुम से मिलने को आये हैं।
शुभ नाम सु लव कुश दोनों का * दोनों नाहर के जाये हैं॥
सीता का आद्योपान्त हाल * नारद ने सभी सुनाया है।
संग्राम के मिस से राम लखन का * आकर के दर्शन पाया है॥
सुन कर प्रेमाश्रु छये नैनों * उत्साह भरा मन भारा है।
लक्ष्मण को लेकर साथ तुरत * मिलने को हरि पग धारा है॥
लव कुश ने जब आते देखा * रथ त्याग भूमि पर आये हैं।

रघुवर के चरणों में पड़ कर * दोनों ने शीश नमाये हैं ॥

दोहा

लिया है हृदय लगा * राम सुतों को हर्ष ।
मस्तक चूमा मोद कर * किया सुकर स्पर्श ॥७४६॥

बहर खड़ी

गोदी में लेकर पुत्रों को * रघुवर ने हर्ष मनाया है ।
आरत गारत हो गई मेरी * आनंदित शुभ दिन आया है ।
लक्ष्मण ने दोनों पुत्रों को * हर्षा कर लिया गोद आ के ।
मस्तक चूमा तन कर फेरा * मुसकाये सुमन मोद पा के ॥
रिपुघन को दोनों पुत्रों ने * मन मोद बढ़ा प्रणाम किया ।
शत्रुघन ने अति मोद बढ़ा * ले गोद प्रेम का वचन दिया ॥
राजे हो गये एकत्रित सब * आनंद सु मन में भारे है ।
सुत राम के राम समान जान * करते सब जै-जै कार हैं ॥

दोहा

वज्रजंघ से राम की * करवाई पहिचान ।
भामण्डल ने राम को * सुना दिया सब ब्यान ॥७४७॥

बहर खड़ी

सुन कर के राम लखन दोनों * स्नेह भाव मन लाये हैं ।
भामण्डल से ज्यादा तुम हो * हरि ऐसे वचन सुनाये हैं ॥
तुम ने इन दोनों पुत्रों का * लालन पालन हित से किया ।
जब योग्य अवस्था में हुवे * हर्षा कर विद्या-दान दिया ॥
लव-कुश-युत राम-लखन दोनों * पुष्पक विमान असवार हुवे ।
सारी सैना ने कूँच किया * अवधपुरी को तैयार हुवे ॥
पुत्रों का आगमन सुन कर के * सारी प्रजा हर्षाई है ।
नर-नारी सभी विलोक रहे * घर-घर में बँटे बधाई है ॥

दोहा

उत्सव किया राम ने * अवधपुरी में आय ।
पुत्र महोत्सव जान कर * आनंद रहे मनाय ॥७४८॥

बहर खड़ी

इक दिवस लखन सुग्रीव * विभीषण हनुमान अंगद मिलकर
करते हैं राम, से आ विनती * ज्यों पुष्प बर्षते हैं खिल कर ॥
पुत्र विहीना सीतार्जा * किस रीति रैन दिन काटेगी ।
इस विरह अथाह समुन्दर को * काहे से कहिये पाटेगी ॥
जो हमें आज्ञा मिल जाये * सादर माता को लावें हम ।
कृपा कर इतनी कह दीजै * आ जाये तो पुनः अपनावें हम ॥
सुन उत्तर रघुवर ने दिया * अपवाद अवध में फैल रहा ।
मैं जानूँ महासती सीता * दिल में नहिं किंचित् मैल रहा

दोहा

अग्नि परीक्षा धार कर * लिय को लूँ अपनाय ।
लोक भ्रम जाता रहे * सब को सत्य दिखाय ॥७४९॥

बहर खड़ी

स्वीकारी आज्ञा रघुवर की * मन हर्ष सबों के छाया है ।
आज्ञानुकूल रघुनायक के * मंडप विशाल बनवाया है ॥
योगानुसार रच दिये मंच * नहिं रंच काम कुछ बाकी है ।
खेचर राजों के यान सुगर * प्रजा को धाम कुछ बाकी है ॥
हुये आसीन प्रजा राजा * बैठे हैं राम लखन दोनों ।
लाजे थी शक्र सभा लख कर * आसीन भये बन ठन दोनों ॥
सीता के लाने की आज्ञा * सुग्रीव भूप को दीनी है ।
हो वायुयान असवार तुरत * आकाश की रस्ता लीनी है ॥

दोहा

सीताजी को जाय कर * कपि पति किया प्रणाम ।

आप पधारो मात जी * तुरत अयोध्या धाम ॥७५०॥

बहर खड़ी

माताजी वायुयान यहाँ * श्री राम ने तुम को भेजा है।
करने को शुद्ध बुलाया है * इसका वहाँ सकल सहेजा है ॥
मंडप तैयार करा लीना * राजे हैं सब आसीन वहाँ ।
पुर वासी सभी एकत्रित हैं * सैना है सब आधीन वहाँ ॥
सुन कर प्रसन्न मन सीता जी * हो गई विमान सवार भला ।
आकाश के मार्ग जाती हैं * लगती है ठंडी बयार भला ॥
पहुँचे हैं निकट अयोध्या के * उतरे महेन्द्र उद्यान में हैं ।
लक्ष्मण और अन्यान्य भूप * सीता के शुभ सन्मान में हैं ॥

दोहा

लखन आदि नृपवर सभी * सिय को किया प्रणाम ।
चरण स्पर्श कर मात के * बैठ गये शुभ धाम ॥७५१॥

बहर खड़ी

जोड़े हैं हाथ खड़े हो कर * फिर विनय सिया से करन लगे।
करिये प्रवेश महलों माता * यह विनय भाव उर भरन लगे॥
सीता बोली है वत्स सुनो * जिस समय परीक्षा हो जाये।
उस धीज सलिल से सब के हित * सीता का शुभ तन धो जाये॥
सीता का दृढ़ निश्चय सुन कर * रघुवर को जाय सुनाया है।
सुन कर के राम सुजान निकट * सीता के चरण बढ़ाया है॥
रावण के महलों में रह कर * जो तुम पवित्रता दिखलाओ।
सब अवध की प्रजा के सन्मुख * शुभ सत्य सितारा चमकाओ॥

दोहा

सीता ने मुस्काय कर * बोले वचन सँभार।
तीव्र बुद्धिवाला नहीं * अरु कोई नर नार ॥ ७५२ ॥

बहर खड़ी

जो जाने दोष बिना दण्डित * अपराधी को कर देता हो।
सुन कर एक पत्त की ही * अपने मन को भर लेता हो॥
इस नूतन नीति तुम्हारी का * कलयुग में जब होगा प्रचार।
नृप कानों के कच्चे होंगे * सुन कर दे देंगे दण्ड भार॥
मिल चुका दण्ड अपराधी को * अब कारण कौन परीक्षा का।
आज्ञा से मुझ को उज्र नहीं * यह मन चाकर तव इच्छा का।
पाँचों प्रकारों के धीजों को * करने के लिये तैयार हूँ मैं।
जो आज्ञा श्री-मुख से होगी * पालूँ उसको सरसार हूँ मैं॥

दोहा

पाँचों धीजों में कहो * होय कौन सा धीज।
उच्चारण मुख से करो * रहे हाथ क्यों मीज॥७५३॥

बहर खड़ी

तैय्यारी अग्निकुण्ड की हो * तो अग्नि में प्रवेश करूँ।
मन्त्रित तन्दुल चबवाने हो * तो तन्दुल का अवशेष करूँ॥
कच्चे धागे से जल खेंचूँ * या शीशा पिघला पी जाऊँ।
या रसना से कृपान धार * स्पर्शूं और उठा जाऊँ॥
सिद्धार्थ नृप पुन देव ऋषी * मुख से अस वचन उचार रहे।
जनता के सहित हाथ ऊँचे * कर सुन्दर शब्द पुकार रहे॥
रघुनायक सीता महासती * है धीज की अब दरकार नहीं।
संदेह नहीं है लेश मात्र * हर तरह विजय है हार नहीं॥

दोहा

लोगों धीरज मन धरो * धीज जरुरी होय।
प्रथम दूषित कर दिया * क्रिया पूरी होय॥७५४॥

बहर खड़ी

तो तुरत परीक्षा हो जाये * सत के ऊपर आधार जो हो।

सीता को अग्नि परीक्षा का * कर देना यदि स्वीकार जो हो
मन अग्नि परीक्षा की सुन कर * सीता मन में हर्पाई है ।
स्वीकृति दीनी मुसका कर * अंग फूली नहीं समाई है ॥
सुन कर स्वीकृति सीता की * रघुनायक हुक्म सुनाया है ।
तीन सौ हाथ लम्बा चौड़ा * भू में गड्ढा खुदवाया है ॥
दो पुरुष बराबर गहराई * लकड़ी चन्दन की भरवाई है ।
नहिं किंचित भूमि रही बाकी * पुन अग्नि तुरत लगवाई है ॥

दोहा

उत्तर श्रेणी में सुगढ़ * गिरि वैताढ़ निदान ।
हरि विक्रम सुंदर सुगर * सुत जय भूपण जान ॥७५५॥

बहर खड़ी

सुन्दर वसु सत नारी जिसके * सब का वह पुरुष प्यारा था ।
सब पर सम प्रेम दृष्टि रखता * सब के हित को स्वीकारा था ॥
थी किरण मंडला एक नारी * अध में रति उसको लेख लिया ।
हिम शिख के संग रमण करते * जय भूपण नृप ने देख लिया ॥
कर क्रोध तुरत उस रानी को * महलों से बाहर काढ़ा है ।
दीनी वन में नृप ने निकाल * वन खण्ड विकट उजाड़ा है ।
पुन आप ग्रहण दीक्षा कर के * तप संयम में मन दिया ।
उस किरण मंडला ने मर कर * विद्युत् दृष्टा का जन्म लिया ।

दोहा

दिवस बीज पुन पूर्व दिन * जय भूपण मुनि आन ।
कायोत्सर्ग का वन विषे * लगा दिया मुनि ध्यान ॥७५६॥

बहर खड़ी

ध्यानारूढ़ मुनिवर वन में * कर अचल भाव से ध्यान किया ॥
उस राक्षसी ने आकर के * उपसर्ग मुनि को बहुत दिया ॥

मुनि अचल रहे शुभ ध्यान विषे * मन को नहीं रंच चलाया है।
कर्मों का कर के नाश मुनिश्वर * केवलज्ञान सु पाया है॥
उत्सव करने को इन्द्रादिक * होकर एकत्र जहाँ आये हैं।
सीता के सारे समाचार * सुरपति ने भी सुन पाये हैं॥
सुरपति ने सती की रक्षा को * सुर सैनिक अपना भेज दिया॥
उस अग्नि कुण्ड के तट ऊपर * सीता ने सत का ध्यान किया॥

दोहा

आखों से था देखना * जिसके लिये मुहाल।
अग्नि जहाँ भैरा रही * निकल रही है ज्वाल॥७५७॥

बहर खड़ी

बोली है समय जान सीता * अय लोक पाल तुम ध्यान करो।
जो कुछ मैं शब्द सुनाती हूँ * तुम सुनो इधर को कान करो॥
दिनकर निशकर तुम साखी हो * मैं कहूँ उस सब सुन लेना।
मन वच काया से जो मैंने * दृष्टि भी चाही हो देना॥
जगते में सोते में मैंने * सुपने में भी चित्त दिया हो।
इक सिवा राम के रमण अगर * इच्छित अन इच्छित किया हो॥
जो सीता सत पर होय अडिग * तो अग्नि का पानी हो जाये।
जो सत से वंचित रंच हुई * तो भस्म अग्नि में हो जाये॥

दोहा

पढ़ कर मन नवकार को * कूद पड़ी इक संग।
पावक का पानी हुवा * खिला शील का रंग॥७५८॥

बहर खड़ी

सीता के सत ने अग्निकुण्ड का * निर्मल सलिल बनाया है।
बन गया बीच में पद्म-कमल * सिंहासन अमर रचाया है॥
उस रत्न मयी सिंहासन पर * सीता को तुरत बिठाल दिया।

जो अशुभ सती पर समय पड़ा * सीता के सत्त ने टाल दिया ॥
जल के समुद्र की भाँति तरंग * नीर बराबर लेता था ।
लेकर के चला उछाले जब * जनता को बहाये देता था।
हुँकार ध्वनी होती थी कहीं * गुल गुल शब्द निकलते थे।
कहिं भेरी की आवाज़ होय * कहिं सुरपति आन मचलते थे॥

दोहा

जै जै कारे कर रहे * सुर सब बैठ विमान।
नीर बढ़ा मर्याद तज * फैला सब मैदान ॥ ७५९ ॥

बहर खड़ी

ले ले कर उछाले जल-प्रवाह * बढ़ता था मंच बहाता था।
कोई जल में गोते खाता था * कोई बाढ़ में डूबा जाता था ॥
नर-नारी सब भयभीत हुये * क्या प्रलय काल ही आता है।
जो नीर उछलता जाता है * और अपनी दिखाता जाता है॥
छाये हैं जा अस्मान बीच * विद्या धर बैठ विमानों में।
भूचारी करते हाय हाय * पहुँची पुकार वह कानों में॥
हे महा सती सीता देवी * अब रक्षा करो हमारी तुम।
हम शर्ण तुम्हारी हैं माता * पुत्रों की करो रखवारी तुम ॥

दोहा

सीता ने जिस दम सुनी * करुणामयी पुकार ।
ऊँचे उठते नीर को * दीना भू बैठार ॥७६०॥

बहर खड़ी

स्पर्श हुए कर जल से जब * सब नीर सिमट कर आया है।
शोभा सौ गुनी हुई उसकी * जो सरवर सुगड़ सुहाया है॥
उत्पन्न कुमुद आदिक पंकज * अरु पद्म कमल भी खिलते थे।
नलिनी व नलिन संग खिल-खिल कर*भर प्रेम परस्पर मिलते थे ॥

उड़ती थी शुभ्र सुगन्ध जहाँ * मधुकर जिन पर गुँजार रहे।
मणियों के घाट चौ तर्फ बने * स्वच्छ नीरज मौजें मार रहे॥
सीता के शील की प्रशंसा * नारद मुख से उच्चार रहे।
वीणा को हाथ समार रहे * गुण गान गाय हर पार रहे॥

दोहा

सीता का सत समझ कर * सुर संतुष्ट अपार ।
पुष्प वृष्टि करने लगे * बोले जै जै कार ॥७६१॥

बहर खड़ी

माता का सुयश प्रभाव देख * लवणाँकुश परम प्रसन्न भये।
निर्मल जल बीच उतर दोनों * निज माताजी के पास गये॥
सीता ने भाल सूँघ उनका * दोनों को निकट बिठाया है।
कमला के इधर उधर गज-सुत * लख शोभा जग हुलसाया है॥
भामण्डल, लक्ष्मण, शत्रुघन, * सुग्रीव, विभीषण, ने आ के।
श्रद्धायुत नमस्कार किया * सीताजी को मन हर्षा के॥
फिर क्षमा प्रार्थना रघुवर ने * श्री सीताजी से चाही है।
देवी तुम क्षमा करो मुझ को * प्रजा ने धूम मचाई है॥

दोहा

सीता ने उत्तर दिया * सुनो श्री रघुराय।
दोप न लोगों का कुछी * सुनिये कान लगाय ॥७६२॥

बहर खड़ी

लोगों का दोप नहीं किंचित् * नहिं इस में दोप राम का है।
है दोप पूर्व के कर्मों का * या दोप अरी विध वाम का है॥
दुख चक्कर आने वाला था * उसने कर्त्तव्य दिखाया है।
कर्मों से अब छुटकारा हो * दीक्षा को मम मन चाया है॥
बालों को निज कर से लोचा * और राम के आगे रख दिये।

मैं करूँ आतमा की शुद्धि * शुभ शब्द उच्चारण हैं किये ॥
कच देख राम मूर्छित हुवे * मन में आरत आ छाया है।
सीताजी ने मन मे विचार * आगे को चरन बढ़ाया है ॥

दोहा

ममत प्रथक् कर जानकी * निकट मुनि के आय।
जय भूषण से दीक्षा * लीनी है हर्षाय ॥७६३॥

बहर खड़ी

सीता को मुनिवर ने दीक्षा * देकर मार्ग बतलाया है।
सुप्रभा सती गुरुनी के निकट * सीताजी को पहुँचाया है ॥
चन्दन आदिक का जल मँगवा * श्रीराम के ऊपर डाला है।
शीतल समीर का असर हुवा * रघुवर जब होश सँभाला है।
सीता सीता मुख रटन लगे * सीता ने नहि दृष्टि उठाई है।
घबरा के बैठे हुवे तुरंत * आज्ञा रघुनाथ सुनाई है ॥
खेचर विद्याधर भूचर सब * अनुशाशन मान तुरत जाओ।
जिस तरह जहाँ पर हो सीता * ले कर मेरे सम्मुख आओ ॥

दोहा

तुरत धनुष कर धार के * धाये श्री रघुनाथ।
लक्ष्मण जब कहने लगे * जोड़े दोनों हाथ ॥७६४॥

चौपाई

जैसे सीता को तुम त्यागा * दोष लोक कैसे भय लागा।
वैसे ही सीता ने जग त्यागा * परभव का भय उन मन जागा
केश लोच प्रभु के कर दीने * चार महाव्रत मुनि तट लीने।
हुवा आज मुनि केवलज्ञानी * सुर सुरेन्द्र मन हर्ष समाना ॥
कर्त्तव्य निज पालन प्रभु कीजे * दर्शन हित आगे पग दीजे।
सीता सती महाव्रत धारे * आत्म शुद्धि करत हैं प्यारे ॥

सिय के दर्शन वहीं प्रभु पाओ * चल कर लोचन सुफल बनाओ
सुन कर वचन राम हर्षाये * धन्य सिया मुख वचन सुनाये

दोहा

लखन, राम, सुग्रीव अरु * भामण्डल, हनुमान।
दर्श केवली मुनि के * कीने सब ने आन ॥७६५॥

चौपाई

आये राम मुनि के तीरा * बैठ सन्मुख धर के धीरा।
पूछा मुनिवर से रघुनायक * दीजै बता समझ निज पायक॥
मैं हूँ भव्य सुनो मम स्वामी * या अभव्य हूँ अन्तर्यामी।
बोले मुनि केवली सुधामा * मुक्ति इसी भव से हो रामा॥
राम कहें सुनिये मुनिराया * मुक्ति बिना तप किसने पाया।
सुख बलदेव सु पद का पा के * पंचमि गति जाओगे धा के॥
भोगावली कर्म के बीते * होंगे शुभ सब मन के चीते।
निःसन्देह महाव्रत पाओ * कर्म खपा शिवपुर को जाओ॥

दोहा

पूछा है पुनः विभीषण * दीजे प्रभु बताय।
किन कारण सीता हरी * आ दशकन्धर राय॥७६६॥

चौपाई

ऐसा कौन कर्म था भारा * जो लक्ष्मण ने रावण मारा।
सुग्रीव भामण्डल अधिकारी * राम सनेह रख्यो किम भारी॥
मुनि पुनः पूर्व भव समझाया * दक्षिण भरत देश एक भाया।
क्षेमपुरा नगर इक भारी * नयदत्त वणिक रहे सुखकारी
दो सुत थे जिनके अति प्यारे * धनदत्त अरु वसुदत्त सुखारे
योग बल वय से थी मित्राई * उससे प्रेम करें युग भाई॥
दूजा सागरदत्त सु नामा * दो सन्तान तासु सुख रामा।

गुणधर सुत कन्या गुणवन्ती * धन दत्त को दीनी सुख कन्ती

दोहा

माता न धन हित किया * हितु स्वयं श्री कान्त ।
याज्ञवल्क को हो गई * इस की मन मे भ्रान्त ॥७६७॥

चौपाई

जाय सूचना तुरत सुनाई * क्रोधित सन हुये दोऊ भाई ।
श्रीकान्त को मारन हेता * वसुदत्त धाया त्याग निकेता ॥
दोनों घायल हो अति भारे * दोनों तज संसार सिधारे ।
विद्यावटी विपिन में जा के * मृग हुये दोनों वपु पा के ॥
दोनों लड़ कर प्राण गँवाये * भ्रमण रहे करते दुख पाये ।
धनदत्त के मन भ्रात वियोगा * हुवा प्रकट छाया अति सोगा ॥
मृगी हुई गुणवंती नारी * लड़े वहाँ दोनों अति भारी ।
संतों को लख भोजन माँगे * सुन उपदेश बाण सम लागे ॥

दोहा

साधु के सुन कर वचन * श्रावक नेम सुधार
आयुष पूर्ण कर गये * सुधर्म लोक मझदार ॥७६८॥

चौपाई

चव कर पुनः महापुर आये * मेरु सेठ गृह जन्म सु पाये ।
पद्मरुची पाया शुभ नामा * श्रावक बन किया शुभ कामा ॥
पद्मरुची हो अश्व सवारा * निज गोकल की ओर सिधारा ।
देखा वृषभ दुखी अति भारा * दिया मंत्र उसे नवकारा ॥
मंत्र प्रभाव हुवा अति भारी * हुवा भूप सुत अति सुखकारी
वृषभ ध्वजा शुभ नाम सु पाया * भ्रमत वृषभ भूमि पर आया ॥
प्रगटा जाति स्मरण ज्ञाना * वृषभ का वहाँ रचा निशाना ।
रक्षक खड़े किये हर्षाई * सकल व्यवस्था को समझाई ॥

दोहा

देखा है आचित्र को * पद्मरुची उस वार।
विस्मित हुवा मन विषे * बोला वचन सँभार ॥७६६॥

चौपाई

बीती वात सकल मम साथा * सुनी रक्षकों ने यह वाता।
राज कुँवर को हाल सुनाया * सुन युवराज तुरत वहाँ आया
पुच्छा करी सेठ ने आ के * इसका दो सब हाल सुना के।
पद्मरुची सब भेद बताया * सुन कर राज कुँवर हर्षाया॥
नमस्कार कर गिरा उचारी * तुम मेरे हो अति उपकारी।
चल कर राज भोग प्रभु कीजे * शुभ शिक्षा सेवक को दीजे॥
श्रावक व्रत दोनों ने धारे * समय पाय परलोक पधारे।
पद्मरुची। चव नृप ग्रह आया * गिरि वैताड़ सुधाम सु पाया॥

दोहा

राजा के ग्रह जन्म ले * किये सब शुभ काम।
राज भोग ली दीक्षा * नैनानंद सु नाम ॥७७०॥

चौपाई

आयु भोग अमर पुर धाये * चौथे सुर पुर जा हर्षाये।
क्षम पुरी पुनः चव कर आये * श्रीचन्द्र शुभ नाम सु पाये॥
राज भोग पुनः दीक्षा धारी * पंचम सुर पुर के अधिकारी।
इन्द्र पने का वहाँ सुख पाया * वहाँ से चव दशरथ ग्रह आया
वही जीव राम का जानो * वृषभ जीव सुग्रीव वखानो।
श्रीकन्त भव भ्रमण कीना * जन्म शम्भु राजा के लीना॥
वज्र कंठ मिला नाम सु प्यारा * लाड़ प्यार होता अति भारा।
वसुदत्त भव भ्रमण कर के * आया उसी राज में मर के॥

दोहा

जन्म विजै द्विज के लिया * श्रीभूत तस नाम।

जीव गुणवती का हुवा * पैदा उस ही ग्राम ॥७७१॥

चौपाई

भव भूती के कन्या जाई * उसी गाँव में जन्मी आई।
वेगवती पाया शुभ नामा * युवा अवस्था में रख पामा।
मुनिवर ऐक सुदर्शन आये * नर नारी दर्शन को धाये।
वेगवती अस पाप कमाया * मुनि को मिथ्या दोष लगाया॥
तिय गामी साधू यह भारी * इसों ने कहाँ छुपाई नारी।
वेगवती की सुन कर वाता * जग समुदाय सुमन घबराता॥
मुनि को जान कलंकित भारी * दीना कष्ट नगर नर नारी।
मुनि ने मन में अति दुख पाया * करन अभिग्रह मुनि मन चाया

दोहा

किया है मुनि अभिग्रह * मन में ऐसा धार।
जब तक मिटे कलंक ना * करें न नीर अहार ॥७७२॥

चौपाई

कायोत्सर्ग का ध्यान लगाया * यही कृत मुनि मन भाया।
शाशन देव देख रिसियाया * वेगवती को रुग्न बनाया॥
तुस्कार पितु कीना भारी * कष्ट पाय मुनि निकट सिधारी
संकट से मन अमना भागी * जन-समूह से कहने लागी॥
मुनि निर्दोष दोष नहिं कोई * मिथ्या दोष लगाया होई।
मम अपराध क्षमा मुनि कीजे * मेरे अवगुण चित्त नहिं दीजे॥
यह सुन कर पुर के नर नारी * कहने लगे मुनि है ब्रह्मचारी।
वेगवती श्रावक व्रत धारा * मिथ्या मत से किया किनारा॥

दोहा

देखा रूप अनुज जब * शंभुराय ललचाय।
श्रीभूत बुलवाय कर * वचन कहे समझाय ॥ ७७३ ॥

चौपाई

वचन मेरे को मन में लाओ * वेगवती मुझ को परनाओ ।
मिथ्यात्वी को दूँ नहीं बेटी * इस में बात होय मम हेटी ॥
क्रोधित हुवा श्रवण कर राया * श्री भूति को मार गिराया ।
वेगवती को पकड़ भुवाला * शीलखंड उसका कर डाला ॥
नृप को श्राप सती ने दीना * निज मन में यह प्रण कर लीना
भवान्तर में तुझे संहारूँ * मृत्यु रूप तुझ कारण धारूँ ॥
वेगवती को पुनः तज दीना * यह अनीत अरू नृप ने कीना ।
वेगवती ने दीक्षा धारी * दीक्षा ले तप कीना भारी ॥

दोहा

मर कर पंचम स्वर्ग में * पैदा हुई है जाय ।
वहँ से चव कर जनक ग्रह * हुई पुत्री आय ॥७७४॥

चौपाई

नृप शंभु हुवा था रावण * वेगवती सिय भई नशावन ।
मुनि पे मिथ्या दोष लगाया * दोष इसी कारण यहाँ पाया ॥
भव भ्रम करके शंभु नृपाला * कुश ध्वज द्विज के हुवा लाला
नाम प्रभास वहाँ पर पाया * विजयसिंह मुनि के तट आया
संयम ले तप कर मन माना * अन्त समय कर दिया नियाना
देवलोक तीजे को धाया * चव कर हुवा निशाचर राया
याज्ञवल्क का जी भ्रमण कर * आया भ्रात नृपत का बन कर
श्रीभूती केई भव कर के * आया यहाँ लखन वपु धर के ॥

दोहा

अनग सुन्दरी विशल्या * भई यहाँ पर आय ।
गुणधर भामंडल हुवा * सिया सहोदर भाय ॥७७५॥

चौपाई

काकंदी नगरी मझधारा * वामदेव द्विज वुध वल वारा ।

वसुनन्द अरु द्वितीय सु नन्दा * दो सुत तासु करें आनन्दा ॥
तासु महल मुनि मासोपासी * आये श्री जिन के विश्वासी ।
दोनों ने लख हर्ष बढ़ाया * सादर भाव सहित वैराया ॥
उस प्रभाव से भये युगलिया * आयु भर कीनों रंगरलियाँ ।
आयुप पूर्ण कर युग प्यारे * मर कर युग सुर लोक सिधारे
सुर पुर से दोनों चव धाये * वामदेव के पुत्र कहाये ।
राज भोग कर दीक्षा धारी * नव ग्रीवेक हुवे अवतारी ॥

दोहा

दोनों भाई पुन चवे * लवणांकुश भये आय ।
पूर्व मात इनकी भई * सिद्धार्थ नृप धाय ॥ ७७६ ॥

चौपाई

सुन कर हर्ष प्रगट अति कीना * सैनापति ने संयम लीना ।
राम लखन वन्दन कर धाये * श्री सीता के सन्मुख आये ॥
सिय लख मन में राम विचारा * शीत ताप का संकट भारा ।
कोमलांग सिया राज दुलारी * कैसे सहे परिश्रम भारी ॥
सब भारों से है अधिकारा * अति ही कठिन सु संयम भारा
सूक्ष्म लिय को है यह काजा * सन्त सती के हृदय विराजा
रावण जिसका कुछ न विगारा * उसको काज कौन यह भारा ।
राम लखन कर वन्दन धाये * सहित कुटुम्ब अयोध्या आये ॥

दोहा

सीताजी ने कठिन तप * साठ वर्ष पर्यन्त ।
किया अति मन हर्ष के * कर कर्मों का अन्त ॥ ७७७ ॥

चौपाई

तेतीसों दिन कर संथारा * जग समुद्र से किया किनारा ।
अच्युतेन्द्र भई सुर पुर जा के * बाइस सागर आयुष पा के ॥

कृतान्त ने तप किया भारा * ब्रह्म देव लोक पग धारा।
गिरि वैताड़ कनकपुर नामा * सुन्दर नगर सुसुन्दर धामा॥
भूप कनक रथ तस अधिकारी * सुन्दर दो कन्या तस भारी।
मन्दाकिनी शशि मुख नामा * सुन्दर रूप अनुप सुवामा॥
रचा स्वयंवर नृप हर्षाये * राम लखन सुत सहित बुलाये।
मन्दाकिन लव के गल माला * अंकुश गल शशि वदन सु डाला

दोहा

लखन पुत्र मम क्रोध कर * ढ़ाई सौ इकवार।
लवणांकुश से युद्ध को * हुये तुरत तैयार॥ ७७८॥

चौपाई

सुन कर लवणांकुश अस वोले * हृदय के सुन्दर पट खोले।
उनके संग न हो संग्रामा * वह भाई आये मम कामा॥
सुन कर लक्ष्मण पुत्र विचारा * धिक् धिक् ऐसा भाव हमारा।
मात पिता से आज्ञा पाई * दीक्षा लीनी है सब भाई॥
महावल मुनि के निकट पधारे * चार महाव्रत हितकर धारे।
लवणांकुश कर व्याह हर्षाये * राम लखन संग निज पुर आये॥
एक समय भामण्डल राया * मन में शुभ्र भाव निज लाया।
युग श्रेणी वैताड़ सुखारी * दोनों का मैं हूँ अधिकारी॥

दोहा

भोगे हैं संसार के * मैंने सुख अपार।
अब जग को मैं त्याग कर * लूँगा संयम भार॥७७९॥

चौपाई

ऐसा किया विचार भुवाला * विजली गिरी आन तत्काला।
विद्युति घात मरन नृप पाया * युगल पणे भामंडल भाया॥
एक समय हनुमत वल वीरा * मेरू शिखर गये रण धीरा।

खिला जहाँ अति ही ऋतुराजा * हनुमत के आनंद विराजा ॥
होता अस्त विलोका भाना * अथिर रूप मन में जग जाना ।
नाशवान जग भोग विचारा * निज पुर को आये उस वारा ॥
राज सुतों को आकर दीना * हनुमत संयम भार सु लीना ।
साड़े सात सौ संग नृपाला * ले दीक्षा हनुमत संग चाला ॥

दोहा

पाला है संयम प्रभु * परम भाव हनुमान ।
तप कर के अति ही कठिन * पाया पद निर्वान ॥७८०॥

चौपाई

सुन कर राम अचम्भा पाया * हनुमान सुख क्यों बिसराया ।
सुख को तज कर दुख आराधा * सुख भोग तज जोग सुसाधा ॥
देख सुधर्मा इन्द्र विचारा * कर्म गति का वार न पारा ।
चरम शरीरी राम सु जाना * हँसे धर्म पै लख हनुमाना ॥
राम लखन में प्रेम अपारा * इस से उन्हें जगत है प्यारा ।
इन्द्र वचन सुन दो सुर धाये * अति ही शीघ्र अवध पुर आये ॥
लक्ष्मण के महलों में आ के * निज माया दीनी फैला के ।
राम महल में रुदन दिखाया * नाद करन लक्ष्मण के आया ॥

दोहा

छाया राम ब्योग अति * मुख से कहता राम ।
लक्ष्मण मृत्यु पाय के * गये अंजना धाम ॥७८१॥

चौपाई

कनक सिंहासन टिका शरीरा * देख भये सुर विकल अधीरा ।
यह अन्याय हुवा अति भारा * विश्वधार तज जगत् सिधारा ॥
यह लख सुर सुर पुर को धाये * रानिन ने मिल रुदन मचाये ।
राम लखन के महलों आ के * देख भ्रात को नज़र उठा के ॥

बोले राम क्रोध कर भारी * किया अमंगल कैसे जारी।
जीवित भ्रात लखन बलधारी * हुई कोई इनको बीमारी ॥
वैद्यों को अब ही बुलवाऊँ * निज भ्रात को स्वस्थ कराऊँ।
वैद्यों को हरि ने बुलवाया * लखन बन्धु को तुरत दिखाया

दोहा

देखें ज्योतिष ज्योतिषी * गणित करें गणितज्ञ।
जंत्र मंत्र करने लगे * आ आ कर मंत्रज्ञ ॥७८२॥

चौपाई

असर नहीं मंत्रों ने कीना * उत्तर सब ने ही दे दीना।
देख राम को मूर्छा आई * रुदन लगे करने रघुराई ॥
रिपु घन और सुग्रीव विभीषण * रुदन करें अपना सिर धुन-धुन
कौशल्या आदिक सब माता * रुदन करें कुछ नहिं बस पाता
शोक छयो पुर में अति भारी * रुदन करें पुर नर अरु नारी ॥
शोक शब्द आवें सब कानन * ताले पुर की पड़े दुकानन ॥
बड़े-बड़े नर धीरज धारी * वे हू सुन्न हो गये दुखारी।
सब के आनन शोक समाया * शोक अयोध्या भर में छाया ॥

दोहा

लव कुश अस कहने लगे * सुनो पिता धर ध्यान
यह संसार असार है * हम ने लीना जान ॥७८३॥

चौपाई

आज्ञा दीजै पितु हर्षाई * दीक्षा ग्रहण करें हम जाई।
काका बिन जग सूना भारी * हम दीक्षा की मन में धारी ॥
कर प्रणाम चले दोऊ भाई * अमृतघोष जहाँ मुनि राई।
दोनों ने मिल दीक्षा धारी * संयम ले किया तप भारी ॥
तप कर मुक्ति पुरी पग धारा * जग समुद्र से किया किनारा।

भ्राता उठो हँसो अरु बोलो * मेरे संग धनु कर रख डोलो ॥
किया न मैं तुमरा अपमाना * तुम्हें प्राण से प्यारा जाना ।
नैन खोल मुझ को सुख दीजै * अब तो कहा मेरा तुम कीजै ॥

दोहा

देखे राम अधीर जब * सुग्रीवादि नरेश ।
संग विभीषण को लिये * हरि तट किया प्रवेश ॥७८४॥

चौपाई

वीरों में जैसे तुम वीरा * ऐसे ही हो धीरों में धीरा ।
यह सब बातें लज्जा कारी * त्यागो इन्हें जान अनुरारी ॥
लखन मुये अब मत बिलखाओ * इनका अंतिम कृत कराओ ।
सुन कर वचन क्रोध मन छाया * राम कटुक अस वचन सुनाया
भ्रात मेरा लक्ष्मण है जीता * तुम बोले अस वचन अभीता
दीर्घायु होगा मम भ्राता * मरा होयगा तुमरा त्राता ॥
बोलो लखन न बार लगाओ * ऐसे वचन न अब सुनवाओ ।
तुरत लखन को राम उठाया * अन्य जगह को चरन बढ़ाया

दोहा

मज्जन निज कर से किये * चन्दन आदि लगाय ।
मणि माणिक के थाल में * भोजन रक्खे लाय ॥७८५॥

चौपाई

भोजन करो लखन मम भाई * थाल धरा क्यों बार लगाई ।
कभी गोद लेकर पुचकारें * कभी शीश अपने कर धारें ॥
कभी सेज पर देय सुलाई * वस्त्र अमोलक देय उढाई ।
राम भ्रात दुख से मदमाते * हुए मोह लखन में राते ॥
इन्द्रजीत सुत खेचर साता * चढ़ आया सुन कर यह वाता
राम सूचना जब यह पाई * लखन कन्ध धर पहुँचे धाई ॥

वज्रावत की कर टंकोरा * दीनी मचा राम ने घोरा ।
सूचन देव जटायु पाया * देवों को संग लेकर धाया ॥

दोहा

देखा है सुर आगमन * घबराया अरि वृन्द ।
भागे मन भय मान कर * देख सुरों का द्वन्द ॥७८६॥

चौपाई

देखा देव जटायु आ के * सूखे तरु जल सींचे धा के ।
पत्थर ऊपर कमल उगावे * ऊसर भू में बीज बुवावे ॥
करै काज जैसे अज्ञानी * वालू डाल चलावे घानी ।
देख राम बोले झुँझलाई * मूढ़ कृत कर कहा अस पाई ॥
वालू से नहीं तेल निकलता * सूखा तरु कब फूलता फलता ।
यह सुन कहे जटायु वचना * समझ आप करते क्या रचना ।
मुर्दा धरे कन्ध पर डोलो * ज्ञान देने औरों को बोलो ।
दूर दृष्टि से जा तू भागी * बोले ऐसे बोल अभागी ॥

दोहा

देखा है कृतान्त ने * अवध ज्ञान मँझधार ।
आया सुर पुर से तुरत * मुई बनाई नार ॥७८७॥

चौपाई

निकट राम के होकर आया * लख कर रघुवर वचन सुनाया
मूर्ख मरी फिरे ले नारी * मोह में ऐसा हुआ अनारी ॥
हरि के वचन सुने जब काना * नजर उठा मन में मुसकाना ।
लाख कहो मैं सुनूँ न एका * लजत न और को देत विवेका ॥
कंधे धर मुर्दा क्यों डोले * विना विचार शब्द यह बोले ।
सुन कर मन में राम विचारा * क्या सत्त शब्द सुनावे सारा ॥
काँधे से सुन तुरत उतारा * देखा हुवा मन आश्चर्य भारा ।

देवों ने निज रूप दिखाया * परिचय दे निज धाम सिधाया ॥

दोहा

लखन समझ के हरि मरा * मृतक कार्य कर राम ।
पुन मन में यह सोचते * सारो आतम काम ॥७८८॥

चौपाई

बोले राम तुरत यों बानी * रिपुघन करो अवध रजधानी ।
शत्रुघन अस वचन उचारा * दीक्षा का मैंने प्रण धारा ॥
लव सुत को निज पास बुलाया * राज काज उसको समझाया ।
अनंग देव को सौंपा भारा * राज महोत्सव किया अपारा ॥
मुनिसोव्रत मुनि अति तप धारी * उनके तट आये असुरारी ।
शत्रुघन सुग्रीव सु राजा * वीर विराध विभीषण काजा ॥
सोलह सहस नरेश्वर भारा * राम संग सब संयम धारा ।
तेंतीस सहस गई संग नारी * हर्ष सहित सब दीक्षा धारी ॥

दोहा

लीनी है दीक्षा तुरत * त्याग दिया संसार ।
श्रीमती साधवी संग * विचरा सब परिवार ॥७८९॥

चौपाई

नाना भाँति राम तप करते * गुरु आज्ञा को सिर पर धरते ।
किये अभिग्रह अति ही भारे * तप से पीछे चरन न धारे ॥
चौदह पूर्व का शुद्ध ज्ञाना * ग्यारह अंग पढ़े हर्षाना ।
साठ वर्ष तप कर अति भारा * रघुवर मन में ज्ञान विचारा ॥
गुरु आज्ञा से उग्र विहारी * निर्भयता से विचर खरारी ।
गिरि कन्दर में ध्यान लगाया * अवध ज्ञान हो प्रकट आया ॥
चौदह राजू लोक निहारे * युग सुर ने लक्ष्मण आ मारे ।
देखा लखन अंजना धामा * सोच बहुत किया मन रामा ॥

दोहा

ऐसा राम विचारते * मैं था जब धनदत्त ।
भ्रात लखन वहाँ संग था * नाम वहाँ वसुदत्त ॥७६०॥

चौपाई

मम हित वहाँ तजे इन आना * भ्रमण किया भव में विधि नाना
यहाँ पुन लखन हुवा मम भ्राता * रहा सदा ही मेरे साथा ॥
सौ वर्ष कुमार पने में बीते * मंडलिक त्रिय सत वर्ष अभीते
चालीस वर्ष दिग् विजय में लागे * भाग्य अवधपुरी के जागे ॥
ग्यारह सहस पांच सौ साठा * किया बैठ राज पै ठाटा ।
बारह सहस वर्ष की आयु * दीनी बिता न किया कमायू ॥
रहा अव्रती व्रत न धारा * इसी हेत मन सुख नहिं भारा ।
यह विचार तप किया भारा * कर्मों का काटा दल सारा ॥

दोहा

बेले का तप कर मुनि * करन पारना कार ।
स्वंदन स्थल नग्र में * आये राम सुजान ॥७६१॥

चौपाई

नग्र निवासी लख हर्षाये * कर जोड़े हरि सन्मुख आये ।
भोजन लाय थाल में नारि * निज द्वार आन के ठारी ॥
नग्र कोलाहल हुवा भारा * गज सुन सुन स्थम्भ उखारा ।
सुन-सुन अश्व कूदने लागे * इधर उधर खुल खुल कर भागे
राम राजग्रह में जब आये * प्रतिनंदी नृप ने बैराये ।
पंच दिव्य की वर्षा वर्षा * भूपत का अति ही मन सर्सा ॥
जिस वन, में आये रामा * पुनः गये मुनि उस ही धामा ।
मन में श्री रघुनायक धारा * किया अभिग्रह अति ही भारा ॥

दोहा

जो पावे आहार वन * तो लेना स्वीकार ।
आवादी में अब नहीं * जाना है दरकार ॥ ७६२ ॥

चौपाई

परम अभिग्रह करके रामा * ध्यान मग्न हुये अभिरामा ।
एक वार प्रतिनंदी राया * हो असवार विपिन में धाया ॥
नंदन पुण्य सरोवर तट पै * ठहरी सैना नीचे वट पै ।
राम ध्यान पार के धाये * नृप के शिविर पीच मुनि आये ॥
प्रतिनंदी लख मन हर्षाया * सादर नीर अहार वराया ।
नभ से पुष्प वृष्टि भई भारी * देख प्रसन्न चित्त अधिकारी ॥
रामोपदेश दिया सुखकारा * नृप श्रावक वाहरव्रत धारा ।
वन राम तप करते अति भारे * देवी देव सेवा करें सारे ॥

दोहा

तप कर वन रहने लगे * मुनिवर राम सुजान ।
एक मास द्विमास त्रिय * मास चतुर्नमान ॥ ७६३ ॥

चौपाई

कभी राम करें पर्यंकासन * कभी भुजा लम्बी कर वासन ।
कठिन तपस्या राम सुजाना * तप करते आसन विधि नाना ॥
गिर पर कोट शिला शुभ नामा * विचर राम पहुँचे उस धामा ।
खड़े शिला पर ध्यान लगाया * शुक्ल ध्यान रघुवर मन भाया ॥
सीतेन्द्र दिया अवधी ज्ञाना * क्षपक श्रेणी राम सुजाना ।
सुरपति राम निकट जब आया * वन में आ ऋतुराज खिलाया ॥
कोकिल करें किलोल सु भारी * मलियानिल वहती अति प्यारी ।
पुष्प सुगंधित गंध वहाया * मानो पंच बांण ही छाया ॥

दोहा

सीता का शुभ रूप धर * संग तिय का परिवार ।
जहाँ राम ध्यानस्थ थे * जाकर करी पुकार ॥७६४॥

चौपाई

दृष्टि उठा देखो हृदयेश्वर * मैं सीता तव प्यारी रघुवर ।
दुख पाये लीनी मैं दिक्षा * प्रेम की अब दीजै प्रभु भिक्षा ॥
अब मैं निज मन में पछता के * विनय करूँ तव सन्मुख आ के ।
विद्याधर कुमारिका आ के * ले आई सिय को समझा के ।
विवाह करो प्रभु इनके संगा * लीला करत सु वदन अनंगा ।
क्षमा करो मेरा अपराधा * दीक्षा की सब काटो बाधा ॥
रिमझिम रिमझिम घूँघर बाजे * सन्मुख खड़ी अप्सरा लाजें ।
कोकिल स्वर से लेती तानें * कुटिल भृकुटी तनी कमाने ॥

दोहा

सीता की यह परीक्षा * निर्थक हुई तमाम ।
चले राम नहिं रंच भर * पूरण कीना काम ॥ ७६५ ॥

चौपाई

शुक्ल पक्ष शुभ माघ सुमासा * पिछला पहर निशा का भासा।
कर्म क्षपाये मुनि महाना * प्रगटा हरि को केवलज्ञाना ॥
सीतेन्द्र सुर और अनेका * ऋद्धिवान् वड़ एक से एका ।
किया महोत्सव अति हर्षाई * जय जय ध्वनि आकाश समाई ॥
सुवर्ण कमल राम बैठारे * बोलो सुर मुख जै जै कारे
करी देशना केवलज्ञानी * अमी समान सुनाई बानी ॥
सीतेन्द्र कहे राम सुजाना * लक्ष्मण कहाँ गये भगवाना ।
बोले सुन कर के अस रामा * लक्ष्मण गये अंजना धामा ॥

दोहा

दोनों ही पुन विदेह मे * नृप सुनंद के आय ।
नाम सुदर्श जिन दास पुन * दोनों हों सुखदाय ॥७९६॥

चौपाई

जिन भगवान को वह ध्यायेंगे * सौधर्म देवलोक जायेंगे ।
वहाँ से चव श्रावक व्रत धारे * राज भोग छठे स्वर्ग पधारे ॥
तू चव चक्रवर्ती पद पावे * दोनों तेरे पुत्र कहावें ।
तू मर जाये अनुत्र विमाना * रावण तीन सुभव प्रमाना ॥
गोत तीर्थंकर का पावेगा * तू चव कर के पुन आवेगा ।
तू गणधर का पद पावेगा * तप कर मोक्ष धाम जावेगा ॥
लखन अनुक्रम से भव कर के * पुष्कर वर पैदा हो मर के ।
चक्रवर्ती के पद को पावे * पुन तीर्थंकर गोत्र उपावे ॥

दोहा

सीताजी के जीव ने * सुन सारा अहवाल ।
धाया, प्रेम बढ़ाय कर * लक्ष्मण तट तत्काल ॥७९७॥

चौपाई

लक्ष्मण को आ के समझाया * पूर्वभव सब आन सुनाया ।
फिर लक्ष्मण को हाथ उठाया * देवलोक को लेकर धाया ॥
पारे सम सब खिरा शरीरा * पहिले से भयो शेप अधीरा ।
सीतेन्द्र ने पुनः उठाया * खिर खिर गिरा हाथ नहिं आया
लखन कहे निज धाम पधारो * जगत जीव भुगतें कृत सारो ।
सुन कर सीतेन्द्र पुन धाये * श्रीरघुवर के सनमुख आये ॥
क्षेत्र देव कुरु में सुर आया * भामण्डल से मिल कर धाया।
पच्चीस वर्ष सु केवल ज्ञाना * पाल राम पुन भये निर्वाना ॥

दोहा

आयु पा पन्द्रह सहस * वर्ष राम पर्यन्त ।
जन्म जरा के दुख का * कर दीना सब अंत ॥७६८॥

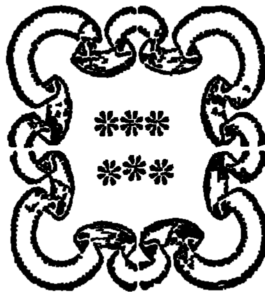
चौपाई

पाया राम परम गति ठामा * श्रद्धा सहित करूँ प्रणामा ।
श्रवण करी श्रेणिक हर्षाया * नमस्कार कर स्थान सिधाया ॥
विजय दशहरा मंगलवारा * आनंद घर-घर हुवा अपारा ।
पद्म अनल निधि रवि शुभ जाना * दूसर चरण शरद् का माना ॥
गुरुवर हीरालाल महाना * सरल स्वभावी सुगड़ सुजाना ।
करुणा दृष्टि उन्हों की भारी * कहाँ तक महिमा करूँ तिहारी ॥
पंडित परम परम विद्वाना * कविवर महा न मन अभिमाना
'चौथमल' जिन चरन कमल का * सेवक है पद विमल अमल का ॥

दोहा

आदर्श रामायण तहीं * पढ़ैं पढ़ावें कोय ।
मन वंछित आशा फलै * आनंद मंगल होय ॥७६९॥

* समाप्तम् *



* श्री जैनोदय प्रिंटिंग प्रेस, रतलाम. *

पुष्प नं० १६



इषुकाराध्ययन

सचित्र



अनुवादक

प्रसिद्ध वक्ता पण्डित मुनि श्री चौथमलजी महाराज के शिष्य साहित्य प्रेमी पण्डित मुनि श्री प्यारचन्दजी महाराज



प्रकाशक

श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति

रतलाम

श्री जैन प्रभाकर प्रिंटिंग प्रेस रतलाम, सी. आई.

पुष्प नं० १९



इक्षुकाराध्ययन

सचित्र

अनुवादक

प्रसिद्ध वक्ता पण्डित मुनि श्री चौथमलजी महाराज के शिष्य साहित्य प्रेमी पण्डित मुनि श्री प्यारचन्दजी महाराज

प्रकाशक

श्री जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति
रतलाम

प्रथमावृत्ति २००० | मूल्य चार आने | वीराब्द २४५३ विक्रम १९८३

श्री जैन प्रभाकर प्रिंटिंग प्रेस रतलाम, सी. आई.

प्रकाशक-
मास्टर मिश्रीमल
श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति
रतलाम



मुद्रकः-
मैनेजर लक्ष्मीचन्द्र संजीतवाला
जैन प्रभाकर प्रिंटिंग प्रेस
रतलाम (मालवा)

निवेदन ।



प्रिय महोदय ! आज वह विषय आपके सामने रख रहा हूँ। जिसका जैनमात्र को अध्ययन एवम् बोध करना आवश्यकीय है। यह विषय श्रीमदुत्तराध्ययन सूत्र का १४ वाँ अध्याय है। जिस का मूल अर्ध मागधी भाषा में श्रीभगवान महावीर स्वामीने फरमाया। उस में यह प्रकाश डाला गया है कि, इक्षुकार राजा और कमलावती रानी एवम् भृगु पुरोहित और उसकी पतिव्रता पत्नी और दोनों युग्म कुँमारों ने किस प्रकार मुक्ति प्राप्त की। उन्हीं मूल श्लोकों पर शास्त्रविशारद् श्रीजै-नाचार्य पूज्यवर श्री १००८ श्री मन्नालालजी महाराज की संप्रदाय के जगत् वल्लभ प्रसिद्धवक्ता-पण्डित मुनि श्री १००८ श्रीचौथमल्लजी महाराज के शिष्य साहित्य प्रेमी पण्डित मुनि श्रीप्यारचन्दजी महाराज ने संस्कृत छाया, अन्व-यार्थ और सरल भावार्थ किया है। अतः इस अध्ययन को पाठक पाठिकाओं के लाभार्थ इस संस्था की ओर से प्रका-शित कर मात्र लागत मूल्य में दिया जाता हैं।

इस में कहीं प्रुफ संशोधक की असावधानी से अशुद्धि रह

गई हो तो पाठक सुधार कर पढ़े और उस अशुद्धि से हमे परिचित करें, जिससे द्वितीयावृत्ति में उसका विशेष ध्यान रखा जाय।

श्रीजैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति रतलाम ता० १-२-२७	भवदीय मास्टर मिश्रीमल रतलाम



ॐ

वीतरागाय नमः ।

संक्षिप्त विवर्ण-



इस प्रसिद्ध भारतभूमि में सन् ईसा के अनेक वर्ष पूर्व "इक्षुकार" नाम की एक प्रसिद्ध नगरी थी। उसके चारों ओर खाई युक्त कोट था । कोटकी रक्षा के लिये छोटे २ किले बने हुए थे । खाई बडी गहरी और चौडी थी, जो कि स्वच्छ जल से सदैव पूर्ण भरी रहती थी । नगरी में प्रवेश करने के लिये चार दरवाजे थे, उन दरवाजों पर रक्षक लोग सदैव रक्षाके लिये नियत रहते थे। नगरी के मध्य चौक में राजा के बडे २ विशाल महल बने हुए थे । उन महलों से कुछ आगे आस पास धनिक लोगो के रंग रंगीले सुन्दर गृह और दुकानें श्रेणी बद्ध बनी हुई थीं. जिनकी अद्भुत सुन्दरता देख दर्शक का मन सहसा उनकी ओर आकर्षित हो जाता था। दुकानों के बाहर चौड़ी २ सड़कें बनी हुई थीं। सड़कों के दोनों ओर हरे भरे पेड़ लगे थे जिन की सघन छाया में मनुष्य बड़े आराम से आते जाते थे। नगर के व्यापारी लोग अनेक प्रकार की चीजें रत्न आदि देश विदेशों से मंगाकर विक्रय करते थे। अनेक चीजें अपने देश के शिल्पियों से बनवा कर बाहर अन्य देशों को भेजते थे । व्यापारी लोग व्यापार में सत्यता का पालन करते थे जिस से उनका व्यापार बढा चढ़ा था । राज्यकी ओर से कोई भी ऐसा कर (महसूल) नहीं लगा था जो प्रजाको असह्य हो । सारी प्रजा राम राज्यकी तरह सुख चैन से निवास

करती थी। राज्यकी ओर से शारीरिक और मानसिक उन्नति के लिये उचित प्रबन्ध किया गया था। किसी जन को किसी भी प्रकार का भय न था। कोई किसी को किसी प्रकार से त्रसित न कर सका था। अनेक धर्मस्थान बने हुए थे, जिन में लोग अपनी २ इच्छानुकूल उन धर्मस्थानों में जाजा कर नियमित समय पर धर्मानुसार आराधना करते थे। इस प्रकार तमाम मनुष्यों का समय बडे आनन्द के साथ व्यतीत होता था।

नगर के बाहर अनेक बाग़ बगीचे लगाये गये थे जिन में अनेकों प्रकार के वृक्ष अपनी हरी भरी छटा दिखा रहे थे। चारों ओर फूलों की महक वायु में संचरित हो रही थी। सन्ध्या समय नगर निवासी जन अपने काम काज से निवट कर उन वाटिकाओं में आ आकर सारे दिन की थकावट को दूर कर अपने मस्तिष्क को विश्राम देते थे। मध्यान्ह समय में जब ग्रीष्म ऋतु अपना प्रचण्ड रूप धारण करती थी और सूर्य देव के द्वारा सारी भूमि अग्निकी तरह तप्त हो जातीथी तब उस समय में पथिक लोग ग्रीष्म के प्रचण्ड शासन से बचने के लिये उन वाटिकाओं मे वृक्षों की सघन ठण्डी छाया का आश्रय लेते थे और वे वृक्षभी परोपकारी संत की तरह स्वयं हवा, धूप और वर्षा सहन करते हुए आये हुये पथिक लोगों को आश्रय देते थे। पशुभी ग्रीष्म की कड़ाई से व्याकुल हो कर छाया में बैठने के लिये इधर उधर घूम फिर कर वृक्षों का आसरा ले रहे थे। पक्षी गणभी उड़ना छोड़ पानी से प्यासे होकर कठिन धूपसे घबड़ा कर वृक्षों की डालियों में मुँह छिपाये बैठे थे।

ग्रीष्म ऋतु के ऐसे ही प्रचण्ड मध्यान्ह समय में उसी "इक्षुकार" नगरीके बाहर जन-शून्य राह में दो साधु जो कि

मुँह पर मुँहपत्ति, हाथमें पात्र, कुक्षि में रजोहरण, नंगे नंगे पैर, नियमित श्वेत कपड़े धारण किये हुए थे जा रहे थे। रास्ते में उन साधु जनों को अत्यन्त प्यास लगी। पर उन के पास पीने को पानी नहीं था और न वे कुआ, तालाब, नदी आदिका पानी पी सके; इस से उनका कण्ठ शुष्क होता जा रहा था, अधिक प्यास के सताने से वे बोल न सके थे और न चल सके थे। कुछ आगे चलते चलते मूर्छित हो एक पेड़के नीचे गिर पड़े। कुछ समय के बीतने पर चार गोपालक (ग्वालिये) गौ, भैंसों को चराते हुए वहां आ निकले। उन्हों ने उन साधुओं को मूर्छित अवस्था में पड़े हुए देख कर विचार किया कि, ये श्वास तो कुछ २ ले रहे हैं पर मृत्यु के तुल्य क्यों पड़े हुए हैं? निदान इनको किसी एक दुख से पीड़ित हो मूर्छा आगई है, इस लिये इनको सावधान करने के लिये अपने पास में तक्र मिश्रित जल भरा हुआ है उसे इनके मुँह पर छिड़कें"। निदान उन्हों ने ऐसा ही किया और वे दोनों साधु कुछ सावचेत हुए। तब उन्हों ने ग्वालियों को ऐसा करने से मना किया कि, "ऐसा मत करो। हमारा कल्प नहीं, हमको प्यास बहुत जोर से लग रही है यदि तुम्हारे पास तक्र वगैरः कुछ हो तो हमे थोड़ा दे दो जिसे हम पी कर चित्त को शान्त्वना करें" यह सुन कर उन ग्वालियोंने कहा कि-" हाँ हमारे पास तक्र मिश्रित जल भरा हुआ है आप कृपा कर ग्रहण कीजिये"। उन चारों ही ग्वालियों ने उच्च भाव से उन्हें जल का दान दिया पर उनमें से दो ग्वालियों के दिल में फिर से कुछ कपटता आ गई जिससे उन दो ग्वालियों के स्त्रीत्व वेद का वन्धन पड गया जिससे एक तो कमलावती रानी और दूसरा यशा स्त्री हुई. पर चारों ही ने दान देते समय पडत संसार

अवश्य कर लिया। तदनन्तर उन दोनों साधुओं ने उन चारों ही गोपालकों को सब से श्रेष्ठ अहिंसा परमोधर्मः और दान के महात्म्य का दिग्दर्शन कराया।

मुनि लोग वहां से विहार कर आगे दूसरे नगर को गये और यों धर्मोपदेश देते हुए अपना कालक्षेप करते रहे। इधर वे चारों ही गोपालक दया और दान पर विशेष लक्ष देते हुए समय व्यतीत कर रहे थे। ये छःओं व्यक्ति अपना २ आयुष्य पुण्यानुसार भव करते करते जो कि आगे कहेंगे, इस के अगले भव में एक ही स्वर्ग के ही "नलनी गुल्म" नाम के विमान में जन्म ले देवता हुए। वहां उन छःओं में से एक देव अपना आयुष्य पूर्ण कर इंक्षुकार नामकी नगरी में इंक्षुकार नाम का राजा हुआ। दूसरा देव वहां से मर कर इसी राजा के कमलावती नाम की रानी बनी। तीसरा देव इसी नगरी में 'भृगु' नाम का राज्य पुरोहित हुआ। और चौथा देव इसी पुरोहित की पत्नी 'यशा' हुई। शेष दो देव उस स्वर्ग के विमान में सुख मय समय बिता रहे थे।

भृगु पुरोहित धन, सम्पति से परिपूर्ण और सब ही तरह के सुखों से अपना जीवन व्यतीत करते थे। स्त्री आज्ञाकारिणी और सुन्दरता में मनोहारिणी थी। नौकर चाकर आदि की कोई कमी न थी। सब सुखों से भरपूर होने पर भी संतान सुख का अभाव था। बस इसी दुःख की चिन्ता राक्षसी रात दिन सताये रहती थी। पुत्र कामना चित्त को व्याकुल किये डालती थी। खाते, पीते, सोते, जागते; उठते, बैठते यही चिन्ता चित्त पर चढी रहती थी। इससे अधिक दुःख भृगु पुरोहित की पत्नी को, संतान न होने का था। सच है दुःख होना ही चाहिये क्योंकि

जिस घर में संतान नहीं वह घर सूना सा दिखाई पड़ता है। गृहस्थी को चाहे जितना कष्ट हो पर संतान हो तो उसे कष्ट नहीं सताता। वह दुःखों को संतान के सामने तुच्छ समझता है। बेचारी भृगु पत्नी इस बात से और भी अधिक दुःखी थी कि उसे सब बन्ध्या कह कर पुकारते थे और प्रातःकाल में उस का मुँह तक नहीं देखते। इसी चिन्ता में उन दोनों प्राणियों के रात दिन बीतने लगे।

इधर उन दोनों देवों का आयुष्य पूर्ण होने को था, उन्हों ने परस्पर विचार किया कि अपन लोग यहां देव हुए इस का मुख्य कारण यह है कि पिछले भव में मोक्ष के लिये संयम धारण किया था, अत एव अपन लोगों को भविष्य भव में भी संयम लेना उचित है, पर यह तो विचार करो कि यहां से मर कर कहां जन्म लेंगे। उन्हों ने अवधि ज्ञान के द्वारा जाना कि इक्षुकार नाम की नगरी में भृगु नाम के राज्य पुरोहित के घर जन्म लेंगे। पुत्र की लालसा में आकर माता पिता सद्धर्म के कट्टर विरोधी बन अपने को धर्म से विमुख करेंगे। इस से तो यह अच्छा होगा कि पहिले वहां जाकर उन्हें स्पष्ट कह दें कि तुम्हारे पुत्र तो होंगे पर वे संयम लेंगे, अतः उन्हें रोकना मत। ऐसा उनसे वचन ले आवें। ऐसा विचार कर दोनों देव मृत्यु लोक में उतरे और साधु वेष धारण कर भृगु पुरोहित के यहां आहार पानी लेने के बहाने से आये। इन आते हुए साधुओं को देख पुरोहित मन में बड़ा प्रसन्न हुआ और अपने को धन्य समझने लगा कि आज ऐसे महापुरुषों का मेरे घर पर आगमन हुआ। पुरोहित ने साधुओं के चरण स्पर्श किये और बोला-" स्वामी पधारिये, आप ने बड़ी कृपा करी, मेरा घर पवित्र किया, आज आप इस सेवक के हाथ से भोजन ग्रहण करें "। ऐसा कह कर उन दोनों साधुओं को भोजनालय में

हमारे ऐसे भाग्य कहां है जो कि मेरे कुल में से प्रभु भक्त हो! स्वामिन्! हम उन्हें कभी भी न रोकेंगे, भले ही वे गर्भ में से निकलते ही साधु हो जावें. यह उन की इच्छा। यह बात आप को प्रतिज्ञा के साथ कहते हैं कि हम उन्हें कदापि नहीं रोकेंगे। हम तो केवल वांझ के कलंक को दूर होना ही पर्याप्त समझते हैं। इस प्रकार कथनोपकथन के बाद दोनों देव जंगल में आ स्वर्ग में जा विराजे।

कुछ समय के पश्चात् वे दोनों ही देव अपना आयुष्य पूर्ण कर उस भृगु पुरोहित का पत्नी " यशा " के गर्भ में आये। जब मासिक आवर्तन के समय रजोदर्शन न हुआ तब उस को निश्चय हो गया कि मैं गर्भवती हूं। ऐसा निश्चय होने पर अपने आराध्य पतिदेव को कहने लगी कि " जो वे साधु कह गये थे वही मुझे निश्चय हो चुका, इससे आजही से ऐसी बातों पर पूरा ध्यान रखना अपना ध्येय समझूंगी, जिनका जानना और पालन करना प्रत्येक स्त्री का कर्तव्य है "। पुरोहित अपनी पत्नी के आशा पूरित बचन सुन कर बड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगाः-" प्रिये! प्रथम तो जैन साधु कहते ही नहीं, यदि हमारे भाग्य से उन्हों ने कह ही दिया है तो वैसा अवश्य ही होगा "।

यशा का गर्भ दिन २ बढता गया और नव महीने साढ़े सात अहो रात्रि पूर्ण होने पर युग्म सन्तान का शुभ मुहूर्त्त में जन्म हुआ दो पुत्रों का जन्म होना सुन कर माता पिता और कुटुम्बी जनों का हृदय सहज ही में आनन्द सागर में हिलोरें मारने लगा। पिता और समस्त पारिवारिक लोगों ने बड़ा उत्सव मनाया। उन्होंने श्रद्धा और प्रेम से दीन अनाथ लोगों को अनेक प्रकार के दान दिये। पुरोहितजी के सब मित्र स्नेही और बन्धु बान्धवों ने भी पुत्र जन्म के इस आनन्द में उनको बधाई दी। सब ने मिल

भृगु चरित्र

। चित्र परिचय के लिये, वन्दनेके लिये नहीं है।



दो साधु रास्ता भूलने पर एक छोटा साधु पहाडी पर चढ कर समीप गॉव का मार्ग और गांव दिखा रहा है।

Lakshmi Art Bombay, 8

कर आशीर्वाद दिया कि " ईश्वर कृपा से यह संतान चिरायुः हो और भविष्य में ये बालक दीर्घायु हो कर खूब यश और मान प्राप्त करें "। यद्यपि यह आशीर्वाद केवल वर्तमान समय के विचारों पर दृष्टि रख कर साधारण रीति से ही दिया गया था। जैसा कि प्रायः होता है; तथापि समय पाकर वह सार्थक हुआ। पहिले दिन " जात कर्म " किया, दूसरे दिन जागरण हुआ; तीसरे दिन बालकों को चन्द्र सूर्य के दर्शन कराये गये। इस प्रकार एक के बाद एक संस्कार को करते हुए दस दिन पूरे हुए। ग्यारहवें दिन अशौचकर्म से निवर्तन हो बारहवें दिन सम्बन्धियों को भोजन खिला पिला कर दोनों युग्मपुत्रों के नाम देवभद्र और यशोभद्र रखे गये। अब वे दोनों पुत्र द्वितीय चन्द्रवत् अवस्था में बढ़ने गये। यों बढते २ जब पांच छः वर्ष के होने आये तब माता पिता को पिछली बात का खयाल आगया कि जो साधु अपने को पुत्र होने का कह गये थे वे पुत्र तो हो गये पर साथ में यह भी कह गये थे कि वे दोनों पुत्र संसार परित्याग कर साधु बनेंगे। अतःकहीं ऐसा न हो कि ये पुत्र अपन को छोड़ साधु बन जावें। इस लिये इसका उपाय अभी से ही ढूंढना अनुपयुक्त न होगा। अतएव प्रथम तो यह उपाय है कि यह शहर छोड़ कर किसी एक घने जंगल में जाकर निवास करें क्योंकि उन जैसे साधु तो इस शहर में हर समय आते ही रहते हैं और उनकी संगति भी ऐसी है कि क्षणमात्र में ही संसारी को वैरागी बना देती है। इस लिये अपन इन पुत्रों को लेकर उस घने जंगल में चल बसे जहां कोईभी साधु ऐसा न आ सके।

ऐसा विचार कर चारों व्यक्ति ने घने विपिन में जाकर

भीलों की झोंपड़ियों के बीच एक मकान बन्धा लिया। वे उस जंगल के मकान में निर्विघ्नता के साथ आनन्द में पुत्रों के साथ जीवन व्यतीत करने लगे। पुरोहितजी पुत्रों को शिक्षा स्वतः देने लगे। पुरोहित के हृदय में कभी २ यह भी तरंग उठती रहती थी कि कदाचित् वैसे साधु भूले भटके इधर न चले आवें, उन साधुलोगों को देखते ही कही ये बालक साथ न चले जावें. इस लिये उन साधुओं का भयंकर विपरीत परिचय पुत्रों को दिखा देना अनुचित न होगा। ऐसा विचार कर वह पुरोहित सन्ध्या समय उन दोनों पुत्रों को समझाने लगाः– "पुत्रों! मेरी एक बात जरूर ध्यान में रखना नहीं तो कभी मार जाओगे" पुत्रोंने कहाः—"पिताजी! वह कौनसी ऐसी भयानक बात है हमें अवश्य उस बातसे परिचय करादीजिये" तब पिताने कहाः-"पुत्रों! तुम लड़कों के साथ आओ, जाओ, खेलो. कूदो, कोई हानि नहीं, परन्तु उन लोगों का संग मत करना जो कि मुँह पर एक कपड़ा पहिने हुए होते हैं, हाथ में एक कपड़े की झोली होती है उस में पात्र रखते हैं. पात्रों में चाकू, छुरी, कतरनी, तमंचे रखते हैं। जब वे चलते हैं तो नीची निगाह करते हुए चलते हैं। यदि कोई बालक उनके निगाहमें आता है तो पहिले वे उस बच्चे से बडे प्यार से मधुर स्वरसे बोलते हैं। और मिष्ट पदार्थ आदि के खानेका प्रलोभ भी दिखाते हैं इस से वही बच्चा उन के पास चला जाता है फिर वे नामधारी साधु उन्हें धोखा देकर जंगल में ले जाते हैं और वहां उन बालकोंके शरीर परका पहना हुआ आभूषण उतार कर उन्हें मार डालते हैं। सो तुम सावधान रहना। पुत्रों! हमने तो तुम्हें चेता दिया है यदि इस उपरान्त भी तुम उन लोगों के पास चले ही गये तो अवश्य ही मारे जाओगे, इस में हमारा कुछ दोष नहीं,

हम तुमको समझा चुके।" ऐसी बात सुनते ही डरसे दोनों पुत्र लपक कर माता पिता की छाती से चिपट गये और थर थर कांपते हुए रोते रोते बोले कि, "हे पिताजी! गांव बाहरतो दूर रहा पर घरसे बाहर तक भी हम नहीं निकलेंगे।" पिताने समझाया-"नहीं २ पुत्रों, इतने अधीर नहीं होना चाहिये प्रथम तो ऐसे विपिन में वैसे साधु आवेंगे ही नहीं यदि आवें तो ध्यान रखना उनके पास जाना मत और दौड़कर अपने घरके भीतर चले आना। और इस बातका पूरा ध्यान रखना। पिताकी इस शिक्षा को मानकर दोनों बालक घर के आस पास ही खेलते थे और दूर न जाते थे।

कुछ दिन बीतने पर उसी जंगल में होकर दो साधु किसी नगर को जा रहे थे, परन्तु वे वहां रास्ता भूल कर विपथ में इधर उधर भटकने लगे। शिष्य ने कहा-"गुरूजी! मध्यान्ह का समय आ रहा है, प्यास बहुत जोर से सता रही है, अतःऐसा कोई उपाय करें जिस से गांव पास आने पर तक्र आदिकी याचना कर चित्तको शान्त्वना दें" गुरूने कहा-"क्या करें, आज रास्ता भूलगये, अब ऐसा करो कि उस टेकरी पर चढ़ कर आस पास देखो कोई गांव निगाह पड़े तो वहां चलें।" ऐसाही किया कुछ दूरी पर एक छोटासा गांव दिख पड़ा। उसी गांव में भृगु पुरोहितभी रहता था। वे दोनों साधु वहां से चलकर उसी गांव में आये और उत्तम घरकी शोध करते २ पुरोहित के घर के पास ही आ निकले। उन आये हुए साधुओं को देखते ही पुरोहितकी आंखें चढ़ गई और मनही मन कहने लगा-अरे इस छोटेसे गांव में भी यह लोग आ गये! इसको भी इन्होंने नहीं छोड़ा इनके दुःख से तो शहर छोड़कर यहां आये। यहां पर भी ये यम आ खड़े हुए। खैर आ गये तो इनके पात्र आ-

हार, पानीसे यहीं भरदो ताकि पर्याप्त आहार पाने से और घरों में नहीं भटकेंगे. नहीं तो आहार पानी के लिये इधर उधर अन्य घरों में भटकते हुए कहीं पुत्र न मिल जाँय। बस इसी अभिप्राय से पुरोहित बोला-" महाराज! यहां पधारो, यह ब्राह्मण का घर है"। तब वे दोनों साधु वहां गये। दही, दूध, रोटी और धोवन पर्याप्त उन्हें वहरा कर पुरोहित बोला-" महा॰ राज! अब और घरों में मत फिरिये यदि कुछ कमी हो तो यहां से और ले लीजिये क्योंकि मेरे दो पुत्र बड़े कुपात्र और क्रोधी हैं, साधु, सन्तों को देख कर उनके कपड़े फाड़ डालते हैं। उन पर पत्थर फेंकते हैं। यदि उनके पास लकड़ी हो तो उससे मारते हैं। गालियां देते हैं। ऐसे अनेक तरह से कष्ट पहुंचाते हैं अत॰ आम रास्ता छोड़ कर किसी एक गली के रास्ते से निकल आप जंगल में जाकर वहां भोजन करना। गांव में कहीं न ठहरना"।

पुरोहित के कहने से वे दोनों साधु गली के रास्ते से जंगल की ओर प्रस्तान कर रहे थे तो जिस गली से जा रहे थे उसी में आगे दोनों बालक खेल रहे थे। यकायक उन साधुओं पर बालकों की दृष्टि पड़ी तो चमक कर एक ने कहा-" अरे भ्राता! यशोभद्र! दौड़ो २ भागो भागो। आज मौत की निशानी आ गई है। पिता ने जो चिन्ह बताये थे उन्हीं चिन्हों से चिन्हित बाल घातक आ रहे हैं। दोनों लड़के रास्ता दूसरा न होने से अपनी जान ले जंगल की ओर भागे जा रहे थे। साधु स्वाभाविक ही उनके पीछे पीछे जा रहे थे। लड़कों ने भागते हुए पीछे की ओर देखा तो जान पड़ा कि वे साधु उन्हीं की ओर जल्दी २ आ रहे हैं। इस से लड़कों ने सचमुच ही जान लिया कि ये साधु अपनी तरफ ही अपने को पकड़ने के लिये आ रहे हैं। ज्यों ज्यों उन्हें पास आते देखते त्यों २ बच्चों की जान अधिक हैरान होने लगती थी।

इधर दौड़ते २ थक गये तब एक बड़ के झाड़ पर जो समीप ही था उस पर जल्दी से चढ़ गये और पत्तों की आड़ में अपने को छिपा कर बैठ गये और एक दूसरे से कहने लगे· " भाई! खांसना मत. चुपचाप यहां छिपे रहो, जब ये बाल घातक यहां से आगे चले जावेंगे तब अपन यहां से नीचे उतर कर चले चलेंगे। उधर दोनों साधु नीची दृष्टि से देखते हुए उसी वट वृक्ष के नीचे आकर आपस में कहने लगे कि यह जगह ठीक है, अतः आहार पानी यहीं खा, पी लो। उन लडकों ने यह सुना कि इन को यहीं मार कर आगे चलो। बस फिर क्या था, वे बच्चे और भी अधिक थर २ कांपने लगे। उन साधुओं ने पात्र खोलने की चेष्टा की तो लडकों ने जाना कि इन्हों ने अपन को देख लिया है जिस से ये पात्रों में से मारने के लिये चाकू, छुरी आदि निकाल रहे हैं। आगे पात्र खोलने पर दूध, दही, रोटी आदि नजर आई तब बच्चों ने विचार किया कि पात्रों में से चाकू छुरी तो निकली नहीं इनके बजाय दूध, दही, रोटी निकली जो कि ऐसी अपने घर खा कर आये हैं हो न हो ये चीजें सब अपने घर की ही मालूम होती है।

इतने ही में गुरू ने शिष्य से कहा-" बेटा, ध्यान रखना. यहां कीड़ियां बहुत हैं "। कुछ ही देर पीछे बोले-" देख २ यह कीड़ी पांव नीचे न आ जावे, इसे बहुत आसानी से पूंजनी से दूर करो "। इस प्रकार का दृश्य उन दोनों लड़कों ने ऊपर से देख कर हृदय पर हाथ धर विचार किया कि ये साधु कीड़ी तक को तो मारते ही नहीं तो फिर ये बालहत्या कैसे करेंगे। इस से स्पष्ट मालूम होता है कि जो पिता ने हम को कहा था वह असंभव सा प्रतीत होता है। ऐसा विचारांश करते ही उन लड़कों को जाति स्मरण ज्ञान हो आया। उस समय ज्ञान के द्वारा अपने पिता ही

की करतूति का परिचय मिला और सब पिछले भवों की बात से परिचित हो कर झाड़ से नीचे उतरे। तदनु साधुओं के पास आकर-बोले-" स्वामिन् आप के भय से इतनी देर छिपे हुए थे। अब हमें ज्ञान हो चुका कि आप छः ही काया के जीवों के रक्षक हैं और साथ मोक्ष दाता भी हैं। संसार असार है। कोई किसी का नहीं। कौटुम्बिक जन सब स्वार्थी हैं। किये हुए कर्मों का फल आप ही अकेला भोगता है दूसरा कोई भी नहीं भोगता। अत एव हे स्वामिन्! माता पिता को पूछ कर आप के पास मोनवृत्ति साधुवृत्ति ग्रहण करेंगे; ऐसा कह कर घर की ओर आने लगे। उधर बच्चों के मा बाप इन को ढूंढने के लिये इधर उधर पुकारते हुए फिर रहे थे। इतने ही में आते हुए दोनों बच्चों को देख जोर से पुकारा-" अरे ओ पुत्रो! दौड़ कर जल्दी आओ आज गांव में बला आ गई थी "। पुत्रों ने कहा "क्यों, कैसी बला "। पिता ने कहा-" जो मैं तुम्हें हमेशा सायंकाल को उन बाल घातकों का चिन्ह बताता था, वे आज इस गांव में भी आ निकले, क्या तुम्हें वे मिले तो नहीं "? पुत्रों ने कहा-" वे तो मिल गये "। " पिता ने पूछा- " अरे! उनकी बात कुछ मानी तो नहीं। पुत्रों ने कहा-" मान ली " ।पिता ने पूछा-" अरे! क्या मानी "। पुत्रों ने कहा-" साधु बनने की बात ठान ली "। पिता ने कहा-" अरे पुत्रो! तुम्हें उन साधुओंने मधुर शब्दों से तुम्हें जाल में फँसा लिया है, पर वे लोग पहले तो ऐसाही करते हैं फिर समय पाकर उनका गला घोट देते हैं " लड़कोंने कहा-" बस, बस, पिता रहने दो अब आपकी इन मिथ्या बातों को रहने दीजिये, हम आपकी बात अब न मानेंगे; आपने साधुओंके विषय में जो बातें बताई हैं वे इन साधुओं में नहीं है; हमने आखों से देखा इन साधुओं के

कार्यों को देखा है, वे तो प्रत्यक्ष मोक्ष दाता है ; पिताजी, यह संसार तो स्वार्थी है ; अब हम इस संसार के स्वार्थी जनों में रहना नहीं चाहते ; अब आप हमें तो साधु बनने की आज्ञा प्रदान करिये ।" पुरोहित बोलाः-" पुत्रों ! कुछ सोचो ; विचारो; बोलने में इतनी जल्दी मत करो । तुम अभी अबोध बालक हो, कोमल अवस्था है, बुद्धि परिपक्व नहीं, संसार सुख देखा नहीं, अभी तुम गृहस्थाश्रम में प्रवेश हुए नहीं, संसार के सुखों का अनुभव किया नहीं । तुम्हारी अवस्था अभी विद्या प्राप्त करने की है इस के पीछे युवावस्था हो जाने पर गृहस्थी बनकर विषय सुखको भोगो फिर सन्तानादि हो जाने पर यदि साधु बनना चाहो तो साधु बन जाना ।" लड़कों ने कहाः-" पिताजी ! पौद्गलिक सुख तो क्षणमात्र के हैं, इस के बाद वही व्यवस्था है । जैसे किसी तलवार की धारा पर शहद बिन्दु चाटने का कुछ थोड़ासा सुख है पर फिर अन्त में जीभ कट जाने का महा भयंकर दुख होता है; इस लिये ऐसे सुखों पर हमारी इच्छा कदापि नहीं, हम तो उसी सुखकी चाहना कर रहे हैं जिस में लवलेश मात्र भी दुखकी संभावना न हो ।" निदान भृगु पुरोहित ने अपने पुत्रों को भोगोपभोगों के नाना प्रकारके सुख और संयम की कठिनता दिखाई पर पुत्रो ने एक न मानी और साधु बनने की दृढ प्रतिज्ञा करली ।

भृगु पुरोहितने अपने पुत्रों की दृढ प्रतिज्ञा साधु बनने की देखी तो उसे मोह के कारण सारा संसार अन्धकार मय दिखाई पड़ने लगा और सोचने लगा कि इतनी भारी धन सम्पत्ति होने परभी संतान सुख प्राप्त नहीं होगा तो यह धन किस काम का होगा और हृदय दुख से जलता रहेगा । इन पुत्रों को सब तरह से समझाया पर ये साधु हुये बिना न

आप अमर होकर आये हैं ? आप जैसे अनेक राजा इस भू मण्डल पर चक्रवर्ती होकर अन्त इस नश्वर शरीर को छोड़ कर चल बसे ! यह पृथ्वी, यह वैभव, यह हकूमत, यह राज भण्डार, यह हाथी-घोडे आदि सब वैभव यहां का यहीं रह गया कोई भी प्यारा बन्धव, स्नेही, मित्र, सेना, शत्रु साथ में न चला ! यदि आपने इन सब ठाट पाट, सुख-चैन, वैभव को न छोड़ा तो एक दिन ऐसा आवेगा कि जब ये सब स्वयं ही आप को छोड़ देंगे। तब आप स्वयं ही राज्य सुखों को छोड़ मोक्ष जानेका प्रयत्न क्यों न करें।" इतना सुनते ही राजाको भी वैराग्य हो आया और वैराग्य अवस्था में आकर अपने पुत्र को राज्य भार सौंप दिया और आप स्वयं रानीको वैराग्य की आज्ञा दे कर संयमी बनाई। तदनु राजा और रानी पुरोहित और पुरोहितानी, दोनों बालक ये छःओं ही व्यक्ति संयम धारण कर अनेक जन्म जन्मातर के किये हुए पापों को तपव्रत से भस्म कर मोक्ष चले गये। इति शम्



ॐ

असिआउसाय नमः

मङ्गलाचरणम्

मङ्गलं भगवान् वीरो, मङ्गलं गौतमः प्रभुः ।
मङ्गलं स्थूल भद्राद्यो, जैन धर्म्मोस्तुमङ्गलम् ॥ १ ॥



मूल-देवा भवित्ताण पूरे भवम्मि,
केई चुया एगविमाणवासी ।
पुरे पुराणे उसुयारनामे,
खाए समिद्धे सुरलोगरम्मे ॥ १ ॥

सकम्मसेसेण पुराकएणं,
कुलेसु दग्गेसु य ते पसूया ।
निव्विण्णसंसारभया जहाय,
जिणिन्दमग्गंसरणंपवन्ना ॥ २ ॥

छाया-देवा भूत्वा पूर्वस्मिन् भवे, केचिच्च्युता एकविमानवासिनः।
पुरे पुराणे इक्षुकारनाम्नि, ख्याते समृद्धे सुरलोकरम्ये ॥ १ ॥

स्वकर्मशेषेण पुरा कृतेन, कुलेषूदग्रेषु ते प्रसूताः ।
निर्विण्णाः संसारभयाद्धित्वा, जिनेन्द्रमार्गं शरणं प्रपन्नाः ॥ २ ॥

अन्वयार्थ-(केचित्) कई एक (पूर्वस्मिन्) पहिले (भवे) जन्म में (एकविमानवासिनः) एक विमान में रहने वाले (देवाः) देव (भूत्वा) हो कर 'तदनु वहां से' (च्युताः) पतन को प्राप्त हो (पुरा) पूर्व जन्म में (कृतेन) किये हुए (स्वकर्म-शेषेण) अपने कर्म के अवशिष्ट अंश से (ख्याते) सुप्रसिद्ध (समृद्धे) समृद्धिशाली (सुरलोकरम्ये) स्वर्ग के समान रमणीय (इषुकारनाम्नि) इषुकार नामक (पुराणे) प्राचीन (पुरे) नगर में (ते) वे (उदग्रेषु) ऊंचे (कुलेषु) कुलों में (प्रसूताः) उत्पन्न हुवे (संसारभयात्) संसार के भय से (निर्विण्णाः) उद्वेग पा कर (हित्वा) 'संसार का' परित्याग कर (जिनेन्द्रमार्गं) जिनेन्द्र के मार्ग की (शरणं) शरण (प्रपन्नाः) प्राप्त हुए ॥ १ ॥ २ ॥

भावार्थ-कई एक जीव पहले जन्म में एक ही पद्मगुल्म नाम के विमान में अपनी आयुः पूर्ण कर पूर्व भव के संचित शुभ कर्म के रहे हुए शेष भाग से सुरलोक के सदृश मनोहर प्रसिद्ध धन धान्य आदि ऋद्धि युक्त इषुकार नामक नगर में प्रधान कुल में उत्पन्न हुए। तदनु कुछ समय के बाद सद्गुरु के सद्बोध द्वारा संसार के जन्म मरण आदि दुःखों से भयभीत हो कर जिनेन्द्र भगवान के प्ररूपित मार्ग के शरण को प्राप्त हुए ॥ १ ॥ २ ॥

मूल-पुमत्तमागम्म कुमार दोऽवि,
पुरोहिओ तस्स जसा य पत्ती ।

विसालकित्ती य तहे सुयारो,
रायऽत्थ देवी कमलावई य ॥ ३ ॥

छाया-पुंस्त्वमागम्य कुमारौ द्वापि, पुरोहितस्तस्य यशाश्च पत्नी।
विशालकीर्त्तिश्च तथेक्षुकारा-राजाऽत्र देवी कमलावती च ॥३॥

अन्वयार्थ-(अत्र) यहां पर (पुँस्त्वम्) पौरुष्य पने (आगम्य) प्राप्त हुए (द्वौ) दोनों (अपि) प्रधानता सूचक (कुमारौ) कुमार (पुरोहितः) 'तीसरा' पुरोहित (च) और 'चौथा' (तस्य) उसकी (पत्नी) औरत (यशाः) यशा नाम वाली (तथा) तैसे ही 'पांचवां' (विशालकीर्त्तिः) विस्तीर्णकीर्त्ति वाला (इक्षुकारः) इक्षुकार नामक (राजा) नरेश (च) और 'छट्ठा' (देवी) राणी (कमलावती) कमलावती नाम की हुई ॥ ३ ॥

भावार्थ-छः पुरुष यथा शक्ति धर्म क्रिया कर एक ही स्वर्ग के एक ही विमान में छः ही देवता हुए थे। वहां वे अपना २ आयुः पूर्ण कर उन छओं में से एक देव यहां इक्षुकार नाम के नगर में इक्षुकार नामक नरेश हुआ। और दूसरा एक देव इसी राजा के कमलावती राणी हुई। तीसरा एक देव इसी नगर में भृगु नामक राज्य पुरोहित हुआ। और चौथा एक देव इसी पुरोहित के यशा नाम वाली औरत हुई। और दो देव राज्य पुरोहित के पुत्र पने आकर हुए ॥ ३ ॥

मूल-जाईजरामच्चुभयाभिभूया,
बहिंविहारामिनिविट्ठचित्ता।

संसारचक्कस्स विमोक्खणट्ठा,
दट्ठूण ते कामगुणे विरत्ता ॥ ४ ॥

छाया-जातिजरामृत्युभयाभिभूतौ, बहिर्विहाराभिनिविष्टचित्तौ।
संसारचक्रस्य विमोक्षणार्थं, दृष्ट्वा तौ कामगुणेषु विरक्तौ ॥४॥

अन्वयार्थ-(जातिजरामृत्युभयाभिभूतौ) जन्म, वृद्धावस्था, मृत्यु भय से भयभीत होने वाले (बहिर्विहाराभिनिविष्टचित्तौ) संसार से बहारका स्थान में आशक्त चित्तवाले (तौ) वे दोनों कुमार (दृष्ट्वा) 'उन साधुको' देख कर (संसारचक्रस्य) संसारचक्र को (विमोक्षणार्थं) दूरकरने के लिये (कामंगुणेषु) विषय वासना से (विरक्तौ) विरक्त हुवे ॥ ४ ॥

भावार्थ-संसार में जन्म जरामृत्यु आदि भयों से भयभीत होने वाले और संसार से बहार का जो स्थान (मोक्ष) उस स्थान को प्राप्त करने के लिये आसक्त चित्त वाले वे दोनो राज्य पुरोहितके पुत्र सद्गुरु को देख कर संसार के संपूर्ण विषय वासनाओं से विरक्त हुए ॥ ४ ॥

मूल-पियपुत्तगा दोन्निवि महाणस्स,
सकम्मसीलस्स पुरोहियस्स।
सरित्तु पोराणिय तत्थ जाईं,
तहा सुचिण्णं तव संजमं च ॥ ५ ॥

१-पंचमी विभक्ति के स्थान में सप्तमी हुई।

छाया--प्रियपुत्रकौ द्वावपि ब्राह्मणस्य,
स्वकर्मशीलस्य पुरोहितस्य।
स्मृत्वा पौराणिकीन्तत्र जातिं,
तथा सुचीर्णं तपः संयमं च ॥ ५ ॥

अन्वयार्थ (स्वकर्मशीलस्य) अपने कर्म काण्डों में निपुण (ब्राह्मणस्य) ब्राह्मण (पुरोहितस्य) पुरोहित के (द्वावपि) दोनों ही (प्रियपुत्रकौ) प्रिय पुत्र (तत्र) वहाँ, (पौराणिकीं) पूर्व (जातिं) जन्मको (तथा) तथा प्रकार का (सुचीर्णं) अङ्गिकार किया हुआ (तपः) तपव्रत (च) और (संयमं) संयमको (स्मृत्वा) स्मरण कर ॥ ५ ॥

भावार्थ-अपने क्रिया काण्ड में निपुण ऐसा जो वह पुरोहित ब्राह्मण उसके उन दोनों प्रिय पुत्रों ने जाति स्मरण ज्ञान द्वारा विचार किया कि अपन ने अगले जन्म में किस प्रकार का तपव्रत और संयम अङ्गीकार किया था वह सब उनको भाषित होने पर फिरभी वैसा ही करने के लिये उत्तेजित हुए ॥ ५ ॥

मूल-ते कामभोगेसु असज्जमाणा,
माणुस्सएसु जे यावि दिव्वा।
मोक्खाभिकंखी अभिजायसड्ढा,
तायं उवागम्म इमं उदाहु ॥ ६ ॥

छाया-तौ कामभोगेष्वसंसजतौ, मानुष्यकेषु ये चापि दिव्याः।
मोक्षाभिकांक्षिणावभिजातश्रद्धौ तातमुपागम्येदमुदाहरताम् ॥ ६ ॥

अन्वयार्थ (मानुष्यकेषु) मनुष्य सम्बन्धी (ये चापि) जो और भी (दिव्याः) देवता सम्बन्धी (कामभोगेषु) काम भोगोंमें (असंसजतौ) संसर्ग नहीं करते हुए (अभिजात-श्रद्धौ) उत्पन्न हुई है तत्व रुची ऐसे (मोक्षाभिकांक्षिणौ) मोक्षकी इच्छा करने वाले (तौ) वे दोनों पुत्र (तातमुपागम्य) पिता के पास आकर (इदं) इस प्रकार (उदाहरताम) कहते हुए ॥ ६ ॥

भावार्थ-उत्पन्न हुई है तत्व रुची जिनको ऐसे वे दोनों पुत्र मोक्षाभिलाषी मनुष्य सम्बन्धी और देवता सम्बन्धी काम भोगों का संसर्ग नहीं करते हुवे अपने पिता के पास आकर इस प्रकार कहने लगे ॥ ६ ॥

मूल-असासयं दट्ठु इमं विहारं,
बहुअंतरायं न य दीहमाउं ।
तम्हा गिहंसि न रइं लभामो,
आमंतयामो चरिस्सामु मोणं ॥ ७ ॥

छाया-अशाश्वतं दृष्ट्वेमं विहारं, बह्वन्तरायं न च दीर्घमायुः ।
तस्माद्गृहे न रतिं लभावहे, आमंत्रयावहे चरिष्यामो मौनं ॥७॥

अन्वयार्थ-(इमं) यह (विहारं) मनुष्य भव अशाश्वतं) हमेशा का नहीं है 'तदपि' (बह्वन्तरायं) बहुत अन्तराए है, (च) और (आयुः) उम्र (दीर्घम्) लम्बी (न) नहीं है 'ऐसा' (दृष्ट्वा) देख कर (तस्मात्) इस कारण से (गृहे) घर में (रतिं)

भृगु चरित्र

। चित्र परिचय के लिये, वन्दनेके लिये नहीं है।



दोनों साधु गांव मे प्रवेश हो रहे हैं आगे उन्हे भृगु पुरोहित और उसकी स्त्री दोनो आहार बहरा रहे हैं दो वालक गेंद खेल रहे हैं।

आनन्द को (न) नहीं (लभावहे) प्राप्त कर सके (आमन्त्रया-वहे) हम पूछते हैं आपको (मौनं) दीक्षा (चरिष्यामः) अङ्गी-कार करेंगे ॥ ७ ॥

भावार्थ-हे पिता श्री! यह मनुष्य भव अल्प आयु वाला सदैव रहने का नहीं है, नश्वर है। और इस स्वल्प आयु में भी भोगोपभोग भोगने के लिये खांसी धासी बुखार निद्रा शोक आदि अनेक प्रकार की वाधाएं आ खडी होती हैं। ऐसी अनित्य अवस्था में उस परम शाश्वत सुखों को छोड़ कर गृहस्थाश्रम के पौद्गलिक क्षणिक सुखों में हमें आनन्द नहीं प्राप्त होता है। अत एव हम मुनिवृत्ति ग्रहण करेंगे। आप हमें आज्ञा प्रदान करें ॥ ७ ॥

मूल-अह तायगो तत्थ मुणीण तेसिं,
तवस्स वाघायकरं वयासी।
इमं वयं वेयविओ वयन्ति,
जहा न होई असुयाण लोगो ॥ ८ ॥

छाया-अथ तातकस्तत्र मुन्योस्तयोस्तपसोऽव्याघातकरमवादीत्।
इमां वाचं वेदविदो वदन्ति, यथा न भवत्यसुतानं लोकः ॥ ८ ॥

अन्वयार्थ-(अथ) इस के बाद (तातकः) पिता (तत्र) तहाँ (मुन्योः) 'भाव' मुनि (तयोः) उन्ह के (तपसः) तपस्या को (व्याघातकरं) बाधा पहुंचाने को (अवादीत्) कहने लगा (वेदविदः) वेद के जानने वाले (इमां) यह (वाचं) वचन (वदन्ति) कहते (यथा) जैसे (असुतानं) बिना पुत्र (लोकः) परलोक (न) नहीं (भवति) होता है ॥ ८ ॥

भावार्थ-इस प्रकार दोनों पुत्रों के दीक्षा की आज्ञा याचने के बाद इन्हीं के पिता भृगु-पुरोहित उन्ह दोनों भाव मुनियों के तप, संयम को व्याघात पहुंचाने के लिये इस प्रकार कहने लगा कि हे पुत्रो! इस संसार में वेद के जानने वाले तत्त्वज्ञ यह कहते हैं कि बिना सन्तान हुए उसकी सद्गति नहीं होती ॥ ८ ॥

मूल-अहिज्ज वेए परिविस्स विप्पे,
पुत्ते परिट्ठप्प गिहंसि जाया ।
भोच्चाण भोए सह इत्थियाहिं,
आरण्णगा होह मुणी पसत्था ॥ ९ ॥

छाया-अधीत्य वेदान्परिवेष्य विप्रान्पुत्रान् परिष्टाप्य गृहे जातौ ।
भुक्त्वा भोगान् सहस्त्रीभिरारण्यकौ भवतं मुनी प्रशस्तौ ॥ ९ ॥

अन्वयार्थ-(जातौ) हे पुत्रो (वेदान्) वेदों को (अधीत्य) पढ़ कर (विप्रान्) ब्राह्मणों को (परिवेष्य) भोजन करा कर (स्त्रीभिः) स्त्रियों के (सह) साथ (भोगान्) भोगों को (भुक्त्वा) भोग कर (गृहे) घर में (पुत्रान्) पुत्रों को (परिष्टाप्य) स्थापन कर (आरण्यकौ) वान प्रस्थ (मुनी) साधु (भवतम्) होना (प्रशस्तौ) प्रसंशनीय है ॥ ९ ॥

भावार्थ-हे पुत्रो? हमारा तुम से यह कहना है कि पहले वेद शास्त्र पढो, ब्राह्मणों को खूब खिलाओ पिलाओ, स्त्रियों के साथ भोग भोगो, दो चार पुत्र होने के बाद उन पुत्रों को होशियार कर गृहस्थाश्रम में प्रवर्त कर दे फिर तुम को मुनिवृत्ति ग्रहण करना प्रसंशनीय है ॥ ९ ॥

मूल-सोयग्गिणा आयगुणिंधणेणं,
मोहाणिला पज्जलणाहिएणं।
संतत्तभावं परितप्पमाणं,
लालप्पमाणं बहुहा बहुं च ॥ १० ॥

पुरोहियं तं कमसोऽणुणंतं,
निमंतयंतं च सुए धणेणं।
जहक्कमं कामगुणेहि चेव,
कुमारगा ते पसमिक्ख वक्कं ॥ ११ ॥

छाया-शोकाग्निनात्मगुणेन्धनेन, मोहानिलादधिकप्रज्वलेन।
संतप्तभावं परितप्यमानं, लालप्यमानं बहुधा बहु च ॥ १० ॥

पुरोहितं तं क्रमशोऽनुनयन्तं, निमंत्रयन्तं च सुतौ धनेन।
यथाक्रमं कामगुणैश्चैव,कुमारकौ तौ प्रसमीक्ष्य वाक्यं(ऊचतुः)?१

अन्वयार्थ-(आत्मगुणेन्धनेन) आत्मा के गुण रूप इन्धन (मोहानिलात्) मोह रूप हवा (अधिकप्रज्वले) 'द्वारा' प्रज्वलित (शोकाग्निना) शोक रूप अग्नि से (संतप्तभावं) सन्तापभाव हुए है ऐसा (परितप्यमानं) परित्रास पाता हुआ (बहुधा) बहुत प्रकार के (बहु) बहुत से (लालप्यमानं) लालच (क्रमशः) क्रम से (सुतौ) पुत्रों को (अनुनयन्तं) जिताता हुआ (यथाक्रमं) यथाक्रम (धनेन) धन कर के (च) और (कामगुणैः) स्त्रीभोग कर के (एव) निश्चयार्थ (निमन्त्र-

यन्तं) निमंत्रण करते हुवे (तं) उस (पुरोहितं) पुरोहित को (प्रसमीक्ष्य) देखकर (तौ) वे दोनों (कुमारकौ) कुमार (वाक्यं) 'उचतुः' कहते हुए ॥ १० ॥ ११ ॥

भावार्थ-दोनों पुत्रों को पिताने बहुत समझाया पर वे दोनों पुत्र अपने प्रण से एक पैरभी पीछे न हटे तब शोक रूप अग्नि. आत्मा के गुण रूप इन्धन, मोह रूप हवा से प्रज्व-लित हुआ हृदय जिसका ऐसा वह पुरोहित संताप और परिताप पाता हुआ औरभी अपने पुत्रों के वैराग्य पथ से पृथक् करने के लिये नाना प्रकार के बहुत से धन, धान्य, स्त्रीभोग आदि क्रमवार भोगोपभोगों को विनम्र भावोंके साथ निमंत्रण करता हुवा। पिताको अज्ञान से आच्छादित देखकर वे दोनों कुमार यों बोले॥ १० ॥ ११ ॥

मूल-वेया अहीया न भवन्ति ताणं,
भुत्ता दिया निंति तमं तमेणं।
जायाय पुत्ता न हवन्ति ताणं,
को णाम ते अणुमन्नेज्जएयं ॥ १२॥

छाया--वेदा आधीता न भवन्ति त्राणं,
भुक्ता द्विजा नयंति तमस्तमसा।
जाताश्च पुत्रा न भवन्ति त्राणं,
को नाम तेऽनुम न्येतैतत् ॥ १२ ॥

अन्वयार्थ-(वेदाः) वेदों को (अधीताः) पढने से ही वेद (त्राणं) शरणभूत (न) नहीं (भवन्ति) होते है (द्विजाः) 'पथ

च्युत' ब्राह्मणों को (भुक्ता) जिमाने से (तमसा) अज्ञान कर के (तमः) अधोगति को (नयंति) प्राप्त होते हैं (च) और (पुत्राः) पुत्र (जाताः) होने से (त्राणं) शरण (न) नहीं (भवन्ति) होते हैं तब (कः) कौन (नाम) ऐसा (ते) तुम्हारे (एतत्) ये 'वाक्य' (अनुमन्येत्) मान सकता है ॥ १२ ॥

भावार्थ-हे पिता श्री ! केवल वेद शास्त्रों (ज्ञानशास्त्रों) को पढने से वेद शरण भूत नहीं होते हैं । क्योंकि केवल पढने मात्र ही से क्या ! वेद पढने के बाद सत्य कर्मों में प्रवर्त्ती करें । उसी के वेद पढना इस भव परभव में शरण भूत हो सकता है । इसी प्रकार श्रीमद्भागवत के ७ वें स्कन्ध के ग्यारहवें अध्याय के २१ वें श्लोक और श्रीमद्गीता के अठारवें अध्यायके ४२ वें श्लोक से विमुख अगुओं को धारण करने वाले, ब्रह्म पथ से पतित, व्यभिचारी, असत्यवादी, अनेक असद्गुणों का भण्डारी, केवल नाम मात्र के ब्राह्मणों को भोजन खिलाने से परलोक में त्राण (शरण) तो दूर रहे पर अज्ञान कर के अन्धकार के स्थानको प्राप्त होते हैं। और न कोई पुत्र परलोक में त्राण शरण हो सकते हैं। तब कौन ऐसा मूर्ख है जो भोगोपभोग के लिये आप के ये वाक्य मानें ॥ १२ ॥

मूल-खणमेत्तसोक्खा बहुकालदुक्खा,
पगामदुक्खा अणिगामसोक्खा ।
संसारमोक्खस्स विपक्खभूया,
खाणी अणत्थाण उ कामभोगा ॥ १३ ॥

छाया-क्षणमात्रसौख्या बहुकालदुःखाः,
प्रकामदुःखा अनिकामसौख्याः।
संसारमोक्षस्य विपक्षीभूता,
खानिरनर्थानां तु कामभोगाः ॥ १३ ॥

अन्वयार्थ-(कामभोगाः) काम भोग (तु) पद पूर्णार्थ (क्षणमात्रसौख्याः) क्षणिक सुख वाले (बहुकालदुःखा) बहुकाल तक दुःख देने वाले हैं (प्रकामदुःखाः) 'भोगों में' उत्कृष्ट दुःख है (अनिकामसौख्याः) किंचिन्मात्र सुख (संसारमोक्षस्य) संसार से निवर्तन होने को (विपक्षीभूताः) 'ये भोग' वैरी के समान (अनर्थानां) अनर्थों की (खानिः) खदान है ॥ १३ ॥

भावार्थ-हे पिता श्री! ये काम भोग क्षण मात्र के सुख देने वाले हैं। फिर उन के परिणाम अन्त में बहुत ही दुखदायी होते हैं। इन में किसी प्रकार का सुख न समझें, जैसे कहां तो पर्वत के समान दुःख और कहां बिचारा कंकर के समान पौद्गलिक सुख हैं। हम तो हे पिता ऐसे सुखों पर न रीझेंगे। क्योंकि वह थोड़ा सा सुख भी सम्पूर्ण मोक्ष के सुखों का वैरी है। और संसार में जितने भी परिभ्रमण करने के कारण हैं वे सभी इसी काम भोग रूप खान ही में से निकलते हैं ॥ १३ ॥

मूल-परिव्वयंते अणियत्तकामे,
अहो य राओ परितप्पमाणे।

अन्नप्पमत्ते धणमेसमाणे,
पप्पोति मच्चुं पुरिसे जरं च ॥ १४ ॥

छाया–परिव्रजन्ननिवृत्तकामोऽहनि च रात्रौ परितप्यमानः ।
अन्नप्रमत्तो धनमेषयन्, प्राप्नोति मृत्युं पुरुषो जरां च ॥ १४ ॥

अन्वयार्थ–(अन्नप्रमत्त) भोजन की प्राप्ति में आशक्त, (धनम्) धन को, (एषयन्) ढूंढने के लिये, (परिव्रजन्) परिभ्रमण करता हुआ, (अहनि) दिन, (च) और (रात्रौ) रात्रि भर, (परितप्यमानः) चिन्ता ग्रसित, (पुरुषः) मनुष्य, (अनिवृत्तकामः) अतृप्त इच्छा वाला, (जरां) अवस्था को 'प्राप्त हो कर' (च) और, (मृत्युं) मृत्यु को, (प्राप्नोति) प्राप्त हो जाता है ॥ १४ ॥

भावार्थ–हे पिता श्री! जो भोगों से दूर नहीं हुआ है वह अतृप्त इच्छावाला मनुष्य विषय वासना और खान पान धन आदि इकट्ठे करने के लिये रात दिन चिन्ता में पड़ा हुआ इधर उधर भटकता फिरता है यों भटकते २ वृद्धावस्थाको प्राप्त होकर आखिर मृत्यु को प्राप्त होजाता है ॥ १४ ॥

मूल–इमं च मे अत्थि इमं च नत्थि,
इमं च मे किच्च इमं अकिच्चं ।
तं एवमेयं लालप्पमाणं,
हरा हरंति त्ति कहं पमाए ॥ १५ ॥

छाया–इदञ्च मेऽस्तीदञ्च नास्तीदञ्च मे कृत्यमिदमकृत्यम् ।

तमेवमेव लालप्यमानं, हरा हरन्तीति कथं प्रमादः ॥ १५ ॥

(इदम्) यह 'स्वर्ण' (मे) मेरे (अस्ति) है (च) और (इदम्) यह 'हीरे पन्ने' (न) नहीं (अस्ति) है (च) और (इदम्) यह 'मकान' (मे) मेरेको (कृत्यम्) करने योग्य (च) और (इदम्) यह 'व्यापार' (अकृत्यम्) नहीं करने योग्य है (एवमेव) इस प्रकार (लालप्यमानं) 'दिल' ललचाता है (हराः) रात 'दिन रूप समयका' चौर (तं) उस पुरुषको (हरन्ति) 'जन्म जन्मान्तरको' प्राप्त करता है (इति) संपूर्णार्थ (प्रमादः) 'तव' आलस्य (कथं) क्यों 'किया जावे' ॥१५॥

हे पिता श्री ! इस संसार में मनुष्य मात्र इस ध्यान में बैठे हुए हैं कि इतना तो मेरे पास है, इतने धनकी और आवश्यकता है। मेरे अमुक व्यापारतो करने योग्य है। और अमुक व्यापार नहीं करने योग्य है। इसी फिक्र में रात दिन लगा रहता है, पर यह नहीं जानता है कि रात दिन समय रूप चौर जन्म जन्मान्तरों को प्राप्त करने के लिये प्रयत्न करता है। ऐसी अवस्था में हमें धर्म कार्य्य में प्रमाद करना ठीक नहीं है ॥ १५ ॥

मूल-धणं पभूयं सह इत्थियाहिं,
सयणा तहा कामगुणा पगामा।
तवं कए तप्पइ जस्स लोगो,
तं सव्वसाहीणमिहेव तुब्भं ॥ १६ ॥

छाया-धनं प्रभूतं सह स्त्रीभिः स्वजनास्तथा कामगुणाः प्रकामाः।
तपः कृते तप्यते यस्य लोकस्तत्सर्वं स्वाधीनमिहैव युवयोः ॥१६॥

अन्वयार्थ-(प्रभूतं) बहुत (धन) द्रव्य (सह स्त्रीभिः) साथ स्त्री (स्वजनाः) परिवार (तथा) वैसे ही (प्रकामाः) खूब (कामगुणाः) काम भोग (तपः) कष्ट (कृते) इत्यादि को प्राप्त करने के निमित्त (यस्य) जिसके (लोकः) मनुष्य (तप्यते) परिश्रम उठाते हैं (तत्) वे (सर्वम्) सब (युवयोः) तुमको (इहैव) यहाँ पर ही (स्वाधीनम्) स्वाधीन है ॥ १६ ॥

भावार्थ-हे पुत्रो ! संसार में तो धन, स्त्री, परिवार, भोगोपभोग आदि को प्राप्त करने के लिये मनुष्य अनेक प्रकार का कष्ट और भाँति २ का परिश्रम उठाते हैं पर तुम्हें तो विना ही परिश्रम किये हुए यहाँ सब सुख प्राप्त हो रहे हैं। फिर तुम इन सुखों को भोगने के लिये शिर क्यों हिला रहे हो ॥ १६ ॥

मूल-धणेण किं धम्मधुराहिगारे,
सयणेण वा कामगुणेहिं चेव।
समणा भविस्सामु गुणोहधारी,
बहिंविहारा अभिगम्म भिक्खं ॥ १७ ॥

छाया-धनेन किं धर्मधुराधिकारे,
स्वजनेन वा कामगुणैश्चैव।
श्रमणौ भविष्यावो गुणौघधारिणौ,
बहिर्विहारावभिगम्य भिक्षाम् ॥ १७ ॥

अन्वयार्थ-(धर्म्मधुराधिकारे) धर्म है अग्रसर जिसके ऐसे अधिकार में उसके (धनेन) धन कर के (किं) क्या (वा) अथवा (स्वजनेन) परिवार कर के 'क्या' (च) और (कामगुणैः) कामभोगों कर के (एव) ही 'क्या' (गुणौघधारिणौ) गुण समूहको धारण करने वाले (श्रमणौ) साधु (भविष्यावः) होंगे (भिक्षाम्) भिक्षाको (अभिगम्य) 'निर्दोष, जानकर (बहिर्विहारौ) 'ग्राम से, बहार गमन करेंगे ॥ १७ ॥

हे पिता श्री ! जिस के हृदय में धर्म प्रविष्ट कर गया है, उसे न धन, न स्वजन, न काम भोगों की ही आवश्यकता है और न वह उनकी प्राप्ति के लिये इच्छा करता है। इसी प्रकार हमको भी जो आप कह रहे हैं उन में से किसी भी बातकी आवश्यकता नहीं है। हाँ, जिसे चाह रहे हैं उसी लिये शान्त, दान्त गुणों को धारण कर अप्रतिबद्ध पक्षिके जैसे भूमण्डल में विचरेंगे। और निर्दोष आहार पानी को जान कर उसे भिक्षा रूप में ग्रहण करते हुये संयम का निर्वाह करेंगे ॥ १७ ॥

मूल-जहा य अग्गी अरणीअसंतो,
खीरे घयं तेल्लमहा तिलेसु ।
एमेव जाया सरीरंसि सत्ता,
समुच्छई नासइ नावचिट्ठे ॥ १८ ॥

छाया-यथा चाग्निः अरणितोऽसन् क्षीरे घृतं तैलमथ तिलेषु ।

एवमेव जातौ शरीरं सत्ता, सम्मूर्च्छंति नश्यति नावतिष्ठते ॥१८॥

अन्वयार्थ-(जातौ) हे पुत्रों ! (यथा) जैसे (अग्निः) आग (अरणितः) अग्निकाष्टमथन से (असन्) नहीं होने पर भी (सम्मूर्च्छति) उत्पन्न होती है (क्षीरे) दुग्ध में (घृतं) घी (अथ) शब्द की भिन्नता (तिलेषु) तिलों में (तैलं) तेल ' यों ही उत्पन्न होजाते हैं ' (एवमेव) ऐसे ही (शरीरे) शरीर में (सत्ता) जीव ' उत्पन्न हो जाते हैं ' (नश्यति) ' शरीर ' नाश होता है ' उस समय जीव भी ' (न) नहीं (अवतिष्ठते) ठहरता है ॥ १८ ॥

भावार्थ-हे पुत्रों ! जैसे अरणि के काष्ठ मंथन से अग्नि, दुग्ध में घी, तिलों में तेल यों ही उत्पन्न हो जाते हैं । वास्तविक रूप से उन में अग्नि, दुग्ध, घी, नहीं हैं । ऐसे ही इस शरीर में भी यह जीव जो तुम कहते हो वह यों ही पांच तत्त्वों का संयोग मिलने पर उत्पन्न हो जाता है । जब पाँच तत्त्व (शरीर) नष्ट होते हैं तब जीव (आत्मा) भी समूल नष्ट हो जाता है न स्वर्ग है, न नर्क है, न मोक्ष, केवल यह तो इन्द्र-जाल है । किस के लिये तुम व्यर्थ ही साधु बनकर इस शरीरको कष्ट पहुँचाने का सहास कर रहे हो ॥ १८ ॥

मूल-नो इंदियगेज्झ अमुत्तभावा,
अमुत्तभावा वि य होइ निच्चो ।

अज्झत्थहेउं नियय़ऽस्स बंधो,
संसारहेउं च वयंति बंधं ॥ १९ ॥

छाया-नेन्द्रियग्राह्योऽमूर्तभावादमूर्तभावादपि च भवति नित्य ।
अध्यात्महेतुं नियतोऽस्य बन्धः, संसारहेतुं च वदन्ति बन्धम् ॥१९॥

अन्वयार्थ-(अमूर्तभावात्) 'आत्मा का' अरूप भाव होने से (इन्द्रियग्राह्यः) इन्द्रियों द्वारा ग्रहण (न) नहीं हो सकता (च) और (अपि) भी (अमूर्त भावात्) अरूप होने से (नित्यः) हमेशाका (भवति) होता है (अध्यात्महेतुं) आन्तरिक दुर्गुणों का हेतु (अस्य) उसके (नियतः) निश्चय (बन्धः) बन्धन है (च) और (संसारहेतुं) संसार में 'परिभ्रमण रूप' हेतु (बन्धम्) बन्धन (वदन्ति) 'तत्त्वज्ञ' कहते हैं ॥ १९ ॥

भावार्थ-हे पिता श्री ! शरीर नाश होने पर आत्मा भी नाश हो जाती है यह बात आपकी तत्त्वज्ञ तो नहीं मान सकते हैं । क्या यह अरूपी आत्मा इन्द्रियों द्वारा पकड़ी जाती है ! कभी भी नहीं. अमूर्तिमान आत्मा कभी नाश नहीं होती । यदि तुम कहोगे कि इस रूपी शरीरने अरूपी आत्मा का बन्धन कैसे कर रखा है । उत्तर-जैसे आकाश अरूपी है पर घट के आश्रित रहे हुये आकाश का बन्धन हो ही जाता है उसे घटाकाश कहेंगे । परन्तु घटका नाश होने पर आकाशका नाश कभी नहीं होता है । इसी तरह

से शरीर का नाश होने पर आत्मा का नाश नहीं होता है वह तो नित्य, अजर, अमर है। आन्तरिक दुर्गुणों ने आत्मा को बन्धन में कर रखी है घट आकाशवत। और ये ही दुर्गुण आत्मा के लिये संसार का हेतु बन रहे हैं। जब ये दुर्गुण आत्मा से दूर होजायगें तब वह आत्मा परम सुख में प्राप्त होजायगी। अत एव स्वर्ग है, नर्क है, मोक्ष है, सब कुछ है जो जिसकी इच्छा होगा वह प्राप्त करेगा॥ १९॥

मूल—जहा वयं धम्ममजाणमाणा,
पावं पुरा कम्ममकासि मोहा।
उरुब्भमाणा परिरक्खियंता,
तं नेव भुज्जोऽवि समायरामो॥ २०॥

छाया—यथा वयं धर्ममजानानाः पापं पुरा कर्म अकार्ष्म मोहात्।
अवरुध्यमानाः परिरक्षमाणाः, तन्नैव भूयोऽपि समाचरामः॥ २०॥

अन्वयार्थ (यथा) जैसे (धर्मम्) धर्म को (अजानानाः) नहीं जानते हुए (वयं) हम (पुरा) पहिले (पापं) पाप (कर्म) किये (मोहात्) मोह से (अकार्ष्म) किया (परिरक्षमाणाः) चौतरफ से रक्षा के साथ (अवरुध्यमानाः) रोके हुवे हम (तत्) वह पाप (भूयोऽपि) फिर भी (नैव) नहीं (समाचरामः) करेंगे॥ २०॥

हे पिता श्री! हम धर्म नहीं जानते थे तब पहिले अज्ञान अवस्था में मोहके वश अनेक पाप किये थे। और

मूल-जा जा वच्चइ रयणी, न सा पडिनियत्तई।
अहम्मं कुणमाणस्स, अफला जन्ति राइओ ॥२४॥

छाया-या या व्रजति रजनी, न सा प्रतिनिवर्तते।
अधर्मं कुर्वतस्तस्य हि, यान्ति रात्रयः ॥ २४ ॥

अन्वयार्थ-(या या) जो जो (रजनी) रात्रि (व्रजति) जाती है (सा) वह (न) नहीं (प्रतिनिवर्तते) पीछी लौट कर नहीं आती है (अधर्म) पाप को (कुर्वतस्तस्य) करने वाले की (हि) निश्चय (रात्रयः) रात्रि (अफला) निष्फल (यान्ति) जा रही है ॥ २४ ॥

हे पिता श्री ! जो जो रात्रि और दिन जा रहे हैं। वे पीछे लौट कर कभी नहीं आने के हैं। ऐसा अपूर्व समय पाकर मनुष्य पाप कर रहे हैं उन के लिये वह समय निष्फलसा जा रहा है ॥ २४ ॥

मूल-जा जा वच्चइ रयणी, न सा पडिनियत्तई।
धम्मं च कुणमाणस्स, सफला जन्ति राइओ॥२५॥

छाया-या या व्रजति रजनी, न सा प्रतिनिवर्तते।
धर्मञ्च कुर्वतस्तस्य सफला यान्ति रात्रयः ॥ २५ ॥

(या या) जो जो (रजनी) रात्री (व्रजति) जाती है (सा) वह (न) नहीं (प्रतिनिवर्तते) पीछी लौट कर आती है 'ऐसा समझ कर' (धर्म्म) धर्मको (च) पद पूर्णार्थ (कुर्वतस्तस्य) करने वाले की (रात्रयः) रात्रि (सफला) सफल (यान्ति) जा रही है ॥ २५ ॥

भृगु चरित्र

। चित्र परिचय के लिये, वंदने के लिये नहीं है ।



दोनों लड़के साधुओं को देखकर भयभीत होते हुएँ गॉव से जंगलकी ओर भागें जा रहे हैं। आगे वें दोनों वट वृक्ष पर चढ कर पत्ते की आड़ में छिप रहे हैं। मुनि आहार पानी करने को बैठे त्यों ही दोनों लड़के वट से उतर कर नमस्कार कर रहे हैं।

भावार्थ हे पिता श्री ! रात दिन रूप जो अपूर्व समय जा रहा है, वह लौट कर कभी भी पीछा आने का नहीं है। ऐसा समझ कर ज्ञानी जन धार्मिक कार्यों में समय बिता रहे है उन का जन्म व समय सार्थक है । अत एव ऐसा अपूर्व समय जान कर अब हम हमारा समय निष्फल नहीं जाने देंगे. आप हमें धर्म करने हेतु न रोके ॥ २८ ।

मूल-एगओ संवसित्ता णं, दुहओ सम्मतसंजुया ।
पच्छा जाया गमिस्सामो, भिक्खमाणा कुले कुले ॥२९॥

छाया-एकतः समुष्य द्वये सम्यक्त्वसंयुताः ।
पश्चाज्जातौ गमिष्यामो, भिक्षमाणाः कुले कुले ॥२९॥

अन्वयार्थ-(जातौ) हे पुत्रों ! (द्वये) तुम दोनों हम दोनों (एकतः) एक जगह (समुष्यः) निवास कर (सम्यक्त्वसंयुताः) सम्यक्त्व सहित होवे पश्चात्) फिर (कुले कुले) घर घर में (भिक्षमाणाः) भिक्षा करते हुए (गमिष्यामः) पर्यटन करेंगे ॥ २९ ॥

भावार्थ-हे पुत्रों ! तुम दोनों भ्राताओं और हम दोनों तुम्हारे मात पिताओं एव चारों ही अभी हाल एक ही स्थान में सम्यक्त्व सहित गृहस्थावास में निवास कर यथा-शक्ति अपना धर्मोपार्जन करें । फिर वृद्धावस्था आने पर मुनिव्रत ग्रहण कर उच्च कुलों में निर्दोष आहार पानी की भिक्षा करते हुए देशाटन करेंगे ॥ २९ ॥

मूल-जस्सऽत्थि मच्चुणा सक्खं, जस्स वात्थि पलायणं ।
जो जाणइ न मरिस्सामि, सो हु कंखे सुए सिया ॥२७॥

मूल—अज्जेव धम्मं पडिवज्जयामो,
जहिं पवन्ना न पुणब्भवामो।
अणागयं नेव य अत्थि किंची,
सद्धाखमं णो विणइत्तु रागं ॥ २८ ॥

छाया—अद्यैव धर्म्मं प्रतिपद्यामहे,
यं प्रपन्ना न पुनर्भविष्यामः।
अनागतं नैव चास्ति किञ्चित्,
श्रद्धाक्षमं नो विनीय रागम् ॥२८॥

अन्वयार्थ—(किंचित्) किंचिन्मात्र 'भी विषयादि सुख ऐसे' (नैव) नहीं (अस्ति) है कि मुझे, (अनागतम्) गये काल में प्राप्त नहीं हुए हो। अतः (रागं) रागको (विनीय) दूरकर (अद्यैव) आजही (नो) हम (श्रद्धाक्षमं) श्रद्धापूर्वक (धर्म्मं) धर्म्म को (प्रतिपद्यामहे) अङ्गीकार करेंगे (यं) जिस (प्रपन्नाः) आश्रित (न) नहीं (पुनः) फिर (भविष्यामः) जन्मान्तरों में, होंगे ॥ २८ ॥

भावार्थ—हे पिता! इस संसार में विषयादि सुख ऐसा कोई भी नहीं है जो कि हमे गये काल में नहीं मिला हो। अत एव राग भाव को दूर कर आज ही हम श्रद्धापूर्वक धर्म अङ्गीकार करेंगे। जिस के धारण करने से संसार में हमारा फिर से जन्म नहीं होगा। २८ ॥

छाया- यस्यास्ति मृत्युना सख्यं,
यस्य चास्ति पलायनम् ।
यो जानीते न मरिष्यामि,
स एव (खलु) कांक्षते श्वः स्यात् ॥२७॥

अन्वयार्थ-(यस्य) जिसके (मृत्युना) मृत्यु के साथ (सख्यम्) मित्रता (अस्ति) है (च) और (यस्य) जिसके 'मृत्यु से' (पलायनं) भागने का साहस (अस्ति) है (यो) जो (जानाति) जानता है 'कि मैं' (न) नहीं (मरिष्यामि) मरूंगा (स) वह (एव) ही (श्वः) आगामी दिन 'जीने की' (स्यात्) कदाचित् (कांक्षते) इच्छा करता है ॥ २७ ॥

भावार्थ-हे पिता श्री ! आप कहते हैं कि वृद्धावस्था होने पर दीक्षा लेंगे इसका निश्चय किस को है । वृद्धावस्था न होने पहिले ही मृत्यु प्राप्त हो जाय तो इसकी कौन जान सकता है हाँ जिसको इस प्रकार का ज्ञान है कि मैं अमुक दिन ही मरूँगा और दिन नहीं । अथवा जिसके यमराज के साथ मित्रता हो । यद्वा यमराज से बच कर भगजाने का सहास हो और जो जानता हो कि मैं मरूँगा ही नहीं वही शूर वीर मनुष्य धर्म करने में भले ही परहेज करता होगा । हमारी न तो यमराज के साथ मित्रता है और न हमारे में उस से भगजाने की वीरता है । हम नहीं मरेंगे ऐसा हमें विश्वास भी नहीं तब आप के वचन कैसे मानेंगे ॥ २७ ॥

छाया-यस्यास्ति मृत्युना सख्यं,
यस्य चास्ति पलायनम् ।
यो जानीते न मरिष्यामि,
स एव (खलु) कांक्षते श्वः स्यात् ॥२७॥

अन्वयार्थ-(यस्य) जिसके (मृत्युना) मृत्यु के साथ (सख्यम्) मित्रता (अस्ति) है (च) और (यस्य) जिसके 'मृत्युसे' (पलायनं) भागने का साहस (अस्ति) है (यो) जो (जानाति) जानता है ' कि मैं ' (न) नहीं (मरिष्यामि) मरूंगा (स) वह (एव) ही (श्वः) आगामी दिन ' जीने की ' (स्यात्) कदाचित् (कांक्षते) इच्छा करता है ॥ २७ ॥

भावार्थ-हे पिता श्री ! आप कहते हैं कि वृद्धावस्था होने पर दीक्षा लेंगे इसका निश्चय किस को है । वृद्धावस्था न होने पहिले ही मृत्यु प्राप्त हो जाय तो इसकी कौन जान सकता है हाँ जिसको इस प्रकार का ज्ञान है कि मैं अमुक दिन ही मरूँगा और दिन नहीं । अथवा जिसके यमराज के साथ मित्रता हो । यद्वा यमराज से बच कर भगजाने का सहास हो और जो. जानता हो कि मैं मरूँगा ही नहीं वही शूर वीर मनुष्य धर्म करने में भले ही परहेज करना होगा । हमारी न तो यमराज के साथ मित्रता है और न हमारे में उस से भगजाने की वीरता है । हम नहीं मरेंगे ऐसा हमे विश्वास भी नहीं तब आप के वचन कैसे मानेंगे ॥ २७ ॥

मूल-अज्जेव धम्मं पडिवज्जयामो,
जहिं पवन्ना न पुणब्भवामो।
अणागयं नेव य अत्थि किंची,
सद्धाखमं णो विणइत्तु रागं ॥ २८ ॥

छाया-अद्यैव धर्म्मं प्रतिपद्यामहे,
यं प्रपन्ना न पुनर्भविष्यामः ।
अनागतं नैव चास्ति किञ्चित्,
श्रद्धाक्षमं नो विनीय रागम् ॥२८॥

अन्वयार्थ-(किंचित्) किंचिन्मात्र ' भी विषयादि सुख ऐसे ' (नैव) नहीं (अस्ति) है कि मुझे, (अनागतम्) गये काल में प्राप्त नहीं हुए हो अतः (रागं) रागको (विनीय) दूरकर (अद्यैव) आजही (नो) हम (श्रद्धाक्षमं) श्रद्धापूर्वक (धम्मं) धर्म्म को (प्रतिपद्यामहे) अङ्गीकार करेंगे (यं) जिस (प्रपन्नाः) आश्रित (न) नहीं (पुनः) फिर (भविष्यामः) जन्मान्तरों में . होंगे ॥ २८ ॥

भावार्थ-हे पिता ! इस संसार में विषयादि सुख ऐसा कोई भी नहीं है जो कि हमे गये काल में नहीं मिला हो। अत एव राग भाव को दूर कर आज ही हम श्रद्धापूर्वक धर्म अङ्गीकार करेंगे। जिस के धारण करने से संसार में हमारा फिर से जन्म नहीं होगा ॥ २८ ॥

इस प्रकार पिता पुत्र के परस्पर वार्तालाप होने पर पिताने जान लिया कि ये अब संसार में रहने के नहीं हैं। जितने भी मैं ने इनको रोकने के प्रयत्न किये वे सब योंही गये। जब ये दोनों पुत्र संसार परित्याग कर रहे हैं तो मेरा संसार में रहना अयोग्य है। ऐसा विचार कर भृगु पुरोहित अपनी प्रियपत्नि से यों कहने लगा॥

मूल-पहीणपुत्तस्स हु नत्थि वासो,
वासिट्ठि भिक्खायरियाइ कालो।
सहाहि रुक्खो लहई समाहिं,
छिन्नाहिं साहाहि तमेव खाणुं॥ २९॥

छाया-प्रहीणपुत्रस्य खलु नास्ति वासो,
वाशिष्ठि भिक्षाचर्यायाः कालः।
शाखाभिर्वृक्षो लभते समाधिं छिन्नाभिः
शाखाभिः स एव स्थाणुः॥ २९॥

अन्वयार्थ-(वाशिष्ठि) हे वशिष्ठ गोत्रवाली (प्रहीणपुत्रस्य) बिना पुत्र वालेको (खलु) निश्चय (वासः) 'संसार में' निवास करना 'योग्य' (न) नहीं (अस्ति) है "उसको तो" (भिक्षाचर्यायाः) भिक्षावृत्ति का (कालः) समय है 'जैसे' (वृक्षः) पेड़ (शाखाभिः) शाखाओं कर के (समाधिं) आनन्द को (लभते) प्राप्त होता है (शाखाभिः) शाखाओं कर के

(छिन्नाभिः) रहित (स एव) वही वृक्ष (स्थाणुः) स्तम्भ 'के समान है' ॥२९॥

भावार्थ-हे वशिष्ठ गोत्र में उत्पन्न होने वाली प्राणवल्लभा ! दोनों पुत्रों को मैंने बहुत समझाया पर वे मेरे कथन को नहीं मानते हुए संसार का परित्याग कर रहे हैं। इस लिये बिना पुत्र मेरा भी संसार में रहना योग्य नहीं है। क्योंकि अभोगी दोनों पुत्र तो दीक्षा ले रहे हैं और मैं फिर भी विषयों की लालसा में बैठा रहूं यह कभी होने का नहीं, मेरा भी भिक्षावृत्ति करने का समय है। जैसे वृक्ष शाखाओं से आनन्द को प्राप्त होता है। और वही वृक्ष शाखा करके रहित सुशोभित नहीं होता हुआ थंभे के समान दिखाई देता है ॥ २९ ॥

मूल-पंखाविहूणो व जहेव पक्खी,
भिच्चाविहूणो व रणे नरिन्दो।
विवन्नसारो वणिउव्व पोए,
पहीणपुत्तोमि तहा अहंपि ॥ ३० ॥

छाया-पक्षविहीनो वा यथैव पक्षी,
भृत्यविहीनो वा रणे नरेन्द्रः।
विपन्नसारो वणिग् वा पोते,
प्रहीणपुत्रोऽस्मि तथाऽहमपि ॥३०॥

अन्वयार्थ-(यथैव) जैसे (पक्षविहीनः) पर बिना (पक्षी) पक्षी जानवर (वा) अथवा (रणे) संग्राम में

(भृत्यविहीनः) नौकर बिना (नरेन्द्रः) राजा (वा) अथवा (पोते) जहाज में (विपन्नसारः) द्रव्य बिना (वणिग्) व्यापारी 'असमर्थ' है (वा) अथवा (तथा) तैसे ही (प्रहीणपुत्रः) पुत्र बिना (अहमपि) मैं भी (अस्मि) हूं ॥ ३० ॥

भावार्थ–हे पुत्र जननि ! जैसे इस संसार में पर विना पक्षी उड़ने को अशक्त हैं। संग्राम में सेना विना वैरी को जीतने में राजा असमर्थ है। और जहाज में द्रव्य रहित व्यापारी वर्ग असमर्थ है। ऐसे ही विना पुत्र संसार में रहने के लिये मैं भी असमर्थ हूं ॥ ३० ॥

मूल–सुसंभिया कामगुणा इमे ते,
सपिंडिया अग्गरसा पभूया ।
भुंजामु ता कामगुणे पगामं,
पच्छा गमिस्सामु पहाणमग्गं ॥ ३१ ॥

छाया–सुसंभृताः कामगुणा इमे ते,
संपिण्डिता अग्ररसाः प्रभूताः ।
भुंजावस्तस्मात्कामगुणं प्रकामं,
पश्चाद्गमिष्यावः प्रधानमार्गम् ॥ ३१ ॥

अन्वयार्थ-(इमे) ये (संपिण्डिताः) इकट्ठे किये हुए (सुसंभृताः) भले प्रकार के (अग्ररसाः) प्रधान रसवाले

(प्रभूताः) बहुत से (ते) तुम्हारे (कामगुणाः) कामभोगों की 'सामग्री' हैं (तस्मात्) इस लिये (प्रकामं) बहुत (कामगुणं) काम भोगों को (भुंजावः) भोगे (पश्चात्) फिर (प्रधानमार्गम्) दीक्षा मार्ग को (गमिष्यावः) जावेंगे ॥ ३१ ॥

भावार्थ-हे प्राणपते ! दोनों पुत्र संसार त्याग रहे हैं तो त्यागने दो, आप ने बहुत समझाया पर वे नहीं मानते हैं तो उनकी इच्छा, जिसका अब आप क्या करें। दुनिया में कहते भी हैं कि 'जब दाखे पकन लगी, तो काग कण्ठ हुआ रोग'। खैर जाने दो। हे नाथ ! आप के तो यह प्रचूर काम भोग सुसज्जित ऋतु अनुकूल मनोहर इकट्ठे हो रहे हैं। भोगोपभोग भोगने के लिये एक भी ऐसा साधन न रहा है, जो कि आप के पास न हो। अवस्था भी अभी हाल है अत एव अभी तो सांसारिक सुखों का अपन दोनों अनुभव करें। फिर वृद्धावस्था होने पर संयम मार्ग ग्रहण कर लेंगे ॥ ३१ ॥

मूल-भूत्ता रसा भोई ! जहाइ णे वओ,
न जीवियट्ठा पजहामि भोए।
लाभं अलाभं च सुहं च दुक्खं,
संचिक्खमाणो चरिस्सामि मोणं ॥ ३२ ॥

छाया-भुक्ता रसा भोगिनि जहाति नोवयोन,
जीवितार्थं प्रजहामि भोगान्।

लाभमलाभञ्च सुखञ्च दुःखं,
संत्यक्ष्यमाणश्चरिष्यामि मौनम् ॥ ३२ ॥

अन्वयार्थ (भोगिनि) हे भोगेच्छुका (रसाः) भोगों को (भुक्ताः) भोग लिये 'इन को नहीं छोड़ेंगे तो' (वयः) अवस्था (नः) मुझ को (जहाति) त्याग जायगा (जीवितार्थे) 'स्वर्ग में विशेष' जिनके लिये (भोगान्) भोगों को (न) नहीं (प्रजहामि) त्यागता हूं (लाभं) प्राप्ति (च) और (अलाभम्) अप्राप्ति (च) और (सुखम्) सुख (दुःखम्) दुखको (संत्यक्ष्यमाणः) समभाव से देखता हुआ (मौनम्) साधुवृत्तिको (चरिष्यामि) प्राप्त करूंगा ॥३२॥

भावार्थ-हे भोगेच्छुका प्राणप्रिये ! संसार के पौद्गलिक सुखों का अनुभव अच्छी तरह से मैं ने कर लिया है। यदि मैं इन भोगों को नहीं छोडूंगा तो यौवन अवस्था मुझ को परित्याग कर जायगा। इस लिये पहले ही से भोगों का परित्याग करना श्रेष्ठ है। दांत गिरने पर इक्षु चूसने का त्याग करना अज्ञानता है। और ऐसा भी मत समझना कि उपलब्ध भोगोपभोग से अधिक भोगों की प्राप्ति के लिये संसार छोड़ रहा हूं मैं तो केवल आत्मिक सुखों के लिये ही संसार परित्याग कर रहा हूँ। मुझे स्वर्गादि की प्राप्ति अप्राप्ति पौद्गलिक सुख दुःख से कोई प्रयोजन नहीं है। सम भाव से देखता हुआ साधुवृत्ति प्राप्त करूंगा ॥ ३२ ॥

मूल-मा हू तुमं सोयरियाण संभरे,

जुराणो व हंसो पडिसोयगामी ।
भुंजाहि भोगाइं मए समाणं;
दुक्खं खु भिक्खायथिरा विहारो ॥३३॥

छाया—मा खलु त्वं सौदर्याणामस्मार्षी,
जीर्ण इव हंसः प्रतिस्रोतोगामी ।
भुंक्ष्व भोगान् मया समं,
दुःखं खलु भिक्षाचर्या विहारो ॥ ३३ ॥

अन्वयार्थ—(प्रतिस्रोतोगामी) प्रतिकूल स्रोतको जानेवाला (जीर्णः) पुराने (हंस) हंस (एव) जैसे (त्वम्) तुम (सौदर्याणाम्) एक उदरसे उत्पन्न होने वाले भ्राताओं का (मा) कहीं (खलु) निश्चय (अस्मार्षी) स्मरण करोगे ' इस लिये (मया) मेरे (समं) साथ (भोगान्) भोगों को (भुंक्ष्व) भोगो (भिक्षाचर्याः) भिक्षा वृत्तिका (विहारः) गमन (दुःखम्) दुःखमयी (खलु) निश्चय है ॥ ३३ ॥

भावार्थ—हे प्राणेश्वर ! दीक्षा लेने के बाद कुटुम्बियों के भोगों की तरफ तुमारा कहीं ध्यान तो आकर्षित न होजाय ! जैसे नदी के किनारे पर हँसों के टोलो में से एक वृद्ध हँस अपनी सहचारिणी व कुटुम्बियों की बात पर तनिक भी ध्यान

नहीं देकर पहले किनारे होने के लिये नदी के प्रतिकूल प्रवाह में पड़गया । जब मध्यभाग में उसे कष्ट पहुँचा तब उसने अपनी सहचारिणी व कुटुम्बियों को याद किये कि मेरी सहचारिणी ने मुझे बहुत रोका था पर मैं ने नहीं माना । ऐसे ही हे पतिराज तुम भी दीक्षा रूप प्रवाह में याद करते हुवे फिर पश्चात्ताप करोगे कि अरे मेरी स्त्री ने मुझे संयम लेते बहुत रोका था । परन्तु मैंने उसका कथन नहीं माना । ऐसी अवस्था में वहाँ आप न धर्मके रहोगे, न कर्म के । साधुवृत्ति सहल नहीं है महान कठिन है । इस से तो यह अच्छा है कि संसार में रहकर सुख भोगो । इस के सिवाय और क्या है ॥ ३३ ॥

मूल—जहा य भोई तणुयं भुयंगो,
निम्मोयणिं हिच पलेइ मुत्तो ।
एमेए जाया पयहंति भोए,
तेऽहं कहं नाणुगमिस्समेको ॥ ३४ ॥

छाया—यथा च भोगिनि ! तनुजां भुजंगमो ।
निर्मोचनीं हित्वा पर्येति मुक्तः ।
एवमेतौ जातौ प्रजहीतो भोगान् ।
तेऽहं कथं नानुगमिष्याम्येकः ॥ ३४ ॥

अन्वयार्थ—(भोगिनि) हे भोगेच्छका ! (च) और (यथा) जैसे (भुजंगमः) सर्प (तनुजाम्) शरीर से उत्पन्न होनेवाली (निर्मोचनीं) कंचुकी को (हित्वा)

छोड़कर (मुक्तः) मुक्त होने पर (पर्यैति) भागजाता है (एवम्) इस प्रकार (एतौ) ये (ते) तुम्हारे (जातौ) पुत्र (भोगान्) भोगों को (प्रजहीतः) त्यागन कर दिये हैं (एकः) एकेला (अहं) मैं (कथं) कैसे (न) नहीं (अनुगमिष्यामि) साथ जाऊँगा ॥ ३४ ॥

भावार्थ—हे भोगेच्छुका प्रिय पत्नि ! जैसे सर्प, तनसे उत्पन्न होनेवाली कंचुकाको छोड़कर भाग जाता है । पुनः उसी कंचुकाको लेना तो दूर रहा पर उसकी तरफ आँख उठाकर भी नहीं देखता है । ऐसे ही तेरे दोनों पुत्र शरीर से उत्पन्न होने वाले भोगोपभोगों के सुखों का परित्याग कर साधु बनने को जा रहे हैं । तो भी मैं एकेला उनके साथ साधुवृत्ति ग्रहण करने को नहीं जाऊँगा क्या ? ॥ ३४ ॥

मूल—छिंदितु जालं अबलं व रोहिया,
मच्छा जहा कामगुणे पहाय ।
धोरेयसीला तवसा उदारा,
धीराहु भिक्खायरियं चरन्ति ॥ ३५ ॥

छाया—छित्वा जालमबलमिव रोहिता,
मत्स्या यथा कामगुणान् प्रहाय ।
धौरेयशीला तपसा उदारा,
धीरा यस्माद् भिक्षाचर्यां चरन्ति ॥ ३५ ॥

अन्वयार्थ—(यथा) जैसे (रोहिताः) रोहित जाति का (मत्स्या) मच्छ (अबलम्) जीर्ण (जालम्) जालको (छित्वा) नाश करके ' स्वेच्छा मे विचरता है ' (इव) ऐसे ही (धौरेयशीलाः) प्रबल है धर्म क्रिया में स्वभाव जिनका (तपसा) तपस्या (उदाराः) प्रधान (धीराः) बुद्धिमान (कामगुणान्) कामभोगों को (प्रहाय) त्याग कर (यस्मात्) ' मोक्ष ' जाने के लिये (भिक्षाचर्या) भिक्षा वृत्तिको (चरन्ति) प्राप्त करते हैं ॥ ३५ ॥

भावार्थ—हे प्रियपत्नि ! जैसे रोहित जातिका मच्छ जीर्ण जाल को अपनी तीक्ष्ण पूछ से काटकर जल में स्वेच्छा से विचरता है । ऐसे ही प्रधान तप के धारी क्रिया में उत्कृष्ट भाव हैं जिनके ऐसे वे भोग रूप जाल कों नष्ट कर संयम मार्ग को जा रहे हैं ॥ ३५ ॥

मूल—नहेव कुंचा समइक्कमंता,
तयाणि जालाणि दलित्तु हंसा ।
पलेंति पुत्ता य पई य मज्झं,
ते हं कहं नाणुगमिस्समेक्का ॥ ३६ ॥

छाया—नभसीव क्रौंचाः समतिक्रामन्त,
स्ततानि जालानि दलयित्वा हंसाः ।
परियन्ति पुत्रौ च पतिश्च मम,
तानहं कथं नानुगमिष्याम्येका ॥ ३६ ॥

अन्वयार्थ—(नभसि) आकाश में (क्रौंचाः) क्रौंच पक्षी (इव) जैसे (समतिक्रामन्तः) एक देश को उलंघन करजाते है (च) और (हंसाः) हंस पक्षी (ततानि) विस्तीर्ण (जालानि) जालको (दलयित्वा) काट कर 'स्वेच्छा से विचरते है ऐसे ही' (पुत्रौ) दोनों पुत्र (च) और (मम) मेरे (पतिः) प्राणनाथ (तान्) उन भोगों को त्यागकर संयम लेने को' (परियन्ति) जा रहे है (एका) एकेली (कथं) कैसे (न) नहीं (अनुगमिष्यामि) साथ जाऊँगा॥ ३६ ॥

भावार्थ—हे प्राणपते ! आपका सद्बोध मेरे कलेजे को पार कर गया है । अहा हा खूबही अच्छा दृष्टान्त दिया। जैसे क्रौंच पक्षी एक देश को उलंघन कर दूसरे देश को चला जाता है । हंस लम्बी चौडी जालको काटकर स्वेच्छा से विचरता है । ऐसे ही दोनो पुत्र और आप मोह माया रूप जालको काटकर संयम मार्गको प्राप्त करने के लिये जा रहे हैं तब मै एकेली क्या संयम मार्गको प्राप्त करने के लिये साथ नहीं आऊँगा ॥ ३६ ॥

मूल—पुरोहियं तं ससुयं सदारं,
सोचाभिनिक्खम्म पहाय भोए।
कुडुंबसारं विउलुत्तमं तं,
रायं अभिक्खं समुवाय देवी ॥ ३७ ॥

छाया—पुरोहितं तं ससुतं सदारं,
श्रुत्वाऽभिनिष्क्रम्य प्रहाय भोगान्।
कुटुंबसारं विपुलोत्तमं तं,
राजानमभीक्ष्णं समुवाच देवी ॥ ३७ ॥

अन्वयार्थ—(ससुतम्) पुत्र सहित (सदारम्) स्त्री सहित (तम्) वह (पुरोहितम्) पुरोहित (भोगान्) भोगों को (प्रहाय) परित्याग कर (अभिनिष्क्रम्य) संसार से निकलते हैं 'ऐसा' (श्रुत्वा) सुनकर (विपुलोत्तमम्) प्रचूर प्रधान (कुटुम्बसारं) धन धान्यादि 'ग्रहण करने वाले' (तम्) उस (राजानम्) राजा को (देवी) पटराणी (अभीक्ष्णम्) वार वार (समुवाच) कहने लगी ॥३७॥

भावार्थ—पुरोहित और उस की स्त्री ये दोनों पुत्रों के वैराग्य-मयी वाक्यों को श्रवण कर पुरोहित व स्त्री और दोनों पुत्र चारों ही व्यक्ति भोगों को परित्याग कर रहे हैं। और क्रोड़ों रूपयों की सम्पत्ति को ज्यों की त्यों घर पर छोड़ कर संयम मार्ग को ग्रहण करने के लिये जा रहे हैं। यह खबर सुनते ही राजा उसकी सर्व सम्पत्ति राज्य भण्डार में डलवाने का अनुचरों को हुक्म दे दिया तदनु यह सूचना दासी द्वारा राणी को मालूम होते ही अपने प्राण पति नरेश के पास आ कर यों कहने लगी ॥ ३७ ॥

मूल—वंतासी पुरिसो रायं, न सो होइ पसंसिओ।
माहणेण परिचत्तं, धणं आदाउमिच्छसि ॥ ३८ ॥

छाया—वान्ताशी पुरुषाराजन् न सोभवति प्रशंसितः ।
ब्राह्मणेन परित्यक्तं धनमादातुमिच्छसि ॥३८॥

अन्वयार्थ—[राजन्] हे राजन् [वान्ताशी] वमन किये हुवे पदार्थ को खाने वाला [पुरुषः] मनुष्य [सः] वह [प्रशंसितः] प्रशंसा पात्र [न] नहीं [भवति] होता है [ब्राह्मणेन] ब्राह्मणने [परित्यक्तं] त्यागा हुआ [धनम्] धन [आदातुम्] लेने को [इच्छसि] इच्छा करते हो ॥ ३८ ॥

भावार्थ—हे प्राणनाथ नृपते ! जैसे किसी पुरुष को उष्टी हुई उसी ही उष्टी को कुत्ते काग के सिवाय वही पुरुष पुनः भक्षण करना चाहे तो वह क्या प्रशंसनीय हो सकता है ! कभी भी नहीं । ऐसे ही हे नाथ आप जो धन ब्राह्मण को संकल्प कर चुके । उसी को आप लेना स्वीकार कर रहे हैं । यह कहां तक योग्य और उचित है । आप स्वयं हृदय पर हाथ धर कर इस बात को कुछ देर के लिये सोचें ॥ ३८ ॥

मूल—सव्वं जगं जइ तुहं, सव्वं वावि धणं भवे ।
सव्वंपि ते अपज्जत्तं, नेव ताणाय तं तवं ॥३९॥

छाया—सर्वञ्जगद्यदि तव, सर्वं वापि धनं भवेत् ।
सर्वमपि तवापर्याप्तन्नैव त्राणाय तत्तव ॥३९॥

अन्वयार्थ—[यदि सर्वम्] यदि सर्व [जगत्] लोक [चापि] और भी [सर्वम्] सर्व [धनम्] धन [तव]

तुम्हारे [भवेत्] हो जावे 'तदपि' [तव] तुम्हारे [सर्व-मपि] सर्व भी [अपर्याप्तम्] अपूर्ण है [तत्] वह 'सब जगत् व धन' [तव] तुम्हारे [त्राणाय] रक्षा के लिये [नैव] नहीं है ॥ ३६ ॥

भावार्थ-हे प्राणेश्वर ! यदि आप को सारा जगत् का राज्य मिल जावे और पृथ्वी भर का सब धन हस्तगत हो जावे । तदपि आप की इच्छा कभी भी परिपूर्ण नहीं होगी । ज्यों ज्यों धन व राज्य बढ़ता जायगा त्यों त्यों इच्छा बढ़ती ही जायगी फिर वही राज्य और धन अन्त समय में कुछ भी काम आने वाले नहीं हैं । और न वे यमराज की दी हुई यातना में रक्षा कर सकेंगे ॥३६॥

मूल—मरिहिसि रायं जया तया वा,
मणोरमे कामगुणे पहाय ।
एक्को हु धम्मो नरदेव ताणं,
न विज्जइ अज्जमिहेह किंचि ॥४०॥

छाया—मरिष्यसि राजन् यदा तदा वा,
मनोरमान् कामगुणान् विहाय ।
एक एव धर्म्मो नरदेव त्राणं,
न विद्यतेऽन्यदिहेह किञ्चित् ॥४०॥

अन्वयार्थ—[राजन्] हे नरेश [यदा तदा वा] जब तब [मनोरमान्] मनोहर [कामगुणान्] कामभोगों को [विहाय] छोड़ कर [मरिष्यसि] मरोगे [नरदेव]

भृगु चरित्र



दोनों लडकों को ढूंढने के लिए भृगु पुरोहित और उनकी स्त्री दोनो गॉवसे निकल कर जंगल की ओर जा रहे हैं। और लड़के दोनों सामने आरहे हैं।

Lakshmi Art, Bombay, 8.

हे मनुष्यों के देव [एक एव] एक ही [धर्मः] धर्म [त्राणम्] शरण भूत 'होगा' [अन्यत्] दूसरा [इहेह] यहाँ पर [किञ्चित्] कोई भी [न] नहीं [विद्यते] है ॥४०॥

भावार्थ-हे राजन्! इन प्रधान काम भोगों को छोड़ कर किसी एक समय में आखिर मरना पड़ेगा अमर हो कर कोई नहीं आया है। देखिये कैसे २ चक्रवर्ति राजा, जो कि मरना जानते ही न थे वे भी दुनिया से चल बसे, सब उन के ऐश आराम की चीज़ें यहीं धरी रह गई हैं। पर भव में माता, पिता, भगिनी, औरत पुत्र, धन, राज, कोट, किला कोई, भी चीज़ शरणभूत नहीं हो सकेंगे। केवल एक धर्म ही अवश्य आप की यातना में हाथ बटायेगा ॥ ४० ॥

राजा अपनी प्रियपत्नि के मार्मिक वचनों को सुनते ही चमक कर बोला, रानी ठेर कुछ ठेर, बोलने में इतनी जल्दी मत कर। क्या तेरा चित्त व्याकुल तो नहीं हो गया है। राज्य में धन आता है वह सब ऐसा ही है। ये तेरे सब रत्न जड़ित चन्द्रहार आदि आभूषण इसी धन के बने हुए हैं। जैसा तू मुझे उपदेश कर रही है तो क्या तू अमर हो कर आई है यह तो एक वह बात हुई जैसे किसी कवि ने कहा कि "पर उपदेश कुशल बहुतेरे.........................." हे राणी पहिले तो राज्य छोड़ साध्वी बन जा फिर मुझे उपदेश करना। इस प्रकार अपने प्राणेश्वर के वचन सुनते ही राजा से राणी यों बोली ॥

मूल—नाहं रमे पक्खिणि पंजरे वा,
संताणछिन्ना चरिस्सामि मोणं।

अकिंचणा उज्जुकडा निरामिसा,
परिग्गहारम्भनियत्तदोसा ॥ ४१ ॥

छाया—नाहं रमे पक्षिणि पंजरे इव,
छिन्नसन्ताना चरिष्यामि मौनम् ।
अकिंचना ऋजुकृता निरामिषा,
परिग्रहारम्भदोषनिवृत्ता ॥ ४१ ॥

अन्वयार्थ—[पंजरे] पिंजरे में [पक्षिणीव] पक्षिणी के जैसे [अहम्] मैं [न] नहीं [रमे] आनन्द पाती हूँ 'अत एव' [अकिंचना] द्रव्य रहित [ऋजुकृता] सरल [निरामिषा] विषय रहित [आरम्भपरिग्रहदोषनिवृत्ता] आरम्भ परिग्रह दोषों से विरक्त हो [मौनम्] साधुवृत्ति को [चरिष्यामि] अङ्गीकार करूंगा ॥ ४१ ॥

भावार्थ—हे प्राणनाथ ! जैसे पक्षिणी पिंजरे में खान पान आदि सब सुविधाएं होते हुए भी दुःख अनुभव करती है। ऐसे ही इस राज्य और भव रूप पिंजरे में मैं भी आनन्द नहीं पा रही हूँ। यदि आप मुझे आज्ञा देदे तो मैं स्नेह रूप सन्तति को छोड़ कर, विषय वासना से मुँह मोड़ दूँ। सब ये हीरे पन्ने से मण्डित गहने शरीर से उतार कर सरल स्वभाविका बनूँ । और आरम्भ परिग्रह से उत्पन्न होने वाले दोषों का परित्याग कर आर्यिका अर्थात् साध्वी बनूंगी ॥ ४ ॥

मूल—दवग्गिणा जहा रण्णे,

दज्झमाणेसु जंतुसु ।
अन्ने सत्ता पमोयंति,
रागद्दोसवसं गया ॥ ४२ ॥

छाया—दवाग्निना यथाऽरण्ये, दह्यमानेषु जन्तुषु ।
अन्ये सत्त्वाः प्रमोदयन्ते, रागद्वेषवशंगताः ॥४२॥

अन्वयार्थ—[यथा] जैसे [दवाग्निना] दावानल कर के [जन्तुषु] प्राणि [दह्यमानेषु] जलते हुवे [अरण्येषु] वन में [रागद्वेषवशंगताः] रागद्वेष के वशीभूत हुए [अन्ये] दूसरे [सत्त्वाः] प्राणि [प्रमोदयन्ते] आनन्दित होते हैं ॥ ४२ ॥

भावार्थ—हे नाथ ! जैसे किसी एक जंगल में दावानल कर के हिरन खरगोश आदि मूक प्राणी जल रहे थे, उस समय दावानल के निकटवर्त्ति दूसरे हिरन खरगोश आदि जानवर जिन के समीप अभी तक वहाँ अग्नि पहुँची नहीं, वे सभी प्राणी उस घटना को देख कर बड़े खुशी मनाते हैं। पर वे मूढ़ यों नहीं जानते हैं कि जो घटना वहाँ हो रही है वही घटना हमारे पर भी क्षण मात्र में घटने वाली है ॥ ४२ ॥

मूल—एवमेव वयं मूढा,
कामभोगेसु मुच्छिया ।
डज्झमाणं न बुज्झामो,
रागद्दोसग्गिणा जगं ॥ ४३ ॥

छाया—एवमेव वयं मूढा, कामभोगेषु मूर्च्छिताः ।
दह्यमानन्न बुध्यामहे, रागद्वेषाग्निना जगत् ॥४३॥

अन्वयार्थ—(एवमेव) इसी तरह से (वयम्) अपन भी (मूढाः) मूढ हो रहे हैं 'जो कि' (कामभोगेषु) कामभोगों में (मूर्च्छिता) मूर्च्छित होते हुए (रागद्वेषाग्निना) राग, द्वेष रूप अग्नि कर के (दह्यमानं) जलते हुए (जगत्) संसार को न नहीं (बुध्यामहे) जानते हैं ॥ ४३ ॥

भावार्थ—हे प्राणेश्वर ! जैसे वे प्राणी औरों को जलते हुए देख कर आनन्दित होते हैं। इसी प्रकार अपन भी कैसे मूर्ख हैं जो कि काम भोगों में मूर्च्छित हो कर राग द्वेष रूप अग्नि कर के सारे जगत को जलते हुए देख कर अपन ज्ञान प्राप्त नहीं करते हैं। जैसे वे मर रहे हैं और उनके लिये जो घटना हो रही है वह एक रोज अपने पर भी होगी ॥ ४३ ॥

मूल—भोगे भोच्चा वमित्ता य,
लहुभूयविहारिणो ।
आमोयमाणा गच्छंति,
दिया कामकमा इव ॥ ४४ ॥

छाया—भोगान् भुक्त्वा वान्त्वा च,
लघुभूतविहारिणः ।
आमोदमाना गच्छन्ति,
द्विजाः कामक्रमा इव ॥ ४४ ॥

अन्वयार्थ--(भोगान्) भोगों को (भुक्त्वा) भोग कर (च) और 'उत्तकाल में'(वान्त्वा) त्याग कर (लघुभूतविहारिणः) हलका विहार (कामक्रमाः) यथेच्छा पूर्वक (द्विजा इव) पक्षि के जैसे यद्वा ब्राह्मण के जैसे (आमोदमानाः) आनन्दित होते हुए (गच्छन्ति) विचरते है ॥ ४४ ॥

भावार्थ-हे प्राणेश्वर ! अपन संसार में सब ऐश आराम कर चुके हैं कोई भी बात की कमी नही रही है। अत एव अब इन्ह भोगों को परित्याग कर द्रव्य से भाव से हलके वायु के समान यथेच्छा पूर्वक आनन्दित होते हुवे संयम मार्ग में विचरें। जैसे पक्षि यद्वा भृगुपुरोहित और उसकी स्त्री व दोनों पुत्र संसार को परित्याग कर संयम मार्ग में विचरते हैं ॥ ४८ ॥

मूल—इमे य बद्धा फंदंति,
मम हत्थऽज्जमागया।
वयं च सत्ता कामेसु,
भविस्सामो जहा इमे ॥ ४५ ॥

छाया—इमे च बद्धाः स्पन्दंते,
मम हस्तमार्य्य आगताः।
वयश्च सक्ताः कामेषु,
भविष्यामोयथेमे ॥ ४५ ॥

अन्वयार्थ—(आर्य्य) हे आर्य (बद्धाः) सुरक्षित (इमे) ये भोग (मम) मेरे (च) और 'उपलक्षणसे तुमारे' (हस्तम्)

हस्तगत (आगताः) हो रहे हैं ' वे कैसे है ' (स्पन्दन्ते) अस्थिर है ' तदपि (वयं) अपन (कामेषु) काम भोगों में (सक्ताः) आसक्त हो रहे है ' इसलिये ' (इमे) पुरोहितादिके (यथा) जैसे (भविष्यामः) होवे ॥ ४५ ॥

भावार्थ-हे आर्यपते ! भोगोपभोग की सामग्री आपको और मेरे को जो मिली है उसको अनेक उपाय करके सुरक्षित रखने का प्रयत्न करते हैं, पर वे आखिर अस्थिर है । तदपि उन भोगों में आसक्त होते हुए तनिक भी विचार नहीं करते हैं कि भोगों को अपन नहीं छोड़ेंगे तो भोग अपने को उत्तर देदेंगे । इस से तो यही अच्छा है कि पहले ही उन्ह भोगों को छोड़ कर पुरोहितादि के जैसे अपन भी साधुवृत्ति ग्रहण करे ॥ ४५ ॥

मूल—सामिसं कुललं दिस्स,
बज्झमाणं निरामिसं ।
आमिसं सव्वमुज्झित्ता,
विहरिस्सामो निरामिसा ॥ ४६ ॥

छाया—सामिषं कुललं दृष्ट्वा, बाध्यमानं निरामिषम् ।
आमिषं सर्वमुज्झित्वा, विहरिष्यामि निरामिषाः ॥४६॥

अन्वयार्थ—(सामिषम्) मांस सहित (बाध्यमानं) पीड़ित (कुललम्) गृध पक्षिको ' और ' (निरामिषम्) मांस रहित गृध पक्षिको ' सुख अवस्था में ' (दृष्ट्वा) देख कर (सर्वम्) सम्पूर्ण (आमिषम्) ' धन धान्य रूप '

आमिष (उज्झित्वा) त्याग कर (निरामिषाः) आ-मिष रहित होती हुई (विहरिष्यामि) गमन करूंगी ॥४६॥

हे प्राणेश्वर ! किसी एक गृद्ध पक्षि के पास मांस की बोटी देख कर अन्य पक्षि उसे पीड़ित कर देते हैं। और जिस के पास मांस वगैरा कुछ भी नहीं होता है वह आनन्द में निर्भयता के साथ रहता है। इन दोनों ही अवस्था में उस पक्षिको देख कर मुझे बड़ा विचार आता है कि अपने पास भी धन, भण्डार, राज्य, भोग रूप मांस की बोटी है। उसकी रक्षा के लिये रात और दिन चिन्ता बनी रहती है। कोई धन चोर कर न लेजावे, कोई राज्य के उपर अमला न करले। इत्यादि अनेक दुःखों से पीड़ित हो रहे हैं। इस से यह अच्छा है कि जिस गृध पक्षि के पास मांस की बोटी नहीं है वह निर्भयता से रहता है। ऐसे ही हे प्राण-पते मैं भी राज्य भोग रूप मांस बोटी को परित्याग कर संयम मार्ग में विचरूंगी ॥ ४६ ॥

मूल—गिद्धोवमे उ नच्चाणं, कामे संसारवड्ढणं।
उरगो सुवण्णपासेव्व, संकमाणो तणुं चरे ॥४७॥

छाया—गृद्धोपमास्तु ज्ञात्वा, कामान् संसारवर्द्धनान्।
उरगः सौपर्ण्यपार्श्वे इव, शङ्कमानस्तनुश्चरेत् ॥४७॥

अन्वयार्थ—(संसारवर्द्धनान्) संसार वर्धक (कामान्) काम भोगों को (गृद्धोपमास्तु) गृध पक्षि के समान (ज्ञात्वा) जानकर (सौपर्ण्यपार्श्वे) गरुड के पास में (उरगः) सर्प के (इव) जैसे (शङ्कमानः) संकुचित होता हुआ (तनुम्) मन्दगति से (चरेत्) जाता है ॥ ४७ ॥

भावार्थ-हे नाथ ! गृध्र पक्षि के समान काम भोगों को संसार वर्धक जानकर परित्याग कर दें। जैसे सर्प गरुड़ से भयभीत होता हुआ उसके पास से कैसा चंपत हो जाता है। ऐसे ही अपन भी इन्ह काम भोगों से चंपत हो कर संयम स्थान में विचरे ॥ ४७ ॥

मूल--नागोव्व बंधणं छित्ता, अप्पणो वसहिं वए।
एयं पत्थं महारायं, उसुयारित्ति मे सुयं ॥४८॥

छाया--नाग इव बन्धनञ्छित्वात्मनो वसतिं व्रजेत् ।
एतत्पथ्यं महाराज, इषुकार इति मे श्रुतम् ॥ ४८ ॥

अन्वयार्थ--(इषुकार) इषुकार नाम के (महाराज) हे महाराज (नाग इव) हाथी के जैसे (बंधनम्) बन्धन को (छित्वा) तोड़ कर (आत्मनः) आत्मा के (वसतिम्) निवास स्थान को (व्रजेत्) जावे (एतत्) यह (पथ्यम्) हितकारी 'मार्ग को' (इति मे) मैं ने (श्रुतम्) श्रवण किया था ॥ ४८ ॥

भावार्थ-हे इषुकार नाम से सुशोभित महाराज ! जैसे हाथी अपना मजबूत बंधन भी जैसे तैसे तोड़ कर बंध्या अटवी को चला जाता है। ऐसे ही आत्मा भी जन्म जन्मान्तर में किये हुए कर्म रूप बंधन को संयम रूप कैंचे से तोड़ कर शुद्ध आत्मा के स्थान पर पहुँच जाती हैं। उपरोक्त मार्ग मैं ने सुगुरू द्वारा श्रवण किया है इस लिये अपन भी जन्म जन्मान्तर में किये हुए कर्म

बन्धन को तोड़ कर मोक्ष स्थान को प्राप्त करें। इस प्रकार वैराग्य भरी बातें राणी की सुन कर राजा को भी वैराग्य हो गया ॥४८॥

मूल—चइत्ता विउलं रज्जं,
कामभोगे य दुच्चए।
निव्विसया निरामिसा,
निन्नेहा निप्परिग्गहा॥ ४६ ॥

छाया—त्यक्त्वा विपुलं राज्यं, कामभोगांश्च दुस्त्यजान्।
निर्विषयौ निरामिषौ, निःस्नेहौ निष्परिग्रहौ ॥ ४६ ॥

अन्वयार्थ—(विपुलम्) लम्बा चौड़ा (राज्यम्) राज्यको (च) और (दुस्त्यजान्) त्यागना कठिन ऐसे (कामभोगान्) कामभोगों को (त्यक्त्वा) छोड़कर (निर्विषयौ) विषयवासनादि रूप (निरामिषौ) आमिष करके रहित (निःस्नेहौ) स्नेह (निष्परिग्रहौ) परिग्रह रहित ' होवे ' ४६ ॥

भावार्थ-राजा और रानी दोनों-लम्बी चौड़ी सीमावाला राज्य और दुस्त्याज्य काम भोगों को छोड़कर विषयवासना, धन धान्य रूप आमिष, स्नेह रूप प्रतिबन्ध आरम्भ परिग्रह आदि से रहित हुए ॥ ४६ ॥

मूल—सम्मं धम्मं वियाणित्ता,
चेच्चा कामगुणे वरे।
तवं पगिज्झहक्खायं,
घोरं घोरपरक्कमा ॥ ५० ॥

छाया—सम्यक् धर्म्मं विज्ञाय, त्यक्त्वा कामगुणान् वरान् ।
तपःप्रगृह्य यथाख्यातं घोरं घोरपराक्रमौ ॥ ५० ॥

अन्वयार्थ—(सम्यक्) शुद्ध (धर्म्मम्) धर्म्म को (विज्ञाय) जान कर (वरान्) प्रधान (कामगुणान्) काम भोगों को (त्यक्त्वा) छोड़कर (यथाख्यातम्) जिस प्रकार का प्ररूपित (घोरम्) दुष्कर (तपः) तप को (प्रगृह्य) अङ्गीकार कर (घोरपराक्रमौ) '-कर्मों का नाश करने में ' अत्यन्त पराक्रम करें ॥ ५० ॥

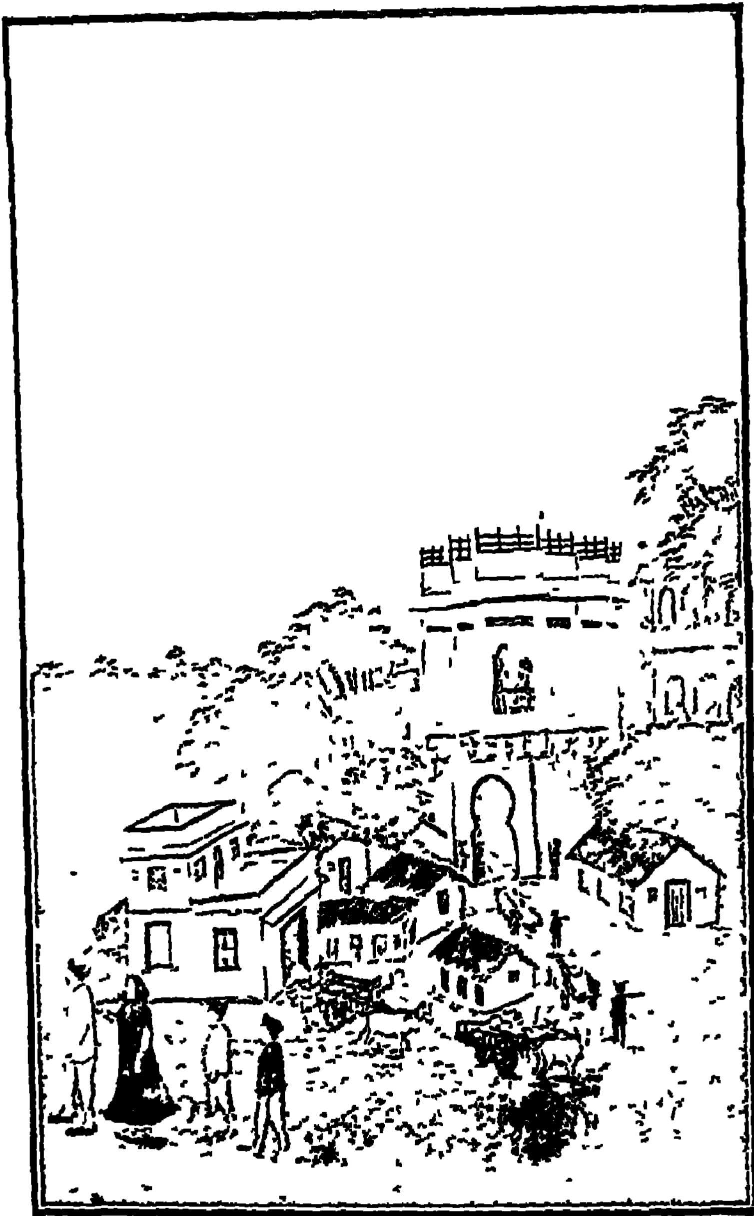
भावार्थ-अव्याप्त, अतिव्याप्त, असंभव तीनों दोषों कर के रहित शुद्ध धर्म को राजा और रानी दोनों ने पहिचान कर हस्तगत प्रधान काम भोगों का परित्यागन कर दिया। और अर्हत् भगवतोंने जिस प्रकार प्रतिपादन किया है उसी प्रकार दुष्कर तप व्रत को अङ्गीकार कर रौद्र कर्मोंका नाश करने में अत्यन्त पराक्रम करने को प्रवर्त हुए ॥ ५० ॥

मूल—एवं ते कमसो बुद्धा, सव्वे धम्मपरायणा ।
जम्ममच्चुभउव्विग्गा, दुक्खस्संतगवेषिणो ५१

छाया—एवं ते क्रमशो बुद्धाः, सर्वे धर्म्मपरायणाः ।
जन्ममृत्युभयोद्विग्ना, दुःखस्यान्तगवेषिणः ॥ ५१ ॥

अन्वयार्थ—(एवम्) इस प्रकार (ते) वे (सव्वे) सब छःओं (जन्ममृत्युभयोद्विग्नाः) जन्ममृत्यु के भय से उद्वेग पाते हुए (क्रमशः) अनुक्रम से (बुद्धाः) तत्वज्ञ हुए

भृगु चरित्र



वैराग्य पाकर भृगु पुरोहित और उनकी स्त्री एवम् दोनो लड़के क्रोड़ों की सम्पति को ज्यों की त्यों छोड़ कर मुनि वृत्ति ग्रहण करने के लिये जा रहे हैं। और आई हुई धन की गाडियोंको देखकर रानी अपने राजा को कह रही है कि धन सम्पति नश्वर है।

(धर्म्मपरायणाः) धर्म करने में तत्पर हुए 'और' (दुःखस्यान्तगवेषिणः) दुःखों का अन्त करने में प्रयत्न-शील हुए ॥ ५१ ॥

भावार्थ—इस प्रकार पुरोहित के दोनों पुत्र और पुरोहित, पुरोहित की स्त्री, राजा और रानी ये छःओं जने अनुक्रम से जन्म मृत्यु के भय से भयभीत होते हुवे तत्वज्ञ होकर धर्म्म करने में तत्पर हुए। और संसार के सभी दुःखों का अन्त करने में प्रयत्न शील हुए ॥ ५१ ॥

मूल—सासणे विगयमोहाणं, पुव्विं भावेणभाविया।
अचिरेणेव कालेण, दुक्खस्संतमुवागया ॥ ५२ ॥
राया सह देवीए, माहणो य पुरोहिओ।
माहणी दारगा चेव, सव्वे ते परिनिव्वुडि ५३ त्तिबेमि

छाया—शासने विगतमोहानां, पूर्वं भावितभावनानि।
अचिरेणैव कालेन, दुःखस्यान्तमुपागताः ॥ ५२ ॥
राजा सह देव्या, ब्राह्मणश्च पुरोहित।
ब्राह्मणी दारकौ चैव, सर्वे ते परिनिर्वृताः ।५३। इति ब्रवीमि

अन्वयार्थ—(पूर्वम्) पहिले (भावितभावनानि) शुद्ध भावना भाने वाले 'वे छःओं जने' (विगतमोहानाम्) निर्मोह जनों के (शासने) मण्डल में (अचिरेणैव) थोड़े ही (कालेन) समय करके (दुःखस्य) दुःख के (अन्तम्) अन्तको (उपागताः) प्राप्त हुए

॥ ५२ ॥ (देव्या) राणी (सह) सहित (राजा), नरेश (च) और (ब्राह्मणः) ब्राह्मण, (पुरोहितः) पुरोहित (ब्राह्मणी) पुरोहितानि (च) और (दारकौ) दोनों पुत्र (ते) वे (सर्वे) सब (परिनिर्वृताः) सम्पूर्ण दुःखों से निवृत्त हुए ॥ ५३ ॥

भावार्थ—वे छुःओं व्यक्ति पूर्व जन्म में जो शुद्ध भावनाओं से आत्मा को पवित्र की थी उसी से ये पुनरपि वीतराग भगवान् के जिन शासन में दीक्षा अर्थात् संपूर्ण गृहस्थावेष को छोड़ते हुए मुखपर मुहपत्ति बांध कर रजोहरणादि धारण कर मुनि वृत्ति ग्रहण की। बाद अत्यल्प ही समय में संसार के दुःखों की सीमा को पार कर गये ॥ ५२ ॥ कमलावती राणी इक्षुकार राजा पुरोहित, पुरोहित की स्त्री और दोनों पुत्र ये छुःओं व्यक्ति जन्म जन्मान्तर के किये हुवे कर्मों का बंधन तोड़ कर सम्पूर्ण दुखों से निवृत्त हुए । मोक्ष धाम में जा बिराजे वहां अटल अखण्ड अपूर्व सुखोंका अनुभव कर रहे हैं ॥ ५३ ॥

समाप्तोऽयमध्ययनम्

ओम् शान्ति शान्ति शान्ति



* गुरुप्रशस्ति *

शुभे वर्षे सिन्धु-त्रि-निधि-कु-मिते विक्रमरवे त्रयोदश्यामूर्जेऽधृत सितदले जन्म किल यः ॥ चतुर्थाभिख्योऽयं मुनिरिह चतुर्थे सति युगे; चतुर्थस्य द्वारं विघटयतु वर्गस्य भविनाम् ॥ १ ॥ गिरं हिन्दीं बाल्ये वयसि वयनानीमपि लिपिं; पठित्वैंग्लिश चुंचुः समजनि च पारस्यक चणः ॥ अनेकाभिर्भाषाभिरिति हि तदा यः परिचितोऽप्याराजीदेकोक्तिः प्रणमत चतुर्थं मुनिममुम् ॥ २ ॥ कृतोत्कर्षे वर्षे निज-जननतः षोडश इतेऽवहद्धन्यां कन्यां सलिलनिधिकन्यामिव पराम् । उपेतायामष्टादशशरदि तुर्ये युग इह; जयंस्तुर्यो मल्लः स्मरमपि यथार्थाख्यमकरोत् ॥ ३ ॥ यथा मेनावन्या व्रत-नियमवत्याऽधिगमितो, मतिं गोपीचन्द्रो मृदुवयसि चन्द्रोपमयशाः तथा बोधं मात्राऽध्यगमि पलमात्राद् रहसि य श्चतुर्थोऽयं मल्लो जयति मुनिमल्लोऽत्र भुवने ॥४॥ अथाब्दे दृग्-बाण-ग्रह-कुघटिते विक्रमरवे; स्वं स्त्रीदृग्-बाण-ग्रह-कुघटित स्तुर्यमुनिराट् । तपस्ये संशुद्धे सुविशद-तपस्योन्मुखमति स्तृतीयायां दीक्षा मधरत तृतीयाश्रमिकवत् ॥ ५ ॥ गुरुन्हीरालालान् यम-नियमपालान् परिचरं श्चरन्ध्यानं ज्ञानं समलभत मानं च मुनिषु । यथा मेघो धीरं स्थलमुभति नीरं च सदृशं; तथाऽसोव्याख्यानं घटयति समानं सति जडे ॥ ६ ॥ यदास्याब्ज-स्यन्न मधुरिम-प्रपन्नं प्रकटित प्रभावं व्याख्यानं सुम-रस-समानं रसयितुम् । समुद्भूतासङ्गा नर-नृपति-भृङ्गा अभिमतान् । सुरान् संयाचन्ते प्रथमनरमन्ते च तृषिताः ॥ ७ ॥ प्रभावि व्याख्यानामृतरसनिधानय दर्शन द्युतिज्योत्स्नाभाजे विबुध-भ-समाजेद्धरुचये । यदास्यैणाङ्कायाऽतुलसुख-निकाथाय नितरां; सभाचक्षुश्चोरःक्षितिपति-चकोरः स्पृहयति ॥ ८ ॥ गतामर्षो मर्पेण च जनितहर्षेण सहितः; समा यो निर्मायो विदधदसमा योगरचनाः स्वमुक्त्यै यस्तृष्णा दधदपि च तृष्णां परिजह च्चतुर्थः सम्मानो मुनिरयममानो विजयते ॥ ९ ॥